ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

नैतिक जीवन के मनोवैज्ञानिक आधार : जैनदर्शन के विशेष परिप्रेक्ष में

डॉ. सत्यनारायण भारद्वाज
सहायक आचार्य, प्राकृत एवं संस्कृत विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं।

भूमिका :

नैतिक दर्शन का प्रमुख उद्देश्य जीवन के साध्य का निर्धारण एवं उस सन्दर्भ में हमारे आचरण का मूल्यांकन करना है। नैतिक दर्शन और मनोविज्ञान दोनों के अध्ययन की विषय-वस्तु प्राणियों का व्यवहार है। मनोविज्ञान का कार्य व्यवहार की तथ्यात्मक प्रकृति का अध्ययन है तो नैतिक दर्शन का कार्य व्यवहार के आदर्श का निर्धारण एवं व्यवहार का मूल्यांकन है किन्तु आदर्श का निर्धारण तथ्यों की अवहेलना करके नहीं हो सकता है। हमें क्या होना चाहिए, यह बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि हम क्या हैं? हमारी क्षमताएं क्या है? जैनदर्शन ने इस मनोवैज्ञानिक तथ्य को अधिक गम्भीरता से समझा है और अपने नैतिक दर्शन को ठोस मनोवैज्ञानिक नींव पर खड़ा किया है।

जैनदर्शन में हमें प्राणीय प्रकृति का गहन विश्लेषण प्राप्त होता है। जब महावीर से यह पूछा गया था कि आत्मा क्या है? और आत्मा का साध्य या आदर्श क्या है? तब महावीर ने इस प्रश्न का जो उत्तर दिया था, वह आज भी मनोवैाानिक दृष्टि से समीचीन प्रतीत होता है। महावीर ने कहा था-आत्मा समत्त्वरूप है और समत्त्व ही आत्मा का साध्य है।[प] वस्तुतः जहां-जहां भी जीवन है, चेतना है, वहां-वहां समत्त्व की स्थापना के अनवरत प्रयास चल रहे हैं। परिवेशजन्य विषमताओं को दूरकर समत्त्व के लिए प्रयासशील बने रहना यह जीवन या चेतना का मूल स्वभाव है। शारीरिक एवं मानसिक स्तर पर समत्त्व का संस्थापन ही जीवन का लक्षण है। डॉ. राधाकृष्णन् के शब्दों में जीवन गतिशील और सन्तुलित है।[पप] स्पेन्सर मानता है कि परिवेश में निहित तथ्य हमारे सन्तुलन को बनाये रखने का प्रयास करते हैं। यह सन्तुलन बनाने का प्रयास ही जीवन की प्रक्रिया है।[पपप] विकासवादियों ने इसे ही अस्तिव के लिए संघर्ष कहा है, किन्तु मेरी अपनी दृष्टि से इसे अस्तिव के लिए संघर्ष कहने की अपेक्षा समत्त्व के संस्थापन का प्रयास कहना ही अधिक उचित है। समत्त्व का संस्थापन एवं समायोजन की प्रक्रिया ही जीवन का महत्त्वपूर्ण लक्षण है। समायोजन और संतुलन के प्रयास की उपस्थिति ही जीवन है और उसका अभाव मृत्यु है। मृत्यु अन्य कुछ नहीं, मात्र शारीरिक स्तर पर सन्तुलन बनाने की इस प्रक्रिया का असफल होकर टूट जाना है।[पअ] अध्यात्मशास्त्र के अनुसार जीवन न तो जन्म है और न मृत्यु। एक शरीर में यह प्रारम्भ बिन्दु है तो दूसरे में उसके अभाव की उद्घोषणा करने वाला तथ्य। जीवन दोनों से ऊपर है, जन्म और मृत्यु तो एक शरीर में उसके आगमन और चले जाने की सूचनामात्र है, वह उनसे अप्रभावित है। सच्चा जीवन तो जागृति है, अप्रमत्त चेतना है। जैनदर्शन इसे ही जीव या आत्मा का स्वरूप कहता है।

चेतना के तीन पक्ष और जैनदर्शन :

मनोवैज्ञानिकों ने चेतना का विश्लेषण कर, उसके तीन पक्ष माने हैं-ज्ञान, अनुभूति और संकल्प। चेतना को अपने इन तीन पक्षों से भिन्न कहीं देखा नहीं जा सकता है। चेतना इन तीन प्रक्रियाओं के रूप में ही अभिव्यक्त होती हैं। जैन विचारकों की दृष्टि में चेतना के यह तीनों पक्ष नैतिक आदर्श एवं नैतिक-साधना मार्ग से निकट रूप

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

से सम्बन्धित है। जैन आचार-दर्शन में चेतना के इन तीन पक्षों के आधार पर ही नैतिक आदर्श का निर्धारण किया गया है। जैनदर्शन का आदर्श मोक्ष है और मोक्ष अनन्त चतुष्ट्य अर्थात् अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सौख्य और अनन्त शक्ति की उपलब्धि है। वस्तुतः मोक्ष चेतना के इन तीनों पक्षों की पूर्णता का द्योतक हैं। जीवन के ज्ञानात्मक पक्ष की पूर्णता-अनन्त ज्ञान एवं दर्शन में, जीवन के भावात्मक या अनुभूत्यात्मक पक्ष की पूर्णता-अनन्त सौख्य में और संकल्पनात्मक पक्ष की पूर्णता अनन्त शक्ति में मानी गयी है। जैन नैतिक साधना पथ भी चेतना के इन्हीं तीन तत्त्वों-ज्ञान, भाव और संकल्प के साथ सम्यक् विशेषण का प्रयोग करके निर्मित किया गया है। ज्ञान से सम्यक् ज्ञान, भाव से सम्यक् दर्शन और संकल्प से सम्यक् चारित्र का निर्माण हुआ है। इस प्रकार जैनदर्शन में साध्य, साधक और साधना-पथ इन तीनों पर मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विचार हुआ है।

नैतिक दर्शन का उद्देश्य : समता की स्थापना :

हमारे नैतिक व्यवहार का लक्ष्य क्या है? यह प्रश्न मनोविज्ञान और नैतिक दर्शन, दोनों की ही दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। जैनदर्शन में इसे मोक्ष कहकर अभिव्यक्ति किया गया है, किन्तु यदि हम जैनदर्शन के अनुसार मोक्ष का विश्लेषण करें तो मोक्ष वीतरागता की अवस्था है और वीतरागता चेतना के पूर्ण समत्त्व की अवस्था है। इस प्रकार जैनदर्शन में समत्त्व को ही नैतिक जीवन का आदर्श माना गया है। यह बात मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी सही उतरती है। संघर्ष नहीं, अपितु समत्त्व ही मानवीय जीवन का आदर्श हो सकता है, क्योंकि यह ही हमारा स्वभाव है और जो स्वभाव है वही आदर्श है। स्वभाव से भिन्न आदर्श की कल्पना अयथार्थ है। स्पेन्सर, डार्विन, मार्क्स प्रभृति कुछ विचारक संघर्ष को ही जीवन का स्वभाव मानते हैं, लेकिन यह एक मिथ्या धारणा है। आधुनिक विज्ञान के अनुसार वस्तु का स्वभाव वह होता है, जिसका निराकरण नहीं किया जाता। जैनदर्शन के अनुसार नित्य और निरपवाद वस्तुधर्म ही स्वभाव है। यदि हम इस कसौटी पर कसें तो संघर्ष जीवन का स्वभाव सिद्ध नहीं होता है। द्वन्दात्मक भौतिकवाद के अनुसार मनुष्य का स्वभाव संघर्षयुक्त है, मानवीय इतिहास वर्ग-संघर्ष की कहानी है, संघर्ष ही जीवन का नियम है किन्तु यह एक मिथ्या धारणा है। यदि संघर्ष ही जीवन का नियम है तो फिर द्वन्दात्मक भौतिकवाद संघर्ष का निराकरण क्यों करना चाहता है? संघर्ष मिटाने के लिए होता है और जो मिटाने की या निराकरण करने की वस्तु है, उसे स्वभाव कैसे कहा जा सकता है? संघर्ष यदि मानव-इतिहास का एक तथ्य है तो वह उसके दोषों का, उसके विभाव का इतिहास है, उसके स्वभाव का नहीं। मानव-स्वभाव संघर्षयुक्त नहीं, संघर्ष का निराकरण या समत्त्व की अवस्था है। मानव इतिहास संघर्ष की कहानी नहीं संघर्षों के निराकरण की कहानी है।

संघर्ष अथवा समत्त्व से जीवन में विचलन पाए जाते हैं, लेकिन वे जीवन का स्वभाव नहीं है, क्योंकि जीवन की प्रक्रिया उनके समाप्त करने की दिशा में ही प्रयासशील है। समत्त्व की उपलब्धि ही मनोवैज्ञानिक दृष्टि से जीवन का साध्य है। समत्त्व शुभ और विषमता अशुभ है। कामना, आसक्ति, राग-द्वेष, वितर्क आदि सभी जीवन की विषमता, असन्तुलन एवं तनाव की अवस्था को अभिव्यक्त करते हैं। अतः जैनदर्शन में इन्हें अशुभ माना गया है। इसके विपरीत वासना-शून्य, वितर्क-शून्य, निष्काम, अनासक्त, वीतराग अवस्था ही शुभ (नैतिकता) है और वही जीवन का आदर्श है, क्योंकि वह समत्त्व की स्थिति है। जैनदर्शन के अनुसार समत्त्व एक आध्यात्मिक सन्तुलन है। राग और द्वेष की वृत्तियां हमारी चेतना के समत्त्व को भंग करती हैं। अतः उनसे ऊपर उठकर वीतरागता की

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

अवस्था को प्राप्त कर लेना ही सच्चे समत्त्व की अवस्था है। वस्तुतः समत्त्व की उपलब्धि जैनदर्शन और आधुनिक मनोविज्ञान, दोनों की दृष्टि से मानव-जीवन का साध्य मानी जा सकती है।

नैतिक जीवन का साध्य : मोक्ष :

जैनदर्शन के अनुसार मोक्ष आत्मपूर्णता की अवस्था है। पूर्ण समत्त्व के लिए आत्मपूर्णता भी आवश्यक है, क्योंकि अपूर्णता या अभाव भी एक मानसिक तनाव है। हमारे व्यावहारिक जीवन में हमारे सम्पूर्ण प्रयास, हमारी चेतना के ज्ञानात्मक, भावात्मक और संकल्पात्मक शक्तियों के विकास के निमित्त होते हैं। हमारी चेतना सदैव ही इस दिशा में प्रयत्नशील होती है कि वह अपने इन तीन पक्षों की देश और कालगत सीमाओं का अतिक्रमण कर सके। व्यक्ति अपनी ज्ञानात्मक, भावात्मक और संकल्पात्मक क्षमताओं की पूर्णता चाहता है। यह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि मनुष्य अपने अभावों और अपूर्णता से छुटकारा पाना चाहता है। वस्तुतः मानवमन की इस स्वाभाविक इच्छा की पूर्ति ही जैनदर्शन में मोक्ष के प्रत्यय के रूप में अभिव्यक्त हुई है। अभाव और अपूर्णता, जीवन की वह प्यास है, जो पूर्णता के जल से परिशान्त होना चाहती है। हमारी चेतना में जो अपूर्णता का बोध है, वह स्वयं ही हमारे में निहित पूर्णता की चाह का संकेत भी है। पाश्चात्य विचारक ब्रेडले का कथन है कि ‘‘चेतना अनन्त है और वह अनुभव करती है कि उसकी क्षमताएं बहुत सीमित है। लेकिन सीमा या अपूर्णता को जानने के लिए असीम एवं पूर्णता का बोध भी आवश्यक है। जब हमारी चेतना यह ज्ञान रखती है कि वह शांति, सीमित एवं अपूर्ण है, तो उसका यह सीमित होने का ज्ञान स्वयं उसे इस सीमा के परे ले जाता है। इस प्रकार ब्रेडले स्व में निहित पूर्णता की चाह का संकेत करते हैं।’’[अ] आत्मा पूर्ण है अर्थात् अनन्त चतुष्टय से युक्त है, यह बात जैनदर्शन के एक विद्यार्थी के लिए नयी नहीं है। वस्तुतः जैनदर्शन के अनुसार पूर्णता हमारी क्षमता है, योग्यता नहीं। पूर्णता के प्रकाश में ही हमें अपनी अपूर्णता का बोध होता है, यह अपूर्णता का बोध पूर्णता की चाह का संकेत अवश्य है, लेकिन पूर्णता की उपलब्धि नहीं। जैनदर्शन की दृष्टि से ज्ञान, भाव और संकल्प का अनन्त ज्ञान, अनन्त सौख्य और अनन्त शक्ति के रूप में विकसित हो जाना ही आत्मपूर्णता है। आत्मशक्तियों का अनावरण एवं उनकी पूर्ण अभिव्यक्ति में ही आत्मपूर्णता है और यही नैतिक जीवन का साध्य है। इस प्रकार जैनदर्शन में आत्मपूर्णता का नैतिक साध्य भी मानवीय चेतना के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण पर आधारित है।

साध्य, साधक और साधना में पारस्परिक सम्बन्ध :

जैन आचार-दर्शन में साध्य और साधक में अभेद ही माना गया है। समयसार टीका में आचार्य अमृतचन्द्र सूरि लिखते हैं कि ‘‘परद्रव्य का परिहार और शुद्ध आत्मतत्त्व की उपलब्धि ही सिद्धि है।’’[अप] आचार्य हेमचन्द्र साध्य और साधक में अभेद बताते हुए लिखते हैं कि ‘‘कषायों और इन्द्रियों से पराजित आत्मा ही संसार है और उनको विजित करने वाली आत्मा ही मोक्ष है।’’[अपप] अध्यात्मतत्त्वालोक में मुनि न्यायविजयजी लिखते हैं कि ‘‘आत्मा ही संसार भी है और मोक्ष भी है। जब तक आत्मा कषाय और इन्द्रियों के वशीभूत है, संसार है और उनको ही जब वह अपने वशीभूत कर लेती है तो उसे मोक्ष कहा जाता है।[अपपप] इसप्रकार हम देखते हैं कि जैनदर्शन का साध्य और साधक दोनों ही आत्मा हैं। दोनों में मौलिक अन्तर यही है कि आत्मा जब तक विषय और कषायों के वशीभूत होती है तब तक बन्धन में होती है और जब उन पर विजय प्राप्त कर लेती है, तब वही मुक्त बन जाती है अर्थात्

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

आत्मा की विषम-वासनाओं के मल से युक्त अवस्था को ही उसका बन्धन कहा जाता है और उसकी विशुद्ध अवस्था को मुक्ति कही जाती है। आसक्ति को बंधन और अनासक्ति को मुक्ति मानना, एक मनोवैज्ञानिक सत्य है।

जैन आचार-दर्शन में साध्य और साधक दोनों में अन्तर इस बात को लेकर है कि आत्मा की विभाजन अवस्था ही साधक अवस्था है और आत्मा की स्वभाव अवस्था ही सिद्धावस्था है। जैन नैतिक साधना का लक्ष्य अथवा आदर्श कोई बाह्य तत्त्व नहीं, वह तो साधक का अपना ही निज रूप है। उसकी ही अपनी पूर्णता की अवस्था है। साधक का आदर्श उसके बाहर नहीं वरन् उसके अंदर ही है। साधक को उसे पाना भी नहीं है, क्योंकि पाया तो वह जाता है, जो व्यक्ति के अपने में न हो। नैतिक साध्य बाह्य उपलब्धि नहीं आन्तरिक उपलब्धि है। दूसरे शब्दों में कहें तो वह निज गुणों का पूर्ण प्रकटन है। यहां भी हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि आत्मा के निज गुण या स्व-लक्षण तो सदैव ही उसमें उपस्थित हैं, साधक को केवल उन्हें प्रकटित करना है क्योंकि हमारी क्षमताएं साधक और सिद्ध अवस्था में एक जैसी हैं। साधक और सिद्ध अवस्था में अंतर क्षमताओं का ही नहीं, वरन् इन क्षमताओं को योग्यताओं में बदल देने का है। जैसे बीज वृक्ष के रूप में विकसित होता है वैसे ही मुक्तावस्था में आत्मा के निज गुण पूर्ण रूप में प्रकटित हो जाते हैं। साधक की आत्मा के ज्ञान, भाव और संकल्प के तत्त्व ही मोक्ष की अवस्था में अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सौख्य और अनन्त शक्ति के रूप में प्रकट हो जाते हैं। वह आत्मा, जो कषाय एवं राग-द्वेष से युक्त है और इनसे युक्त होने के कारण बद्ध, सीमित और अपूर्ण है, वही अपने में निहित अनन्त ज्ञान, अनन्त सौख्य और अनन्त शक्ति को प्रकट कर मुक्त एवं पूर्ण बन जाती है। उपाध्याय अमर मुनिजी कहते हैं कि जैन साधना स्व में स्व को उपलब्ध करना है, निज में निज का शोध करना है, अपने में पूर्णरूपेण रमण करना है। आत्मा के बाहर एक कण में भी साधना की उन्मुखता नहीं है। इस प्रकार हम देखते हैं कि जैन विचारणा में तात्त्विक दृष्टि से साध्य और साधक दोनों एक ही हैं, यद्यपि पर्यायार्थिक दृष्टि या व्यवहार नय से उनमें भेद माना गया है। आत्मा की स्वभाव-पर्याय या स्वभाव-दशा साध्य है और आत्मा की विभाव-पर्याय की अवस्था ही साधक है और विभाव से स्वभाव की और आना यही साधना है। जीव अपनी विभाव-पर्याय में आत्मा है, स्वभाव पर्याय में परमात्मा है और विभाव से स्वभाव की और जाने की अवस्था में महात्मा है।

साधना-पथ और साध्य :

जिसप्रकार साधक और साध्य में अभेद माना गया है, उसी प्रकार साधना-मार्ग और साध्य में भी अभेद है। जीवात्मा अपने ज्ञान, अनुभूति और संकल्प के रूप में साधक कही जाती है, उसके यही ज्ञान, अनुभूति और संकल्प सम्यक् दिशा में नियोजित होने पर साधना-पथ बन जाता है, वही जब यह अपनी पूर्णता को प्राप्त कर लेता है तो सिद्धि बन जाता हैं। जैनदर्शन के अनुसार सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन, सम्यक् चारित्र और सम्यक् तप यह साधना-पथ है और जब जीवात्मा सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन, सम्यक् चारित्र एवं सम्यक् तप अथवा अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सौख्य और अनन्त शक्ति अर्थात् अनन्त चतुष्टय की उपलब्धि कर लेता है तो यही अवस्था सिद्धि बन जाती है। आत्मा का ज्ञानात्मक पक्ष सम्यक् ज्ञान की साधना के द्वारा अनन्त ज्ञान को प्रकट कर लेता है, आत्मा का अनुभूत्यात्मक पक्ष सम्यक् दर्शन की साधना के द्वारा अनन्त दर्शन की उपलब्धि कर लेता है, आत्मा का संकल्पात्मक सम्यक् चारित्र की साधना के द्वारा अनन्त सौख्य की उपलब्धि कर लेता है और आत्मा की क्रियाशक्ति

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

सम्यक् तप की साधना के द्वारा अनन्त शक्ति को उपलब्ध कर लेती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि जो साधक की चेतना का स्वरूप है वही सम्यक् बनकर साधना-पथ बन जाता है और उसी की पूर्णता साध्य होती है।

मानवीय व्यवहार के प्रेरक तत्त्व :

जैनदर्शन में राग और द्वेष, ये दो कर्मबीज माने गए हैं, किन्तु इनमें से राग ही प्रमुख तथ्य है। आचारांगसूत्र में कहा गया है कि "आसक्ति ही कर्म का प्रेरक तत्त्व है।"[पग] जैनदर्शन और आधुनिक मनोविज्ञान, दोनों ही इस सन्दर्भ में एकमत हैं कि मानवीय व्यवहार का मूलभूत प्रेरक तत्त्व वासना अथवा काम है। फिर भी जैनदर्शन और आधुनिक मनोविज्ञान, दोनों में ही वासना के मूलभूत प्रकार कितने हैं? इस सम्बन्ध में कोई निश्चित संख्या नहीं मिलती है। पाश्चात्य मनोविज्ञान में जहां फ्रॉयड काम या राग को ही एकमात्र मूल प्रेरक तत्त्व मानते हैं, वहीं दूसरे विचारकों ने मूलभूत प्रेरक तत्त्वों की संख्या सौ तक मान ली हैं फिर भी पाश्चात्य-मनोविज्ञान में सामान्यतया १४ मूल प्रवृत्तियां मानी गयी हैं, जो इसप्रकार हैं-

१. पलायनवृत्ति, २. घृणा, ३. जिज्ञासा, ४. क्रोध, ५. मान, ६. आत्महीनता, ७. मातृत्त्व का भाव, ८. समूह-भावना, ६. संग्रहवृत्ति, १०. रचनात्मकता, ११. भोजनान्वेषण, १२. काम, १३. शरणागति और १४. हास्य।

जैनदर्शन में व्यवहार के प्रेरक तत्त्वों का वर्गीकरण : जहां तक जैन-चिन्तन का प्रश्न है, उसमें भी हमें इनकी संख्या के सम्बन्ध में एकरूपता नहीं मिलती है। जैनागमों में चेतनापरक शब्द संज्ञा-व्यवहार के प्रेरक तथ्यों के अर्थ में रूढ़ हो गया है। संज्ञा शारीरिक आवश्यकताओं एवं भावों की मानसिक चेतना है, जो परवर्ती व्यवहार की प्रेरक बनती है। किसी सीमा तक जैनदर्शन के संज्ञा शब्द को मूलप्रवृत्ति का समानार्थक माना जा सकता है। जैनागमों में संज्ञा का वर्गीकरण अनेक प्रकार से किया गया है, जिनमें निम्न तीन वर्गीकरण प्रमुख हैं-

- चुतुर्विध वर्गीकरण - १. आहार, २. भय, ३. परिग्रह और ४. मैथुन।
- दशविध वर्गीकरण - १. आहार, २. भय, ३. परिग्रह, ४. मैथुन, ५. क्रोध, ६. मान, ७. माया, ८. लोभ, ६. लोक और १०. ओघ।[ग]
- षोडशविध वर्गीकरण-१. आहार, २. भय, ३. परिग्रह, ४. मैथुन, ५. सुख, ६. दुःख, ७. मोह, ८. विचिकित्सा, ६. क्रोध, १०. मान, ११. माया, १२. लोभ, १३. शोक, १४. लोक, १५. धर्म और १६. ओघ।[गप]

उपर्युक्त वर्गीकरणों में प्रथम वर्गीकरण केवल शारीरिक प्रेरकों का विवेचन प्रस्तुत करता है जबकि अन्तिम वर्गीकरण में शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक एवं सामाजिक प्रेरक तत्त्वों (संज्ञाओं) का भी समावेश हो जाता है। दूसरे एवं तीसरे वर्गीकरण में क्रोधादि कुछ कषायों को भी प्रेरक तत्त्वों के वर्गीकरण में समाविष्ट कर लिया गया है। संज्ञा और कषाय में अन्तर ठीक उसी आधार पर किया जा सकता है, जिस आधार पर पाश्चात्य मनोविज्ञान में मूलप्रवृत्ति और उसके संलग्न संवेग में किया जाता है। क्रोध की संज्ञा क्रोध कषाय से ठीक उसी प्रकार भिन्न है, जिस प्रकार आक्रामकता की मूल प्रवृत्ति से क्रोध का संवेग भिन्न है। फिर भी तुलनात्मक दृष्टि से विचार करने पर जैनदर्शन की संज्ञा एवं मनोविज्ञान की मूल प्रवृत्तियों के वर्गीकरण में बहुत कुछ समरूपता पायी जाती है।

जैनदर्शन का सुखवादी दृष्टिकोण :

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

आधुनिक मनोविज्ञान हमें यह भी बताता है कि सुख सदैव अनुकूल इसलिए होता है कि उसका जीवन-शक्ति को बनाए रखने की दृष्टि से दैहिक मूल्य है और दुःख इसलिए प्रतिकूल होता है कि वह जीवन-शक्ति का ह्रास करता है। यही सुख-दुःख का नियम समस्त प्राणीय व्यवहार का चालक है। जैन-दार्शनिक भी प्राणीय व्यवहार के चालक के रूप में इसी सुख-दुःख के नियम को स्वीकार करते हैं।[गपप] अनुकूल के प्रति आकर्षण और प्रतिकूल के प्रति विकर्षण, यह इन्द्रिय स्वभाव है। अनुकूल विषयों की ओर प्रवृत्ति और प्रतिकूल विषयों से निवृत्ति, यह एक नैसर्गिंक तथ्य है। वस्तुतः वासना ही अपने विधानात्मक रूप में सुख और निषेधात्मक रूप में दुःख का रूप ले लेती है, जिससे वासना की पूर्ति हो, वही सुख और जिससे वासना की पूर्ति न हो अथवा वासना-पूर्ति में बाधा उत्पन्न हो, वह दुःख है। इसप्रकार वासना से ही सुख-दुःख के भाव उत्पन्न होकर, प्राणीय व्यवहार का नियमन करने लगते हैं। किन्तु जैनदर्शन में भौतिक सुखों से भिन्न एक आध्यात्मिक सुख भी माना गया है, जो वासना-क्षय से उपलब्ध होता है।

इन्द्रिय-दमन और जैनदर्शन :

जैनदर्शन में इन्द्रिय-संयम पर बहुत अधिक बल दिया गया है लेकिन प्रश्न यह है कि क्या इन्द्रिय-निरोध सम्भव है? आधुनिक मनोविज्ञान की दृष्टि से इन्द्रिय-व्यापारों का विरोध एक अस्वाभाविक तथ्य है। आंख के समक्ष जब उसका विषय प्रस्तुत होता है तो वह उसके सौन्दर्य-दर्शन से वंचित नहीं रह सकती। भोजन करते समय स्वाद को अस्वीकार नहीं किय जा सकता। अतः यह विचारणीय प्रश्न है कि इन्द्रिय-दमन के सम्बन्ध में क्या जैनदर्शन का दृष्टिकोण आधुनिक मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से सहमत है? जैनदर्शन इस प्रश्न का उत्तर देते हुए यही कहता है कि इन्द्रिय-व्यापारों के निरोध का अर्थ इन्द्रियों को अपने विषयों से विमुख करना नहीं, वरन् विषय-सेवन के मूल में जो निहित राग-द्वेष है, उसे समाप्त करना है।इस सम्बन्ध में जैनागम आचारांगसूत्र में जो मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है, वह विशेष रूप से द्रष्टव्य है। उसमें कहा गया है कि इन्द्रियां अपने मूल विषय से कभी विरक्त नहीं होती है।[गपपप] जैन-दार्शनिक कहते हैं कि इन्द्रियों के मनोज्ञ अथवा अमनोज्ञ विषय आसक्त व्यक्ति के लिए ही राग-द्वेष का कारण बनते हैं, वीतरागी (अनासक्त) के लिए नहीं। ये विषय, रागी पुरूषों के लिए ही दुःख (बन्धन) के कारण होते हैं, वीतरागियों के बन्धन या दुःख का कारण नहीं हो सकते हैं। काम-भोग न किसी को बन्धन में डालते हैं और न किसी को मुक्त ही कर सकते हैं, किन्तु जो विषयों में राग-द्वेष करता है, वही राग-द्वेष से विकृत होता है।[गपअ]

जैनदर्शन के अनुसार साधना का सच्चा मार्ग औपशमिक नहीं वरन् क्षायिक हैं। औपशामिक मार्ग का अर्थ वासनाओं का दमन है। इच्छाओं के निरोध का मार्ग ही औपशमिक मार्ग है। आधुनिक मनोविज्ञान की भाषा में यह दमन का मार्ग हैं, जबकि क्षायिक मार्ग वासनाओं के निरसन का मार्ग है और वह वासनाओं से ऊपर उठाता है। यह दमन नहीं अपितु चित्त-विशुद्धि है। दमन तो मानसिक गन्दगी को ढकना मात्र है और जैनदर्शन इस प्रकार के दमन को स्वीकार नही करता। जैन-दार्शनिकों ने गुण-स्थान प्रकरण में स्पष्ट रूप से यह बताया है कि वासनाओं को दबाकर आगे बढ़ने वाला साधक विकास की अग्रिम कक्षाओं से निश्चित रूप से पदच्युत हो जाता है। जैन-विचारणा के अनुसार यदि कोई साधक उपशम या दमन के आधार पर नैतिक एवं आध्यात्मिक प्रगति करता है

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

तो वह पूर्णता के लक्ष्य के अत्यधिक निकट पहुंचकर भी पुनः पतित हो जाता है। उनकी पारिभाषिक शब्दावली में ऐसा साधक ११वें गुणस्थान तक पहुंचकर वहां से ऐसा पतित होता है कि पुनः निम्नतम प्रथम मिथ्यात्त्व नामक गुणस्थान में आ जाता है। इसप्रकार हम देखते हैं कि जैनदर्शन भी आधुनिक मनोवैज्ञानिकों के समान ही दमन को साधना का सच्चा मार्ग नहीं मानता है। उसके अनुसार साधना का सच्चा मार्ग वासनाओं का दमन नहीं अपितु उनके ऊपर उठ जाना है। वह इन्द्रिय-निग्रह नहीं अपितु इन्द्रिय अनुभूतियों में भी मन की वीतरागता या समत्त्व की अवस्था है।

निष्कर्ष :

इस प्रकार हम देखते हैं कि जैनदर्शन अपनी विवेचनाओं तात्त्विक चिन्तन के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक आधारों को भी स्वीकार करता है। उसके सभी सिद्धान्त उसकी मनोवैज्ञानिक दृष्टि के परिचायक है।

सन्दर्भ–सूची :

1. आयाए समाइए आया सामाइस्स अट्ठे। – भगवतीसूत्र
2. जीवन की आध्यात्मिक दृष्टि, पृ. 259
3.फर्स्ट प्रिन्सिपल्स–स्पेन्सर, पृ. 66
iv. Five Types of Ethical Theories, p. 16
v. Ethical Studies, Chapter II
अप. समयसार टीका, गाथा 305
अपप. योगशास्त्र, 4/5
अपपप. अध्यात्म तत्त्वालोक, 4/6
पग. आचारांगसूत्र, 1/3/2
ग. समवायांग, 4–5, प्रज्ञापना पद 8
गप. अभिधान राजेन्द्र को I, खण्ड 7, पृ. 301
गपप. आचारांगसूत्र 1/2/3/81
गपपप.आचारांगसूत्र, 2/3/15/101–105
गपअ. उत्तराध्ययनसूत्र, 32/100–101

Annals of the Bhandarkar Oriental Research Institute
ISSN: 0378-1143

JAIN ETHICS AND ITS SOCIAL APPLICATION

Dr Satya Narain Bharadwaj
Assistant Professor, Department of Prakrit and Sanskrit, Jain Vishva Bharati Institute, Ladnun 341 306 (Rajasthan)

Abstract

Jain Ethics are the core part of life, that is to say teach us how to lead a life. It emphasis on the preservation of traditional nature as reflected in social customs. Non-violence and truth are the focal indicators of word peace and harmony and imbibe good relationship. Jain Ethics bring realization to man's duty to himself and the society. It teaches us to follow society order and discipline in all walks of life. Attachment-detachment are part and parcel of human life. Jain Ethics are totally centered on non-absolutism. It brings correlatively in spirituality and righteousness. Faith, knowledge and conduct are very essential it lead a hygienic life. It is based on equality of life. Soul, especially voice of soul need to hear and apply to self. Jain philosophy had been following *Anuvrat Achar Sahimta*. Wrong instruction, divulging secrets, forging documents and misappropriating funds head to be avoided.

The Paper answers the questions like - What is *Satya*? What is *Astey*? What is *Brahmcharya*? How can we lead a pious and pose life? How can we readapt from sins? Jain literature

Since the inception of social order, certain norms (do and don't) were laid down. In the due course of time, these norms turned in mature thoughts deriving many aspects, values, and ethics.

The word Ethics is derived from '*Ethos*', meaning character, custom, or habit. The term 'moral' closely is associated with ethics, comes from the *Latin* word 'mores', which primarily stands for 'custom' or habit and secondarily means 'character'[i]. In India also, ethics is explained by the word *'dharma[ii]',* which has been explained in two ways. On the one hand, it stands for preservation of traditional natures as reflected in social customs; on the other hand, it means moral qualities of universal nature, like nonviolence and truth. The former view is emphasized in *Brahminical* school of thought who defines *dharma* as rules and regulations laid down by the *Vedas[iii]*, which are repositories of the traditional social virtues. The latter view is emphasized by Jainism, which says, that *dharma* is made up of nonviolence, self-control and austerity.[iv] In the West, ethics has been precisely defined 'as the study of what is right or good in conduct'.[v]

Jain View

Jain Ethics is considered as the most glorious part of Jainism. That is why some authors have described Jainism as ethical realism. In this thought there is no conflict between man's duty to himself and the society. Here the highest good of society is the highest good of the individual. As Lord Mahaveer know the fact that the social good in its ultimate analysis depends upon the perfection achieved by individual. There is no opposition between the good of the community and the individual, the guarantee to maintain the social ethical depends upon the ethical characteristics of an individual, and the *Anuvratas* (small vows) are enough potent for the same and can prove the light become in this era of chaos.

The existence of misery and suffering is as much recognized by Jainism as by "the world is afflicted, miserable, difficult to instruct and without discrimination",[vi] says the *Acarangasutra. Silanka,* a

commentator of *Acarangasutra* begins his commentary with the following words: All creatures, overcome by attachment, aversion and delusion, tormented by various, excessively bitter physical and mental miseries should try to know what is good and what is bad for the removal of that misery, and this is not possible without a peculiar type of discrimination.[vii] The *Uttaradhyayana* says that all worldly pleasure is suffering in the ultimate analysis. All "singing is but prattle, all dancing is but mocking, as ornaments are but a burden, all pleasures produce but pain."[viii] The same eternal question haunts the mind of the thinker again and again: "By what acts can I escape a sorrowful lot in this unstable, internal *sansara*, which is full of misery?"[ix] "Birth is misery, old age is misery, and so are disease and death."[x] The main attraction 'is a safe place in view of all, but difficult of approach, where there is no old age nor death, no pain nor disease."[xi] Thus, we can say that -

Jain ethics is based on the fundamental doctrine of non-absolutism. (*Anekantavada).* This has saved Jain-ethics from being one-sided. Jain ethics always takes into account all the different views and tries to reconcile them.

Jain ethics does not confuse the science of spirituality with science of social righteousness. It has thus been able to distinguish the essential nature of dharma from its non-essential beliefs, which change from time to time and place to place. Jain ethics lays emphasis on the unity of faith, knowledge, and conduct. Thus, Jain ethics is not merely a system giving certain code of morality, but it is a religion to be lived in practice.

Jain ethics is based neither on oneness of life as in *Vedanta,* nor on momentary nature of self as in Buddhism. It is based on equality of life. Basically, all souls are equal. Therefore, no wonder that such precepts as non-violence in Jainism take into account not only the human beings or animals or insects but even plant-life or one-sensed elemental life, like water etc. The social organization as anticipated by Jain ethics does not make any distinction on the basis of caste, creed or color. Jain ethics assigns primary place to the life of a monk and the life of a householder occupies only a secondary place. It is due to this fact that Jain ethics lays more emphasis on individual and ascetic virtues than on social and positive virtues. The ultimate aim of life being liberation, nothing short of complete renunciation of the mundane life could satisfy Jain *acaryas.* But, social order is particurly related with common man, householders etc. and *Mahaveer* laid down certain code of conduct for them also, denown as *Anuvrats.*

***Anuvratas* (Code of Conduct for Laities)**

The laity is the observer of the small vows. In *Upasakdasa, Avasyaka Sutra etc.* canonical literature, we get the detailed description of twelve types of small vows. In Digambara Tradition, there are several books pertaining to small vows namely *Ratnakarandasravakacara, Sagardharmamrt, Purusartha Sidhyupaya, Vasunandi Sravakacara etc.* The twelve *anuvratas* meant for the laymen are as follows :

(i) ***Ahimsa (Sthula Pranatipata Virmana)***

As complete observance of non-violence is not possible for the householders, they are advised to refrain from gross violence. The Jainism belives that the laity observing this vow should desist from intended act of violence. The observer should avoid injury to mobile beings, which possesses two or more senses. A householder should be alert in follow acne of the vows and should refrain from five transgressions of *Ahimsa Anuvrata.*[xii]

(ii) Satya (Sthula Mrsavada-Viranana)

Gross falsehood means the utterance of false words out of passion or the utterance of any word, which causes great sufferings of pains to others to the speaker. The householder cannot always refrain from all forms of falsehood in his practical life but he is prohibited to speak such a truth, which causes the death, great sufferings to any being.[xiii]

There are five transgressions of the small vow to abstain from falsehood[xiv] i.e. wrong instruction, divulging secrets, forging documents, misappropriating funds entrusted to ones care, and disclosing confidential deliberations.

(iii) Asteya (Sthula Adattadana Viramana)

A layman is forbidden to commit such a stealing i.e. to take anything belonging to others either in a house, or on the way, or on a hill. He should refrain from taking anything without the owner's consent, including something which has been abandoned by another person and may lead to punishment by the law or censure by the people. The *aticaras* of asteya anuvrata are abetting theft, dealing in stolen goods, evading customs in foreign lands, misapprehending the weight of goods one is buying or selling, and dealing in counterfeit goods.[xv]

(iv) Brahmacharya (Svadara Santosa Vrata)

It means contentment with ones own wife or *svapati santosa* i.e. contentment with ones own husband.[xvi] Sexual intercourse is always condemned in Jainism but yet a laymen is allowed to indulge in sexual intercourse in a limited way with his own wife, if he cannot resist the sex-urge. *Tattvartha Sutra* lists the five transgressions of the small vow of abstain from carnality i.e. match making, promiscuity, sex with whores, unnatural sexual practices and intense sexual passion.[xvii]

(v) Aparigraha* (Parigraha *Iccha Parimana)

This vow prohibits a layman or householder to limit voluntarily the possession of amasses land, money, gold, etc. beyond a certain limit. Now as it is necessary to restrict desires for the restriction of possession, this vow is, that all forms of possession involve violence, and accordingly, if possession is limited, violence will be reduced automatically. *Tattvartha Sutra* lists the five transgressions of the small vow to abstain from possessiveness, i.e. the failure to keep with in the set limits of tillable land and buildings, silver and gold, livestock and grain, male and female slaves and of base metals, earthenware and woolen furniture.[xviii]

(vi) *Dig-vrata* (Confinement to a Limited Area)

This vow says that a person should confine his range of movement until death, with a view to reducing minorisms. It is held that if the range of movement of a person is greater, the violence to living beings will also be greater. The more the movements of a laity are restricted, the less will be the violence. "Going beyond the limits of the set area upwards, downwards, horizontally, adding to the set area, and forgetting the limitations made, are the five transgressions of *digvrata* and should be avoided by laity."[xix]

(vii) *Anartha Danda Viramana* (Abstinence from Purposeless Sin)

This vow ordains that one should abstain form such acts that serves no purpose. Acts of this kind are of five kinds :

(i) *Paropadesa* - preaching of sins.

(ii) *Himsa pradhana* - supplying destuctive things like poison, weapons etc.

(iii) *Apadhyana* - evil thought in the form of wishing defeat, punishment, mutilation for others.

(iv) *Dush-sruti-* hearing of evil *sastras* apt to make the mind impure by giving rise to attachment, aversion etc.

(v) *Pramada carita* - negligent actions like cutting trees while walking, digging the water, sprinkling water etc. and so on, without any purpose.[xx]

Tattvartha Sutra enumerates the five transgressions of this vow, i.e. erotic talk, erotic gesture, garrulity, unlimited deeds beyond the set limit, and excessive use of consumer goods.[xxi]

(viii) *Desavakasika (*Limitationof the Area of Dwelling and Occupation)

This vow enjoins that one should limit the field of activity having reference to short periods, generally covering the period from dusk to dawn. This vow's commitment grants fearlessness of him to all beings outside that area. This vow should be observed bereft of five transgressions i.e. importing from beyond the limits of the set area, deputing a servant to bring something from beyond these limits, calling another beyond the limits, gesturing to another beyond the limits, exporting beyond the limits.[xxii]

(ix) *Bhogopabhoga Parimana* (Limitation over Consumption)

This is nothing but moderation in eating, clothing etc. This vow enjoins the layman to lead a moderate life by delimiting his objects of enjoyment. It ordains first, the moderation of *bhoga* or enjoyment of things capable of being used only once, like food, betel nut, cooking, paste etc. and secondly *upabhoga* or enjoyment of things capable of being used again and again, such as houses, furniture, cloths etc. which are meant for external purposes. This vow also forbids pursuing cruel trades which are of 15 kinds. Thus this vow limits our use of consumable and non-consumable goods. This vow lists the five transgressions namely, eating animate food, eating things in contact with animate ford, eating things mixed with animate food, drinking alcohol and eating half-cooked food.[xxiii]

(x) *Samayika Vrata* (Vow of Equality)

Samayika is nothing but keeping aloof from sinful conduct for a set period i.e. forty-eight minutes (*muhurt*) and desisting form all injurious activities during that time. *Samantabhadra* defines *samayika,* as relinquishing the five types of sins to the furthest extreme. During the period of *samayika a laity* practices meditation, contemplation, scriptural recitation and bhajans highlighting glory etc., due to these activities of mind, body and speech, the self inhibits the incoming new *karmas* and thereby tries to shed off the earlier gained *karmic* bondage. This vow helps in the equanimity of mind. *Tattvartha* enumerates to refrain from 5 transgressions of *samayika,* while performing it, i.e. improper physical activity, improper speech, improper thought, lack of enthusiasm for the vow and an unmindful attitude to the vow.[xxiv]

(xi) *Pausadhopavasa* (Vow of Fasting with Spiritual Practice)

This vow prohibits (i) taking of meals, (ii) body adornment with garlands, perfumes, ornaments etc. (iii) sexual intercourse and (iv) performance of worldly duties on particular holy days. The sacred days for fasting are prescribed as the eighth, fourteenth or fifteenth day of the fortnight. During the fast period, the householder refrain from violence, remains constantly in holy thoughts, and by reading religious literature and remains aware of his vows for a day and night. In *Tttvartha Sutra, Umasvati* says

of five transgressions possible during the practice of this vow, namely, evacuating excreta in uninfected and upswept places, picking up things or leaving them in undisputed and upswept places, picking up things or leaving them in undisputed and upswept places, spreading mats in un-inspected and upswept places, disregard for the vow, and an unmindful attitude towards the vow.[xxv]

(xii) *Atithi Samvibhaga* (Vow of Care and Share)

It is obligatory for the householders to offer food, implements, medicines and shelter to the ascetics, offering alms to ascetics must be undertaken with care to follow the strict prescriptions of the scriptures. The ascetics should be offered suitable food and drink with devotion and humility befitting the custom and etiquette of the place and occasion. If any laity offers food to a restrained monk or a nun full heartedly he sheds many *karmas*. But a laity should be alert while offering food and try to avoid the following 5 transgressions i.e. placing alms on animate object (such as green leaves), covering alms animate objects, pretending that the food belong to others, offering competitively against other donors, and untimely offering of food.[xxvi]

Social Problems :

A social problem has been defined as "a situation confronting a group of a section of society which inflicts injurious consequences on a significant number of society's population that can be handled only collectively. (Reinhardt, 1952: 14) That's why Walsh and Fur fey (1961:1) have defined a social problem as a "deviation from the social ideal remediable by group effort." Jain philosophy is in many respects is well-suited to the problems and complexities of a diverse modern society. With this in mind, attempt is made to address several dye questions of social dilemmas from a standpoint rooted in Jain principles. The list is by no means exhaustive, and aims to be accessible to all regardless of faith, background or position on political spectrum. It invites the reader to think, reflect and act with care. Although, there are many problems disturbing the social order and putting individual to unrest but I will focus on some major issues only.

Business Ethics and Environmental Protection :

More than 2600 years ago, *Mahaveera* revived Jainism and declared that all beings of the natural world have equal potential for progress in the cycle of transmigration. All are dependent upon one another for their mutual survival, but partial doom occurs when this inter-dependence is disturbed. It has been noted in the *Acaranga* that air, water, fire, earth and plants have comparatively unman fest feelings, however plants feel pain when harm is done to them or feel pleasure when they are taken care and loved, this has now been scientifically verified.

Business ethics is one of the most important, yet perhaps the most misunderstood, concern in the world of business today. The field of business ethics deals with questions about the acceptance of specific types of business practices. By its very nature, the field of business ethics is controversial, and there is no universally accepted approach for resolving it's questions. It is incorrect ot say that ethics, and religion are only concerned with individual personal lives. Lord *Mahaveera* said that good of society is inherent in the good of individual. The twelve small vows prescribed for the householders can help in the environmental protection, economic equality, and social harmony. The three *vratas* propounded by Lord *Mahaveera* are *iccha parimana vrata, ahimsa* vrata and *bhogopabhoga pariman vrata*. These three vratas are so interrelated with each other that we cannot explain Jain business ethics by negating any one of the above *vratas*. Lord *Mahaveera* restricted 15 such professions technically known as 15

Karmadana[xxvii]i.e. *Angal* karma, *Vana* karma, *Sakata* karma etc. because such professions initiate tremendous violence. Jainism asserts, 'Non-violence as a highest virtue'. Lord *Mahaveera* discusses very minutely the vow of Non-violence. The basic reason behind the restriction of fifteen professions was that Jainism assert the eternal truth that all the six classes of living beings i.e. five immobile beings i.e. earth, water, air, fire and plant bodied beings and mobile beings possess equal consciousness, Each and every living beings whether they are one sensed, two, three, four or five sensed, they play an important role in the ecological sustainable development of the world as a whole.

Modern scientific researches have shown that following of the fifteen professions involve environmental pollution and generate several diseases amongst human beings, They are :

1. *Angara Karma :* (Livelihood From Char-coal)
2. *Vana* Karma : (livelihood From Destroying Plants)
3. *Sakata* Karma and *Bhataka* karma (livelihood by driving all Types of Transport, and through Transport Fee, Hiring Vehicles).
4. *Phodi* karma : (Livelihood From Digging)
5. *Danta Vanijya :* (Trade in Animal Byproducts)
6. *Rasa Vanijya :* (Trade in alcohol and forbidden food stuff like milk, curd, butter, meat etc.)
7. *Lkkha vanijya*
8. *Visa Vanijya : (*Trade in raw-metals arsenic etc. poisonous items as well as destructive articles like arms and armaments).
9. *Kesa Vanijya :* (Trade of animals like carmari cows, horses, elephants as well as wool etc.)
10. *Yantra Pilana* Karma :
11. *Nirlanchana karma* : (Work Involving Mutilation)
12. *Davagni Dana* : (Work involving the use of fire either to burn fields or meadows etc. in order to make the land clean and setting fire to forest.)
13. *Sarah-Sosana* karma : (Work involving the sue of drying up streams, rivers, lakes etc.)
14. *Asati Posana* karma : (Work involving breeding, nourishing birds, animal etc.)

Economists believe in "Quick short term gains" disregarding ecological consequences. Rapid economic development programmes do more harm to environment, where as ecologist want to maximize long term benefits, slow but sustainable. The ecological impacts of one sided economic development can be seen in the form of five D's syndrome i.e. drought, deforestation, desertification, deluge and disease.

Jain *Acaryas* possessed farsighted and prescribed business ethics for the householders, which cannot only solve the problems of ecology and economics but also simultaneously can give solution to the ever-increasing problems of L.P.G. i.e. Liberalization, Privatization and Globalization. *Acaranga Sutra,* the Jain canonical text in which Lord *Mahaveera* emphasized, *"Je logam abbhahikkhai, se attanam abbahikkai"*[xxviii] i.e. the denial of the existence of the six classes of beings will be tantamount to the denial of the existence of the self." One cannot safeguard ones own existence by obliteration the existence of others. The Jain view asserts the principle of interdependence. So the fifteen professions

restricted by Lord *Mahaveera* has a social relevance in the context of Global environment preservation and ecological balance but also for the better human health and thereby social health as a whole.

Corruption :

Corruption is a disease with roots and branches so inter-twined and wide spread that it is difficult to trance out its source or evaluate its extent. It is an evil from every point of view. It hinders economic progress; it brutalizes all concerned it spreads like cancer. In the society as every where priority is give to financial concept.

Research declares India's place is thirteenth in the world corruption rate. We must become strong from within and strengthen our democratic institutions. In the Jain view, all the cases of scams, corruption etc. occurs due to greedy urge, and attachment towards luxurious way of life. To establish corruption free society first of all change of attitude is needed. Once belief in change of this attitude occurs, and restrain towards unnecessary desires is attained, corruption can be eradicated. In the words of *Mahatma Gandhi* sleepless vigilance on the part of citizen is the only and the most effective course of action to fight corruption.

The vow of limiting the quantity of things one will use (*upabhoga-paribhoga parimana vrata*) is a device to control consumerism. Digvrata or the vow of limiting the area of traveling in all direction is a device to control hedonism. Parigraha *parimana* or the vow of limiting the desire of possessions controls the tendency to acquire. Thus, consumerism is the adopted child of riches. Epicureanism or hedonism is a branch of that very poisonous tree. Acquisitiveness is a source of its nourishment. So in this present scenario socialism and communism can establish themselves in the state of unlimited consumption, unlimited comfort, and unlimited acquisition of wealth. A new society cannot be created without practicing the *mantra* for bringing about the change of heart and without developing a spirit of *vrata.*

Conflict :

In modern India, we come across a large number of conflicts between various communities in the name of religions, communal riots, in the name of language, cultural difference so on and so forth. A man of *anekantic* perspective ponders upon each and every issue open-mindedly. He believes in the maxim, "The human race is one" so he never discriminates between humans in the name of caste, creed, richness, whiteness etc. He believes in the unity of all the religions and this enables its followers to respect, admire, and assimilate whatever may be good in other faiths. Every country has its own culture and tradition. Problems erupt when one tries to impose it on the other. History tells us that events of this nature were commonplace.

Peace is something which the world eagerly wants but which we don't know to secure. Peace needs a new civilization, a new culture and a new philosophy, where there is no narrowness and no partiality. Huxley is correct to a great extent when he says that 'war exists because people wish it to exist'. We cannot check violence by remaining violent. But non-violence must precede non-violence on thought. Prof. R. Prasad also holds that *syadvada* is an extension of *Ahimsa* in epistemology. Unless we resolve our differences, we are bound to face Tension. Analyzing the ultimate causes of war and terrorism, we had come to the conclusion that it is ultimately our divergent and conflicting ideologies that comes in the way. Prof. Tatia also holds that only intellectual clarity will resolve all conflict and

revelry. Today one man or one country fights with the other because their views are different. Views are bound to differ because we are guided by different conditions, thoughts, modes and attitudes, Hence it is wrong to think oneself right and rest others wrong. No perspective is final or absolute unless it is understood in terms of relativity. Diversity and understanding of different religions, cultures and values systems can also help significantly in cultivating respect and tolerance among young people. Therefore, even *anekant* is also subject to *anekant.* Thus *anekant* go in tune with the exposition of the principle of 'comprehensive perspectives', which leads to harmonious peaceful society.

Conclusion :

Two and a half millennia ago, *Mahaveera* recognized that non-violence and kindness to living beings is kindness to oneself. This ancient insight is a message for our time. The present problems of terrorism, increasing threat of environmental degradation, continuous deterioration of renewable and non-renewable resources, economic recession, over-consumerism, violence leading towards animal testing for cosmetic usage, testing for safe food items and medicines etc. can be resolved through the application of Jain Doctrines. Jainism's contribution to social cohesion is to offer an alternative new way of honking based on inter connectedness and inter-dependence. It propounds pious life-style for the laity, which proves to be instrumental for a harmonious life to over self, society and nation global level and to the nature. This social-ecological continuum recognized by Jains makes their thinking especially relevant to a society, trying to rethink its attitude to the environment and create a kind of awareness the materialism doesn't satisfy us ultimately, but does social and psychic harm.

References :-

[i]. Muirhead, John H., The elements of Ethics, London, 1910, p.4.

[ii]. The word 'Dharma' has been defined as conduct (*caritra)* cf.

[iii]. चोदनालक्षणोऽर्थः धर्मः - *Mimamsadarsana,* Banaras, 1929, 1.1.2

[iv] धम्मो मंगलमुक्किट्ठं अहिंसा संजमो तवो। *-Dasavaikalika, 1.1*

[v]. Mackenze, John S., A Manual of Ethics, London, 1929, p.1.

[vi]. *Acarangasutra*, Vol. 1, 1.2.1. (p.3)

[अपप]. इह हि रागद्वेषमोहाद्यभिभूतेंन सर्वेणापि संसारिजन्तुना शरीरमानसानेकदुःखोपनिपातपीड़ितेन तदपनयनाय हेयोपादेयपरिज्ञाने यत्नो विधेयः। स च न विशिष्टविवेकमृते। *-Silanka,* on Ibid., p.3

[viii]. Uttaradhyayana, Gurgaon, 1954, 13-16.

[ix]. Ibid., 8.1

[x]. Ibid., 19.15

[xi]. Ibid., 23-81

[xii]. *Tattvartha Sutra of Umasvati, op. cit., 7.20*

[xiii]. *Sabhasya Tattvarthadhigama Sutra of Umasvati.Ed. Khubhachandra. Agas :* Shri Paramshruta Prabhavak Mandal. 3rd ed. 1992, 7.19

[xiv]. Nathmal Tatia. That Which Is, op.cit., 7.21, p.180

[xv].Ibid, 7.21, p. 180

[xvi]. Ibid, 7.4

[xvii]. Nathmal Tatia. That Which Is, op.cit., 7.27

[xviii]. *Tattvartha Sutra of Umasvati,* op.cit., 7.24

[xix]. *Tattvartha Sutra of Umasvati*, op. cit., 7.25

[xx]. *Ratnakarandak Sravakacara* of Samantabhadra. Ed. Manikchanda. Bombya : Digambara Jain *Granthamala*. 1982, Verse 74-80

[xxi]. *Tatvatha Surta* of *Umasvati,* op.cit., 7.26

[xxii]. Ibid, 7.27

[xxiii]. *Tattavartha Sutra of Umasvati* op. cit., 7.30

[xxiv]- Ibid, 7.28.

[xxv]. Ibid, 7.29.

[xxvi]. *Tattvartha Sutra of Umasvati* op.cit. 7.31.

[xxvii]. *Uvasagdasanga Sutra.* Ed Madhukar Muni. Beawar : Shri Agam Prakasana Samiti. 1980; Yoga Sastra of Hemachandra. Calcutta : Bibliotheca Indica, no. 172, 197-21, 3.100.101.

Angar-vana-sakata-bhataka-sphotjivika,
Danata-*Laksha-rasa-kesah-visavanijyakani ca. 3.99.*
yantrapida nirlanchanamasatiposanam tathu 1,

[xxviii]. *Acaranga Sutra,* op. cit., 1.5.5.5.

EXPLORING RASA IN LATTER WRITERS

Dr. Sabyasachi Sarangi[1], Dr. Satya Narain Bharadwaj[2]
[1]Assistant Professor, Dept. of Prakrit and Sanskrit, Jain Vishva-Bharati Institute, Ladnun (Raj.), 341306
[2]Assistant Professor, Dept. of Prakrit and Sanskrit, Jain Vishva-Bharati Institute, Ladnun (Raj.), 341306

The doctrine of rasa, which is advocated, if not first enunciated, by अभिनवगुप्त, is finally adopted by almost all writers on general poetics who accept rasa-dhvani as an important element of poetry. With the exception of विश्वनाथ and केशवमिश्र, they do not indeed go so far as to declare expressly with अभिनवगुप्त that rasa alone is the essence of poetry, but they accept in reality the suggested sense in the form of rasa as essentially the main element. The Rasa is viewed as pleasant sentiment belonging to the reader whose dormant emotions, derived from experience or inherited instincts, are evoked by the reading of poems into an ideal and impersonalized form of joy; an appreciation or enjoyment, consisting of a pleasant mental condition in which the reader identifies himself with the feelings of the hero and experiences them in a generic form, the fullness of enjoyment depending upon the nature and experience of the particular reader. The sentiment thus evoked is essentially universal in character, and the aesthetic pleasure resulting from it is not individual (even though enjoyed as an intimately personal feeling). But generic and disinterested, being such as would be common to all trained readers (सामाजिकसंवेद्य). It is, therefore described as something supernormal (अलौकिक) and invariably pleasant, not to be compared to the normal pleasure of life which has always a reference to one's personal relations or interests, and which may be pleasant or painful. Things, which would be called causes of an emotion in the normal sense and which may produce disgust, horror or pity in real life, awaken these feelings indeed in poetry and drama, but convey them in such an ideal and generic from that these emotions, which are far from pleasant in ordinary life, are converted into an impersonal joy, which is ineffable and indivisible. One may be removed by disgust, horror or pity and shed real tears; but the underlying sentiment in always one of exquisite joy which must be distinguished from ordinary feelings.

This is the general position of all later theorists which regard to the nature and function of rasa in poetry. धनञ्जय, for instance, give us the same process of transformation of an ordinary emotion, dominant composition, into a poetic sentiment, as formally laid down by भरत and interpreted by अभिनवगुप्त and in this he is practically in agreement with मम्मट, विद्याधर, विश्वनाथ and others. The dominant emotion (स्थायीभाव), he says, becomes a sentiment (rasa) when it is brought into a relishable condition through the co-operation of the excitants, the ensuants and the accessories (including the सात्त्विकभावs). This sentiment is further amplified by the assertion that the enjoyer of rasa (रसिक) is the audience (सामाजिक) on whose capacity of enjoyment it depends, and that the dominant feeling becomes a sentiments when it is so enjoyed. the rasa, being a mental state, a subjective experience of the reader, in which enjoyment (आस्वाद्य, चर्वणा, रसना or भोग) is essential and in which the enjoyer and the object of enjoyment become identical, the reader receives the presented feeling into his own soul and thereby enjoys it . The locus of the rasa is not in the represented hero who belongs to the past; nor is it in the poem itself, the task of which is merely to exhibit the excitants etc. by which the dominant emotion is brought into expression and the rasa, on its part, becomes revealed to the reader, Nor does the rasa consist of the reader's mere

apprehension(प्रतीति) of the emotions exhibited in the poem or enacted by the actor; for the reader would then apprehend not the rasa but a feeling varying in different individuals, just as in real life the spectacle of a pair of lovers in union giving different spectators who witness it the varying emotions, according to their individual nature, of shame, envy, desire or aversion . The विभावs etc., therefore, being the स्थायीभाव to the enjoyment of रसिक, the aesthetically receptive reader or spectator, and thereby convert it into rasa; but they must be generalized and have no specific relation to a particular individual (परित्यक्त-विशेष). Thus, the विभाव is सीता, धनिक explains, must refer to woman in general, and not to the particular individual who was the daughter of जनक. Hence things, which are the exciting, ensuing or accessory circumstances in ordinary life, act as विभावs etc. in poetry, and generalize the dominant feeling into rasa. The spectator, say, of the deeds of अर्जुन on the stage may be compared, therefore, to the child who, in playing with clay elephants, experiences the sensations of its own energy as pleasant. The enjoyment in the spectator's mind is manifestation of that joy which is innate as the blissful nature of self, a circumstance which gives us the frequent comparison of रसास्वाद with ब्रह्मास्वाद.

The mental activity involved in this enjoyment has got four aspects taken in connection with the four primary sentiments of the erotic(श्रृङ्गार), the heroic(वीर), the horrible (वीभत्स), and the furious(रौद्र) admitted by Bharata , and consists respectively of the conditions of unfolding(विकास), expansion(विस्तार), agitation (क्षोभ), and distraction (विक्षेप). We have seen that भट्टनायक (along with अभिनवगुप्त) speaks of the bhoga (or आस्वाद्य) of rasa as involving only three mental conditions, named, विकास (pervasion), विस्तार (expansion), and धृति (melting), which later theorists have taken as the basis and justification of the three गुणs of प्रसाद, ओजस and माधुर्य respectively. With regard to ninth rasa, the quietist, which is not mentioned by भरत but which is acknowledge by some theorists, धनञ्जय forbids its delineation in the drama (iv.35); for the sentiment of absolute peace is in its own nature indefinable, and consists of four states mentioned by philosophers , viz. मैत्री, करुणा, मुदिता, and उपेक्षा, which are not realizable by the सहृदय. It is exit at all as rasa, it must comprehend the fourfold mental activity enunciated above, as corresponding to the fourfold states recognized by philosophers in शम .

विश्वनाथ is the only important writer, among later theorists, who boldly accepts अभिनवगुप्त: extreme view that the rasa-dhvani alone is the essence of poetry and builds up a system of Poetics on its basis .

Following up his own definition of poetry as "a sentence of which the soul is the rasa", विश्वनाथ: gives us an elaborate analysis of rasa in almost all its aspects. His sums up at the outset the characteristics of rasa in two verses thus. "The rasa, arising from an exaltation of the quality of सत्त्व, indivisible, self-manifested, made up of jay and thought in their identity, free from the contact of aught else perceived, akin to the realization of Brahma, and having for its essence supernormal wonder (चमत्कार), is enjoyed by those competent in its inseparableness (as an object of knowledge) from the knowledge of itself". He explains चमत्कार as consisting of an expansion of the mind and as synonymous with विस्मय. In the connection, विश्वनाथ: quotes with approval an opinion of his ancestor नारायण who put a premium on the sentiment of the marvelous (अद्भुतरस) and maintained that it was essential in all rasas. It is also explained clearly that the rasa is identical with the enjoyment of itself, or, in other words, there is no distinction between the object and the operation in the apprehension of rasa; so that when we say 'the rasa is enjoyed', we only use a figurative expression. It follows from this that the enjoyment of rasa is different in its nature from the ordinary processes of knowledge. विश्वनाथ: insists very strongly on the necessity of

वासना in the spectator, which consists of experience or instincts acquired from previous births (प्राक्तन). It one is not endowed with these germs of the capacity of appreciation, one may be develop them by study of poverty and experience of life. In the case of the grammarian, the philosopher or one well-versed in the sacred lore, these susceptibilities are deadened. If it is sometimes found that an eager student of poetry is still deficient in the capacity of relishing of rasa, we must assume that it is the result of his accumulated demerit of a previous birth. Thus, विश्वनाथ is anxious to show that experience and cultivation of the power of imagination are essential in one who seeks to enjoy rasa.

विश्वनाथ also insists that the विभाव etc. as well as the dominant feeling (स्थायीभाव) must be felt as generic or impersonalized. The reader must not take the feeling a his own individual emotion; for it would then remain as his feeling (and never become rasa) and would sometimes (e.g. in the case of the pathetic sentiments) cause pain, and not joy. Nor should the feeling be taken as pertaining solely to the hero; for then if cannot, as the feeling of another person, affect the reader become rasa. It is necessary, therefore, that the excitants etc. as well as the dominant feeling, should be generalized by a generic function (साधारणीकृति) inherent in themselves, which corresponds to the generic power (भावकत्व) postulated for poetry by भट्टनायक. This universalisation of the factors and the feelings enables the reader to identify himself with the personages depicted; and this conceit of community removes all difficulty about accepting extraordinary episodes of exalted personages who may be superior in virtue or prowess to the average reader. The excitants etc. are indeed normally called causes, but in reality the rasa is not an effect in the ordinary sense; for in the case of rasa there is the simultaneous presence of itself and its excitants, which is not true of an ordinary cause and effect. It is also pointed out that all the factors (विभाव etc.) need not be present at once, for the presence of one would revive the others by association of ideas. In the other words, what might seem wanting in the utterance of poetry is supplied, from the suggestive character of poetry itself, by force of association of ideas. It also follows from the character of rasa described above that it is not necessarily found in the actor, who is assuming the role of the hero performs his part only mechanically by rule and rote; he ranks as a spectator (and therefore as a recipient of rasa) in so far as he is himself a man of taste and actually experiences the feelings he enacts .

In spite of the unquestioned dominance of the Dhavni School, which no doubt recognized the importance of rasa but regarded it as one of the phases of the unexpressed only, one class of writes, who still adhered to rasa as the only element worth considering in poetry, continued to devote exclusive attention to it and built up a system, so to say, on the basic of the rasa alone. Of all the rasa, however, as श्रृङ्गार: (or love) forms the absorbing theme of Sanskrit poetry and drama in general, and as this particular poetic sentiment has an almost universal appeal, these writers naturally work out this important rasa in all its phases; and we have in consequences a series of erotico-rhetorical treatises of which the earliest known and the earliest known and the most remarkable is रुद्रभट्ट's श्रृङ्गारतिलक . रुद्रभट्ट states distinctly at the beginning of his work that although भरत and others have spoken of rasa in the drama, his object is to apply it to the case of poetry, and that a काव्य, in his opinion, must possess rasa as its constant theme. Following upon this we have भोज's श्रृङ्गारप्रकाश which deals with the subject in the usual elaborate encyclopedic manner of its author, with profuse illustrations of every phase of the erotic sentiment in no less than eighteen out of thirty-six chapters. After this come innumerable works of a similar nature , which take rasa, especially श्रृङ्गार, as their principal theme and which were composed apparently with the object of guiding the poet in the composition of erotic pieces so popular and profuse in Sanskrit poetry. Of these, the भावप्रकाश of शारदातनय, which reproduces the substance of most of the chapters of भोज's work,

and the exhaustive रसार्णवसुधाकर of सिङ्गभूपाल , as well as the two well known works of भानुदत्त , deserve mention. But none of these later treatises adds anything new or original to a subject already thrashed out it's almost.

A new turn was given to the theory by रूपगोस्वामिन्'s उज्ज्वलनीलमणि, which attempted to deal with rasa in terms of the वैष्णव idea of ujjvala or madhura rasa, by which was meant the श्रृङ्गाररस, the term ujjvala having been apparently suggested by Bharata's description of that rasa . The madhuara rasa, however, is represented not in its primarily a phase of bhakti-rasa (मधुराख्यो भक्तिरसः); for according to वैष्णव theology there are five rasas forming roughly the five degrees of the realization of bhakti or faith. Viz. शान्त (tranquility), दया (servitude or humility, also called प्रीति), sakhya (friendship or equality, also called preyas), वात्सल्य (parental affection) and माधुर्य (sweetness). The last, also called the ujjvala rasa, being the principal, is termed भक्तिरसराज् and constitutes the subject matter of the present treatise. The कृष्णरति or the love of कृष्ण forms the dominant feeling of स्थायीभाव of this sentiment, and the recipient here is not the literary सहृदय but the bhakta or the faithful . This स्थायीभाव, known as मधुरारति, which is the source of the particular rasa, is defined in terms of the love of कृष्ण ; and the nature of नायक and नायिका is defined in the same manner and their feelings and emotions illustrated by adducing examples from poems dealing with the love-stories of कृष्ण and राधा. The work is, therefore, essentially a वैष्णव's religious treatise presented in a literary garb, taking कृष्ण as the ideal hero, with the caution, however, that what is true of कृष्ण as the hero does not apply to the ordinary secular hero (i. 18-21) .

With the exception of the उज्ज्वलनीलमणि, which attempts to bring erotica-religious ideas to bear upon the general theme of rasa, these specialized treatises have, however, very little importance from the speculative point of view; and as they belong property to the province of Erotics rather than poetics, treatment of them should be sought elsewhere. The simple idea, elaborated less in all these works is that awakening of rasa is all important in poetry, and that the fundamental rasa is श्रृङ्गार or the erotic, which is consequently treated in its various phases with copious illustrations. This is clearly expressed in the attitude of the author of अग्निपुराण and of Bhoja, who accept only one poetic rasa, viz. the erotic . In the same way, रुद्रभट्ट declares श्रृङ्गारनायको रसः (i.20), and भानुदत्त appears to take it for granted that श्रृङ्गार occupies an honored place among all the rasa (तत्र रसेषु श्रृङ्गारस्याभ्यर्थितत्त्वेन etc, ed. Benaras, p. 21).

It is unnecessary, as it is unprofitable, in the discussion of general principles, to enter here into the elaborate definitions, distinctions and classifications of the amorous sentiments with all its varying emotional moods and situations, which these treatise industriously discuss and which have always possessed such attraction to mediaeval scholastic minds. The theorists delight in arranging into division and sub-divisions, according to rank, character, circumstances and the like, all conceivable types of the hero, the heroine and their adjuncts, together with the different shades of their gestures and feelings, in conformity with the tradition which already obtained in the cognate sphere of dramaturgy . Thus रुद्रभट्ट, after a preliminary enumeration and definition of the rasas and the भाव, proceeds to speak of two aspects of श्रृङ्गार, viz. सम्भोग (love of union) and विप्रलम्भ (love of separation) , and classify the hero (नायक) into the faithful (अनुकूल), the gallant whose attention is equally divided among many (दक्षिण), the sly (शठ), and the saucy (धृष्ठ), according to his character as a lover. Later writer, however, subdivide each of these, again, into the best (उत्तम), the middling(मध्यम) and the lowest (अधम), and arrange the whole classification under the fourfold division of the genus hero into four types viz., (i) the brave and the high-spirited (धीरोदात्त) (ii) the brave and haughty (धीरोद्धत) (iii) the brave and sportive (धीरललित) and (iv)the brave serene(धीरप्रशान्त), thus

giving us altogether forty-eight subdivisions of hero . The follows a brief description of the assistants of the hero in matters of love (narma-saciva), viz. the Comrade (पिठमर्द), the Companion (विट) and the Buffon (विदूषक), some adding चेट (or the servant) in the enumeration.

In the same way, the heroine is taken broadly in threefold aspects in her relation to the hero as his wife (स्वीया), or belonging to another, (परकीया) and as common to all (सामान्या) The स्वीया is subdivided again into the adolescent and artless (मुग्धा), the youthful (मध्या), and the mature and audacious (प्रगल्भा), i.e. the inexperienced, the partly experienced and the fully experienced. Later authors introduce greater fineness by subdividing each of these according to her temper, into the partially self-possessed (धीरा), the not self-possessed (अधीरा), and the partially self-possessed (धीराधीरा), higher (ज्येष्ठा) or lower (कनिष्ठा), each holds in the affection of the hero. The परकीया or अन्यदीया who, according to वैष्णव ideas, is the highest type of the heroine, is twofold, according as she is a maiden (कन्या) or married (ऊढा) ; while the सामान्या heroine, who is sometimes extolled (रुद्रभट्ट), and sometimes deprecated (रुद्रभट्ट), is only of one kind, the वेश्या or courtesan . The sixteen types of heroine thus obtained are further arranged according to eightfold diversity in their condition or situation in relation to her lover, viz. heroine who has the lover under absolute control (स्वाधीनपतिका), the heroine disappointed in her assignation through misadventure or involuntary absence (उत्का), the heroine in full dress expectant of her lover(वासकसज्जिका), the heroine deceived (विप्रलब्धा), the heroine separated by a quarrel (कलहान्तरिता as called अभिसन्धिता), the heroine outraged by the discovery of marks of unfaithfulness in the lover (खण्डिता), the heroine who meets her lover by assignation (अभिसारिका) and the heroine pining for the absence of her lover gone abroad(प्रोषितपतिका). We arrive in this way at an elaborate classification of the heroine into three hundred and eighty-four types; and one of the later writers states characteristically that there are other types also, but they cannot be specified for fear of prolixity (SD. iii.88, p. 120).

But here the theorists do not stop. The hero is endowed further by a set of eight special excellences, as springing from his character(सात्त्विक): e.g. brilliance (शोभा) including heroism, cleverness, truthfulness, emulation with superiors and compassion to inferiors; vivacity (विलास) indicated by his glance, step and laughing voice; grace (माधुर्य) displayed in placid demeanour even in trying circumstances; equanimity (गाम्भीर्य) consisting of superiority to emotions; steadfastness (स्थैर्य) in obtaining one's object; sense of honour (tejas) manifested in his impatience of insult; gallantry (lalita) in his word, dress or deportment; magnanimity (औदार्य) exhibited in generosity, agreeable words and equal treatment to friend and foe. The heroine is allowed a more generous set of qualities. First we have the three physical (अङ्गज) characteristics; भाव or first indication of emotion in a nature previously exempt, हाव or movement of eyes and brows indicating the awakening of emotion, हेला of the decided manifestation of feeling. Then we have seven inherent qualities. e.g. brilliance of youth, beauty and passion, the touch of loveliness given by love, sweetness, courage, meekness, radiance and self-control. Then are enumerated her ten graces, to which विश्वनाथ adds eight more. All her gestures, moods or different of delight, involuntary expression of affection, self-suppression through bashfulness, affected repulse of endearments, as well as the deepest and tenderest display of sentiments, are minutely analysed and classified. To this is added a detailed description of the modes in which the different types of heroines display their affection, the maidenly modest demeanour of the मुग्धा or the shameless boldness of the more experienced heroine. We should recognize the subtle power of analysis and insight which these attempts indicate; but speaking generally, the analysis is more of the form than of spirit, based on what we should

consider accidents rather than essentials. At the same time, marked as it is by much of scholastic formalism, there is an unmistakable attempt to do justice to facts, not only as they appeared to the experience of these theorists but to the observation of general poetic usage; and in the elaborate working out of the general thesis that the rasa is evolved on the basis of one or other of what they call the permanent mental moods, with the help of the various emotional adjuncts, the writers on poetics emotions, the psychology of which bears an intimate relation to their theory and in itself deserves a separate study.

The discussion of this extensive topic of the नायक and नायिका comes in topically under the theory of विभाव and अनुभाव, which act as factors of rasa. The mood, which is at the root of sentiment, is held to be the स्थायीभाव, the dominant feeling, the main theme of the composition in question. These feelings, according to Bharata, who is accepted on this point by all writers, can be classified into eight categories, viz. Love (rati), Mirth (हास), Sorrow (शोक), Anger (krodha), Energy (उत्साह), Fear (bhaya), Disgust (जुगुप्सा) and Astonishment (vismaya), though some later writes add, as we shall see. Tranquility (शम or nirveda) to the number. These dominant feelings are worked up into a corresponding number of sentiments of rasas through the means of the विभावs etc . The विभावs or Excitants are said to be of two kinds , viz., (1) the Substantial or Essential (आलम्बन), which consists of such material and dispensable ingredients as the hero, the heroine, the rival hero and their adjuncts, and (2) the Enhancing(उद्दीपन) viz. such condition of time, place and circumstance as serve to foster the rasa, e.g. the rising of the moon, comprise such outward manifestations of feeling as sidelong glances, a smile, a movement of the body, or such involuntary action of sympathetic realization of the persons depicted (सात्त्विक) as fainting (pralaya), change of color (वैवर्ण्य) trembling (vepathu) etc., which are, again dogmatically classified into eight varieties. There are other feelings of a more or less transitory nature, which accompany or interrupt the permanent mood without, however, supplanting it; and these are known, as we have noted, by the name of Accessories or व्यभिचारीभावs. These are linkened to servants following a king or to waves of the sea, whereby the dominant mood is understood as the king and the sea respectively, and classified elaborately into thirty-three categories, first mentioned by Bharata (pp.337f above) and implicitly accepted by his followers.

All these elements contribute towards developing the eight or nine स्थायीभावs into eight or nine different types of rasa. We have the earliest and most orthodox mention in Bharata.(p. 337 above) of eight स्थायीभावs and the resulting eight rasa corresponding to them, of which the Erotic (श्रृङ्गार), the Heroice (वीर), the Furious (raudra), and the Disgustful (बीभत्स) are the main, leading to four others, the Comic (हास्य), the Marvellous (adbhuta), the Pathetic (करुण) and the Terrible(भयानक). दण्डिन् accepts this classification (ii.280-87), but उद्भट (iv.4) adds the Quietist (शान्त) as the ninth rasa, although Bharata neither defines it nor mentions its corresponding विभावs. रुद्रट is singular in postulating a tenth rasa, called the Agreeable(preyas), which is accepted by Bhoja, with the tradition of two new rasa उदात्त and uddhata, as well as शान्त. रुद्रभट्ट admits nine rasas in Poetry; so do Hemachandra and the two वाग्भट्ट. The अग्निपुराण in the same way mentions nine rasas (and eight स्थायीभावs), but follows Bharata in regarding four as principal and says special stress on the श्रृङ्गार. आनन्दवर्धन admits शान्त (pp. 138, 238). Those later authors who accept the ninth rasa, The quietistic, necessarily postulate nirveda or self-disparagement, arising out of the knowledge of reality (तत्त्वज्ञान), as its स्थायीभाव, which is called by some authorities शम, or repose resulting from freedom from mental excitement . The वैष्णव writers (especially कविकर्णपुर add दास्य, sakhya, वात्सल्य,

preman and bhakti .

The author of the दशरूपक, however, contends that there can be no such स्थायीभाव as nirveda or शम, for the development of that state(if it is at all possible to destroy utterly love, hatred and other human feelings) would tend to the absence of all moods; and in the drama, the object of which is to delineate and inspire passion, it is inadmissible. Others, again hold that the Quietistic rasa does exit, as it is experienced by those who have attained that blissful state, but it has no स्थायीभाव in dramatic composition; for nirveda, being the composition; for nirveda, being the cessation of all wordly activity, or शम being freedom from all mental excitement, it is not fit to be represented. Hence मम्मट takes eight rasas in the drama(p.98) and nine in poetry (p.117). Bhoja, in accordance with the views of the school which lays special emphasis on the श्रृङ्गार, accepts only one rasa, the Erotic, in his श्रृङ्गारप्रकाश; and although he mentions as many as ten rasas in his सरस्वतीकण्ठाभरण, including the शान्त and the preyas, he appears to devote almost exclusive attention to the श्रृङ्गार in his treatment of the rasas in his work. The views about the admissibility of the शान्त are discussed by the author of the एकावली (pp.96.7) who maintains that Bharata has mentioned nirveda as व्यभिचारीभाव immediately in context after the enumeration of the स्थायीभावs and at the beginning of the list of the व्यभिचारीभावs; and this fact is interpreted as indicating that the sage meant it both as a स्थायीभाव and as a व्यभिचारीभाव; but Hemacahandra (p.81) anticipates and rejects this quibble of verbal interpretation, though agreeing in the general proposition as to the admissibility of शान्त as the ninth rasa.

विश्वनाथ primarily admits eight orthodox rasas (iii.p.160) but adds the ninth शान्त in deference to the views of these authorities, add a tenth rasa, called वात्सल्य or parental affection, subscribing apparently to वैष्णव ideas (pp. 185-86) . He quotes a verse to explain that the mood, called by the great sages the Quietistic, which has, among all sentiments, tranquility (शम) as its basis, is that state in which there is neither pain nor pleasure, nor hatred, nor affection, nor any desire . But the question arises how can Quietistic, being of the nature described, arising only in a state of emancipation wherein there is an absence of all feelings like the Accessories etc., be rasa, which implies a state of relishable enjoyment . To this objection विश्वनाथ replies that the Quietistic is a rasa because in that state the soul is only about to be emancipated (युक्त-वियुक्त-दशा) and is not completely absorbed in the Divine, so that the presence of feelings, like the Accessories etc. it is not incompatible. As for the statement that there is an absence of even pleasure in it, it is not contradictory, for it refers only to wordly pleasure . जगन्नाथ, the latest writer on the subject, advocates nine rasas and maintains (pp.29-30) that like all other rasa, the शान्त is Capable of being represented and appreciated by the audience. Since the clever performance of the actor, representing such a state of mind, free from disturbance and not affected by the passions or desire, is found in actual experience, to produce an impression on the mind of the audience it is their state of mind, exhibited by their silent and rapt attention, which ought to settle the question. The representation of absolute indifference or the actor’s power of representing it is not the point in issue: it is the capacity of the spectator who actually feels the sentiment. जगन्नाथ also adds that even those, who do not admits this rasa in the drama, should accept it in poetry from the fact that poems like the महाभारत have for principal theme the delineation of शान्त rasa, which is thus established by universal experience (अखिललोकानुभवसिद्धत्वात्). नागेश remarks on this that the शान्त rasa should also be admitted in the drama on this ground, in as much as the Prabodha-candrodaya is universally acknowledged as a drama(p.30).

Coming to the essential bliss of rasa, viz. the भाव, we have seen that Bharata defines it in general

terms as that which manifests the sense of poetry through the three kinds of representation. वाचिक, आङ्गिक and सात्त्विक ; it is the emotion which ultimately becomes a sentiment, if it is dominant and therefore, serves as the basis of rasa. But later writers arrive at a greater precision and apply the term technically to those cases where there is no proper or complete development of rasa. Both धनञ्जय and भानुदत्त expand the definition of Bharata, the later defining it as a deviation from the natural mental state (विकार) which is favourable to the development of rasa (रसानुकूल) and which may be either physical (शारीर) or mental (आन्तर). But मम्मट fixes the conception of भाव as रतिर्देवादिविषयाव्यभिचारी तथाञ्जितः ('love having for its object a deity or the like, and also the suggested Accessory'), on which he adds the gloss : आदिशब्दात् मुनि-गुरु-नृप-पुत्रादि विषया, कान्ताविषयया तु व्यक्ता शृङ्गारः ('by the term the like are meant sages, preceptor, the king, the son etc., the one having a beloved woman for its object becomes the erotic') Govinda explains that the word rati here implies the स्थायीभाव which has not attained to the state of rasa . What is meant is that when the स्थायीभावs, like rati, have for their objects god, king, son and the like, or when the व्यभिचारीभावs are manifested as the principal sentiment in a composition, there is no rasa but भाव; and this definition is accepted by all writers after him.

Thus, विश्वनाथ explains the भाव as follows:

सञ्चारिणः प्राधानानि, देवादि-विषया रतिः।
उद्बुद्धमात्रः स्थायी च भावेत्याप्यभिधीयते॥

In other words, when the Accessories are principal, or when love etc. has a deity or the like for its object, or when a dominant feeling (स्थायीभाव) is merely awakened, we have भाव. His own gloss upon the above verse explains it in this way. Although they are always concomitants of rasa in which they finally rest, such Accessories as are for the time being followed by his king in his marriage procession; or love etc. having a deity, a sage, a spiritual guide, a king and the like for its object; or such स्थायीभाव as are merely awakened or have not attained the state of a rasa from their not being fully developed, are denoted by the term भाव. In all these cases apparently there is no complete or proper development of Rasa; and a भाव, therefore, in later terminology, may be generally described as an incomplete rasa. But this must be distinguished from the रसाभास or semblance of rasa and the analogous भावाभास, which occur when the poetic sentiments and emotions are falsely attributed(e.g. sentiments in animals such as described in कुमारसम्भव, iii. 36-37), or when they are brought out improperly, i.e. when there is a lack of entireness in them as regards their ingredients . The cases occur, according to Bhoja (v.20) when the mood or emotion is developed in an inferior character (हीनपात्र), in animals(तिर्यक्), in the rival hero (नायकप्रतियोगिन्) or in any other subordinate object (गौणपदार्थ) , but विश्वनाथ elaborately summaries various other cases (iii. 263-66), especially noting improprieties in connation with particular rasa. Thus, there is an impropriety if the Terrible (भयानक) is made to reside in a noble personage, or the Comic (हास्य) in a spiritual guide. It must be noted, as जगन्नाथ explains, that if a mood or feeling is developed by impropriety, the impropriety, unless it acts as a bar, does not constitute a fault .

In the same way (1) when there is an excitement only (and not full development) of sentiments, (2) when two opposing sentiments, striving for mastery, are represented as being relished in one and the same place and at the same time, or(3) when a number of sentiments, of which each succeeding one puts down the preceding, they constitute respectively भावोदय, भावसमाधि and भावशबलता. Now, all these phases of sentiment are taken as rasa topically, inasmuch as they are capable of being tasted (सर्वेऽपि रसनाद्रसः). These cases do not seem to have been formally recognized by Bharata, though hinted at by him in vi. 40, as

we learn from Abhinava's commentary on ch.vi, which is partially reproduced also in his Locana, p. 66. They are first met with in उद्भट, who includes them under ऊर्जस्विन् (vi. 6); but in रुद्रट (xii.4) and the ध्वनिकार ii.3) we find them definitely established.

This incomplete development of rasa and its subordination must be distinguished from the cases of the opposition (virodha) of simultaneously existing sentiments in the same theme. It is laid down formally that some rasas are intrinsically inconsistent with one another, e.g. the Erotic is opposed to the Disgustful, the Heroic to the Quietistic, and so forth . The incongruity or opposition result in three ways, viz. (1) from identity of the exciting cause (आलम्बनविभाव) (2) from identity of the subject of emotion and (3) from immediacy of succession. The incongruity in the first two cases may be removed by representing the sentiments as having different subjects (e.g. in the hero and the rival hero). The last case conflict may be removed by placing, between the two immediately succeeding sentiments, a sentiment which is not opposed to them. These are cases where two or more rasas stand in the relation of principal and subordinate; the term 'subordinate' being misleading, it is sometimes called a concomitant rasa (सञ्चारिन्), which implies that it cannot terminate absolutely in itself and at the same time is distinct from a fully developed rasa, as well as from a mere undeveloped भाव . There is also no incongruity where a conflicting rasa is recalled or described under comparison. All these questions properly come under the theory of Propriety or Aucitya in relation to rasa, elaborated by आनन्दवर्धन and his followers and is ultimately based on the dictum attributed to the ध्वनिकार (p.145), cf. Locana p.138), which lays down in general terms that the secret of Rasa lies in conforming to the established riles of propriety.

The doctrine of the ध्वन्यालोक that in a composition in which the sentiment is awakened, proprieties of various kinds (e.g. with reference to the speaker, the theme, the employment of the विभावs etc., the use of the अलङ्कारs and other elements, pp. 134f, 144f) should be observed, and that certain items of conflict(virodha) with the dominant sentiment should be avoided, gave rise to a theory of Propriety, which is generally comprehended by later writers under the discussion of the doÒas of rasa. Thus, in later treatises, the conventional doÒas of पद, पदार्थ, वाक्य, वाक्यार्थ recognized since वामन's time. It is क्षेमेन्द्र alone who emphasizes the importance of the subject by making it the theme of his औचित्यविचारचर्चा which will be noticed in its proper place. महिमभट्ट, in the twelfth chapter of his work, considers the question of anaucitya in some details. According to him, impropriety or incongruity has two aspects, according as it refers to शब्द or to अर्थ respectively. Then he speaks of propriety as external (बहिरङ्ग) or internal (अन्तरङ्ग), apparently as it is शब्दविषय or अर्थविषय. The cases of internal propriety, which consists in the proper employment of the विभावs etc. have already been explained by previous writers(e.g. ध्वन्यालोक pp. 144f). महिमभट्ट, therefore, takes up the question of external propriety, which he thinks falls under five faults of composition, viz. विदेहाविमर्श (non- discrimination of the predicate), prakrama-bheda (violation of uniformity in the expression), karma-bheda(syntactical irregularity), paunaruktya (tautology) and वाच्यवचन (omission of what must be expressed), to the explanation and exemplification of which he devotes, amidst several digression, the rest of the chapter(ch. ii). It is difficult to say why these faults of expression alone are singled out as defects resulting in a violation of rasa (rasabhaÉga). Later writers would include them under general defects, reserving the cases of virodha or opposition of rasa as specific instances of rasa-doÒas.

REFERENCES

[1]. But the Natya-darpana, as noted above (p. 446 fn), as well as Bhoja (सुखदुःखावस्थारूपः), believs that Rasa is सुखदुःखात्मक. The रसकलिका (p. 312) also holds this view. See the elaborate arguments set forth in Natya-darpana(ed. GOS, p. 159) in support of this view. Siddhicandra (Kavyaprakasha-khandana pp. 16-21) refers to this theory of the "Navyas" that all Rasas are not pleasurable, but some distinctly painful. They accordingly admit the four pleasurable Rasas, viz. श्रृङ्गार, वीर, हास्य, and अद्भुत only, and not those which involve pain, viz. करुण, रौद्र, बीभत्स and भयानक. See the question discussed by V. Raghavan, Number of Rasas, ch. viii.

[1]. Cf. Jacobi in GgA, 913, pp. 308f.

[1]. These circumstances, Dhanika thinks, disprove the व्यङ्ग्यत्व of Rasa. It seems that Dhanika does not accept the व्यङ्ग्य-व्यञ्जक relation of Rasa to poetry, but holds some views similar to the भाव्य-भावक theory of भट्टनायक (ed. Parab, 1917, p. 96).

[1]. See above p. 337. The fourfold division is probably adopted as an ostensible rationale for the doctrine of four primary and four secondary Rasas recognized by Bharata.

[1]. E.g. Yoga-sutra i. 33.

[1]. न च तथाभूतस्य शान्तरसस्य सहृदयास्वादयितारः शान्ति अथ तदुपायभूतो मुदिता-मैत्री-करुणो प्रेक्षादि लक्षणाः तस्य च विकास विस्तार-क्षोभ-विक्षेपरूपतैवेति।

[1]. भानुदत्तः, who substantially follows the doctrine of Rasa detailed their, is however singular in his classification of some aspects of Rasa. He speaks of Rasa as Laukika and alaukika, subdividing the latter into svapnaika (enjoyed in a dream), manorathika (fanciful like a castle in the air) and anupanayika (as depicted in poetry). He again gives us (रसतरङ्गिणी. Ch. viii, p. 65, ed. Regnaud) a three fold arrangement of Rasa with Reference to its manner of manifestation: (i) abhimukha, when it is manifested by means of the भाव, विभाव and अनुभाव. (ii) vimukha, when these elements are not directly expressed; so called because it is comprehensible with difficulty. (iii) paramukha, which has again two aspects according as it is (a) alamkara-mukha, i.e. where the alamkara is principal and the rasa is secondry. This includes probably the cases of figures like rasavat, which are included in गुणीभूतव्यङ्ग्यकाव्य by the Dhvani theorists, and (b) bhava-mukha where the bhava is in the same way principal.

[1]. This follows धनञ्जय's dictum that the enjoyment of Rasa is not precluded in the actor, if he realizes in himself the feelings depicted.

[1]. The topics dealt with in its three chapters are : I. The rasas, the स्थायिभावाः, the dramatic वृत्तिs, शृङ्गार and its division; the नायक, classified with illustrations; his assistants; classification of the नायिका, II.
Characteristics of love-in-separation, of पूर्वराग, the ten stages of love, the उपायs, etc, III. The other rasas, viz. हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स, अद्भुत and शान्त; the four v[a]ttis appropriate to the rasas.

[1]. See above p. 517.

[1]. See pp. 233f, and chapter on Minor Writers.

[1]. See p. 235.

[1]. See p. 236. The three vilasas of this extensive work deal with the following topics : i. The hero, his qualities and classification; his adjuncts; the heroine, her classification and qualities, her sattvika excellences; the uddipana-vibhavas; the riti and the gunas; the dramatic vrttis; the satvika bhavas, ii. The vyabhicari-bhavas, the anubhavas, the eight rasas, iii. The drama and its varieties, characteristics etc.

[1]. The eight tarangas of Rasa-tarangiÆi are (i) Definition of Bhavas and subdivision there of; the sthayi-bhavas. (ii) The vibhavas. (iii) The anubhavas. (iv) The eight sattvika bhavas. (v) The vyabhicari-bhavas.(vi) The rasas and detailed treatment of sringara. (vii) The other rasas. (viii) The sthayi-bhavaja and rasaja drusti. The Rasamanjari, a much smaller work, devotes more than half of itself to the nayika and her companions and applies the rest to the sringaranayaka, his assistants, the eight sattvika gunas, the two aspects of srnigara and the ten stages of vipralambha-sringara.

[1]. यत्किञ्चिल्लोके शुचिमेध्यमुज्ज्वलदर्शनम् वा तत् शृङ्गारेणोपमीयते, Gaikwad ed., pp. 89-90.

[1].विश्वनाथ चक्रवर्तिन् explained as शान्तप्रीतिप्रेयोवात्सल्योज्ज्वलनामसु मुख्येषु......सैवोज्ज्वलापरपर्यायो भक्तिरसानां राजा मधुराख्यो रसः।

[1]. स्वाद्यत्वं हृदि भक्तानामानीता श्रवणादिभिः एषा कृष्णरतिः स्थायी भावो भक्तिरसो भवेत्।, cited by विश्वनाथ चक्रवर्तिन्, p.4.

[1]. मधुराख्याय रतेर्लक्षणं चोक्तं मिथो हरेर्मृगाख्याश्च सम्भोगस्यादिकारणम्, मधुरापरपर्याया प्रियताख्योदिता रतिः, ibid., Ioc, cit.

[1]. The orthodox theorists (cf. जगन्नाथ pp. 47f) would regard bhakti(which being based on अनुराग or attachment cannot be comprehended by शान्त रस) as included in भाव, being देवादिविषय रतिः, and as inadmissible as a fully developed rasa. Cf. भानुदत्त, रसतरङ्गिणी ch. vi- On उज्ज्वलनीलमणि and वैष्णव theory of Rasa see S.K. De, वैष्णव Faith and movement, Calcutta, 1942.

[1]. See pp. 135-36. Cf. also मन्दारमरन्दचम्पू, ix, p. 107. (ed. काव्यमाला).

[1]. See Bharata नाट्यशास्त्र ch. Xxii-xxiv; दशरूपक iv.50f. and iii.

[1]. This statement follows Bharata and is accepted by most theorists including Bhoja; but धनञ्जज distinguishes three cases, privation (ayoga), sundering (विप्रलम्भ) and union(सम्भोग) : the first denoting the inability of lovers, through obstacles, to secure union, and the second arising from absence or resentment. The first case of love may pass through the well known ten stages(longing, anxiety, recollection, praise of the beloved, distress, raving, insanity, fever, stupor and death; cf. शिङ्गभूपाल ii. 178-201); while the second condition may be caused by a quarrel, due to discovery or inference of unfaithfulness (which may be counteracted bysix उपायs, viz. conciliating, winning over her friends, gifts humility, indifference or distracting her attention) or by absence arising from business, accident or a curse.

[1]. The good qualities of the hero are innumerable. For his characteristics, see धनञ्जज ii. 1 f; विश्वनाथ iii. 30f; शिङ्गभूपाल i. 61; etc. On the theme of नायक-नायिका, as treated in अलङ्कार works, see V. Raghavan, Intro. To his ed. Akbarshahi शृङ्गारमञ्जरी pp. 14-90.

[1]. The प्रतिनायक or the rival of the hero is धीरोदात्त, haughtiness being his essential characteristic; but he is described also as stubborn and vicious(दशरूपक ii. 9; साहित्यदर्पणiii. 130, p. 136). The पीठमर्द of the heropossesses, in a lesser degree, the qualities of the hero(e.g. Markanda in the मालतीमाधव). The term पीठमर्दिका in the feminine occurs in the मालतीमाधव in the sense of a trusty go-between, applied to the nun कौशिकी. The विट, usually neglected in the serious drama, except in चारुदत्त and मृच्छकटिक, appears in all his glory in the भाण, for which he is prescribed as the hero.

[1]. An amour with a married woman cannot, cannot, according to रुद्रट and रुद्रभट्ट form the subject of dominant Rasa in a play or poem; but this is the central theme of वैष्णव lyrics.

[1]. भरत xxii. 197-206 : धनञ्जय ii. 21f : विश्वनाथ iii. 67-70; शिङ्गभूपाल i. 121-51. Rarely a heroine, she must be represented as love when she is a heroine; but she cannot be so when be so when the hero is divine or royal.The exception occurs in a prahasana or farce(and incidentally in a भाण or the erotic monologue) where she can be represented in her low and avaricious character for cosmic effect.

[1]. The usual meeting places are given as a ruined temple, a garden, the house of a go-between, a cemetery, the bank of a stream, or any dark place generally.

[1]. Theoretically the Rasa is one, a single ineffable and impersonal joy, but it can be subdivided, not according to its own nature but according to the emotions which form its basis. भरत (ch. vi) and other theorists give a full description of the स्थायीभावs, विभावs etc. In the case of each Rasa, into which space forbids us to enter. A summary of it will be found in Lindenau Rasalehre Leipzig 1913, pp.8f. Thus, in the case of the heroic sentiment (वीर), the dominant feeling is energy(उत्साह); the excitants(विभावs) are coolness (असम्मोह), resolve(अध्यवसाय), circumspection(नय), strength(बल), etc.; the ensuants (अनुभावs) are firmness(स्थैर्य), heroism (शौर्य), sacrifice(त्याग) etc.; the व्यभिचारिणः or accessory feelings are those of assurance, arrogance. विश्वनाथ gives them somewhat differently. The essential excitant (आलम्बनविभाव) of the heroic sentiment, according to him, consists of those to be vanquished, and their acts and gestures from the enhancing excitants (उद्दीपनविभावs); the ensuants comprehend the desire or seeking for assistants and adherents; while the accessory feelings are patience, intelligence, remembrance, cogitation etc. The sentiment may take three from of corage (Bharata vi. 79=ed. Regnaud vi.80), viz. in battle (युद्धवीर), in virtuous deeds(धर्मवीर), and in liberality (दानवीर), to which later writers (e.g. विश्वनाथ) add दयावीर. It should also be noted that a special color and a presiding deity is attributed to each Rasa. Thus, red, black, white, dark, (श्याम) and grey are associated, not unreasonably with the furious, terrible, cosmic, erotic and pathetic and sentiments, although it is difficult to explain why horror is dark blue (नील), wonder is orange, and heroism us yellow. The respective deities are विष्णु (erotic), यम(pathetic), प्रमथ(comic), रुद्र(furious), इन्द्र(heroic), काल(terrible), महाकाल (disgustful), ब्रह्मा(marvelous),. विश्वनाथ adds that नारायण is the presiding deity of शान्त rasa and the colour associated is that of Jasmine(kunda).

[1]. These two divisions of विभाव are not mentioned by भरत but distinguished by धनञ्जय (iv. 2) and traditionally handed down by विश्वनाथ.

[1]. See above p. 339, fn 2. The सात्त्विकभावs in later works from a special class of अनुभावः.

[1]. If the verse is genuinely UdbhaÔa's. See above p. 431, fn. 2- On the शान्तरस in भरत and धनञ्जयsee S.K. De, Some Problems pp. 139-41. On the number and nomenclature of Rasa generally see V. Raghvan, Number of Rasas, Adyar 1940.

[1]. The शान्त text in Bharata, available in certain recensions, are interpolations. See Bhagavan, op.cit., pp. 15f , विश्वनाथ, कालिदास knew only eight Rasas, विक्रमोर्वशीय ii. 18, where मुनि-भरत is also mentioned.

[1]. This sentiment is also closely related to the sentiment of disgust; for it arises from an aversion to worldly things.

[1]. See S.K. De, वैष्णव Faith and Movement, p. 145.

[1]. भानुदत्त counts (रसतरङ्गिणी) माया under the Rasaa. रुद्रट mentioned preyas (friendship), which Rasa is accepted by भोज. Some writers add श्रद्धा along with भक्ति. See भानुदत्त, op. cit., p. 56, 11. 25f (ed. Regaaud) शिङ्गभुपाल admits only eight Rasas, but his treatment is from the standpoint of dramaturgy.

[1]. न यत्र दुःखं न सुखं न चिन्ता न द्वेष रागौ न च काचिद् इच्छा रसः स शान्तः कथितो मुनिन्द्रैः, सर्वेषु भावेषु शमप्रधानः, cited also in Dasa, iv. 49 (comm.).

[1]. इत्येवं रूपस्य शान्तस्य मोक्षावस्थायां एवात्मस्वरूपापत्तिलक्षणायां प्रादुर्भूतत्वात् तत्र सञ्चारादीनामभावात् कथं रसत्वम्।

[1]. यश्चास्मिन् सुखाभावोप्योक्तस्य वैषयिकसुखपरत्वान्न विरोधः।

[1]. A fourth kind of abhinaya is sometimes added, viz. आचार्य (extraneous), i.e. derived from dress, decoration etc.

[1]. रतिरीति स्थायिभावोपलक्षणं, देवादिविषयेत्यापि अप्राप्तरसावस्थोपलक्षणम्, p. 206.

[1]. अनौचित्यप्रवृत्तत्वे आभासो रसभावयोः(मम्मट) explained as : अनौचित्यं चात्र रसाणां भरतादिप्रणीतलक्षणानां सामग्रीरहितत्वे त्वेकदेशयोगित्वोपलक्षण परं बोध्यम्।

[1]. शिङ्गभूपाल(pp. 141-2) distinguishes two cases (i) where Rasa is ascribe to an inanimate object and (ii) where it is developed in an inferior character or in animals.

[1]. यावता त्वनौचित्येन रसस्य निष्पत्तिः तावत्तु न वार्यते, रसप्रतिकूलस्यैव तस्य निषेधत्वात्।

[1]. Some Rasas again are mutually consistent, e.g. करुण and बिभत्स go with हास्य (cf. भरत vi. 40) etc. this question see Lindenau Rasalehre (pp. 71f). According to विश्वनाथ, The Rasas hostile (i) to शृङ्गार are करुण, बिभत्स, रौद्र वीर and भयानक (ii) to हास्य-भयानक and करुण (iii) to करुण, हास्य शृङ्गार and शृङ्गार (iv) to रौद्र- हास्य, शृङ्गार and भयानक (v) to वीर-भयानक and शान्त (vi) to भयानक, शृङ्गार, वीत, रौद्र, हास्य and शान्त (vii) to शान्त,वीर, शृङ्गार, रौद्र,हास्य, and भयानक (viii) to बिभत्स- शृङ्गार. भानुदत्त gives the antagonistic Rasas as follow: शृङ्गार-बिभत्स; वीर-भयानक; रौद्र-अद्भुत; हास्य-करुण।

[1].अथैवात्र प्रधानेतरेषु रसेषु स्वातन्त्र्य विमर्शराहित्यात्, पूर्णरसभावमात्राश्च विलक्षणतया, सञ्जारि रसनाम्ना व्यपदेशः प्राच्यानाम्, Visvanatha, p.420.

Bibliography:

1. Bhavaprakashana of Saradatanaya, Edited by Madan mohan Agarwal, Chowkhamba Surabharati Prakashana, Varanasi, 1983.
2. Dasarupaka of Dhananjaya with Dipika Commentary, Amarnathvidya Prakashan, Delhi, 1979.
3. History of Sanskrit Poetics by S.K. De, Calcutta Oriental Press, Calcutta, 1925.
4. Introduction Indian Poetics and Aesthetics by Prof. B.K. Dalai and Prof. Ravindra Muley, Centre of Advanced Study in Sanskrit, University of Pune, Pune, 2014.
5. Natyadarpana of Ramacandra & Gunacandra (1st Edn.1986 & 2nd Edn. 1994), Edited by T. C. Upreti, Parimal Publication, Delhi, 2005.
6. Natyashastra of Bharata, (Part - 1: Chapter 1-13 ; Part -2: Chapter 14-28 ; Part – 3: Chapter 29-36 ; Edited by Puspendar Kumar, New Bharatiya Book Corporation, Delhi, 2006.
7. Prataprudriya of Vidyanatha with Commentary of Kumaraswami (2nd Edition), Edited by Dr. Raghvan , Sanskrit Education Society, Madras, 1979.
8. Rasaviveka of Unknown Author, Edited by T.K.V.N. Sudarsanacharya, Sahitya Akademi, Delhi, 1957.
9. Rasapradipa of Prabhakara Bhatta,Saraswati Bhavan, Vanaras, 1982.
10. Rasamimamsa of Gangaram Jadi Edited by Srinivas Sharma, Chowkhamba Sanskrit Series, Vanaras, 2003.

11. Rasamanjari of Bhanudatta Edited by Dr. Jamuna Pathak, Chowkhamba Vidya Bhavan, Varanasi, 2011.
12. Rasakaustubha of Benidatta, Indu Prakashan, Roop Nagar, Delhi, 1978.
13. Rasavilasa of Sukla Bhudev, Edited by Premlata Sharma, Poona Oriental Book House, Sadashiv Peth, Poona, 1952.
14. Rasagangadhara of Panditraja Jagannatha with commentary of Gurumarmaprakasha by
Nagesbhatta, Edited by Sri Parasnsth Dwivedi, SampurnanadaSanskrit Visvavidyalaya, VaraÆasi, 2000.
15. Rasatarangini of Bhanudatta, Published by Sri Venkateswar Press, Mumbai, 1836.
16. Rasaviveka of Unknown author Edited by Sudarsanacsrya, Sri Venkateswar Oriental
Research Institute, Tirupati, 1956.
17. RasakaumudÍ of Srikantha Edited by A.N. Jani, Oriental Research Institute, Baroda, 1959.
18. SahityadarpaÆa by Visvanatha, Bharatiya vidyaprakashan, Baranasi, 2001.
19. The Number of Rasas by V.Raghvan, The Theosophical Publishing House, Adyar, Madrass, 1975.
20. The Post Jagannatha Literary Criticism in Sanskrit by Dr. M. SivakumaraSwamy, Dvaita Vedanta Studies and Research Foundation, Bangalore, 2009.
21. Ujjvalanilamani of Rupagoswamin, Edited by Narayana Goswami Maharaj, Gaudiya Vedanta Prakashana, New Delhi, 2006.

National Education Policy (NEP) : Focusing on Enrichment of Human Values for Ensuring A Better Governance : A Case Study

Tulsī Prajñā
49 (196)
Oct-Dec, 2022
ISSN : 0974-8857

Dr Lipi Jain*

Abstract

Ancient India, at every aspect of life was enriched with spiritual and human values with an unparalleled wealth of knowledge and virtues; which made India a rich heritage. As Aristotle has said, "Fate of empires depends on the education of youth". Administration also had a rich character of values through the ages of Monarchy in Ancient and Medieval India, under the rule of East India Company and in the early stages of Independent India which set apart its dignity to the world. But, in the present scenario, values have faded away over the period of time replaced by unethical mindset for self-interest and corruption has emerged as one of the core businesses in public administration.

Steps have been taken to address corruption, the most important being the implementation of digital systems in every aspect of governance bringing transparency to a great extent. Introducing RTI Act and such other initiatives have pulled some strings but change in present education system with the implementation of NEP2020 shall be the major force of lowering the strength of corruption.

Tomorrow's administrators are Today's students. Teaching and practicing of values-based courses at every stage of study shall discourage the infusion of corruption as ethics as a subject administrators will be taught at every stage of thier study. There is an urge to re-examine and revitalize the objectives of education system to make it broader and more meaningful to the society, so that the youth would be empowered through education and training. As a result, they would able to work and live together

* **Dr Lipi Jain,** Assistant Professor, Jain Vishva Bharati Institute, Ladnun.

for the betterment of society while making their social, moral, and national duties more fruitful. Introduction of the lineage of the Indian knowledge systems and critical thinking shall prove to be a source of strength of the future administrators which shall be instilled in the young men, the spirit of service and striving for continual progress and quality in every aspect of work.

Moulding responsible and patriotic individuals shall be the outcome of Implementation of NEP 2020, focusing on human values at every stage of life, which, in the administrative system of the country shall bring in Honesty and Transparency in day to day working principles and hence shall ameliorate the future of public administration apropos the country.

Key Words

Human Values, NEP 2020, Corruption, Public Administration, Indian Knowledge system.

Introduction

In all governments, rich or poor, capitalist or socialist, the problem of misuse of public funds and power is a serious matter and is continuously addressed at different levels. It is confined not to one level of government but transcends all levels from the centre to the local, down to the village level.[1] India; although a democratic Nation, relying on the path of *'Sarve Bhavantu Sukhinaḥ'*, is not exempted from the pangs of corruption and ranked 93rd among 140 countries in the The 2022 *WJP Rule of Law Index.*[2] Part III and Part IV of Indian constitution, i.e., Fundamental Rights and Directive Principles of State Policy; turn out India as a welfare form of State. That means the State where ruling powers are vested in the hands of its citizens, the State whose utmost duty is welfare of each and every individual.

India; being a home to rich heritage, culture and values in every aspect of life; administration in ancient India was also accomplished with universal values like Love, Truth, Right conduct, Peace and Non-violence along with human values like humanity, morality, integrity, consciousness, respect till the early stages of independent India. But, in the recent past; human values have taken a back-seat and personal interest has taken its place, morality has been replaced by wrong deeds and dishonesty has taken over integrity. Inadequacy of potential, lack of accountability and consciousness, decay of institutional check and balance, degradation of human values; all these factors and changes incorporates the seed of Demoralization and Corruption in the society.

Public administration, which has evolved for civil society and for the benefit of the public is now exploiting and misguiding public, irrespective of the kind of duties of the people being performed for the well-being. This is the time, the whole society needs to be shaken, where unethical deeds, particularly corruption, spreading like wildfire is making the country poorer and is responsible for big failure of democracy too. Reawakening and reformation of society not only needs the decision makers to bring consciousness in their deeds and legislative body, strong enforcement of laws, which is strongly desired, public awareness to understand their rights and uphold their own responsibilities. Since independence, government has taken various steps like framing of Lokpal and digitization of resources and information, which have been subjects of the transparent civil society, this has led to formation of agencies like anti-corruption bureau and implement laws such as Right to Information Act to control the prevailing ills of administration, have also helpul : However, the consciousness; regarding rights and duties of citizen as well as governing agency; for what is right and what should not be done, what is just can only be carried out by education system.

Swami Vivekananda, the profound thinker of our Nation says that youth will change the picture of India. To train and make the youth conscious, education is the most powerful mean. As Nelson Mandela stated, "Education is the most powerful weapon which you can use to change the World."[3] Union HRD Minister Ramesh Pokhriyal 'Nishank' in the 57th convocation of IIT Bombay said "Education is a 'weapon' which can transform the lives of students, their families and society. But it depends on parents, teachers and policy makers; that to what extent they are making the future generation more fruitful in leading towards humanity and morality which in turn lead towards nation's pride."[4]

Corruption in Public Administration

A simple definition of corruption can be given as "When all the kins and kinds are not treated in equity, they result in corruption." The World Bank defines corruption simply as *"the abuse of public power for private self."*[5]

a. Contours of Corruption

Corruption is found in separate forms in society and in innumerable forms. The major ones can be given as:

1. Bribe – money offered in cash or kind or gift as an inducement to procure illegal or dishonest action in favour of the giver
2. Nepotism – undue favour from the holder of patronage to relatives
3. Misappropriation – using others money for one's own case
4. Patronage – wrong support/encouragement given by the patron and thus misusing the position.

b. Different Levels of Corruption

1. **International:** International dealings are done between organisations of separate countries and generally involve money to the tunes of thousands of crores. The dealings are often complex and involve a huge amount of wealth and legal issues to be resolved along with external international factors. The dealings primarily involve consultants or mediators. These consultants or mediators sometimes act as a conduit of corruption by influencing the government and sometimes its policies which is very harmful.

   Unethical beneficiaries of corruption can be a government, a group of people, a country or organisations.

2. **National:** National corruption primarily takes place in procurement / sell off / contracts and appointments in public sector. This corruption is done in the tune of hundreds of crores to thousands of crores in monetary terms. Mostly Public representatives are involved in these sorts of corruption along with higher ranked bureaucrats of the government. The dealings are done in such a way that the paper work is mostly clear of misdoings but the bribe or unauthorised gain is accumulated in some form that cannot be determined on records.

3. **Organisational:** This sort of corruption is primarily done in the procurement and appointments at organisational level. Mostly, the higher officials of the organisation are involved in such corruption that involves misuse of power and position for their personal gain. This affects the organisation as a whole and can be identified with minute monitoring or investigation. The misuse of funds and abuse of power prevents the rise of an organisation in public system leading to dissatisfaction in public.

4. **Local:** Corruption at this level is rampant and is most discussed in the villages and at local level. The social fabric is affected by this form of misuse of public money and power. The panchayats, communities and other such management are affected and the representatives in power play foul, thereby incurring public loss and self-gain.

c. Costs to be paid for Corruption:

1. **Political Costs:** The political costs of corruption are manifested in weakened public trust in political institutions, reduced political participation, perversion of electoral process, restricted political choices available to citizens and loss of legitimacy of the democratic system.

2. **Economic Costs:** Corruption reduces economic efficiency by misallocation of resources in favour of rent seeking activities, increasing the cost of public transactions, acting as an additional tax on business thereby reducing investment, reducing genuine business competition.

3. **Social Costs:** Corruption distorts the value systems and wrongly attaches elevated status to occupations that have rent seeking opportunities. This results in a disillusioned public, a weak civil society, which attracts unscrupulous leaders to political life.

4. **Environmental Costs:** Environmentally devastating projects are given preference in funding, because they are easy targets for siphoning off public money into private pockets.

5. **Issues of National Security:** Corruption within security agencies can lead to a threat to national security, including through distortion of procurement, recruitment of ineligible persons, providing an easy route for smuggling of weapons and terrorist, bringing into the country and money laundering.

d. Corruption in India

India, being a large country with different beliefs and traditions, corruption exists at upper, middle and at lower or local level.

Corruption in systems and institutions involved in formulating, implementing and overseeing public policies, malpractices during defense purchases from other countries and companies involving large sums of money, public investments in infrastructure, procurement of food grains for Public Distribution, etc. can be cited as examples of corruption at a high level.

Malpractices at the execution or implementation levels for public projects or during the delivery of services are examples of middle-level corruption affecting quality of the projects.

The petty level of corruption frequently occurs in everyday life. Though the amounts are small but these are primarily exploitative in nature.[6]

Regarding the development of our country, corruption has created black and red money which is not available for productive investment. In spite of the liberalization of the economy, corruption comes in the way of Foreign Direct Investment inflows. In short, it has become a threat to the national security of India. The serious consequences of corruption have created the need to fight it from all angles at the earliest.

Efforts to Curb Corruption at Policy Level in India

Stringent efforts are being made and legislations have been enforced to curb the menace of corruption and these have also been implemented. But the sheer size of the country as well as its operations, the resources to implement the same has been a daunting task.

Indian government is pursuing its commitment of "Zero Tolerance Against Corruption" in regard of which, it has taken several steps and enacted policies to prevent corruption. Some of the highlights of such policies includes introduction of Government e-Marketplace (GeM), a procurement portal specifically designed for the government purchase following its own set of rules. Digitization of public procurement has given new wings to procurement speeding up the process, hence lessening of corruption. Introduction Direct Benefit Transfer (DBT) Scheme (PFMS portal of Government of India) has helped immensely in curbing the menace of corruption, since the middlemen who were involved in the transfer of money and extending the benefits are wiped out giving the end benefactor, his appropriate dues. Also, digitization has helped in record-keeping of the data much easier and retrievable bringing in transparency in the system[7].

Introduction of Prevention of Corruption Act and Right to information Act has been the frontrunners of the Government policies. Implementation of these acts has attracted widespread wrongdoings and correct systems are being conveyed to the officials who have to abide and adhere to these systems. Central Vigilance commission has been set up and its implementation has created a sense of fear in the corrupt officials. preventing corruption.

These acts and systems have increased the payload of the government and at the same time have become a prominent tool of harassment by the officials in power. Misuse of digital systems of procurement has no limits. The procurements are done from preselected vendors digitally which in turn encourages corruption and hence misuse of public money and uneven competitive ground violating the constitution giving equal rights to every citizen.

Since the implementing agency that executes the policies to improve the situation is also not prevented from the pangs of corruption, the strength of corruption is magnified in a manner that diminishes the social status of the country.

Role of Education

The role of education and saṃskāra is to facilitate the development of the competence to live with definite human conduct by ensuring the following:

1. Right understanding, i.e., understanding the harmony in the human being, in the family, society, nature/existence, thus understanding what to do as a human being at all these levels.

2. Right feeling – the capacity to live in relationship with the other human beings – in family and in the society.

3. Right skills for prosperity, i.e.,the capacity to identify the need for physical facility, the skills and practice for sustainable production of more than what is required (by way of labour using cyclic, mutually enriching process) the feeling of prosperity.

These are the three major outcomes of human education and *saṃskāra*. The current education is hardly working on the first one – it is mainly talking about skills, not really paying attention to values. Instead of the right feeling, competition (feeling of opposition) is getting promoted. Instead of skills for prosperity, skills for exploitation are getting promoted. The major focus seems to be on accumulation of money, almost by any means.

Young children primarily learn by observation and practice. The environment at home, in the school and the society plays a significant role, much more than the words. Children older than about 10 years or so, continue to learn by observation and practice, but as they start self-exploring, validating by their own experience, the guidance for self-exploration becomes significant. Some thoughts and actions lead to their happiness – this is satisfying for them. The thoughts and actions that lead to contradiction, thus unhappiness, are not satisfying for them. Like this they start life in the world. The children make a lot of efforts in this direction from a very early age. An environment of trust, respect, affection, care and guidance is essential for understanding to take place. Without this type of environment at home, at school and in the community, only some learning may take place, but not the understanding.

Moral values, typically talk about dos and don'ts for right action. The child is expected to assume these as right and behave accordingly. This does work for small children. However, once they start to explore, to verify and look for answers, when the "why" and "how" questions arise, and there may be difficulty in explaining and finding appropriate answers, the contradictions raise to the surface as problems. These contradictions may have been there all along, but under the given discipline, they may not have been articulated. While dos and don'ts may lead to compliant conduct in the given circumstances, whenever the external controls (by incentive/fear) are not there, definiteness of the conduct may or may not be there.

The two key assessment questions are as follows:

1. Is the education system able to produce graduates with desired qualities (attributes already defined)?
2. Are the graduates able to meaningfully contribute to development of an equitable and just society, ultimately to a developed Nation?

Inculcating Human Values via Education

Presently, modern education is skill oriented or employment based, which only focuses on granting degrees and earning livelihood, where morality and values are being ignored, which concentrates fully on 'learning to do' rather than getting out the 'best of you', the potential, the mindset, the capabilities; which a student has or

shall develop. Education, at primary level, is basically a rote education, which feed up the student's brain immaterially addressing whether grasping potential is there or not. At secondary and tertiary level, education is firmly a skill-based learning focuses on intellectual quotient, just to seek jobs and move on to the path of raising nation's economy, where spiritual and emotional quotient is left untouched. Seeing the trending drastic scenario of dehumanization and demoralization in every aspect of life, especially in the political aspect, there is an urge to reform the pattern of upbringing the children through education at primary level to higher institutions passing through secondary and tertiary stages and focus shall be led on how youths shall be educated and trained to create the whole system free from bias, prejudice and other ill effects of corruption, where the people are instilled with the spirit of service and endeavour for further improvement and quality of work for the good of people.

Education must build character, enable learners to be ethical, rational, compassionate, caring, collaborative and teamworker; develop basic human and constitutional values (such as *sevā, ahiṃsā, swachchhata, satya, niṣkāma karma, shanti,* sacrifice, tolerance, diversity, pluralism, righteous conduct, gender sensitivity, respect for elders, respect for all people and their inherent capabilities, regardless of caste, creed, background, respect for environment, helpfulness, courtesy, patience, forgiveness, empathy, compassion, patriotism, democratic outlook, integrity, responsibility, justice, liberty, equality, and fraternity) in all students.

Introduction of NEP 2020 in Imbibing Human Values

Common Graduate Attributes of NEP 2020 are:

1. Holistic vision of life
2. Socially responsible behaviour
3. Environmentally responsible work
4. Ethical human conduct
5. Having competence and capabilities for maintaining health and hygiene
6. Appreciation and aspiration for excellence (merit) and gratitude for all.

These attributes shall lead to the individual values being imbibed for the betterment of and individual and hence the society as a whole. These values are imbibed in every stage of education, be it primary, secondary or higher. Therefore, an individual shall be able to get an inclusive education and shall not be a rote learner but shall develop critical thinking.

NEP 2020 emphasises on holistic education along with skill education, while focussing on the conceptual understanding rather than rote learning which shall make the present generation aware of the dos and don'ts to evolve as a good and divine society making socially responsible global citizens.

Enforcement of NEP 2020 at Primary Level

Children, in their early ages are like clay, which can be moulded into any shape; shall be saviour or destroyer, shall be personable or disingenuous, shall be honoured or disgraced; all comes from what type of education they have been provided with. So, education at primary level, plays an important role in inculcation of values in children, not only by listening the subject classes but also doing practically, what they have been taught in the classrooms. As children grasp and learn anything easily and fast through active participation, NEP 2020 fosters various courses on human values along with practical classes of 4 hours/week for students to inculcate human values among them for the better future, be an individual or a citizen or an administrator. NEP 2020 neglects the method of rote learning in classrooms which narrow down the capabilities and potentialities of students and lay emphasis on fun learning, learning while playing, activity-based learning. 'Learning while doing' and 'sharing is caring' are two such major initiatives for learning and infusing values where students actively participate and experience the opportunities which empowers and train them for future with greatness of patience, tolerance and kindness. By implementing NEP 2020 at school level, the stakeholders shall introduce value education as a compulsory subject and shall develop universally accepted values among students.

Enforcement of NEP 2020 at Secondary Level

Including curriculum of Human values in the secondary level education is helping the students build their moral character. This is the stage where an individual gains consciousness of its surroundings and is taught the art of differentiating good from bad. The constitutional values of justice, liberty, equality and fraternity are understood whereas the human values of truth, love and compassion are inculcated in the individual human system.

Implementation of NEP2020 in this direction of including human values in the curriculum at secondary level shall make the individuals understand the nature of constitutional rights and why they are required for a just and peaceful society. They shall be able to differentiate between their rights as a citizen and duties towards the society. This shall lead to an inclusive growth where plurality and accumulation would be needed to encourage. This shall lead to an individual with high moral grounds leading to a virtuous nation.

Enforcement of NEP 2020 in Higher Education

NEP 2020 gives special emphasis to the inclusion of Human Value Education in the Higher education system of our country. Since at this stage, an individual gains ability to think and argue critically and hence he/she is able to fully understand the

needs of the society and assign the human values with reasoning. The ability of a human mind to cultivate the values of honesty, integrity, inclusiveness and others is essential and hence these values when cultivated becomes part of the personality of a person.

NEP 2020 assigns one course on human values as an essential part of the curriculum and one course on Indian Knowledge System (IKS) to include, not only value based education but also the knowledge of the rich heritage of the country. In professional courses like engineering, medical, management and others, it shall become necessary to study a course on Human values that shall improve the morality of an individual.

Improved Education as Game Changer of Public Administration

As Shri Justice Pinaki Chandra Ghose, Chairman Lokpal has said for corruption, "Prevention is better than cure", therefore the need for preventive corruption is very much admired.[8]

Ethics has been described as standards of conduct that indicate how one should behave based on moral duties and virtues arising from principles about right and wrong. Professional ethics in public administration is concerned with the concept and framework of moral right or wrong as with its execution policies and behaviours are related. Though education in its truest sense is not professional but prepares an individual for professional life within the framework of ethics.

Administration must be transparent; decision must be taken in public interest; administrators should leave behind their caste, community, and language in their own homes; corruptions must be punished; discriminatory privileges should not be given to officials; persons at all levels must be encouraged to think and to give their advice freely, and entire administration must be geared to tackle by itself or through other organisations the menace - poverty.

A nation can progress only if there is good governance, there can be no good governance unless moral values are inculcated in the people. There is no way out but to change the system if it is not value-based. Corruption is a global phenomenon and hence fighting corruption at the global level should be the first priority even at the international level.

But cleaning starts from own house and what better way than to clean our hearts and motives. Since education is the most prominent tool for building a nation, it shall prove to be the most prominent tool to fight corruption and hence save the nation. The inclusion of Human values in every level of our education system shall not keep an individual aloof from the good virtues of an individual at any stage. The individual imbibed with the values of honesty, integrity, inclusivity and compassion shall form

a person who shall not only abstain from corruption, but also get the people involved in it the taste of conscious mind and heart.

The improvement though seems to be small shall create a huge impact on the society. The individuals in public administration are well qualified and go through the rigorous education system. While passing through this education system, the individual shall be able to inculcate the human values which shall make their behaviour more stringent towards corruption.

It is not only the administrators who shall take part in curbing the menace of corruption but the society at large would be involved It is the duty of every individual of the society to stand against corruption and this should start from the local level. NEP 2020 stresses on the teaching of honesty and gives a spine to each individual to stand against what is wrong. This attitude shall prove to be the best attribute in the fight against corruption.

A society consisting of men of honesty and integrity is sought and shall not be built or generated from individualism. It shall only be cultivated and the process of cultivation leads to inculcation of Human virtues which is addressed in the implementation of NEP 2020 from elementary level to the higher education, i.e., from a kid to an adult, no phase is left separate from human values.

Conclusion

The main needs of a corruption free nation are public administrators inculcated with Human values. These human values stop the very idea of corruption and more than what one deserves. The effect of Implementation of NEP2020 focusing on Human values at every stage of life shall mould responsible and patriotic individuals which in the administrative system of the country and shall bring Honesty and Transparency and hence, shall ameliorate the future of Public administration and hence the country.

All forms of corruption are initiated only by the individuals, either in power or through them. Therefore, an ethical individual holding position of power and responsibility is an asset and can provide a large amount of confidence in public. Therefore, the funds and the national security which are a scarce resource can also be dealt with in a prudent manner. This not only saves from economic costs but also the relationships with the general public and governance system is strengthened.The gap between the affluent and the poor is lessened giving a boost to the economy with increase in happiness index.

NEP 2020[9] shall play a pivotal role in the development of corruption-free India and shall go a long way to inculcate values thus making a tolerant society with high happiness index. Though not directly related, the fruits of the New Educational reforms shall be seen in the longer run and a society with less corruption shall be evolved in future.

References

1. Prakash T, Tanzi V, International Monetary Fund, "*The Cost of Government and the Misuse of Public Assets*",

   doi:https://www.imf.org/en/Publications/WP/Issues/2016/12/30/The-Cost-of-Government-and-the-Misuse-of-Public-Assets-3846

2. World Justice project, Retreived on: Sep 2,2022, doi: https://worldjusticeproject.org/rule-of-law-index/country/2022/India/

3. Yadav. P, "Why education is one of the most powerful weapons to transform society", India Today. Sep 12,2021. New Delhi

4. Education Times, Aug 12, 2019, doi: https://www.educationtimes.com/article/campus-beat-college-life/70642418/education-is-a-weapon-to-transform-society-says-hrd-minister

5. Tanzi V., International Monetary Fund, "Corruption around the World: Causes, Consequences, Scope and Cure", May 98, pp.8

6. Anti-Corruption strategies, doi: https://www.drishtiias.com/daily-news-analysis/anti-corruption-strategies

7. Govt of India, "Measures to combat corruption", feb 2021, doi:https://pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=1696775

8. Ministry of Personnel, Public Grievances & Pensions "Bringing Synergies in Anti-Corruption Strategies"doi:https://pib.gov.in/PressReleaseIframePage.aspx?PRID=1707009

9. Government of India, "National Education Policy 2020", Jul 30, 2020.

UGC-CARE Journal

ISSN 0972-1002

श्रमण
ŚRAMAṆA

A Quarterly Refereed Research Journal of Jainology

Vol. LXXV No. IV October-December, 2023

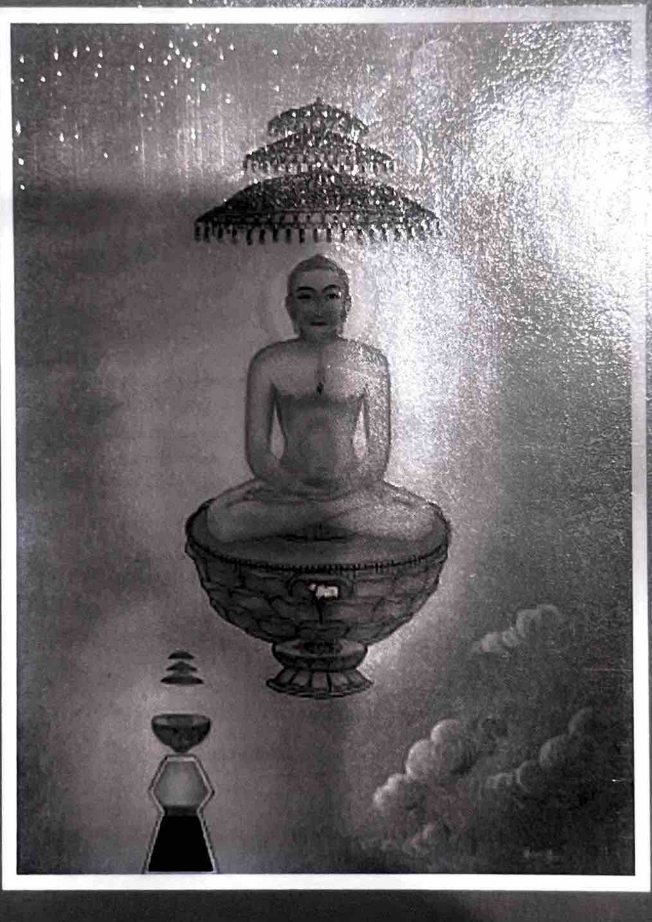

छत्रत्रयं तव विभाति शशांककान्त-मुच्चैः स्थितं स्थगित भानुकर-प्रतापम्।
मुक्ताफल-प्रकरजाल-विवृद्धशोभं, प्रख्यापयत्त्रिजगतः परमेश्वरत्वम्।।

भक्तामरस्तोत्र-31

Parshwanath Vidyapeeth, Varanasi

Established : 1937

An empirical syllogism of Peace in every stratum by evolving virtues

- Lipi Jain

ABSTRACT:

Dalai Lama's assertion that "***All beings primarily seek peace, comfort, and security; life is as dear to a mute creature as it is to a man***" and each being aspires his offspring to open eyes in a world free of conflicts.[1] Peaceful co-existence, economic independence, religious cooperation, respect for women, basic education for everyone, universal brotherhood are the principles that serve as a baton of light guiding humanity into a peaceful world. Consecrated texts of Bible, Quran or the Vedas imbibed with the words of wisdom have stood the test of times and can never be defied.

This paper debates and puts forward different reasons of peacelessness having repercussions on international, national, societal, individual and familial spheres. The exploitation of different tools of tyranny, particularly hatred, jealously, self- centredness, disparity, struggle, intolerance, caste system, falsehood, non-restrained lifestyle *vis-a-vis* their remedial structures. The fabric of Morality, accepting diversity, patience, restraint lifestyle when sewed in the minds and hearts of men diminishes the conflicts resting the world to peace. These virtues of men save acts of war, economic exploitation and environmental destruction consequently establishing peace all around.

The preaching and teachings of *Ahiṁsā* (Nonviolence) in Indian contexts of developing virtues of men have been accepted as the highest personal value. A pertinent example being "*Ahiṁsā paramo-dharmaḥ*" (Nonviolence is the ultimate religion) which has established unparalleled etiquettes and outcomes during the struggle

for independence of India that uncovered the method of resistance leading to a free India without bloodshed used vehemently by Shri M. K. Gandhi. The "Act East Policy", No first use policy, Sustainable development, Goals of UNO are some of the major efforts in this direction which teaches us that, Peace can only be achieved through Love, Compassion and Co-existence. This bottom-up approach of individual virtues shall give consequential rise to global peace and prosperity.

Index Terms: Peace, Peacelessness, Ahiṁsā, Intolerance, Self-restraint, Compassion, Religious Intolerance, Dehumanization, Self-centredness, Non-restraintness, *Sarvadharma Samabhāva, Aparigraha,* Pluralism.

Introduction

At various prepositions of life, what confronts each is the basic desire of peace, security and happiness, no matter which group the population belongs to leading us to quote "*We must come to see that the end we seek is a society at peace with itself, a society that can live with its conscience.*"[2] With humanity surrounded by the dark faces of conflicts, violence, tyranny, self-centredness, crime, war that is increasing at a rapid pace in developed or under-developed nation; religious or political society; person belonging to any class, caste, religion or society, violence and conflicts are centred to the world as a whole. Agonizingly, it has been imbibed in the culture of societies due to its prolonging and inability of men to subdue it which has a disastrous effect of accepting violence as a part of society. The primary reason behind conflict is limitless needs and desires. When one's desire is contrary to another, there originates a difference of opinion, which ascertained with physical strength leads to conflict. Conflicts have innately remained stumbling stones in the path of development, whether of a nation or that of an individual. Quotidian increase of nuclear weapons and other sophisticated weapons of mass destruction are piled up in the name of better and secure life is mounting up conflicts and tensions. With the above

said Societal & amp; National issues; Familial issues are weakening the basic fabric of society, with divorce rate increasing, number of single-parent increasing, children aging without moral and spiritual values. This is a global crisis, which we all are facing today, leading to demolition of social structures, though realised little in global forums. Mahatma Gandhi said "*We but mirror the world. All the tendencies present in the outer world are to be found in the world of our body. If we could change ourselves, the tendencies in the world would also change.*[3]" This quote educates to see within self and instructs that the world shall only change in a cascading effect when we change ourselves. Peace shall prevail and the World will be free from violence, the day we all know and experience the greatness and importance of the "Independent Power of Peace". Peace to be really prevalent must be founded on a genuine change of heart, when mutual distrust, hatred and enmity must cease for good, giving place to ever-abiding friendship leading to internal, societal and national peace. Above said path towards Peace is based on Jaina texts, "Treat others the way you want to be treated."[4] The premise behind this idea of Universal responsibility is Every being wants happiness, no one wants suffering. If we accept this Universal truth, we can live a happy and harmonious life but if we deny it, there shall be more suffering, violence and peacelessness everywhere. Self-centred attitude with temporary benefits is hampering personal happiness and consequently world peace as a whole. In spite of having all materialistic luxuries, people search for peace. They sometimes fight themselves, sometimes others, humiliate others, envy others, expresses greed resulting in peacelessness. These can be reversed by way of inculcating tolerance, calmness, patience, accepting diversity, negotiations, restrained lifestyle, training and education in moral values, supreme human life and other such virtues.

What is Peace?

Tendency to translate "peace" literally does not seem to do justice to the term which in itself is rich with meaning. The term peace is used in the New Testament in at least 5 different ways: (1) peace as

the absence of war or chaos, (2) peace as a right relationship with God, (3) peace as a good relationship with people, (4) peace as an individual virtue or state, that is, tranquility or serenity; and (5) peace as part of a greeting formula.[5] The term *Ahiṁsā* (Peace in Hindi) is an important spiritual doctrine shared by Hinduism, Buddhism and Jainism that literally means non-injury and non-killing implying total avoidance of harming of any kind of living creatures not only by deeds, but also by words and in thoughts. A quote from *Uttarādhyayana Sūtra,* Chapter 20, verse 60 states "*A person who is free from delusion (who understands things as they are), who has good qualities, who has good thoughts, speech and deeds, and who avoids violence of body, speech and mind, enjoys freedom like a bird, while living on this earth.*"[6]

In the modern, technical world, man has limitless desires leading to absence of peace rendering every desire he seeks meaningless. What are needed to redress the balance is love, compassion, tolerance, forbearance and the spirit of co-existence. Peace, in its different forms is essential for a better way of life—peace of mind, peace in family and peace in nature. Peace has always been among humanity's highest value for some supreme end as it is not a matter of personal attitude alone but it is a question of establishing a new society founded on ethical values, culture and a way of life integrated to peace at local, regional or global levels.[7] The definition of Peace in modern civilization has become synonymous to absence of violence especially violence like war, but not complete. It is not merely a state of absence of violence but sums a positive state of mind, constructive goal of person, society and mankind. Throughout the ages, the idea of Peace has been imbibed in various traditions and cultures, expressed in every situation among people where the basic meaning of Peace is a harmonious socially adjustable mutually cooperative peaceful lifestyle. Peace as conceived in Indian context is that individual is the basic source of its creation and development[8] and hence is concerned with 'self-culture' or 'self-development' of each and every individual of the society with emphasis on moral elevation that leads to individual, societal, national and ultimately global peace.

Why Peacelessness everywhere?

Violence, Conflicts and Peacelessness are existent in every walk of life whether developed or under-developed Nation, religious or political Society, person of any caste and class. Three primary factors shrouding the non-violent behaviour of a person are namely, personal gain, protection and prestige. No one likes to listen to or do things what someone else says; everyone wants to be supreme or to govern else by hook or by crook which led him/her towards violent act. In today's World, person's mentality is like that whatever material comforts, property and family he has got; is his own property and to hoard and secure them all for name and fame, he sometimes commits immoral acts.

This three-faced approach of attitude of hoarding, security and prestige is responsible for peacelessness in one's life. As a result of these trends, the entire human race is going through a state of deep despair, depression, misery and existential crisis. Besides these, some more factors are also responsible for these troubles and tyranny all-around, which are as follows:

Attachment and Hatred

Buddhist doctrine of philosophy teaches that most of the troubles are due to our passionate desire and attachment to things that we misinterpret as enduring entities[9] resulting in interpersonal violence. Attachment and Hatred are two of the foremost cause of violence which limits the individual's journey leading towards peacelessness. When attached, one favours a person and in hatred one pursues to destroy the person. When someone gets attached to other, he may be unable to bear the loss of someone or something that he is attached to and do not want to share the thing or the person with anyone out of jealousy. This may result in, he/she tries to harm the object or the person to whom we are attached and if that is not possible, he/she may try to harm himself/herself to get out of misery. Till the tendencies of attachment and hatred are transcended, one shall not

be able to reach out goal towards the spirit of detachment and hence inner peace leading to societal peace.

Legacy of Struggle

Increasing arms competition and terrorism, is one of the key components in strengthening the roots of violence spreading unrest everywhere and has put the very existence of peace in danger globally attributing to direct violence. Solitary, Mass and murder- assisted violence has reached disastrous level; as of which humanity suffers from the psychosis of safety and security. Alter natives for a collective and non-militarised security are the motto of most Peace organisations asking for disarmament of nations.

World Peace Council has been vehemently opposing the NATO summits and other different military operations that shall diminish or at least put some dent on the aspects of blind militarisation.[10]

The nature of conflict and weaponry used to fight has changed dramatically in the past century. Before the twentieth century, few countries maintained large armies and weapons and mostly limited damage to the immediate vicinity of battle. Most of those killed and wounded in pre-twentieth century conflicts were active combatants. By contrast, twentieth-century battles were often struggles that encompassed entire societies and, in the case of the two world wars, engulfed nearly the entire globe.[11] The whole world in the race to be superior in military power to attain peace is piling up weapons of mass destruction leading to conflicts and thus establishing 'war for peace' in every facet of national behaviour. Struggle also takes place in ideological, religious and revolutionary which increases peacelessness of mind and spirit.[12]

Socio Economic Disparity

If we are to have peace on earth, our loyalties must become ecumenical rather than sectional. Our loyalties must transcend our race, our tribe, our class, and our nation; and this means we must develop a world perspective."[13]

Economic deprivation and social subjugation, forming parts of structural violence are the basic causes of conflicts and turmoil in human society. Despite adopting democratic form of government, there is continuous of torturing the weak by more powerful individuals or groups, growing gap between rich and poor, hatred of the upper caste on the low caste people, neglect of the illiterate by the educated ones, socially over powering women by men and such other injustices.

This sort of peacelessness is because of violation of human rights: the right to life, liberty, autonomy and security of a person; the right to equality and non-discrimination, right to be free from torture and cruelty. Likewise, violation of rights of one or more nations by another, leads to conflict and hence peacelessness globally. Also, rates of violence and homicide are higher where there is more disparity and a more general tendency for the quality of social relations to be poorer in hierarchical societies.[14]

Perspective difference

We live in world where things are attained at a faster pace than ever leading to impatience in every human being contributing to interpersonal violence. The consequence of impatience and intolerance has led to disrespect the differences of opinion and ideology. This is common among families, societies and nations where disrespect of the ideology of others is leading to decisions of hatred and conflict leading to peacelessness.

This intolerance occurs where conditions are different regarding faith, belief, ideology and status. In Societal life, intolerance affects as individual base their impressions and opinions of one another on assumptions without knowing the reality. Referring to the violence of ideologies, past president of India, Mr. Pranab Mukherjee once said "*These days whenever you see newspaper and watch TV, there is news of regular violence. I am not talking about international violence, but it is about violence in our minds, our conscious and conflict in our souls.*"[15]

In education, curriculums based on myths dehumanize and degrade other cultures. Considering own religion as supreme rather than any other without accepting other religious schools of thought i.e., religious Intolerance is a burning problem in today's World. The point to ponder is that, 'what preaches to unite the World is now parting the World. In such cases, discrimination, disrespect, dehumanization and violence takes place leading to peacelessness not only to individuals, but disrupts the social strata too.

Casteism

One of the Ambassadors of Peace principles set by Universal Peace Foundation is "Peace comes through cooperation beyond boundaries of ethnicity, religion and nationality."[16] Casteism is pre-designed structured violence to oppress the lower ones and enjoy luxury by the upper ones which in itself is a source of mental and physical violence.

This system is an aggravator of tension and conflict in Society. Several States in India have in recent times witnessed agitations organised by upper caste group in the Society consistently demanding the revocation of the privileges or opportunities that are provided by the Constitution to lower caste in order to enable them to regain all surrendered rights and privileges. It is conjectured that prevalence of status quo enjoyed by upper caste is their right, and the lower caste should acquiesce and remain where they had been for centuries. These conflicts have many a times turned violent resulting in tyranny everywhere.

Self-centredness

In pursuit of establishing a unique identity, many people indulge in social conflicts which in turn disturb the fabric of peace leading to interpersonal violence. "Without selfless service are no objectives fulfilled; in service lies the purest action."[17]

The world being more and more materialistic and money-minded, every being is selfish for own welfare without thinking of others

and for this, a person strives to earn and consume much more than his desired need. Inequality in the society thrives when the individual in the society regards himself/herself as supreme to all others. This action results in social disharmony, Economic disparity and inhumane act towards environment because of the population who are forced to starve or whose daily meets are not being met, and this deprivation forces them to turn to violence. According to a report, 16 % of World's population is consuming some 80% of its natural resources which symbolizes the polarity in the social and economic sphere leading to peacelessness.[18] Same holds for nations, where each nation tries to uphold its supremacy over others leading to conflicts and hence, peacelessness.

Falsehood

At some stage of life, people turn their lifeboat with the help of lies, which results in bitterness and distrust in relations leading to interpersonal violence. These lies accumulate and the person keeps fighting every moment with himself/herself, sometimes with the family and society too which gives rise to conflicts, disrespect, disputes, relationship part-way, family denial and violence and war in between societies and Nations.

In the national scenario, not abiding by the important consensus reached by the leaders of the two countries and the relevant agreements, uphold its commitment to resolving border issues through bilateral channels in the border area with practical actions gains distrust that leads to peacelessness. Diplomacy these days is the appeasement for short term gains. This queer policy may succeed for some time but when the affected parties realise that they had been taken for a ride by clever diplomatic manipulations, such sheltering behind cleverly hidden lies becomes the greatest stumbling blocks in the process of achieving peace.

Non-Restraintness

Developing the delightful desire for relishing the pleasure connected with the senses and their respective objects creates greediness giving

way to self-centred violence. Eyes, Ears, Nose, Tongue, Touch and Mind are the six senses. Visible, audible, odorous, sapid, tangible, and ideational object are the six respective objects of desire. Each sense like to enjoy the pleasure connected with its respective objects which in turn creates delightful desire, develops attachment and results in generation of tensions which hinders the mind and disturb peace. The only way to eradicate the process of generation of tension and emergence of peace is the effort of putting restraints over the inappropriate desire of senses. The reason for economic disparity in present times is because of this non-restraint lifestyle by the rich. Increase in wastage of money on one side and hence jealousy on the other side increases the feeling of mutual bitterness and hatred in the society.

Developing culture of Peace

The basic meaning of Peace is a harmonious socially adjustable mutually cooperative peaceful lifestyle. Social structures determine human behavior on a deep level; treating people like criminals tends to make them act like criminals; healthy social systems induce good behavior.[19] Again, we need to nuance our position. Peace as conceived in Indian texts is concerned with 'self-development' of each and every individual of the society with emphasis on moral elevation.

As quoted,"*Darkness cannot drive out darkness; only light can do that. Hatred cannot drive out hatred; only love can do that".*[20] Peace shall not be established among men unless men thrust for peace for its own sake. Peace will not come and the World will not be free from violence, until society knows and experiences the greatness and importance of the "Independent power of peace". So far, violent means have been considered inevitable for social change or resolution of conflicts. But today, nonviolent means are considered not only as an alternative but perhaps the only viable method of conflict resolution.[21]

Taking share without usurping that of others, fulfilling needs without depriving others of their, satisfying desires without thwarting others

and fulfilling ambitions without denying others the right to do likewise and solving problems without creating problems for fellow creatures censures the establishment of Peace. Prof. Galtung has said that, "*When we talk or discuss about peace then it does not mean that peace should be among Nations but it should be in each and every aspect of society, mankind and even nature.*"[22]

Some of such basic values and principles that ought to guide us in our daily lives, may be given as:

Public Ethics

Advocates of nonviolent action believe cooperation and consent are the roots of civil or political power: all regimes, including bureaucratic institutions, financial institutions, and the armed segments of society (such as the military and police); depend on compliance from citizens. On a national level, the strategy of nonviolent action seeks to undermine the power of rulers by encouraging people to withdraw their consent and co-operation.[23]

The root of today's governing system, the so-called Democracy, have struck very deep, yet the stem is getting rotten due to the splashy spread of the cancerous germs of corruption, favouritism, nepotism, violence, poverty, illiteracy, unemployment at every level of Society. Political violence such as presence of venality in political system, communalism, terrorizing voters, booth- capturing, rigging of election and nexus between politicians, businessmen, bureaucrats and criminals, corruption; are the major concern of today's Nation and Society.

Since the stem of the system has rotten, it cannot bear a healthy fruit and hence needs to be made strong. Men of character with all morality refrains power for personal interests should be imbibed for the benefit of the humanity, which means administration and the governing authority should be fair and just in its actions so that the problem related to poverty, inequality, injustice, unemployment, starvation etc. should be diminished and cured.[24]

In short, Politics requires men with good intentions and values having moral forces behind their thinking as well as deeds, so as to establish peaceful society in which all human beings can live together and pursue their highest potentials.

Accepting diversity

To achieve the objective of '*Sarvadharma Samabhāva*' means Universal Equality of all religions is the foremost need of today's World where every person's belief, spiritual values and practices howsoever different from the other are respected was adopted by Swami Vivekananda as well as M. K. Gandhi.[25] It is time is to wake up, so, develop respect and understand the beliefs of others religions too. Mindset has to be shaped so that different religious practices and beliefs shall not hinder the progress and peaceful co-existence. Instead of being biased on one's own religion and belief, whatever goodness there is in other religions, one should learn from them and accept them and whatever evil or wrong beliefs have come; efforts should be made to remove them. God is one and we all are equal for Him. No religion teaches us violence and antagonism and the fundamental teaching of every religion promotes love, compassion, tolerance, respect and Peace.[26]

Calm and Patience

In the words of M K Gandhi, "*We but mirror the world. All the tendencies present in the outer world are to be found in the world of our body. If we could change ourselves, the tendencies in the world would also change. As a man changes his own nature, so does the attitude of the world change towards it. This is the divine mystery supreme. A wonderful thing it is and the source of our happiness. We need not wait to see what others do*"[27]

One must change himself to bring change in others. Likewise, to see peace in the world, people's mind should always be in a calm state. Calming of mind will help maintain peace in any unfavourable situation so that we are neither agitated nor violent which in turn

will prevent the situation from getting worse and maintain harmonious relations among all.

Restraint lifestyle

Putting aside activities that are not absolutely necessary, a sense of concentration leading to insight shall prevail. Losing the burden of consumerism and competition which has overburdened the natural resources available, a sense of equality and unanimity shall prevail leading to peace of mind and body. The message has provided an unparalleled concern for harmony amongst life forms, leading to a common ethos based on minimal consumption of natural resources, particularly for members of religious orders.

As truly said by M. K. Gandhi, "*Earth provides enough to satisfy every person's needs, but not every person's greed.*"[28] A restrained cycle of life shall not only save the natural resources, but also minimise the disparity of rich and poor, and hence lead to peace. All the forms, even moon and sun follow some restraint and hence are in their orbit; man should also follow restraint in every walk of life to lead a happy and peaceful life. An economy based on unlimited material consumption, excessive competition and on the reduction of all quality to quantity is not viable in the long sum and is bound to collapse sooner or later. If we internalize the costs of environmental degradation, social disruption like terrorism and war, the economic progress that we attained becomes far from the real progress.[29]

Growing in the virtues, especially prudence (knowing what to seek and what to avoid) forms good character.[30] The virtue of prudence shall lead to lesser conflicts, societal animosity, class differences, international disputes and much more that are needed to establish an everlasting peace. The practice of '*Aparigraha*', is one such thought of Indian culture, especially of Jainism, which teaches us not only about reverence towards life.

Negotiations and Disarmament

Arguments, clashes and conflicts are likely to happen in families, in society, at workplace, at National as well as at Global level; as there exist differences of opinions, values and objectives. Disagreements, when managed properly, survives relationships and conflicts and debates managed properly strengthens relationship; whether in family, society, workplace or globally.

In 2016, the world's Governments spent US$ 1.69 trillion on military expenditures, amounting to US$ 227 for each person alive today. [Stockholm International Peace Research Institute]. The UN has given highest priority to reducing and eventually eliminating nuclear weapons, destroying chemical weapons, and strengthening the prohibition of biological weapons - all of which pose the direst threats to humankind.[31] When weapons of mass destruction are reduced, the threat to the people shall not be eminent and hence the order of peace shall prevail which is an established fact and peace organisations over the world vouch this fact.

Training for Human virtues in Nonviolence

As stated in the preamble of the constitution of UNESCO, "Since war begins in the minds of men, it is in the minds of men (and women) that the defenses of peace must be constructed." Only the people at peace within themselves can bring about a peaceful World for Peace and Peace education is the process which helps in its manifestation. Let us teach our youths not the principles of war but principles of peace in our classrooms and make them realise the different ideologies and ways to handle situations without avoiding conflicts.

Only a Peace-oriented education system and curriculum can help us in avoiding conflict and disputes at familial and societal level as well as can help Nations overcome the mutual fear and distrust. We see educated people indulging in unethical activities; reason being improper guidance and education. NEP 2020, an initiative by the Govt. of India; is a commendable effort to develop the education

system based on ethical values for a humane society. The education policy focuses to foster good human beings capable of rational thought and action based on our human values of Truth, Peace, Nonviolence, Love and Righteous conduct; producing engaged, productive, and contributing citizens for building an equitable, inclusive, and pluralistic society.[32]

Only education is not sufficient to prepare youth for peace; social interaction and training outside the classroom is also needed. 'Learning by doing' is a well-known principle in education. Students and youth shall learn about peace when they engage themselves in activities like peace rallies, peace tours, celebration of peace festivals, observance of peace days, etc.

Change in Education system-

In the Delor's Commission Report "Living the Treasure Within", published by UNESCO in 1996, the four pillars of education are mentioned, around which the education must be organised.

A. Learning to know

B. Learning to do

C. Learning to live together

D. Learning to be

The present education focuses on Intellectual development but lacks providing inputs to develop Emotional and Spiritual development. If E.Q is poor, men can neither live peacefully in his individual life nor live with love and altruism in his familial and social life. In the absence of S.Q all sorts of fraud, cruelty, greediness etc. are bound to augment. While giving solution, Acharya Mahaprajna, uncovered before us, the innovative idea of "Science of Living", which completes the education through the equation:

Education= I.Q + E.Q + S.Q

I.Q- Intellectual Quotient

E.Q- Emotional Quotient

S.Q- Spiritual Quotient

If such input is added in curriculum, the students can attain peace in their individual life and live in harmony with love, honesty etc. in their collective life. By increasing S.Q, life of a person can be made free from attachment to worldly possessions and hence the worldly galores leading to a peaceful life.

UNICEF in its Convention on the Rights of the Children its article 29 (d) declares: "*Education must prepare a child for responsible life and effective participation in a free society in a spirit of understanding, peace, tolerance, equality of sexes and friendships among all peoples, ethnic, national and religious groups and persons of indigenous origin.*"[33] This states that every child should be educated in such virtues that he becomes an ambassador of peace.

Recognise Human life as supreme

Living for the sake of others helps reconcile the human race. We exist and persist due to relationships of giving and the biggest investment that we make in our lives is that of forgiveness which leads to non-violence in true sense. "Give and it will be given to you; for the measure you give will be the measure you receive." [34] The realisation that every being is equal and have the right to live shall bring in peace of mind and lead to a life of satisfaction. M K Gandhi said that it is better to serve the poor and needy people sitting outside the temple, instead of worship God with folded hands.

A feeling of universal love, when it starts flowing in our veins drives a death knell in any such feeling of animosity and paves the way for absolute social peace and harmony. One of the Jaina saying goes like, "Friendship for all creatures, respect for all the virtuous, compassion for all the miserable, a disposition of equanimity in adversity; Grant me O' Lord! Always and every time". In other words, a man does not become great by birth, but he becomes great by his deeds.

Recommended approaches include assessing at an early stage that is most vulnerable and what their needs are co-ordination of activities between various players and working towards global, national and local capabilities so as to deliver effective health services during the various stages of an emergency.

Pluralism

We first learn to share and live for others in our family. This understanding of the mutual benefit inherent in relationships is the basis of a healthy and peaceful life. All beings exist and act for the sake of a partner. This means that God created all things to move toward the ideal through the operation of mutual relationships. When the individual serves the whole, the whole society benefits and so does the individual.

A model of win-win situation and mutual gain is the preferred outcome of any conflict. The win-win method fosters an environment in which both parties are motivated to find a solution that benefits them both because if they don't, they will be forced to compromise for the sake of others. Win-win allows us to identify humanity in others since it helps us understand them better when we realize that they have similar aims like us and it helps us in neglecting conflicts in the same way as both the parties get their own gains.

One of the benevolent *Mantras* of Jainism, is - ***"Parasparopagraho Jīvānām"*** which means "All life is bound together by mutual support and interdependence."[35] Every being or creature on this Earth depends on one-another and affect each other for their survival. The person with this belief, that the way he loves his life, others will be fond of his also. To disturb the harmony of one is to disturb the harmony of all. Caring for and protecting all things in nature is thought to be the path to caring for oneself. So, conserving the Nature and relinquishing others' share shall lead to life in peace, mentally and physically.

Conclusion

The findings of the culture in its diverse forms gives an explanation in only direction to attain peace and prosperity which is to look within ourselves *"Sampikkhae Appāgamappaeṇam"* which means to *'See yourself through yourself.'*[36] The spiritual destiny of a person can be attained by living and developing the virtues of calmness, patience, respect, restraint, negotiations, Eth ics and self-building.

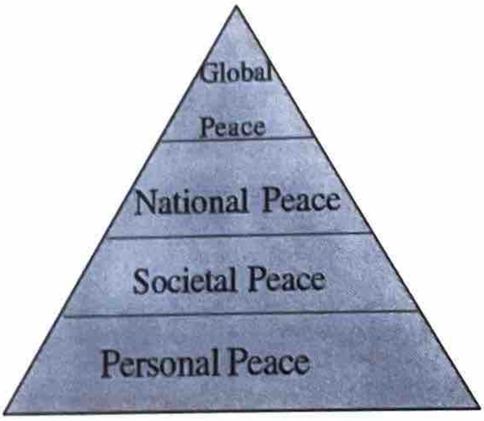

Figure 1: Bottom-up approach for attainment of Global Peace

This bottom-up approach as in Fig 1 of attaining world peace depicts the attainment of peace through this approach where the attributes pertaining to personal peace is sustaining the load of attaining all other sorts of peace that involves more people.

It is imperative to note that the personal peace of a singular person is not capable to attain the world peace but attributes character when inculcated in people of all sorts shall form the basis of everlasting peace. A society can be free of caste, apartheid and other such sorts of discrimination only when inner self is developed and a sense of mutual respect is attained. Similarly, practicing self-restraint is a way of life, where acquiring only as per the needs of oneself is respected and practiced. This, when practiced by all the individuals shall diminish overpowering other societies and in turn countries, by the stronger countries. Well known examples of war are due to desire to acquire wealth more than what is needed from the countries

that are inferior to them. This can be solved by the inner instinct of self-restraint by the individuals capable of taking the decisions which has a humanitarian approach of resolution at the highest level.

The web of lies that a person may create in his own personal life shall be reflected in his deeds for society which can be very easily resolved by truthfulness in personal as well as national issues where if a country is clear in its policies and comes with its evidence to not back out of its policies shall develop trust in other countries as well resulting in cordial relations globally, if imbibed in all the countries made of such men.

The peacelessness at different strata of society can be resolved in the bottom-up approach since, if the inner being of all the persons is given momentum in the right direction of virtues, they shall resolve the familial and societal issues in a very short span of time leading to a peaceful life in self and in society. A loving and caring person in personal life is always an asset to a family and society and also to a nation.

These virtues can be imbibed in persons through education in human values and nonviolence so that the virtues are instilled in the people of the society from a very tender age and become an instinct rather than a conscious thought process.

References:

1. International Vegetarian Union. India. *The Vegetarian Way*, 19th World Vegetarian Congress 1967, Retrieved from: https://ivu.org/congress/wvc67/quotes.html
2. King Jr L. M., *Voices of Democracy*. The U.S. Oratory Project. March 25, 1965. Montgomery, Alabama.
3. Fred R. Shapiro, The Yale Book of Quotations. 2006. Section: *Mohandas Karamchand (Mahatma) Gandhi*, Pg. 299, Yale University Press, New Haven
4. Jain N.K., "*Ahiṁsā (Non-violence) & Human Rights in Indian Culture: With Special Reference to Jainism*". Dec 10,

2006, Retrieved on 04 Nov, 2022, Retrieved from https://justicenagendrakjain.com/Ahinsa2.php

5. Daniel C. Arichea, Jr. "Peace in the New Testament ", *The Bible Translator,* Volume: 38 issue: 2, pp: 201-206, April 1, 1987

6. Kaneda T., Shanti, Peacefulness of mind. C. Eppert & amp; H. Wang (Eds.), "*Cross cultural studies in curriculum: Eastern thought, educational insights*", 2008. pp. 171192, ISBN 978-0-8058-5673-6, Taylor & amp; Francis

7. Rummel R. J., *"Understanding Conflict and War"*, Vol. 5. The Just Peace. Beverly Hills, Calif.: Sage Publications, 1975- 1979

8. Kumar R., 30 Jan,2009 "*India, Its Concept of Peace and Gandhi,"* Scoop independent News, Retrieved from: https://www.scoop.co.nz/stories/HL0901/ S00435/India-its-concept-of-peace-and- gandhi.htm

9. Boeree C., George, "*SIDDHARTHA GAUTAMA BUDDHA*" Retrieved on: Nov 24, 2022 Retrieved from: https://webspace.ship.edu/cgboer/buddhapers.html

10. World Peace Council, "*Platform for Peace and Disarmament organises another Camp for Peace*". Retrieved on: Aug 05, 2022. Retrieved from: http://www.wpc-in.org/statements/*Platform-peace-and-disarmament-organises-another-camp-peace- hundreds-young-people.*

11. Melissa G., "*Disarmament a Basic Guide*" Ed: 4th, pp:10:11, ISBN 978-92-1-142323-5

12. Daniel "*The Use of Force in International Relations*", 2013. p. 84, ISBN 978-8022413411

13. King Jr L. M., 1967, *Speech: Christmas sermon, Atlanta, Georgia*

14. Wilkinson Richard, "*Why is violence more common where inequality is greater?*" National Library of Medicine, PMID: 15817728, DOI: 10.1196/annals.1330.001

15. Mukherjee P. "*Conflict, difference of opinion growing in society*". Economic Times, Jan 19,2017. Press Trust of India

16. Universal Peace Federation international: "*Ambassador for Peace Principles*", Retrieved on: Nov 07, 2022 Retrieved from: https://www.upf.org/principles

17. Sikhism, Adi Granth, Maru M.1, pp.992

18. Utley G., New York (CNN), "*World's Wealthiest 16 percent uses 80 percent of natural resources,*" Retrieved from: http://edition.cnn.com/US/9910/12/population.cosumption/, Oct 12, 1999

19. John L. M, Lee M , "*International Encyclopedia of the Social & Behavioral Sciences*" (Second Edition), 2015, pp: 169

20. King Jr L. M., "*The reverend Dr. Martin Luther King, Jr.: "Hate cannot drive out Hate; only Love can do that*", Jan. 20, 2020

21. Anand Y.P, "*Conflict Resolution: The Gandhian Approach*", Retrieved from: https://www.mkgandhi.org/articles/conflict_resolution.htm

22. Galtung, J. (1969). "*Violence, Peace and Peace Research*", *Journal of Peace Research,* 6(3), pp: 167 -191. Retrieved from: http://www.jstor.org/stable/422690

23. SharpGene, "*The Politics of Nonviolent Action*", Porter Sargent. 1973. p. 12. ISBN 978-0-87558-068-5

24. Stark, Andrew, "*Conflict of Interest in American Public Life*", Harvard University Press, 2003. ISBN 9780674012134

25. Long, Jeffrey. "*The Politicization of Hinduism and the Hinduization of Politics: Contrasting Hindu Nationalism with the Transformative Visions of Swami Vivekananda and Mahatma Gandhi*". Politics in Theology. 2012. ISBN 9781412848039

26. Nazi M.N., Ali Farman, "*The Role of Religion in Establishing Peaceful Coexistence in Society*", *Journal of Islamic Thought and Civilization* (JITC) Vol. 8, Issue 2, 2018. ISSN: 2075-0943, eISSN: 2520-0313

27. Daskal L., "*The Story Behind: You must be the change You wish to see in the World*", Linkedin, Retrieved on: Aug 13, 2014. https://www.linkedin.com/pulse/20140813120052-14431679-the-story-behind-you-must-be-the-change-you-wish- to-see-in-the-world/

28. Convention on the Rights of the Child,"*Remembering Mahatma, His philosophy on Environment*". Tribune News Service. Oct 02, 2022. Amritsar, Retrieved on: Oct 23,

2022, Retrieved from: https://www.unicef.org/child-rights-convention/convention-text#Walia N.

29. Jain L., (2022), "*Vikas : Gandhi evam Acharya Mahapragya Drishti,*" Kalpana Publications, New Delhi, pg- 155, ISBN: 978-93-91709-28-0

30. Mitchell L. A., "*Integrity and virtue: The forming of good character*", Linacre Q. May, 2015; 82(2): 149-169. Doi: 10.1179/2050854915Y.0000000001

31. United Nations, Retrieved on: Oct 12 2022, Retrieved from: https://www.un.org/en/global-issues/disarmament

32. Kambam S., "*NEP 2020 and Moral Education*" The Sangai Express, Jan 31, 2022, Retrieved from: https://www.thesangaiexpress.com/Encyc/2022/1/31/Samarjit-KambamThe-National-Education-Policy-NEP-was-launched-in-2020-by-the-Government-of-India.html

33. "*Convention on the Rights of the Child*" Retrieved on: Oct 23, 2022, Retrieved from: https://www.unicef.org/child-rights- convention/convention-text#

34. Christianity, Luke 38, Retrieved on: Oct 26, 2022, Retrieved from: https://www.bibleref.com/Luke/6/Luke-6-38.html

35. Sangave, Dr. Vilas A. (2001). "*Facets of Jainology*": Selected Research Papers on Jaina Society, Religion, and Culture. Mumbai: Popular Prakashan, p. 123. ISBN 81-7154-839-3

36. Vibha S. V. "*An introduction to Preksha Meditation*". 2009. pp. 77, ISBN 81-7195-136-8, Jain Vishva Bharati, Ladnun.

***

HUMANITIES AND SOCIAL SCIENCE STUDIES

CERTIFICATE OF PUBLICATION

This is to certified that the article entitled

ECONOMIC EQUALITY: A PRE-REQUISITE FOR PEACE

Authored By

Dr Lipi Jain
Assistant Professor, Department of Nonviolence and Peace, Jain Vishva Bharati Institute, Ladnun, Rajasthan, India

Issue.- Vol. 12(2) 2023
Humanities and Social Science studies with ISSN : 2319-829X
UGC-CARE List Group I
Publisher: Academy for Humanities and Social sciences
Impact Factor: 6.8

Humanities and Social Science studies ISSN: 2319-829X

Editor-in-chief

ज्ञान-विज्ञान विमुक्तये
UGC
University Grants Commission

Madhya Pradesh Institute of Social Science Research, Ujjain

मध्य प्रदेश सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान, उज्जैन

(An Institute of ICSSR, Ministry of Education, Govt. of India and Govt. of Madhya Pradesh)

CERTIFICATE OF PUBLICATION

This is to certified that the article entitled

भारत में ग्रामीण महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण

Authored By

डॉ. लिपी जैन
सहायक आचार्य, अहिंसा एवं शांति विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय)
लाडनूं – 341306 (राज.)

Published in Vol. 29, No: 1, January 2024
Madhya Pradesh Journal of Social Sciences (ISSN: 0973-855X)
UGC-CARE List Group I

Impact Factor: 5.3

Editor-in-Chief

आलोचना

त्रैमासिक

Certificate of Publication

This is to certify that

डॉ. लिपी जैन

For the paper entitled

नारी सशक्तिकरणः एक नये समाज की रचना

Volume No. 65 No. 1, February 2024

ज्ञान-विज्ञान विमुक्तये

in

ALOCHANA

Impact Factor: 4.7

UGC-CARE Listed Group-I

राजकमल प्रकाशन समूह

ALOCHANA EDITOR IN CHIEF

Madhya Pradesh Institute of Social Science Research, Ujjain
मध्य प्रदेश सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान, उज्जैन
(An Institute of ICSSR, Ministry of Education, Govt. of India and Govt. of Madhya Pradesh)

CERTIFICATE OF PUBLICATION

This is to certified that the article entitled

भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था तथा जाति प्रथा

Authored By

डॉ. **लिपि जैन**
सहायक आचार्य, अहिंसा एवं शांति विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं–341306 (राजस्थान)

ज्ञान-विज्ञान विमुक्तये
UGC
University Grants Commission

Published in Vol. 29, No: 4, April 2024
Madhya Pradesh Journal of Social Sciences (ISSN: 0973-855X)
UGC-CARE List Group I

Impact Factor: 5.3

Editor-in-Chief

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal

• वर्ष : 73 • अंक : 6/7 • सितंबर, अक्टूबर/2023

RNI NO. ASSBIL/2009/31008

ISSN : 2321-4945

एक हृदय हो भारत जननी

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

(भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक शोध-पत्रिका)

UGC CARE Listed Journal

वर्ष : 73 अंक : 6/7 सितंबर/अक्टूबर, 2023

परामर्श मंडल

श्री भारतभूषण महंत
कार्याध्यक्ष, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
गुवाहाटी (असम)

प्रो. आर.एस. सर्राजु
सम कुलपति, हैदराबाद विश्वविद्यालय
तेलंगाना-500046

प्रो. प्रदीप के शर्मा
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
सिक्किम केंद्रीय विश्वविद्यालय
काजी रोड, गंगटोक, सिक्किम - 737101

डॉ. दीपक प्रकाश त्यागी
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय
गोरखपुर (उत्तर प्रदेश)

डॉ. दिलीप कुमार मेधि
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

डॉ. अमूल्य चंद्र बर्मन
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

डॉ. अच्युत शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

प्रधान संपादक

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया
मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

संपादक

प्रो. मोहन
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली-110007

कार्यकारी संपादक

रामनाथ प्रसाद
प्रभारी साहित्य सचिव
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

विषय सूची

हिंदी विभाग

	संपादकीय		*4*
1.	पूर्वोत्तर में हिंदी के बढ़ते कदम	✍ डॉ. अच्युत शर्मा	6
2.	हिंदी का भविष्य : चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ	✍ डॉ. कंचन शर्मा	10
3.	साहित्य में मानव अधिकार की अभिव्यक्ति	✍ डॉ. अरुण कुमार पाण्डेय	15
4.	विभाजन की त्रासदी का इस्पाती सत्य : तमस	✍ डॉ. सपना सैनी	21
5.	भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में मारवाड़ के जैन स्वतंत्रता सेनानियों का योगदान	✍ डॉ. रवीन्द्र सिंह राठौड़	27
6.	संस्कृति और राष्ट्र अंतर्संबंध	✍ डॉ. आशीष	32
7.	हिंदी उपन्यासों में किन्नर जीवन का मनोविज्ञान	✍ दिवेश कुमार चंद्रा ✍ प्रो. सुशील कुमार शर्मा	36
8.	जीवन मूल्य के धनी कवि रमाशंकर यादव 'विद्रोही'	✍ आलिया जेसमिना	40
9.	स्त्री प्रश्न और प्रसाद के नाटक	✍ डॉ. ऐश्वर्य झा	47
10.	वांचो समुदाय की परंपराएँ और जमुना बीनी की कहानियाँ	✍ धनंजय मल्लिक	54
11.	मोहनदास की प्रथम लंदन यात्रा : चुनौतियाँ एवं सामाधान	✍ समीर देव	62

অসমীয়া বিভাগ

12.	চাৰিত্ৰিক বিকাশত ভৰ্তৃহৰিৰ আৱদান	✍ ড° নিলাক্ষী মিলি মেদক	69
13.	পদ্মৰাম শালৈৰ 'শালৈ জাতিৰ ঐতিহ্য বিচাৰ'ৰ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন	✍ ভনিতা বৈশ্য ✍ ড° জ্যোৎস্না ৰাউত	76
14.	প্ৰাক্-স্বাধীনতা কালৰ অসম সাহিত্য সভাৰ সভাপতিসকলৰ অভিভাষণত বিশ্বসাহিত্য প্ৰসঙ্গ ঃ এটি অধ্যয়ন	✍ জুমি বৰ্মন	84
15.	ভূপেন হাজৰিকাৰ গীতত শব্দৰ সমাহাৰ	✍ মৰমী চৌধুৰী	90
16.	অসমৰ টেটোন শ্ৰেণীৰ সাধুকথা ঃ নিংনি ভাৱৰীয়াৰ সাধুকথাৰ বিশেষ উল্লিখনসহ	✍ ব্ৰজেন বৈশ্য ✍ ড° উপেন ৰাভা হাকাচাম	96
17.	মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ উপন্যাসত আৰ্থ-সামাজিক দিশ ঃ এক অধ্যয়ন	✍ তৰালী সূত্ৰধৰ	105

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में मारवाड़ के जैन स्वतंत्रता सेनानियों का योगदान

डॉ. रवीन्द्र सिंह राठौड़

सहायक आचार्य
अहिंसा व शांति विभाग
जैन विश्वभारती संस्थान
लाडनूं (राजस्थान)
मो. 9829740007
ravindrachhapara@gmail.com

भारत को स्वतंत्र करवाने के लिए देश के विविध स्थानों पर प्रयास होते रहे, किंतु 1857 में एक संगठित क्रांति हुई, जिसके परिणामस्वरूप संपूर्ण देश भर में क्रांति की अलख जाग उठी, जिसकी अगुवा झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई बनीं। महारानी लक्ष्मी बाई को तो आज सभी जानते हैं, किंतु आर्थिक संघर्ष से जूझ रहीं लक्ष्मीबाई को खजाना खोलकर सहायता करने वाले ग्वालियर नरेश के खजांची अमर शहीद अमर चंद बांठिया को शायद ही कोई जानता हो। इतिहास के पन्ने गवाह हैं कि किस प्रकार फाँसी देने के बाद तीन दिन तक उनका शव ग्वालियर के सर्राफा बाजार के नीम के पेड़ पर लटकाए रखा गया था। इस दौरान सर्वधर्म के क्रांतिकारियों का योगदान रहा। इसमें जैन समाज का योगदान भी उल्लेखनीय रहा है। बहादुर शाह जफर ने लाला हुकमचंद जैन हांसी व उनके भतीजे फकीर चंद जैन को उन्हीं की कोठी के आगे फाँसी पर लटका दिया गया था। जैन धर्म हमेशा अहिंसा व शांति का पक्षधर रहा है। किंतु राष्ट्र के सम्मान के लिए जब-जब भी जरूरत हुई, तब-तब शौर्य व वीरता के साथ अपनी भूमिका निभाई।

मूल आलेख : 1857 की क्रांति भारत के लिए आजादी और स्वतंत्रता संग्राम के बिगुल के समान थी। इसके बाद अंग्रेजों ने दिल्ली पर पुनः अधिकार कर लिया। इस स्वतंत्रता संग्राम में जो भी प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से सहयोगी रहे उन्हें फाँसी पर चढ़ा दिया गया। बेगम हजरत महल और नाना साहब भूमिगत हो गए। झाँसी की रानी वीरगति को प्राप्त हो गईं और तात्या टोपे को भी फाँसी पर लटका दिया गया। धीरे-धीरे एकता, संगठन, नीति और दृढ़ता के बल पर अंग्रेजों ने इस प्रथम स्वतंत्रता संग्राम को दबा दिया। इस संग्राम ने जहाँ भारत में नवजागरण युग का सूत्रपात हुआ और भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की ऐसी सुदृढ़ नींव रखी। वहीं दूसरी और अंग्रेजी सरकार ने भी उग्र भारतीय मानसिकता को पहचाना और कानून पास कर भारत का शासन अपने हाथ में ले लिया। अब गवर्नर जनरल के

स्थान पर वायसराय के पद की घोषणा की गई।

To
The Patent Office At Delhi

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में राजस्थान के जैन स्वतंत्रता सेनानियों का योगदान भी अपूर्व रहा, जिसमें मुख्य रूप से जयपुर के क्रांतिकारी अर्जुन लाल सेठी का योगदान भी अद्भुत रहा, उन्होंने जयपुर राज्य की नौकरी छोड़ कर स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े। अर्जुन लाल सेठी ने आंदोलन की रूपरेखा के लिए मोती चंद और देव-वेद सांगली को जयपुर बुलाया। उनका कार्य था देश में स्वाधीनता युद्ध के लिए सैनिकों की भर्ती करना। उन्होंने भारत माँ को स्वतंत्र कराने का बीड़ा उठाया और क्रांतिकारी दल में सम्मिलित होने का निश्चय किया। उस समय क्रांतिकारी दल का काम अर्थाभाव के कारण ठप हो गया। अतः इन युवकों ने किसी देशद्रोही धनिक को मारकर धन लूटने की योजना बनाई। लेकिन इस कार्य में भी सफलता नहीं मिली। इस कारण क्रांतिकारी विद्यालय चलने में दिक्कत आने लगी और कुछ समय पश्चात अर्जुन लाल सेठी, मोतीचंद सेठी, विष्णुदत्त शर्मा, माणिकचंद को गिरफ्तार कर लिया गया, जिसमें अर्जुन लाल सेठी को सबूतों के अभाव में जेल में डाल दिया और मोतीचंद सेठी, विष्णुदत्त शर्मा को 1915 में फाँसी पर चढ़ा दिया।

इन स्वतंत्रता सैनानियों के क्रम में ही अन्य राजस्थान के मारवाड़ और आस-पास के स्वतंत्रता सेनानियों को भी नहीं भुलाया जा सकता, जिन्होंने आजादी के लिए अनेक कष्ट सहे, जिनका विवरण निम्न प्रकार से है-

1. अभयमल जैन : अभयमल जैन मारवाड़ लोक परिषद के संस्थापकों में से एक थे। इनका जन्म जोधपुर में हुआ। 1932 के राजनैतिक सम्मेलन में जयनारायण व्यास ने बुलाया और इन पर 1932 में राजद्रोही कार्यों में भाग लेने के कारण इनको रेलवे की नौकरी से निकाल दिया गया। तब अपनी स्टेशनरी की दुकान से गतिविधियाँ शुरू कर दीं। 1936 में छात्रों की शुल्क वृद्धि और बाईजी तालाब के मसले को लेकर आंदोलन किया। सरकार द्वारा गिरफ्तार कर एक वर्ष परबतसर के किले में रखा गया। 1942 में अभयमल जैन को 2 वर्ष की जेल हुई और आजादी के एक माह पूर्व जुलाई, 1947 में आपकी मृत्यु हो गई। आजादी का भावी जश्न देशवासियों के लिए छोड़ गए।

2. उगम राज मोहनोत : उगम राज मोहनोत का जन्म 25 जुलाई, 1925 में जोधपुर में हुआ। 1940 में लोक परिषद के आंदोलन में आपने वानर सेना के स्वयंसेवक के रूप में कार्य किया और 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान भारत सुरक्षा कानून के अंतर्गत डेढ़ वर्ष की सजा हुई, तब मात्र आप दसवीं के छात्र थे। तलाशी के दौरान पुलिस घर का सामान ले गई और उन पर स्कूल में प्रवेश लेने पर प्रतिबंध लगा दिया।

3. किशनलाल शाह : किशनलाल शाह ने विद्यार्थी जीवन से ही आंदोलनों में भाग लिया। सामंत शाही और जागीरदारी प्रथा को समाप्त करने के लिए किसान आंदोलन संगठित किया। 14 मार्च, 1947 में डाबड़ा हत्याकांड में सामंती तत्वों ने आपको गंभीर रूप से घयल कर दिया। आपको ही अभियुक्त बनाकर खून और हत्या के अभियोग में गिरफ्तार कर मुकदमा चलाया गया।

4. चम्पालाल फूलफगर : चम्पालाल फुलफगर का जन्म 1905 को लाडनूं में हुआ। लाडनूं में निर्वाचित नगर परिषद की स्थापना का कार्य किया। मारवाड़ लोक परिषद के सदस्य बने और आंदोलन में भाग लेने लगे। 1942 में मृत्यु हो गई और उनके नाम से चम्पालाल फूलफगर मार्ग रखा गया।

5. जीवनलाल कोठारी : जीवनलाल कोठारी हाई स्कूल के अध्यापक थे। 1938 में खादी पहनने के कारण राजशाही इनसे नाराज हो गए और नौकरी से हटा कर किसी झूठे मुकदमे में फँसाकर जेल में डाल दिया। कोठारी जी ने एक वर्ष की जेल यात्रा जैसलमेर जेल में भोगी।

6. डालमचंद डोसी : डालमचंद डोसी का जन्म 1912 कुशलगढ़ में हुआ। डोसी ने दोहद (गुजरात) में जिलाधीश भवन की तीसरी मंजिल पर चढ़कर तिरंगा झंडा फहराया। 1942 में भारत छोडो आंदोलन में दोहद के आस-पास गाँवों में घूमकर 'करो या मरो' का प्रचार करने लगे। उन्हें गिरफ्तार कर छह माह की सजा तथा एक सौ रुपए अर्थदंड लगाया गया। अर्थदंड नहीं देने पर दो माह की सजा और भुगतनी पड़ी। इन दिनों साबरमती जेल में

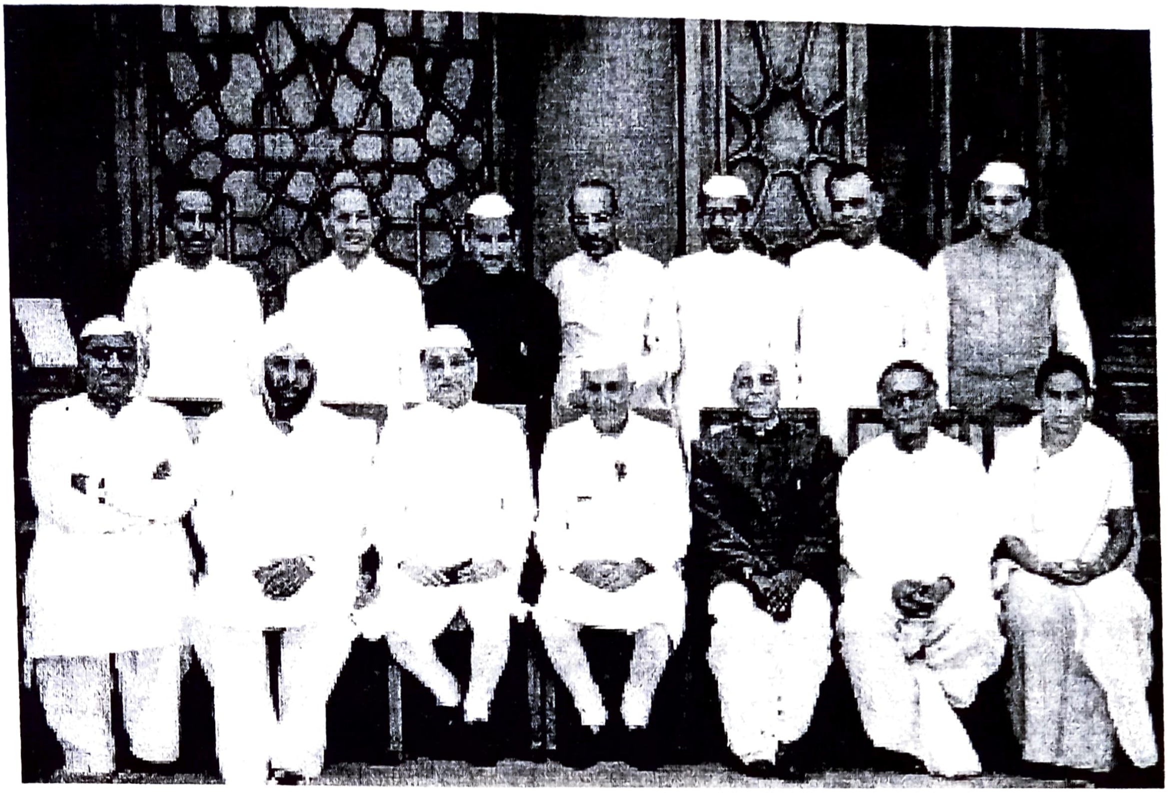

रहे। 1944 में प्रजामंडल की स्थापना कर नागरिक अधिकार सुविधाओं को देने के लिए आंदोलन किया। 1946 में हरिजन उद्धार और अस्पृश्यता निवारण में भी उन्होंने महती भूमिका निभाई। कुशलगढ़ में गांधी आश्रम और खादी केंद्र की स्थापना की। डोसी के क्रांति कार्यों को देखते हुए मारवाड़ के क्रांतिकारियों में भी जोश जाग उठा, जिससे कई क्रांतिकारी उनके साथ जुड़ गए।

7. डालिमचंद सेठिया : डालिमचंद सेठिया सुजानगढ़ के थे। सेठिया का राजस्थान के स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों में अग्रगण्य स्थान रहा है। 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में राष्ट्रनायक श्री जयप्रकाश नारायण और श्री राममनोहर लोहिया ने फरार होकर आपके निवास पर ही शरण ली थी। फलतः आपको ब्रिटिश शासन में 54 दिन का कारावास भोगना पड़ा। आप कलकत्ता में मारवाड़ी छात्रसंघ के सभापति रहे।

8. देवराज सिंघी : देवराज सिंधी का जन्म 1922 जोधपुर में हुआ। बचपन से ही क्रांति का विचार आपके मानस को आंदोलित करने लगा। 1942 में 'भारत छोड़ो आंदोलन' के समय जोधपुर में बम बनाने का काम आपने किया और उस बम को सिनेमा घर में रखा, जिसमें अंग्रेजी वायुसेना फिल्म देखने वाली थी। आपके बड़े भाई लालचन्द के हाथों से उसे सिनेमा घर में टाइम बम थैले में रखवा दिया, जिससे विस्फोट हुआ। लेकिन कोई आहत नहीं हुआ, किंतु सरकार दहल गई। दोनों भाई पकड़े गए। लालचन्द अदालत से भाग गए और साधु बनकर रहे। देवराज को 10 वर्ष की सजा हुई।

9. नेमीचंद आंचलिया : नेमीचंद आंचलिया का जन्म बीकानेर रियासत के सरदारशहर में हुआ। आंचलिया निर्भीकता के साथ बीकानेर महाराजा की निरंकुशता और शासनाधिकारी की आलोचना करते थे। 1942 की क्रांति के समय अजमेर से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक राजस्थान में बीकानेर शासन की अंधेरगर्दी को बेनकाब करने वाला एक लेख प्रकाशित किया। बीकानेर के महाराजा ने उस राजद्रोहात्मक लेख के लिए अपराधी ठहराते हुए 7 वर्ष के कठोर कारावास की सजा सुनाई। सरदारशहर और बीकानेर में आतंक पैदा करने के लिए हथकड़ी लगाकर घुमाया और काल कोठरी में डाल दिया, लेकिन 1943 में महाराजा गंगा सिंह के निधन के बाद

महाराजा सार्दुल सिंह के गद्दी पर बैठते ही राजनीतिक बंदियों की रिहाई शुरू की, लेकिन नेमीचंद की नहीं। तब उन्होंने भूख हड़ताल की और प्रजा परिषद के प्रयासों के कारण रिहा हो गए।

10. पुखराज उर्फपुष्पेन्द्र कुमार : पुखराज उर्फपुष्पेन्द्र कुमार का जन्म बिलाड़ा, जोधपुर में 1912 में हुआ। 1930 में जब छात्र थे तभी राजनीति और आंदोलन में सक्रिय हो गए। 1932 में बंबई में विदेशी कपड़ों का बहिष्कार करने के कारण बंबई में पकड़े गए और 6 माह 18 दिन की जेल हुई। 1938 में बिलाड़ा में लोक परिषद की स्थापना की। 1942 में भी आपको 4 माह 18 दिन की जेल हुई।

11. फूलचन्द बाफना : फूलचन्द बाफना का जन्म 1915 पाली में हुआ। 1942 में जब परिषद ने जिम्मेवार हुकूमत आंदोलन चलाया, तब आपकी सक्रिय गतिविधियों के कारण गिरफ्तार कर दो वर्ष की सजा दी।

12. भंवर लाल सिंघी : भंवर लाल सिंघी का जन्म 1914 जोधपुर के निकट बडू गाँव में हुआ। हाई स्कूल की परीक्षा में जयपुर में आपने सर्वोच्च अंक प्राप्त किया। लेकिन जब आपके पिताजी को 'अमानत में खयामत' के मुकदमे में गिरफ्तार होने की नौबत आई तो माँ के गहने बेच कर भरपाई की। राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा की बैठक में आप महात्मा गांधी से मिले, तब इन्होंने 'करो या मरो' और 'भारत छोड़ो आंदोलन' में 1942 में शामिल हो गए। इन्होंने नागपुर और बंबई के बीच रेल लाईन व ट्रेनों को डायनामाईट से उड़ाने की योजना बनाई। लेकिन अंग्रेजों को इसकी भनक लग गई। तब उन्हें गिरफ्तार कर लिया और जेल में डाल दिया। इनकी तबीयत ठीक नहीं रहने के कारण 1945 में रिहा कर दिया गया। वे अंतिम समय तक संघर्ष करते रहे। इसका उदाहरण जब 1946-47 में बंगाल में सांप्रदायिक दंगे भड़क उठे, तब सिंघी जी मुसलमानों की सुरक्षा-व्यवस्था में अहम भूमिका निभाई और सामाजिक सुधारों में लग गए। आजादी के बाद भी आपने 1950 में पाकिस्तान में फँसे हजारों हिंदुओं को पश्चिम बंगाल लाए।

13. मांगीलाल सदासुख पाटनी : मांगीलाल सदासुख पाटनी का जन्म 1906 कुचामन में हुआ। 1930 में विदेशी कपड़ों की होली जलाने के आंदोलन से स्वतंत्रता संग्राम में कदम रखा। 1940 में व्यक्तिगत सत्याग्रह में भी सक्रिय रहे। 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन में 14 माह की जेल यात्रा की। नवभारत इंदौर में आपकी गिफ्तारी प्रजा मंडल के नेता के रूप में हुआ।

14. मानमल जैन : मानमल जैन का जन्म 1912 लाडनूं राजस्थान में हुआ। इन्होंने राजनैतिक प्रवृत्तियों को अपनाते हुए लोक परिषद द्वारा जागीरदारी प्रथा को समाप्त के लिए आंदोलन किया। 1942 के आंदोलन में वे जिम्मेदार हुकूमत आंदोलन में लाडनूं के सत्याग्रहियों का जत्था लेकर जोधपुर गए। तब वे गिरफ्तार कर लिए गए और सवा साल की जेल हुई। 1943 में वे रिहा हुए।

15. सेठ मोती लाल जैन : सेठ मोती लाल जैन का जन्म 1908 जोधपुर में हुआ। सेठ मोती लाल जैन ने राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन में तनमन धन समर्पित देश की आजादी में योगदान दिया। 1930 में विजय सिंह पथिक से राजनीति में आने की प्रेरणा मिली। 1941 में आप कोटा प्रजामंडल के सदस्यों को लेकर महात्मा गांधी से मिलने वर्धा गए। 1942 में अगस्त क्रांति के दौरान महात्मा गांधी की गिरफ्तारी के बाद विरोध करने पर तीन माह तक नजरबंद कर दिया गया। दूसरी बार कोटा स्टेशन से गिरफ्तार कर आठ दिन जेल में डाल दिया।

16. लालचंद जैन : लालचंद जैन का जन्म 1918 जोधपुर में हुआ। बचपन से ही आप में स्वतंत्रता की भावना हिलोरे ले रही थी। 1942 के आंदोलन में आपने सक्रिय भाग लिया। जोधपुर में सिनेमा गृह (जिसमें अंग्रेज अफसर फिल्म देखने आने वाले थे) में बम रखने के कारण आपको गिरफ्तार कर लिया गया। किंतु शौचालय जाने के बहाने आप वेश बदल कर भाग निकले और कपूर चन्द नाम से इधर-उधर घूमते रहे। दिल्ली में रॉयल एयर फोर्स में भर्ती हो गए। किंतु यहाँ से भी कुर्ता पजामा पहन ठेकेदार का वेश बनाकर भाग निकले। आजादी मिलने तक भूमिगत रहकर कार्य करते रहे। आजादी के बाद दिए साक्षात्कार में आपने बताया कि

'हमें स्वराज्य प्राप्त करने के लिए हिंसक घटनाओं से परहेज नहीं था, हमारा उद्देश्य तो देश को आजाद कराना था, किसी को कष्ट देना नहीं।'

17. संपत लाल लूंकड : संपत लाल लूंकड का जन्म 1900 को फलौदी (जोधपुर) में हुआ। संपतलाल लूकड बचपन से ही अन्याय का विरोध करने लगे थे। 1939 में फलौदी में लोकपरिषद की स्थापना होने पर वे उसमें शामिल हो गए और अनेक वर्षों तक उसके अध्यक्ष रहे। जागीरदारों से निरंतर संघर्ष किया तथा मारवाड़ लोकपरिषद के जिम्मेवार हुकूमत आंदोलन में 26 अगस्त, 1942 को गिरफ्तार कर लिए गए और 16 माह जोधपुर जेल, बिजोलोई पैलेस आदि स्थानों पर नजरबंद रखे गए।

18. सूरजमल गंगवाल : सूरजमल गंगवाल का जन्म लाडनूं (राजस्थान) में हुआ, जो जोधपुर रियासत में आता था। गंगवाल ने 'मारवाड़ लोक परिषद' के तृतीय लाडनूं अधिवेशन में सक्रिय सहयोग दिया। 1942 में आंदोलन में जोधपुर में सत्याग्रह करने के अपराध में गिरफ्तार कर लिए गए तथा 1 वर्ष की सख्त कैद की सजा भोगी।

उपसंहार :

राजस्थान का मारवाड़ क्षेत्र भी भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में कभी पीछे नहीं हटा। यहाँ के जैन धर्म के अनुयायी अपनी मातृभूमी की स्वतंत्रता के लिए अनेक कष्ट सहे। चाहे वह अंग्रेज हुकूमत के खिलाफ रहे या फिर स्थानीय जागीरदारी प्रथा के खिलाफ उन्होंने खुला विरोध किया और गुलामी और परतंत्रता से मुक्त करवाया। राजस्थान ही नहीं, भारत के स्वतंत्रता सेनानियों में इनका नाम स्वर्ण अक्षरों में लिखा गया है। ❑

संदर्भ :

- जैन डॉ. कपूरचंद, जैन डॉ. ज्योति- स्वतंत्रता संग्राम में जैन, प्रकाशक, प्राच्य श्रमण भारती, मुजफ्फनगर, संस्करण-प्रथम पृ. 24
- वही पृ.सं.- 53
- जैन संस्कृति और राजस्थान, पृ.- 344
- राजस्थान स्व. से., पृ.- 711
- रा. स्व. से. पृ.- 712
- रा. स्व. से. पृ.- 717
- रा. स्व. से. पृ.- 734
- जैन संस्कृति और राजस्थान, पृ.- 343
- इ. अ. ओ. भाग-2, पृ.-399
- इ. अ. ओ. भाग-2, पृ.-396
- रा. स्व. से. पृ.- 765
- स्वतंत्रता संग्राम में जैन, पृ. 295
- रा. स्व. से. पृ. 846
- वही पृ.-359
- स्वतंत्रता संग्राम में जैन,पृ. 849
- स्वतंत्रता संग्राम में जैन,पृ. 538
- लोक जीवन (साप्ताहिक) 14.08.2004)
- राज. स्व. से. पृ.-728
- राज. स्व. से. पृ.-50-68

आलोचना

त्रैमासिक

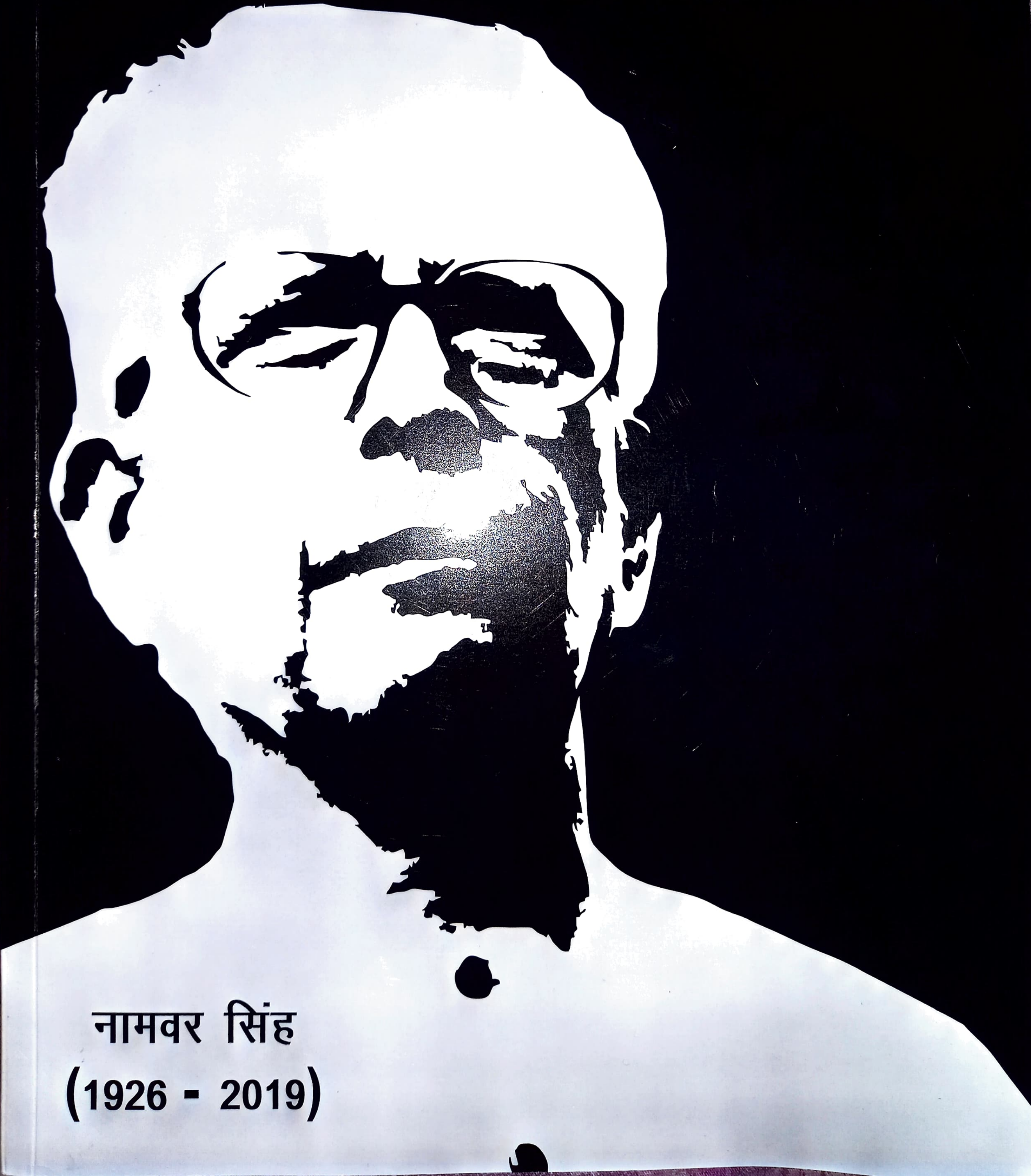

नामवर सिंह

(1926 - 2019)

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

भारतीय संस्कृति के इतिहास में स्त्रियों की दशा

डॉ. रविन्द्र सिंह राठौड़
सहायक आचार्य, अहिंसा एवं शांति विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूँ (राज.)
ई–मेलः ravindrachhapara@gmail.com

भूमिका

भारत विविधताओं का देश है। यहाँ का हर क्षेत्र अनूठा है। कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक का विस्तृत भूगोल अपने आप में एक वृहद् ऐतिहासिक विरासत को सहेजे हुए हैं। इस ऐतिहासिक आयाम के सांस्कृतिक एवं साहित्यिक फलक है, जो इसे अद्भुद बनाते है। इसी संस्कृति को संजोने में भारतीय स्त्रियों का अभूतपूर्व योगदान रहा है। चाहे वह शक्ति के रूप में हो या फिर बलिदान के रूप में, वे हमेशा ही अग्रणीय रही है।

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।।

मनु का वाक्य है कि जिस कुल में स्त्रियों को सम्मान मिलता है, देवता वही रहते हैं। इसके विपरित जहां इनका अनादर होता है, समस्त कार्य असफल होते हैं।[1] मनु स्मृति में वर्णित है कि ब्रह्म ने सृष्टि निर्माण के पूर्व सर्वप्रथम अपने शरीर को अर्द्धनारीश्वर रूप में विभक्त किया था। स्त्रियों की महत्ता का गुणगान प्रायः समकालीन ब्राह्मण, बौद्ध व जैन ग्रन्थों में हुआ है। जैन धर्म संधिनी या श्रद्धाचारी का महत्त्वपूर्ण स्थान था।[2] स्त्रियों की सामाजिक महत्ता का वर्णन करते हुए एक विचारक ने उल्लेख किया है कि यूची जाति में स्त्रियों को पर्याप्त आदर मिला था। यहां तक कि प्रशासन समबन्धी जिन विषयों से उनका सम्बन्ध न था उनमें भी उनकी परामर्श ली जाती थी।[3] महाभारत के अनुशासन पर्व में विहित है कि माता अपनी महता में दस पिता से अथवा समस्त भूमण्डल में श्रेष्ठ है एवं श्रेष्ठतम गुरू भी।[4]

मनु एक श्लोक में स्त्रियों के सम्मान की बात करते है–

उपाध्यायात् दशाचार्यः आचार्याणां शतं पिता।
सहस्त्र तु पितृणं माता गौरवणति स्त्रियते।।

अर्थात् दक्ष उपाध्यायों में एक आचार्य बड़ा है, सौ आचार्या से पिता बड़ा है और पिता से माता गौरव से हजार गुणा बड़ी है। माता का दर्जा पिता से भी ऊँचा है।[5]

---

[1] मनु., 3।56, 8
[2] श्री महावीर जैन विद्यालय सुवर्ण महोत्सव ग्तन्य., 1968, पृ. 160
[3] सास्कृतायन, आर. हिस्ट्री ऑफ सेन्ट्रल एरिया, पृ. 100
[4] महाभारत, 13।105।14–6
[5] भट्ट जनार्दन, भारतीय संस्कृति, पृ. 60

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

यही नहीं नामों में भी स्त्री नाम पहले आता है, पुरूष का पीछे। जैसे सीताराम, लक्ष्मीनारायण आदि। स्त्रियों में यथेष्ट शिक्षा का प्रचार था। वैदिक काल में अनेक स्त्रियां हुई जिन्होंने वेद के मन्त्रों की रचना की। ऐसी स्त्रियों में लोपामुद्रा, विश्वधारा, सिकता, इन्द्राणी आदि नामों का उल्लेख है। इसी तरह उपनिषदों में गार्गी, मैत्रेयी आदि स्त्रियों के नाम आते हैं। उसके बाद के युग में भी पद्मावती मीरा बाई जैसी विदुषी और शास्त्रज्ञ स्त्रियों का उल्लेख प्राचीन साहित्य में मिलता है।[6] विश्व के अन्य देशों की तुलना में भारत में महिलाओं का गौरवपूर्ण स्थान रहा है।

एक अन्य प्रसंग में स्त्री को परिवार के प्राण (कुल लक्ष्मी) समृद्धता का प्रतीक, पति को पूर्णत्व प्रदान करने वाली, सरवा, दार्शनिक, मार्ग प्रदर्शक और इसी कारण सम्मानीय माना है। विहित है भगवान स्त्री का आदर करने वाले से प्रसन्न होते हैं। जैन संस्कृति में कन्या समाज व परिवार के लिए उस धुरी के रूप में उपयोगी मानी गई थी जिस पर गृहस्थाश्रम घूमता है।[7] बौद्ध धर्म व जैन साहित्य में भी स्त्रियों को अत्यधिक आदर प्रदान किया जाता था। संभवतः इसी कारण अधिकांश स्त्रियों द्वारा बौद्ध विहार में प्रवेश या जिनमें कतिपय विख्यात आचार्यों भी हुई। कलाकृतियों में देवियों के संदर्भ में मातृ देवी वसुन्धरा, गजलक्ष्मी, दुर्गा, षष्ठी, नाना देवी आदि का अंकन समाज में स्त्रियों की उन्नति दशा का बोध है। इतिहासकार के मतानुसार यही नाना देवी आज कुमाऊ और हिमाचल प्रदेश में नैना देवी के रूप में पूजित है।

स्त्रियों के कर्त्तव्य

मनुस्मृति में स्त्रियों के कर्त्तव्यों का विशद् उल्लेख हुआ है। मनु ने स्त्री का परम कर्त्तव्य का विशद् में पति के प्रति सत्य रहना बताया है। वर्णित है उसे धार्मिक कार्य आरम्भ करने के पूर्व पति की अनुमति लेना आवश्यक था। वह बाल्यावस्था, युवावस्था एवं वृद्धावस्था में क्रमशः पिता, पति व पुत्र की इच्छानुसार ही आचरण करें। स्त्री जीवन में कभी भी स्वतंत्र नहीं मानी गई थी।[8] स्त्री से अपेक्षित था कि वह सर्वथा प्रसन्न मुद्रा में गृह कार्यों में दक्ष, बर्तनों को स्वच्छ, शुद्ध रखने वाली, धार्मिक कार्य करने वाली, भोजन पकाने वाली एवं अल्पव्ययी हो। मद्यपान करना, दुष्ट–चरित्रों से मिलना, पति से दूर रहना, पति के बिना ही दूरस्थ यात्रा करना, दिन में सोना, अपरिचित के घर रहना उक्त छः दोष स्त्रियों का सर्वनाश कर देते है।[9]

प्रतिव्रता–धर्म का पालन करती हुई स्त्री को पति का अप्रिय अर्थात् भिचारादि कार्य नहीं करने का आदेश था। इतिहासकार चटर्जी के अनुसार स्त्री के विषय में मनु एवं याज्ञवल्वय का दृष्टिकोण पर्याप्त भिन्न या मनु उसे भावनाहीन मानते थे जबकि याज्ञवत्वय कर्त्तव्य निष्ठ।[10]

स्त्रियों के अधिकार एवं विशेषाधिकार

[6] भट्ट जनार्दन, भारतीय संस्कृति, पृ. 61
[7] बाबू छोटे लाल जैन स्मृति ग्रन्थ, 1967, पृ. 92
[8] याज्ञवल्क्य स्मृति,
[9] कुषाण कालीन समाज, 1992, पृ. 164
[10] चटर्जी सम्बन्धी धार्मिक मान्यता

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

निःसन्देह स्त्रियों के कर्त्तव्यों व असमर्थताओं के प्रतिफल–रूप में उन्हें अनेकानेक अधिकार एवं कतिपय विशेषाधिकार भी प्राप्त थे। सर्वप्रथम स्त्रियों का अधिकार एवं कतिपय विशेषाधिकार भी प्राप्त थे। सर्वप्रथम स्त्रियों का अधिकार पति सेवा करना, सदा पति के निकट रहना एवं पति के घर में निवास पाना था। उसे पति के घर में भरण–पोषण का पूर्ण अधिकार था। पुरूषों द्वारा सुरक्षा पाना स्त्रियों का मूल अधिकार था। वह जीवन की किसी भी अवस्था में स्वाधीन न थी। धन सम्पति पर स्त्री के अधिकार के विषय में याज्ञवल्क्य पुत्रहीन पति परायण, पुत्रवती एवं मधुरभाषी पत्नी का त्याग करने पर पति की सम्पति का 1/3 भाग पत्नी हो देते हैं। इससे स्पष्ट है कि स्त्रियों को संपति–अधिकार प्राप्त थे।[11] स्त्रियों की हत्या सर्वथा निषिद्ध थी। पती पत्नी के अपराधों का गुरूवत शारीरिक दण्ड दे सकता था। व्यभिचार दोष पर त्यागा जा सकता था परन्तु उन्हें मारा नहीं जा सकता था।

स्त्री सम्बन्धी धार्मिक मान्यता

स्त्रियों का धर्म में अभिन्न–सम्बन्ध था। यज्ञादि धर्म कार्य उनके बिना सम्पन्न नहीं होते थे। वास्तव में बौद्ध व जैन धर्म से प्रभावित हो अधिकांश स्त्रियों ने भिक्षुणी होना स्वीकार किया था।[12] अनेक प्रतिमाओं में स्त्रियों द्वारा धारण किया गया जनेऊ इस बात का संकेत करता है। कि पुरूषों के समान स्त्रियों को धार्मिक अधिकार प्राप्त थे। इसी प्रकार वेदारम्भ और गायत्री जाप आदि में प्राप्त स्वतन्त्रता निश्चित ही उनकी सामाजिक उन्नति की परिचायक है।

भारत स्त्री और शिक्षा

जैसा कि सर्वविदित है वैदिक काल में स्त्री शिक्षा अति उन्नत अवस्था में विद्यमान रही है। स्त्रियां प्रायः लम्बी अवस्था तक अध्ययनरत रहती थी। ईसा पूर्व की शताब्दियों में विदेशी आक्रमण होते रहे। अतएव स्वस्थ वातावरण के अभाव में सुरक्षा की दृष्टि से कन्याओं के विवाह अल्पावस्था में कर देना सर्वोत्तम माना गया। फलस्वरूप उनकी प्रारम्भिक शिक्षा ही हो पाती थी। यही कारण है। इस काल में विदुषी स्त्रियों के कम ही उल्लेख उपलब्ध होते हैं। वास्तव में शिक्षा समाज के अतिसीमित दायरे तक ही व्याप्त थी।[13] महाभारत की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नायिका द्रोपदी पण्डिता नाम से विख्यात थी। यह निर्भीकता एवं विद्वता पूर्वक पति से सभी विषयों में तर्क–वितर्क करती थी एवं संकटकालीन अवसरों पर वह अत्यधिक विवेकी सांसारिक स्त्री होती थी। तात्कालीन स्त्रियां शिक्षा के अलावा संगीत, नृत्य एवं चित्रकला आदि की शिक्षा भी ग्रहण करती थी।[14] इसके अलावा उनके द्वारा सैनिक शिक्षा प्राप्त करने के भी उल्लेख मिलते हैं। जो उनकी सैनिकी–रूचि की पृष्टि करता है। स्त्रियां प्रायः शासन में भी भाग लेते थी। अतः स्पष्ट है कि वह सर्वतोन्मुखी प्रतिभायुक्त थी।

---

[11] याज्ञवल्क्य, 1।105
[12] ला.वी.सी. वोमेन इन बुद्धिस्ट लिटरेचर, पृ. 66
[13] केतकर, एस.वी. हिस्ट्री ऑफ कास्ट इन इण्डिया, पृ. 54
[14] मजूमदार ग्रेट वोमेन ऑफ इण्डिया, पृ. 17

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

स्त्री एवं विवाह

धर्मग्रन्थों से विदित होता है कि स्त्रियों के विवाह अल्पायु में ही करना अपेक्षाकृत श्रेष्ठ माना गया। संभवतः उसका कारण समकालिन राजनैतिक सामाजिक वातावरण या जिससे स्त्रियों का प्रभावित होना स्वाभाविक था। मनुस्मृति में विहित है कि यदि वर गुणवान मिल जाए तो कन्या का विवाह अल्पावस्था में ही कर देना सर्वोत्तम है।[15] स्त्रियों का पर्दा प्रथा के प्रति क्या दृष्टिकोण या इस पर विभिन्न धर्म–ग्रन्थों द्वारा प्रकाश पड़ता है। द्रौपदी का दर्शन राजाओं ने स्वयंवर के समय ही किया था तदुपरांत जुए में हारने पर चीर हरण के समय।[16] ललित विस्तार में एक वक्तव्य है कि नवविवाहिता अपने ससुराल में वृद्धों के समक्ष पर्दा करती थी। ऐसा वर्णित है कि समाज में यद्यपि पर्दा–प्रथा विद्यमान न रही फिर भी उच्च वर्णों की स्त्रियों जनसाधारण के समक्ष नहीं जाती थी। विशेष अवसरों पर ही उनके दर्शन सुलभ थे।

इतिहासकार जायसवाल के याज्ञवल्वय द्वारा स्त्रीधन पर पुत्रियों के अधिकार पर विशेष बल देने का कारण संभवतः पैतृक संपति पर पुत्र अधिकार के समान ही पुत्रियों को समान अधिकार दिलाना था। अतः स्त्रीधन पर पुत्रियों का अधिकार था। संभवतः यह स्त्रीधन की प्रथा द्रविण मातृ–प्रधान समाज की देन थी। उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि इस युग में स्त्रियों के सम्पति – अधिकार पूर्ण सुरक्षित थे। विधवा–विवाह के संबंध में मनु का मत था कि पति की मृत्युपरान्त यदि चाहे तो स्त्री केवल कन्दमूल फल खाकर अपने शरीर को क्षीण कर दे परन्तु उसे किसी अन्य पुरूष का नाम तक नहीं लेना चाहिए। उसे संयम रखना चाहिए, व्रृत रखने चाहिए, सतीत्व की रक्षा करनी चाहिए और पतिव्रता के सदाचरण एवं गुणों की प्राप्ति की आकांक्षा करनी चाहिए।[17]

वैश्यावृत्ति न केवल भारतीय समाज में प्रत्युत्त संसार के प्रत्येक समाज में प्राचीन–काल से विद्यमान रही है। देवताओं के सन्दर्भ में अप्सराओं के उल्लेख भी इसी वैश्यावृति के बोधक है। अतः कहना गलत न होगा कि अनादिकाल से यह संस्था सजीव रही है। स्मृति शास्त्र एवं महाभारत के प्रसंगों में इसका विशद विवेचन हुआ है।[18] कामसूत्र में 64 कलाओं में प्रारंगत वैश्या को गणिका कहा है।[19] व्यभिचार को प्रायः सभी धर्मग्रन्थों में भर्त्सगीय माना गया। याज्ञवल्कय ने व्यभिचार द्वारा गर्भवती होने अथवा पति को मार डालने अथवा इसी प्रकार के क्षणास्पपद अपराध करने पर पत्नी को त्यागनीय माना है। महाभारत के शांति पर्व में कतिपय भिन्न विचार व्यक्त करते हुए स्त्री के कुमार्गगामी होने का दोष उसके पति को दिया है।[20]

[15] मनु., 9, 88
[16] ललित, 12।157
[17] मनु. 9, 132
[18] शर्मा, साधन, कुषाण कालीन समाज, पृ. 171
[19] कामसूत्र, 1। 3। 20
[20] महाभारत, 11 । 267। 38

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

सती प्रथा – सती प्रथा प्राचीन भारत में ही नहीं प्रचलित थी वरन् प्राचीन यूनानियों, जर्मनों, स्लावों आदि जातियों में भी इसके उदाहरण मिलते है। सती होने से तात्पर्य पति को मृत्युपरान्त अग्नि में आत्म समर्पण करता था। यह पत्नी की पति के प्रति असीम निष्ठा का सूचक था। स्त्रियां इस कार्य को सहर्ष करती थी एवं जो सती नहीं होती थी उन्हें समाज में गौरव नहीं मिलता था। विधवाओं के प्रति अपमानजनक व्यवहार किया जाता था। संभवतः इसीलिए विधवा सती हो जाना श्रेयस्कर समझती थी। अतएव सती प्रथा को बल मिला।[21] युद्ध में पति के मृत होने पर शत्रुओं द्वारा बन्दी बनाकर स्त्रियों को दासीवत आचरण हेतु बाध्य किया जाता था। अतः सती हो जाना इससे अच्छा था। मनु ने युद्ध में प्राप्त वस्तुओं में स्त्रियों का वर्णन किया है।

स्त्रियों के प्रति विविध धारणाएँ

समकालीन ग्रन्थों में स्त्रियों के पक्ष एवं विपक्ष में विविध वर्णन उपलब्ध होते हैं। इनमें जहां स्त्रियों को ब्रह्म की सर्वोत्कृष्ट सृष्टि माना था वहां उन्हें निकृष्टतम शुद्ध के समान भी माना। अनुशासन पर्व में विहित है कि स्त्रियां झूठी है, उनसे अधिक दुष्ट कोई नहीं है, वह उस्तरे की धार की भांति है, विष है, सर्प और अग्नि है, सैंकड़ों–हजारों में शायद कोई एक पतिव्रता स्त्री होगी।[22] चटर्जी का मत है कि तत्कालीन धर्मों में स्त्रियों को अधिकाधिक स्वतंत्रता प्राप्त हो गयी थी। इसका परिणाम स्वरूप परिवार एवं उनकी सुरक्षा हेतु पुरूषों को सजग किया गया था।[23]

कुषाण युग के शिल्प और पुरातत्व के दोहन से यह स्पष्ट होता है कि समाज में स्त्रियों का स्थान महत्त्वपूर्ण या ब्राह्मण, बौद्ध व जैन स्त्रियों की मूर्तियों के निर्माण में भी स्त्रियों ने योगदान दिया। एक शिलालेख में जैन तीर्थंकर के स्थान पर देवी आर्यावती को प्रधानता दी है। विद्वानों का अनुमान है कि यह वर्धमान की मां त्रिशला थी जिन्हें आर्यावती नाम से शिलालेख में स्मरण किया गया है। जैन एवं बौद्ध मूर्तियों से श्रावकों के साथ श्राविकाएं, उपासकों के साथ उपासिका पर्याप्त संख्या में अंकित मिलती है। महिला सौदर्य को एक विशिष्ट दृष्टि से अंकित करना कुषाण युग के मथुरा शिल्पी की विशेषता थी यद्यपि कला में स्त्रियों का अंकन मथुरा से पूर्व सांची व भरहुत में भी हुआ पर वहां उनका स्थान देविका व उपासिका का है।

निष्कर्ष

वस्तुतः स्त्रियों की दशा सामाजिक विकास का मापदण्ड है। उन्नत व आदर्श समाज वही है जिसमें स्त्रियों को भी पुरूषों के समान अधिकार व उन्नति के समान अवसर प्राप्त होते हैं। भारतीय समाज को सदैव स्त्रियों से उच्च आदर्शों की आशा रही है। अतएव स्त्रियों की प्रशंसा में धर्मग्रन्थकारों ने कोई कसर न छोड़ी। कुषाणकालीन ब्राह्मण, बौद्ध, जैन साहित्य में स्त्रियों की उन्नति के पक्ष एवं विपक्ष में पर्याप्त विवरण उपलब्ध है परन्तु यदि तत्कालीन पुरातात्विक सामग्री पर दृष्टि डाली जाए

[21] अल्टेकर पोजीशन ऑफ वोमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन्स, पृ. 163
[22] महाभारत, 13।19। 6, 13।38।12, 13।19।93
[23] चटर्जी बी. कुषाण स्टेट एण्ड इण्डिया सोसाइटी, पृ. 193

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

तो स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि स्त्रियों की दशा पर्याप्त सन्तोषजनक थी। मुद्राओं एवं मूर्तियों में मातृ देवी की पूजा का चित्रण स्त्रियों के सम्मान का सूचक है। दूसरी ओर मुख–भंगिमा द्वारा सांसारिक विषयों से पूर्ण सन्तुष्टि की पुष्टि होती है।

भारतीय संस्कृति में स्त्रियों को उच्च स्थान दिया गया है। स्त्री–पुरूष का आधा अंग मानी गई है, इसीलिए 'अर्द्धांगिनी' कहलाती थी। स्त्रियों को पुरूषों के समान अधिकार प्राप्त थे। कोई धार्मिक कार्य स्त्री के बिना पूरा नहीं होता था। इसीलिए वह धर्म पत्नी कहलाती थी। नारी के बिना घर का अस्तित्व ही न समझा जाता था। इसलिए कहा गया है –'गृहिणी गृहमुच्यत' अर्थात् वास्तव में नारी ही घर है। संसार में जितनी उत्तम से उत्तम विभूतियां है उनको भारतीय संस्कृति में स्त्री का रूप दिया है। भारतीय संस्कृति में स्त्रियों को हमेशा सम्मान दिया है।

ISSN : 0973-855X

MPJSS

Madhya Pradesh Journal of Social Sciences

Peer-reviewed Journal of
M.P. Institute of Social Science Research

Volume 29 | Number 1 | January 2024

www.mpissr.org

S. No.	Content		Page No.
1	"HUMAN RESOURCE MANAGEMENT PRACTICES IN MSME REGISTERED PLASTIC INDUSTRIES: A STUDY IN ODISHA".	Satesh Kumar Mohini Prof.Tushar Kanta Pany	1-10
2	AN ANALYSIS OF CENSORSHIP, CONTROVERSY, AND PUBLIC RECEPTION IN THE NOVELS OF VLADIMIR NABOKOV AND D.H. LAWRENCE	Viplav Kumar Mandal Dr. Dheeraj Kumar	11-17
3	ANTON CHEKHOV: THE CREATION OF AN ARTIST AND HIS VOYAGE	Dr. Jwala Prasad Dr. Aiman Reyaz	18-24
4	भारत में ग्रामीण महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण	डा. लिपी जैन डा. रविन्द्र सिंह राठौड़	25-29
5	NATURAL LANGUAGE PROCESSING – AN EMERGING FIELD	Dr. Pragati Bhatnagar Dr. Manish Bhatnagar	30-38
6	A CRITICAL STUDY OF RURAL HEALTH PROBLEMS IN VALSAD AND NATIONAL RURAL HEALTH MISSION	Dr. Dharmeshbhai Prabhubhai Patel	39-47
7	WORKPLACE MENTAL HARASSMENT IN PRIVATE COMPANY & INDUSTRY AND ITS IMPACT ON SOCIETY: - ARE WE MINDFUL	Mr. Dungar Singh Dr.Vikas Kaushik	48-51
8	ONLINE CHILD EXPLOITATION: COMBATING THE PREDATORY THREATS IN CYBERSPACE	Dr. Rohitas Meena Mr Sujeet Kumar Jha	52-60
9	गुप्तकालीन संस्कृति का एक ऐतिहासिक अध्ययन	पूनम पाठक डा0 शगुफ्ता परवीन	61-65
10	कृष्णा सोबतीके व्यक्तित्वव कृतित्वका एक अध्ययन	उर्मि सरकार डाँ धनेश कुमार मीना	66-72
11	शाहजहां समकालीन समय में लोगों केखानपान का एक ऐतिहासिक अध्ययन	सरिता कुमारी डा0 शगुफ्ता परवीन	73-77

Madhya Pradesh Journal of Social Sciences
A biannually Journal of M. P. Institute of Social Science Research, Ujjain
ISSN: 0973-855X (Vol 29 No 1, January 2024)

भारत में ग्रामीण महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण

डॉ. लिपी जैन
सहायक आचार्य, अहिंसा एवं शांति विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय)
लाडनूं – 341306 (राज.)

डॉ. रविन्द्र सिंह राठौड़
सहायक आचार्य, अहिंसा एवं शांति विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय)
लाडनूं – 341306 (राज.)

भूमिकाः—

भारतीय संविधान महिलाओं को न सिर्फ समानता का दर्जा देता है। बल्कि महिलाओं के पक्ष में सकारात्मक रुख अपनाने के उपायों के लिए सरकार को सशक्त भी बनाता है। सरकार ने विभिन्न क्षेत्रों में ग्रामीण महिलाओं की उन्नति के उद्देश्य से विभिन्न विकास नीतियां, योजनाएं, कार्यक्रम और कानून भी कार्यान्वित किए हैं। क्रमिक पंचवर्षीय योजनाओं (पहली से बारहवीं) में ग्रामीण महिलाओं संबंधी मुद्दों में कल्याण, विकास तथा सशक्तता की ओर बढ़ने के दृष्टिकोण में महत्वपूर्ण बदलाव आया है। ग्रामीण महिला सशक्तिकरण के प्रति विविध प्रोत्साहक प्रयासों के बावजूद संविधान, कानूनों के साथ नीतियों योजनाओं तथा कार्यक्रमों में निर्धारित लक्ष्यों तथा महिलाओं की वास्तविक स्थिति के बीच आज भी अंतर है। सरकार व स्वैच्छिक संगठनों के सतत् प्रयासों से ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए कार्य करके नीतियों और कार्यक्रमों को वास्तविकता का रूप दिया जा रहा है।

आर्थिक सशक्तिकरण

ग्रामीण महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण का अर्थ है महिला संबंधी समस्याओं की पूरी जानकारी के लिए उनकी योग्यता व कौशल में वृद्धि कर सामाजिक एवं संस्थागत अवरोधों को दूर करने का अवसर प्रदान करना, साथ ही आर्थिक गतिविधियों में भागीदारी को बढ़ावा देना, ताकि वे अपने जीवन की गुणवत्ता में व्यापक सुधार ला सकें। भारत जैसे विकासशील देश में ग्रामीण महिलाओं के व्यापक सशक्तिकरण के लिए आर्थिक रूप से महिलाओं को मजबूत बनाने के लिए स्वयंसहायता समूह एक सर्वोत्तम साधन है। सशक्तिकरण से संबंधित नीतियों का क्रियान्वयन इस प्रकार से करना होगा कि वंचित महिलाओं को आर्थिक रूप से लाभ प्राप्त हो सके तथा इसमें आने वाली दैनिक समस्याओं को दूर किया जा सके। ग्रामीण महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण पूरी दुनिया भर के देशों में प्रगति व सुधार का एक महत्वपूर्ण मुद्दा है। इस प्रकार स्वयंसहायता समूहों के माध्यम से महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण से परिवार, समाज व राष्ट्र की स्थिति में सुधार संभव है।[1]

गरीबी उन्मूलन के एक सशक्त साधन के रूप में लघु उद्यमों के विकास से ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक स्थिति को बढ़ावा मिलता है। गरीब ग्रामीण, महिलाओं में लघु उद्यमों को बढ़ावा देने में स्वैच्छिक संस्थाएं एक महत्वपूर्ण माध्यम हैं। लघु उद्यम स्थापित करने के लिए कारगर ऋण सेवा सहायक सेवाएं उपलब्ध कराने में वित्तीय संस्थाओं और महिलाओं के बीच एक महत्वपूर्ण संपर्क का कार्य करती है। चूंकि अकेले ऋण से आमदनी अर्जित नहीं की जा सकती, अतः सरकारी व

HUMANITIES AND SOCIAL SCIENCE STUDIES

CERTIFICATE OF PUBLICATION

This is to certified that the article entitled

RELEVANCE OF BENTHAM'S UTILITARIAN PHILOSOPHY IN PRESENT ERA

Authored By

Dr. Balbeer Singh
Assistant Professor, Department of Non-violence & Peace, Jain Vishva Bharati Institute, Ladnun (Raj.),

ज्ञान-विज्ञान विमुक्तये
UGC
University Grants Commission

Issue.- Vol. 12(2) 2023
Humanities and Social Science studies with ISSN : 2319-829X
UGC-CARE List Group I
Publisher: Academy for Humanities and Social sciences
Impact Factor: 6.8

Humanities and Social Science studies ISSN: 2319-829X

Editor-in-chief

ज्ञान-विज्ञान विमुक्तये
UGC
University Grants Commission

HUMANITIES AND SOCIAL SCIENCE STUDIES

CERTIFICATE OF PUBLICATION

This is to certified that the article entitled

A ANALYTICAL STUDY ON MARXISM AND SCENARIO OF CURRENT SOCIAL SYSTEM

Authored By

Dr. Balbeer Singh
Assistant Professor, Department of Non-violence & Peace, Jain Vishva Bharati Institute, Ladnun (Raj.)

Issue.- Vol. 13(1) 2024
Humanities and Social Science studies with ISSN : 2319-829X
UGC-CARE List Group I
Publisher: Academy for Humanities and Social sciences

Impact Factor: 6.8

Editor-in-chief

ज्ञान-विज्ञान विमुक्तये
UGC
University Grants Commission

SARDAR PATEL INSTITUTE OF ECONOMIC AND SOCIAL RESEARCH

anveṣak

A bi-annual journal

CERTIFICATE OF PUBLICATION

This is to certify that the paper entitled

DEMOCRACY AND GANDHIAN APPROACH

Authored by

Dr. Balbeer Singh
Assistant professor, Department of Non-violence and Peace, Jain Vishva-Bharati Institute (Deemed University), Ladnun - 341306 (Raj.)

UGC
University Grants Commission
Approved Journal

vol. 54 No. 1 (IV)

in

Anvesak A bi-annual Journal
UGC Care Group - 1

ISSN : 0378 - 4568

January-June 2024

Impact Factor: 6.20

Editor
Anvesak
A bi-annual Journal

SARDAR PATEL INSTITUTE OF ECONOMIC AND SOCIAL RESEARCH

anveṣak

A bi-annual journal

CERTIFICATE OF PUBLICATION

This is to certify that the paper entitled

DEMOCRACY AND GANDHIAN APPROACH

Authored by

Dr. Ravindra Singh Rathore
Assistant professor, Department of Non-violence and Peace, Jain Vihva-Bharati Institute (Deemed University). Ladnun - 341306 (Raj.)

University Grants Commission
Approved Journal

vol. 54 No. 1 (IV)

in

Anvesak A bi-annual Journal
UGC Care Group - 1

ISSN : 0378 - 4568

January-June 2024

Impact Factor: 6.20

Editor
Anvesak
A bi-annual Journal

Madhya Pradesh Institute of Social Science Research, Ujjain
मध्य प्रदेश सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान, उज्जैन
(An Institute of ICSSR, Ministry of Education, Govt. of India and Govt. of Madhya Pradesh)

CERTIFICATE OF PUBLICATION

This is to certified that the article entitled

भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था तथा जाति प्रथा

Authored By

डॉ. बलबीर सिंह
सहायक आचार्य, अहिंसा एवं शांति विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं–341306 (राजस्थान)

ज्ञान-विज्ञान विमुक्तये
UGC
University Grants Commission

Published in Vol. 29, No: 4, April 2024
Madhya Pradesh Journal of Social Sciences (ISSN: 0973-855X)
UGC-CARE List Group I

Impact Factor: 5.3

Editor-in-Chief

Annals of the Bhandarkar Oriental Research Institute
ISSN: 0378-1143

CONCEPT OF SATYA IN YOGA-PHILOSOPHY

Dr. Sabyasachi Sarangi
Assistant Professor, Dept. of Prakrit and Sanskrit, Jain Vishwa-Bharati Institute,
Ladnun (Rajasthan)-341306

The Yoga philosophy is a precious gift of the great Indian sage Patanjali, whose contributions turned the moral, ethical, spiritual world of the mankind. Philosophy is the practical necessity of life, for understanding the life as a whole i.e., how the life can be used and how the knowledge of human ends i.e, Dharma, Arthta, Kama and Moksa can be attained. Though Indian philosophy starts with a pessimistic vision but it builds up an optimistic and positive approach to realize one's values in life. Like all other philosophical systems Yoga philosophy also helps to develop the personality of men by inculcating all kinds of ethical and virtuous values. It is a great aid to those people who wish to realize the existence of the spirit as an independent principle, free from all limitations of the body, the senses and mind.

The Patanjali system presents an extensive illustration of the nature and forms of Yoga, the different steps in Yoga practice, and other important things connected with these. Like all other Indian philosophical systems, the Yoga-sutra of Patanjali also got the place of pride in a very high esteem. This philosophy provides the concept of eightfold means of yoga through which we can train our mind and physic to do everything, even the most ordinary works with equanimity and equability. In Ashtangayoga, Maharshi Patanjali described the eight limbs of yoga. (1) Yama (2) Niyama (3) Asana (4) Pranayama (5) pratyahara (6) Dharna (7) Dhayan (8) Samadhi. In that 'yamas' & niyamas are foundation of yoga. There are five Yamas and Niyamas. The five yamas are: (1) Ahimsa (2) Satya (3) Asteya (4) Brahmacharya (5) Aparigraha. Five Niyama are (1) Sauch (2) Santosh (3) Tapa (4) Svadhaya (5) Ishwarpranidhana. In Yama, mainly 'Concept of Satya' is discussed in this paper.

Concept of Satya in Yoga Philosophy:

Accurate knowledge of an object is truth. To use it with the body is the truth of the body, to say it with speech is the truth of speech and to bring it into thought is the truth of the mind. In Manu-smriti, Maharshi Manu says:

सत्यं ब्रूयात्प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात्सत्यं अप्रियम् ।

(मनुस्मृति.4.138:101.26)

Speak the truth, speak nice things sweetly, do not speak bitter truth, don't speck incorrect things even nicely.

Even **Acharya Shankara** also says that truthfulness means saying what we have truly come to know is the truth-mostly through our own experience or through contact with sources whose reliability we have experienced for ourselves.

Although the nature of truth has been described in religious texts like Upanishads, Puranas, Ramayana, Mahabharata, Bhagavad-gita etc., but in this context the nature of truth has been described in the light of Patanjal Yoga-sutra In Patanjal Yoga-sutra including Vyasa-bhashya, twenty commentaries have been written. All commentators of those commentaries have described the nature or

the meaning of truth. But here we discussed the views of only few commentators

In Patanjal-Yoga Sutra, Maharishi Patanjali while explaining the meaning of truth says-

सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम्।

(यो.सू.2.36:239.2)

It means when a Yogi proves the truth through his mind, words and actions, then his words also become proven. The words spoken by him have an impact on others as well.

For Example: In ancient times, students used to come to the Gurukuls of our country to study education. Then he remained in the company of his teachers all the time. When a Satya-Siddha Acharya used to observe the children for years. So whatever prediction he made about him was fulfilled. Because Acharya paid full attention to all his

activities. Only after that the Acharya would say anything regarding him. And it was also completely complete.

The result of attaining truth has been described in this sutra.

When a Yogi devotee follows the truth with all his heart, words and deeds. Then his words also become proved. The words spoken by him are always true. When He tells someone to “become religious”, that person becomes religious. If He tells someone to “go to heaven” then that person actually attains the happiness of heaven.

Now the question arises whether this is possible? Can such a great accomplishment be achieved just by proving the truth? Can people enjoy religious or heavenly happiness by his words?

The answer to all these questions is yes. For this, it is necessary to first know that the person who holds the truth is not ordinary. If any person practices truth then he looks at everyone equally. He does not discriminate against anyone in any way. After coming to this stage, the yogi has complete control over his speech. He does not do any unnecessary conversation. He always says only what he sees as true. He tells only those people to be religious and attain the happiness of heaven who can fulfill it. The Yogi senses so much in advance that he identifies people very well. You will see that the blessings and curses (श्राप) given by the sages in ancient times were never futile. He used to be successful because the sages used to give any boon or curse only after thinking carefully.

There are many commentators who explain the nature of truth, they are as follows:

धार्मिको भूया इति भवति धार्मिकः। स्वर्गं प्राप्नुहीति स्वर्गं प्राप्नोति। अमोघाऽस्य वाग्भवति।

(यो.सू.(व्यासभाष्य).2:139.6-7)

Annals of the Bhandarkar Oriental Research Institute
ISSN: 0378-1143

क्रियमाणा हि क्रिया यागादिकाः फलं स्वर्गादिकं प्रयच्छन्ति तस्य तु सत्याभ्यासवतो योगिनस्तथा सत्यं प्रकृष्यते तथा क्रियायामकृतायामपि योगी फलमाप्नोति। तद्वचनाद्यस्य कस्यचित्क्रियामकुर्वतोऽपि क्रियाफलं भवतीत्यर्थः।

(यो.सू.(भोजवृत्ति).2:139.11-13)

सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम्। क्रियासाध्यौ धर्माधर्मौ क्रिया। तत्फलं च स्वर्गनरकादि। ते एवाश्रयतीत्याश्रय। तस्य भावस्तत्त्वम्। तदस्य भगवतो वाचा भवतीति। क्रियाश्रयत्वमाह- धार्मिक इति। फलाश्रयत्वमाह- स्वर्गमिति। अमोघाः अप्रतिहताः इति।

(यो.सू.(तत्त्ववैशारदी).2:109.11-14)

सर्वप्राणीनां भवतीत्यत्रापि शेषः। क्रियां धर्मः तस्य फलं स्वर्गादिः तयोराश्रयत्वं सर्वप्राणिनां सत्यप्रतिष्ठस्य वचनाद्भवतीत्यर्थः। तदेतद्व्याचष्टे। धार्मिक इति। धार्मिको भूया इति वचनात् संबोध्यो धार्मिको भवतीत्यादिरर्थः। अमोघेति। एवं प्रकारेणास्य योगिनो वाक् सत्या भवतीत्यर्थः। अत्र वाक् मनसोप्युपलक्षणम्।

(यो.सू.(वार्त्तिक).2:170.11-15)

सत्यप्रतिष्ठायां सत्यां क्रिया धर्माधर्मरूपा, तत्फलं स्वर्गादिकं, तयोराश्रयो वाङ्मात्रेण दाता तस्य भाव तत्वं भवति। यथा धार्मिको भूया इत्युक्ते भवति धार्मिकः स्वर्गमाप्नुहीत्युक्तमात्राद्धार्मिकोऽपि तथैव भवतीत्यर्थः।

(यो.सू.(मणिप्रभा).2:221.18-23)

सत्यप्रतिष्ठायां सत्यस्थैर्ये क्रियाफलाश्रयत्वं यज्ञादिक्रियाफलानामागमनं प्राप्तिर्भवति। सत्यवादिवाक्यादिति शेषः। कथम्? अधार्मिकोऽपि धार्मिको भूया इत्युक्ते तद्वचनाद्धार्मिको भवति। यथा धर्मेऽस्य रमतां मन इति देवैरुक्तः कुण्डधाराराधी ब्राह्मणो धार्मिको बभूव। तथा स्वर्गं प्राप्नुहीत्युक्तः स्वर्गं प्राप्नोति। यथा विश्वामित्रेणोक्तः स्वर्गं प्राप्नुहीति त्रिशङ्कुः स्वर्गं प्राप। किं बहुना। अमोघाऽस्य वाक् भवति।

(यो.सू.(विवरणम्).2:71.10-14)

यो हि सत्यं साधयति तस्य वाचि क्रियाः शुभाऽशुभाः, तत्फलं धर्माऽधर्मात्मकं, स्वर्गनरकादिरूपं चेति सर्वमाश्रितं भवति, यथा वदति तथा सर्वं भवति यथा कञ्चित् पापिष्ठं वदति- 'धार्मिको भूयाः' तदा भवति स धार्मिकः, 'स्वर्गं प्राप्नुही'ति कथिते सति स्वर्गं विन्दते, धार्मिकाय चेत् कथयति- 'नरकं प्राप्नुही'ति तदा धार्मिकोऽपि नरकं गच्छति, इत्येवं सर्वत्र तस्य वाणी सत्याऽप्रतिहताऽमोघा भवतीति......।

(यो.सू.(स्वामीनारायणभाष्य).2:235.24-29)

The speech of a Yogi who has established himself firmly in truth will never utter falsehood; because he becomes the possessor of true knowledge. His words become infallible. By his voice whatever action is taken, there is support in it, If he tells someone if you become religious or happy then it becomes like this. When a truthful yogi constantly has such feelings and thoughts that no false words come out from his mouth not only in relation to the past and present but also in relation to the events that will happen in the future, due to the strength of truth, his conscience becomes so clean and pure that the only thing that emerges from his speech is going to happen in verb form.

Conclusion:

Satya is the principle of truthfulness that calls on us to align our thoughts, words, and actions with what is true and accurate and to avoid any form of deception or manipulation. It is a challenging but gratifying practice that can lead to greater integrity, authenticity, and understanding. By committing

to honesty in all aspects of life, we can foster stronger relationships based on trust and honesty and live more authentic and meaningful lives. This means avoiding lies and exaggerations and being honest about our intentions and motivations. It can be tempting to manipulate the truth to protect our interests or image. But Satya is not just about being honest with others – it's also about being honest with ourselves. This requires self-awareness, introspection, and a willingness to confront and overcome egoistic tendencies.

References:

1. Yogadarshanam of Maharshi Patanjali with Swami Narayana Bhasya and Commentary ‘Kiranavali’, by Srikrushna Vallabhacharya, Vyas Prakashana, Varanasi, 1939.
2. Patanjal-yogadarshna of Maharshi Patanjali, with the commentary of Vyasa-Bhasya and Bhoja-Vritti, Edited by Jagadish Shastri, Eastern book linkars, Delhi, 2008.
3. Patanjal-yogadarshna of Maharshi Patanjali, with Yogavartika commentary of Vigyanbhikshu, Edited by Ramkrushna Shastri and Keshaba Shastri, The Medical Hall Press, Benaras, 1884.
4. Patanjal-yogadarshna of Maharshi Patanjali, with Tattvabaisaradi commentary of Vacasati Mishra, Edited by Rajaram Shastri Bodas, Govt. Oriental Press, Bombay, 1917.
5. Patanjal-yogadarshna of Maharshi Patanjali, with Maniprabha commentary of Yati-Ramananda Saraswati, Edited by Rohinikanta Siddhanta-Vagisha Bhattacharrya, Sanskrit Press, Calcutta, 1922.
6. Patanjal-yogadarshna of Maharshi Patanjali, with Vivaranam commentary of Acharya Shankara, Edited by Sri Rama Shastri & Krishnamurty Shastri, Govt. Oriental Manuscript library, Madrass, 1952.
7. Yoga Philosophy of Patañjali with Bhasvati (5th edition.), Edited by Swami Hariharananda Aranya, Calcutta, 2000.
8. The Yoga-Darshana with English Translation, Edited by Ganganath Jha, Theosophical publishing house, Madras, 1934.
9. Yajnavalkya-smriti of Maharshi Yajnavalkya with Mitakashra Commentary, Edited by Gangasagar Ray, Choukhamba Sanskrit-Pratisthan, Delhi, 2015.
10. Manusmruti of Maharshi Manu, Edited by Ramashankar Rai, Dharma-grantha Store, Cuttack(Odisha), 2022.
11. A Critical Study of the Patañjali Yoga Sūtra in the Light of its Commentators (Hindi), by Dr. Vimla Karnatak,Varanasi, 1974.
12. Light on the Yoga Sūtra of Patañjali (8th ed.), by B.K.S. Iyengar, New Delhi, 2003.
13. The Yoga Tradition - Its History, Literature, Philosophy and Practice, by Georg Feuerstein, Delhi, 2002.

Madhya Pradesh Journal of Social Sciences
A biannually Journal of M. P. Institute of Social Science Research, Ujjain
ISSN: 0973-855X (Vol.29 No 1, January 2024)

वैदिक साहित्य में नारी विकास : एक दृष्टि

Dr. Sabyasachi Sarangi
(Assistant Professor), Dept of Prakrit and Sanskrit, JVBI, Ladnun(Rajasthan.), 341306
Pramod Ola
(Assistant Professor), Dept of Education, JVBI,Ladnun(Rajasthan), 341306

मानव विकास की अवधारणा सार्वभौमिक अवधारणा है। सभी राष्ट्र सनातन काल से मानव विकास हेतु विभिन्न प्रयास करते रहे हैं। नारी का विकास सामाजिक विकास की पूर्व शर्त है, नारी सृष्टि की रचयिता है। नारी के विकास के बिना समाज का विकास संभव नहीं है। भारतीय नारी के विकास को समझने के लिए नारी की वैदिक स्थिति को समझना आवश्यक है। वैदिक काल महिला विकास का स्वर्णिम काल माना जाता है। इस समय शिक्षा के क्षेत्र में महिलाओं का विकास चरम पर था। महिलाओं ने राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। वेदों की रचना में सहयोग देने वाली प्रमुख महिलाओं में अपाला, विश्ववारा, घोषा, गार्गी, लोपामुद्रा आदि प्रमुख थीं। राजनीतिक क्षेत्र में भी महिलायों का वर्चस्व था। वे राजा की भाँति युद्ध आदि में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती थीं। सामाजिक जीवन में भी नारी का स्थान सर्वोपरि था। नारी के बिना कोई भी धार्मिक कार्य संभव नहीं था। वैदिकसंहिताओं में पावनता की प्रतिमूर्ति नारी की अपने पति(पुरुष) के प्रति अटल-भक्ति परिलक्षित होती है। शुद्धता एवं नैतिकता की नींव बनी नारी विपत्तियों में महाक्रान्ति का रूप धारण कर महाशक्ति में अवतरित होती रही। धन की अधिष्ठात्री लक्ष्मी के रूप में, बलदायिनी दुर्गा के रूप में तथा ज्ञानदायिनी माँ सरस्वती के रूप में नारी का समाज में सदा स्वागत एवं सम्मान रहा है। आगे चल कर भी अपने इन्हीं सहज गुणों के कारण नारी सहनशीलता के लिये वसुन्धरा से अपनी समता पाती रही है। भरण पोषण की प्रतीक सर्वसहा पृथिवी ने जनकनन्दिनी सीता के रूप मे, रत्नाकर ने सागरतनया लक्ष्मी के रूप में तथा पर्वतराज हिमालय ने पार्वती के रूप में नारीसमाज के महत्त्व को सर्वोपरि माना है। प्रस्तुत शोधपत्र में महिला विकास के विभिन्न आयामों का उल्लेख किया गया है। वैदिक साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है, कि वैदिककालीन भारतीय समाज में स्त्रियाँ राजनीतिक, सामाजिक तथा प्रशासनिक कार्यों में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती थी। वेदों में नारी के गौरव का अनेक प्रकार से वर्णन है। जैसे- वेदों में नारी को ज्ञान-विज्ञान में निपुण होने के कारण ब्रह्मा बताया गया है-

स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ। (ऋग्वेद.8.33.19)

अर्थात् जिस प्रकार ब्रह्मा को ज्ञान का अधिष्ठाता एवं यज्ञों में सर्वोच्च स्थान पर अभिषिक्त कर सञ्चालनकर्ता माना गया है, उसी प्रकार नारी समाज में ज्ञान-विज्ञान का आधार है।

स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्।
आयु: प्राणं प्रजां पशु कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्।

Sabyasachi

मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्॥ (अथर्ववेद.19.71.1)

अर्थात् हे मनुष्यों ! द्विजों को पवित्र करने वाली वरदा वेदमाता मेरे द्वारा प्रस्तुत की गयी वा स्तुत की गयी है, तुम भी उसका प्रचार करो, उससे औरों को प्रेरित करो। यह आयु, प्राण, प्रजा, पशु कीर्ति, धन-बल और ब्रह्मतेज-ब्रह्मबल रूप वरों को देने वाली है। तुम यह सब-कुछ मुझे प्रदान कर ब्रह्मलोक की ओर चलो।

यह *भूमि* (पृथ्वी) हमारी *माता* है और हम सब इसके पुत्र हैं। पर्जन्य अर्थात् मेघ हमारे पिता हैं। और ये दोनों मिल कर हमारा पिपर्तु यानी पालन करते हैं।

"*माता* भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः। पर्जन्यः पिता स उ नः पिपर्तु॥" (अथर्ववेद.12.1.12)

नारी विषयक अधिकारों के सन्दर्भ में प्राचीन धर्म ग्रन्थ भी मौन नहीं है। धर्मग्रन्थों में उनकी अनिवार्यता के प्रचुर प्रमाण मिलते हैं, जिनसे नारी का महत्त्व लक्षित होता है। जैसा कि ऋग्वेद में कहा गया है-

गृहिणी गृहं उच्यते।(ऋग्वेद.3.55.46)

आशय यह है कि कैसा भी सुन्दर, सुसज्जित भवन क्यों न हो? नारी के बिना उसका कोई मूल्य नहीं होता, उसे गृह व्यवस्थापिका, सञ्चालिका एवं स्वामिनी के रूप में अधिकार प्राप्त था।

नारी की महत्ता और विशेषाधिकार वैदिक ऋचाओं, उद्गीतों, मन्त्रों में दृग्गोचर होते हैं, जो विश्व सभ्यता में प्रथम जागरण का प्रमाण है। ऋग्वेद के निम्न मन्त्र से नारियों के कार्यक्षेत्र, अधिकार और स्थिति का आकलन हो जाता है।

सोमः प्रथमो विविदे गन्धर्वो विविद उत्तरः । तृतीयो अग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजाः॥ (ऋग्वेद.10.85.40)

नारी के रूप एवं स्थिति का वर्णन करते हुए बताया गया है, कि हे नारी तुम्हारी प्रथम गति सोम, द्वितीय गन्धर्व, तृतीय अग्नि और चतुर्थ मनुष्य तुम्हारा पति है। जहाँ पुरुष को नारी की चतुर्थ गति के रूप में मान्यता मिली है, वहीं उसके गृहिणी के रूप में गृहकार्यों में तत्पर रहने और पुत्र प्राप्ति के लिए देवी देवताओं के समक्ष "प्रजायस्व प्रजया पुत्रकामः" अर्थात् पुत्र की कामना करते हुए पुत्र को प्राप्त करो इत्यादि निर्देशों से वंशवृद्धि का दायित्व भी मिला है।

नारी घर की शोभा है वह अपने मृदुल स्वभाव एवं प्रीति-निर्झरणी से घर को स्वर्ग सदृश बना देती हैं। वह पुरुष के साथ आजन्म रहने का व्रत लेकर पति के जीव-उद्यान को सरस तथा सुखमय बनाने हेतु अग्रसर एवं मुखरित होते हुए कहती है-

गृभ्णामि ते सौभगत्वाय। हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः॥ (ऋग्वेद.10.85.36)

प्रकृति ने नारी को सुखद चितवन, शाश्वत प्रेम, भावनात्मक समर्पण और मन:सम्मोहन जैसा गुण प्रदान किया गया है। वह अपने मृदुल स्वभाव से मानव-मन की पीडा को क्षण भर में हरण कर लेती है। तभी तो वैदिक वाङ्मय में उसे-

सम्राज्ञी श्वशुरे भव सम्राज्ञी श्वश्रवां भव।

ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधिदेवृषु॥ (ऋग्वेद.10.85.46)

तात्पर्य यह है, कि विवाहोपरान्त पिता के गृह को छोड़ने के पश्चात् वह सास, श्वशुर, ननन्द आदि को अपने अच्छे स्वभाव से वश में करने वाली बने।

वैदिक समाज में पुरुष की भाँति नारियों को धार्मिक कृत्य करने के अधिकार थे। तत्कालीन समाज में स्त्री को हव्य एवं घृत के साथ प्रातः सायं यज्ञ करने का उपदेश दिया गया है। धार्मिक कार्य स्त्री के बिना कदापि पूर्ण नहीं होते थे, अपितु यज्ञ में भी उनका स्थान प्रथम माना गया है-

उप यमेति युवतिः सुदक्षं दोषा वस्तोर्हविष्मती घृताची॥ (अथर्ववेद.14.1.51)

आ रोहन्तु जनयो योनिमग्रे। (अथर्ववेद.12.2.31)

दाम्पत्य प्रेम एवं गृहपत्नी (सम्राज्ञी) के रूप में भी स्त्री का श्रेष्ठत्व प्रतिपादित किया गया है। जैसा कि ऋग्वेद में कहा है-

जायेदस्तम्। हे इन्द्र ! जाया ही घर है। (ऋक् संहिता.3.53.4)

नारी को ब्राह्मण ग्रन्थों में सावित्री कहा गया है- स्त्री सावित्री। (जैमिनीय.उप.ब्रा. 4.27)

अर्धो वा एष आत्मनः, यत्पत्नी। (तैत्ति.ब्रा.3.3.3.5)

श्रिया वा एतद् रूपं यत् पत्न्यः। (तैत्ति.ब्रा.3.9.4.7)

अयज्ञो वा एषः। योऽपत्निकः। (तैत्ति.ब्रा.2.2.26)

महाभारत के आदिपर्व में पत्नी को मनुष्य का अर्धांग तथा सर्वश्रेष्ठ मित्र के रूप में भी उल्लेख किया गया है-

अर्धं भार्या मनुष्यस्य भार्या श्रेष्ठतमः सखा।

भार्या मूलम् त्रिवर्गस्य भार्या मूलं तरिष्यतः॥ (महाभारत.1.74.70)

ब्रह्मवैवर्त पुराण के अनुसार माता और पिता दोनों मिल कर सन्तानोत्पत्ति करते हैं, तथापि माता को श्रेष्ठ कहा जाता है, क्योंकि वह गर्भ में भ्रूण को धारण भी करती है और उषका पोषण भी करती है।

तयोः शतगुणं माता पूज्या मान्या च वन्दिता।

गर्भधारणपोषाभ्यां सा च ताभ्यां गरीयसी॥ (ब्रह्मवैवर्त पुराण.3.40)

विभिन्न क्षेत्रों में नारी का अस्तित्व :

Sabyasachi

भारतीय आर्य संस्कृति समूचे विश्व में अक्षुण्ण है। ज्ञान विज्ञान से सम्पन्न इस सभ्यता में नारियों को अत्यन्त सम्मान एवं आदर प्राप्त था। सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक व पारिवारिक किसी भी क्षेत्र में नारी पुरुष से किसी भी तरह कम नहीं थी। पुरुष के समान प्रत्येक क्षेत्र में दक्ष नारी समाज के निर्माण में माँ, पत्नी, पुत्री, बहन के दायित्वों का निर्वाह करती थी। कभी शासिका बन कर समाज को नयी दिशा देती थी, तो कभी ऋषिका बन कर मन्त्रद्रष्टा होती थी। कभी अस्त्र-शस्त्र संचालन में दक्ष होकर प्रजा की रक्षिका बनी, तो कभी गृहकार्य में कुशल होकर परिवार की संरक्षिका बनी। एक ही नारी विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न दायित्वों का निर्वाह करते हुए सदैव संस्कृति और सभ्यता की पोषिका और संरक्षिका रही।

नारी की सामाजिक स्थिति :-

प्राचीन भारत में नारी की सामाजिक स्थिति उच्च थी। समाज में नारी को सम्मानजनक पद और प्रतिष्ठा भी प्राप्त होते थे। पुरुष वर्ग की प्रेरणा का स्रोत भी नारी होती थी। नारी का नाम पुरुष के साथ बड़े आदर से लिया जाता था, यथा राधा-कृष्ण, राम-सीता इत्यादि। महिलाओं के संयमित जीवन तथा आचरण व तप से उन्हें दैवीय स्थान तो प्राप्त था ही,

उनके तप के प्रभाव से समाज में उन्हें इतनी प्रतिष्ठा प्राप्त रही, कि निष्कलङ्क चरित्र वाली नारी का स्मरण करने मात्र से महापातक जैसे जघन्य अपराधों से भी मनुष्य मुक्ति पा लेता है-

अहल्या, द्रौपदी, सीता, तारा, मन्दोदरी तथा।

पञ्चकन्याः स्मरेन्नित्यं महापातकनाशनम्॥(ब्रह्मपुराण.3.7.219)

समाज का आधारभूत अंग पुरुष और नारी हैं। इनमें से कोई भी कम या अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं है। वैदिक काल में जितना प्राधान्य पुरुष को प्राप्त था, उतना ही नारी को भी था। स्त्री से परिवार, परिवार से कुल, कुल से सम्प्रदाय, सम्प्रदाय से समाज और समाज से राष्ट्र का गौरववर्धन होता है। बृहदारण्यक उपनिषद् में तो यहाँ तक कथित है, कि अयोग्य पुत्र की अपेक्षा योग्य कन्या का जन्म माता-पिता के लिये श्रेयस्कर है-

अथ य इच्छेत् मे दुहिता पण्डिता जायेत्॥(बृहदारण्यक उपनिषद्.4.4.28)

नारी को माता के समान माना जाता था और माँ के समान महनीय और कोई नहीं था-

नास्ति मातृसमा काया नास्ति मातृसमा गतिः।

नास्ति मातृसमं त्राण नास्ति मातृसमा गतिः॥(महाभारत.285.29)

नारी की धार्मिक स्थिति :-

Sabyasachi

नारी को पुरुषों के समान ही उपनयन तथा ब्रह्मचर्य का अधिकार प्राप्त था। वेदाध्ययन करके वह याज्ञिक विधि-विधानों को भी सीख लेती थी। काम्य और मोक्षपरक धार्मिक आयोजनों में नारी समान अधिकारिणी होती थी। यज्ञीय अनुष्ठानों में पति के साथ पत्नी के बैठने का भी वर्णन है। धार्मिक उपासना दम्पत्ती मिल कर करते थे। नारी के सद्योद्वाहा तथा ब्रह्मवादिनी स्वरूप भी उनकी धार्मिक पराकाष्ठा को बताते हैं। नारी को यज्ञ करने का अधिकार भी प्राप्त था-

यज्ञं दधे सरस्वती।(ऋग्वेद.1.3.11)

अग्निहोत्रादि में नारी पुरुष के समान मानी गयी है-

सहोत्रं स्म पुरा नारी समां वावगच्छति।(अथर्ववेद.11.1.17)

माता सीता के भी सन्ध्यावन्दनादि धार्मिक कार्य करने का प्रमाण मिलता है-

सन्ध्याकालसमाः श्यामा ध्रुवमेष्यति जानकी।

नदी चेमां शुभजलां सन्ध्यार्थे वरवर्णिनी॥(रा.सुन्दरकाण्ड.14.49)

नारी की पारिवारिक स्थिति :-

वैदिक काल में नारी परिवार की आधारशिला थी। गृहकार्य में दक्ष होने के साथ-साथ वह अन्य सामाजिक-राजनैतिक-धार्मिक आयोजनों तथा अनुष्ठानों में भी अपने कुल की प्रतिष्ठा को बनाए रखने में समर्थ थी। याज्ञवल्क्य का वेदविद ब्राह्मणों के साथ जब शास्त्रार्थ चल रहा था तब याज्ञवल्क्य का साथ देकर गार्गी ने अपने परिवार का गौरव बढाया था। प्राचीन भारत में नारी के आदर्शरूप में अनेक ऋषिकाएँ, तपस्वी स्त्रियाँ और देवियाँ हुई हैं, जो परिवार ही नहीं राष्ट्र का भी गौरव रहीं तथा भारत को सर्वश्रेष्ठ बनाने में उनका उकृष्ट योगदान रहा। नारी के सम्मान में मनु ने भी कहा है-

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।

यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः॥

शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम्।

न शोचन्ति तु यत्रैता वर्धते तद्धि सर्वदा॥(मनु.स्मृ.3.56-57)

परिवार में नारी को पत्नी, माता, पुत्री, पुत्रवधु, सास, जेठानी आदि अनेक नामों से बुलाया जाता है। रिश्तों के अनुरूप उसकी अनेकविध पदवियाँ हैं। पत्नी के रूप में नारी को सर्वाधिक सम्मान प्राप्त था, क्योंकि पत्नी ही माँ बनकर सन्तति का

पालन-पोषण करके राष्ट्र के कर्णधारों की जननी तथा पोषिका बनती है। वह विवाह संस्कार से अन्त्येष्टिपर्यन्त परिवार के उन्नयन हेतु ही अपना जीवन व्यतीत करती है।

कुक्षौ संधारणदात्री जननाज्जननी तथा।

अङ्गानां वर्धनादम्बा वीरसूत्वेन वीरसूः।

शिशोः शुश्रूषणाच्छक्तिर्माता स्यान्माननाच्च सा॥

अतः परिवार में नारी को अत्यन्त सम्मान और प्रतिष्ठा प्राप्त थी। पतिव्रता होना पत्नी का प्रथम गुण बताया गया है और अपने पातिव्रत्य की रक्षा के लिये स्त्री को षड्विध दोषों से दूर रहने के निर्देश भी दिये हैं-

पानं दुर्जनसंसर्गः पत्या च विरहोऽटनम्।

स्वप्नोऽन्यगेहवासश्च नारी सन्दूषणानि षट्॥ (मनु.स्मृ.9.13)

अर्थात् मादक द्रव्यों का सेवन, दुर्जन की संगति, पति से विरह, व्यर्थ इधर-उधर घूमना, असमय सोना, दूसरों के घर में रहना।

नारी की राजनैतिक स्थिति :-

वैदिक कालीन नारी राजनीति में भी अपनी अमिट छाप बना चुकी थीं। सूत्रग्रन्थों में इस विषय के प्रमाण प्राप्त होते हैं कि प्राचीन काल में महिलायें भी शासिका हुई थी। कश्मीर में रत्नादेवी, सुगन्धा, सूर्यमती तथा कर्णाटका की रट्टादेवी अपने राजनैतिक कौशल का अनुपम उदाहरण हैं-

एषा ते कुलपा राजन्...। (अथर्ववेद.1.14.3)

पुरन्धिर्योषा...। (यजुर्वेद.22.22)

मात्र शासिका ही नहीं, राज्य पर संकट आने की स्थिति में वीर योद्धा व सेनापति के रूप में भी नारी ने अपना शौर्य और पराक्रम प्रदर्शित किया है। ऋग्वेद की मुद्गलानी और विश्पला अपने पराक्रम के लिये प्रसिद्ध हैं। रामायण में कैकेयी ने भी युद्धभूमि में राजा दशरथ का साथ दिया था। अतः कहा जा सकता है कि नारी हर क्षेत्र में सबल और निष्ठावती थी।

नारी की आर्थिक स्थिति :-

स्मृतिकाल आते आते नारी आजीविका के लिये हस्तकला, शिल्पकला, घर के कार्य तथा रचनात्मक कार्य करके धनार्जन भी करने लगी थी। जैसा की पराशरस्मृति में कहा गया है-

Sooyosachi

रजकी चर्मकारी च लुब्धकी वेणुजीविनी॥ (पराशर.स्मृ.6.4)

कुलीन स्त्रियाँ दाय अधिकार से अपने हिस्से का धन प्राप्त कर लेती थीं। पिता की सम्पत्ति में पुत्री का भी अधिकार था। पुत्र के समान अंश पुत्री को भी दिया जाता था। जैसा कि मनु ने कहा है-

यथैवात्मा तथा पुत्र पुत्रेण दुहिता समा।

तस्यां आत्मनि तिष्ठन्त्यां कथमन्यो धनं हरेत्॥ (मनु.स्मृ.9.130)

मातुस्तु यौतकं यत्स्यात्कुमारीभाग एव स।

दौहित्र एव च हरेदपुत्रस्याखिलं धनम्॥ (मनु.स्मृ.9.131)

दाय के अतिरिक्त स्त्रीधन का भी प्रचलन होने लगा था, जिससे समाज में नारी की आर्थिक स्थिति सुदृढ होने लगी थी। किसी पति के एक से अधिक पुत्र हों या अनेक स्त्रियों के किसी के दो, किसी के पाँच पुत्र हों तो सम्पत्ति का विभाजन माताओं की संख्या के आधार पर होता था, ताकि किसी के साथ अन्याय न हो।

एकां स्त्री कारयेत् कर्म, यथांशेन गृहे गृहे।

बह्व्यः समांशतो देया, दासानामप्ययं विधिः॥(बृहस्पति.स्मृ.1.262)

वैसे तो स्त्रीधन पर पूर्णतया नारी का ही अधिकार होता था, किन्तु अकाल पडने पर, धार्मिक अनुष्ठान में, व्याधि आ जाने पर अथवा बन्दी बना लिये जाने पर पति स्त्रीधन का उपयोग कर सकता है। आपातकाल में खर्च किये गए स्त्रीधन को लौटाने की बाध्यता भी पति को नहीं थी।

दुर्भिक्षे धर्मकार्ये च व्याधौ संप्रतिरोधके।

गृहीतं स्त्रीधनं भर्त्रा न स्त्रियै दातुमर्हति॥(याज्ञवल्क्य.स्मृ.1.147)

निष्कर्ष :-

वैदिक कालीन समाज में महिलाओं का विकास चरम पर था। महिलाएँ शैक्षिक, राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक दृष्टि से सशक्त थीं। वे हर क्षेत्र में अपने ज्ञान, अनुभव एवं पराक्रम का लोहा मनवाती थी। वे निजी व सार्वजनिक जीवन में स्वतन्त्रतापूर्वक निर्णय ले सकती थीं। अतः वैदिक कालीन भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति पर यह शोध वर्तमान महिला विकास को एक नई दिशा देगा। प्राचीन भारत में महिलाओं की उन्नत स्थिति एवं

Sabyasachi

पश्चात्वर्त्तीकाल में महिलाओं की स्थिति के ह्रास को समझने में मदद करेगा। हमें हमारे प्राचीन साहित्य एवं संस्कृति में मौजूद मूल्यों को अपना कर महिलाविकास के नये आयाम तय करने होंगे। महिलाओं से सम्बन्धित समस्याओं का समाधान हमें अतीत में तलाशना होगा, तभी महिला विकास को नयी दिशा मिलेगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. Manusmriti of Maharshi Manu, Edited by Pandit Hargovind Shastri, Chowkhamba Sanskrit Sansthan, Varanasi, 1937.
2. Yagyavalkyasmriti of Maharshi Yagyavalkya, Edited by Umesh Chandra Pandey, Chowkhamba Sanskrit Sansthan, Varanasi, 1950.
3. Parasharasmriti of Parasharamuni, Edited by Madhavendra Pandey, Bharatiya Vidya Sansthan, Varanasi, 2011.
4. Naradasmriti of Naradamuni, Edited by Dr. Braja Kishore Swain, Chowkhamba Sanskrit Sansthan, Varanasi, 2015.
5. Rigveda, Edited by Hrida Narayan Dikshit, Vani Praashan, New Delhi, 2020.
6. Atharvaveda,Edited by Pandit Manoharlala Sharma, Laxmi Prakashan,New Delhi, 2022.
7. Yajurveda, Edited by Pandit Manoharlal Sharma, Laxmi Prakashan, New Delhi, 2022.
8. Vaidik Samhitaon Mein Nari by Dr. Malati Sharma, Sampurnanada Sanskrit University,Varanasi, 1990.
9. Brihaspatismriti of Maharshi Brihaspati, Edited by K.V. Rangaswami Aiyangar, Baroda Oriental Institute, Baroda, 1941.
10. History of vaidik literature by Dr. Parasnatha Dwivedi, Chowkhamba Surabharati Prakashan, Varanasi, 2017.

Cowyesadri

EXPLORING RASA IN LATTER WRITERS

Dr. Sabyasachi Sarangi[1], Dr. Satya Narain Bharadwaj[2]
[1]Assistant Professor, Dept. of Prakrit and Sanskrit, Jain Vishva-Bharati Institute, Ladnun (Raj.), 341306
[2]Assistant Professor, Dept. of Prakrit and Sanskrit, Jain Vishva-Bharati Institute, Ladnun (Raj.), 341306

The doctrine of rasa, which is advocated, if not first enunciated, by अभिनवगुप्त, is finally adopted by almost all writers on general poetics who accept rasa-dhvani as an important element of poetry. With the exception of विश्वनाथ and केशवमिश्र, they do not indeed go so far as to declare expressly with अभिनवगुप्त that rasa alone is the essence of poetry, but they accept in reality the suggested sense in the form of rasa as essentially the main element. The Rasa is viewed as pleasant sentiment belonging to the reader whose dormant emotions, derived from experience or inherited instincts, are evoked by the reading of poems into an ideal and impersonalized form of joy; an appreciation or enjoyment, consisting of a pleasant mental condition in which the reader identifies himself with the feelings of the hero and experiences them in a generic form, the fullness of enjoyment depending upon the nature and experience of the particular reader. The sentiment thus evoked is essentially universal in character, and the aesthetic pleasure resulting from it is not individual (even though enjoyed as an intimately personal feeling). But generic and disinterested, being such as would be common to all trained readers (सामाजिकसंवेद्य). It is, therefore described as something supernormal (अलौकिक) and invariably pleasant, not to be compared to the normal pleasure of life which has always a reference to one's personal relations or interests, and which may be pleasant or painful. Things, which would be called causes of an emotion in the normal sense and which may produce disgust, horror or pity in real life, awaken these feelings indeed in poetry and drama, but convey them in such an ideal and generic from that these emotions, which are far from pleasant in ordinary life, are converted into an impersonal joy, which is ineffable and indivisible. One may be removed by disgust, horror or pity and shed real tears; but the underlying sentiment in always one of exquisite joy which must be distinguished from ordinary feelings.

This is the general position of all later theorists which regard to the nature and function of rasa in poetry. धनञ्जय, for instance, give us the same process of transformation of an ordinary emotion, dominant composition, into a poetic sentiment, as formally laid down by भरत and interpreted by अभिनवगुप्त and in this he is practically in agreement with मम्मट, विद्याधर, विश्वनाथ and others. The dominant emotion (स्थायीभाव), he says, becomes a sentiment (rasa) when it is brought into a relishable condition through the co-operation of the excitants, the ensuants and the accessories (including the सात्त्विकभावs). This sentiment is further amplified by the assertion that the enjoyer of rasa (रसिक) is the audience (सामाजिक) on whose capacity of enjoyment it depends, and that the dominant feeling becomes a sentiments when it is so enjoyed. the rasa, being a mental state, a subjective experience of the reader, in which enjoyment (आस्वाद्य, चर्वणा, रसना or भोग) is essential and in which the enjoyer and the object of enjoyment become identical, the reader receives the presented feeling into his own soul and thereby enjoys it . The locus of the rasa is not in the represented hero who belongs to the past; nor is it in the poem itself, the task of which is merely to exhibit the excitants etc. by which the dominant emotion is brought into expression and the rasa, on its part, becomes revealed to the reader, Nor does the rasa consist of the reader's mere

apprehension(प्रतीति) of the emotions exhibited in the poem or enacted by the actor; for the reader would then apprehend not the rasa but a feeling varying in different individuals, just as in real life the spectacle of a pair of lovers in union giving different spectators who witness it the varying emotions, according to their individual nature, of shame, envy, desire or aversion . The विभावs etc., therefore, being the स्थायीभाव to the enjoyment of रसिक, the aesthetically receptive reader or spectator, and thereby convert it into rasa; but they must be generalized and have no specific relation to a particular individual (परित्यक्त-विशेष). Thus, the विभाव is सीता, धनिक explains, must refer to woman in general, and not to the particular individual who was the daughter of जनक. Hence things, which are the exciting, ensuing or accessory circumstances in ordinary life, act as विभावs etc. in poetry, and generalize the dominant feeling into rasa. The spectator, say, of the deeds of अर्जुन on the stage may be compared, therefore, to the child who, in playing with clay elephants, experiences the sensations of its own energy as pleasant. The enjoyment in the spectator's mind is manifestation of that joy which is innate as the blissful nature of self, a circumstance which gives us the frequent comparison of रसास्वाद with ब्रह्मास्वाद.

The mental activity involved in this enjoyment has got four aspects taken in connection with the four primary sentiments of the erotic(श्रृङ्गार), the heroic(वीर), the horrible (वीभत्स), and the furious(रौद्र) admitted by Bharata , and consists respectively of the conditions of unfolding(विकास), expansion(विस्तार), agitation (क्षोभ), and distraction (विक्षेप). We have seen that भट्टनायक (along with अभिनवगुप्त) speaks of the bhoga (or आस्वाद्य) of rasa as involving only three mental conditions, named, विकास (pervasion), विस्तार (expansion), and धृति (melting), which later theorists have taken as the basis and justification of the three गुणs of प्रसाद, ओजस and माधुर्य respectively. With regard to ninth rasa, the quietist, which is not mentioned by भरत but which is acknowledge by some theorists, धनञ्जय forbids its delineation in the drama (iv.35); for the sentiment of absolute peace is in its own nature indefinable, and consists of four states mentioned by philosophers , viz. मैत्री, करुणा, मुदिता, and उपेक्षा, which are not realizable by the सहृदय. It is exit at all as rasa, it must comprehend the fourfold mental activity enunciated above, as corresponding to the fourfold states recognized by philosophers in शम .

विश्वनाथ is the only important writer, among later theorists, who boldly accepts अभिनवगुप्त: extreme view that the rasa-dhvani alone is the essence of poetry and builds up a system of Poetics on its basis .

Following up his own definition of poetry as "a sentence of which the soul is the rasa", विश्वनाथ: gives us an elaborate analysis of rasa in almost all its aspects. His sums up at the outset the characteristics of rasa in two verses thus. "The rasa, arising from an exaltation of the quality of सत्त्व, indivisible, self-manifested, made up of jay and thought in their identity, free from the contact of aught else perceived, akin to the realization of Brahma, and having for its essence supernormal wonder (चमत्कार), is enjoyed by those competent in its inseparableness (as an object of knowledge) from the knowledge of itself". He explains चमत्कार as consisting of an expansion of the mind and as synonymous with विस्मय. In the connection, विश्वनाथ: quotes with approval an opinion of his ancestor नारायण who put a premium on the sentiment of the marvelous (अद्भुतरस) and maintained that it was essential in all rasas. It is also explained clearly that the rasa is identical with the enjoyment of itself, or, in other words, there is no distinction between the object and the operation in the apprehension of rasa; so that when we say 'the rasa is enjoyed', we only use a figurative expression. It follows from this that the enjoyment of rasa is different in its nature from the ordinary processes of knowledge. विश्वनाथ: insists very strongly on the necessity of

वासना in the spectator, which consists of experience or instincts acquired from previous births (प्राक्तन). It one is not endowed with these germs of the capacity of appreciation, one may be develop them by study of poverty and experience of life. In the case of the grammarian, the philosopher or one well-versed in the sacred lore, these susceptibilities are deadened. If it is sometimes found that an eager student of poetry is still deficient in the capacity of relishing of rasa, we must assume that it is the result of his accumulated demerit of a previous birth. Thus, विश्वनाथ is anxious to show that experience and cultivation of the power of imagination are essential in one who seeks to enjoy rasa.

विश्वनाथ also insists that the विभाव etc. as well as the dominant feeling (स्थायीभाव) must be felt as generic or impersonalized. The reader must not take the feeling a his own individual emotion; for it would then remain as his feeling (and never become rasa) and would sometimes (e.g. in the case of the pathetic sentiments) cause pain, and not joy. Nor should the feeling be taken as pertaining solely to the hero; for then if cannot, as the feeling of another person, affect the reader become rasa. It is necessary, therefore, that the excitants etc. as well as the dominant feeling, should be generalized by a generic function (साधारणीकृति) inherent in themselves, which corresponds to the generic power (भावकत्व) postulated for poetry by भट्टनायक. This universalisation of the factors and the feelings enables the reader to identify himself with the personages depicted; and this conceit of community removes all difficulty about accepting extraordinary episodes of exalted personages who may be superior in virtue or prowess to the average reader. The excitants etc. are indeed normally called causes, but in reality the rasa is not an effect in the ordinary sense; for in the case of rasa there is the simultaneous presence of itself and its excitants, which is not true of an ordinary cause and effect. It is also pointed out that all the factors (विभाव etc.) need not be present at once, for the presence of one would revive the others by association of ideas. In the other words, what might seem wanting in the utterance of poetry is supplied, from the suggestive character of poetry itself, by force of association of ideas. It also follows from the character of rasa described above that it is not necessarily found in the actor, who is assuming the role of the hero performs his part only mechanically by rule and rote; he ranks as a spectator (and therefore as a recipient of rasa) in so far as he is himself a man of taste and actually experiences the feelings he enacts .

In spite of the unquestioned dominance of the Dhavni School, which no doubt recognized the importance of rasa but regarded it as one of the phases of the unexpressed only, one class of writes, who still adhered to rasa as the only element worth considering in poetry, continued to devote exclusive attention to it and built up a system, so to say, on the basic of the rasa alone. Of all the rasa, however, as श्रृङ्गार: (or love) forms the absorbing theme of Sanskrit poetry and drama in general, and as this particular poetic sentiment has an almost universal appeal, these writers naturally work out this important rasa in all its phases; and we have in consequences a series of erotico-rhetorical treatises of which the earliest known and the earliest known and the most remarkable is रुद्रभट्ट's श्रृङ्गारतिलक . रुद्रभट्ट states distinctly at the beginning of his work that although भरत and others have spoken of rasa in the drama, his object is to apply it to the case of poetry, and that a काव्य, in his opinion, must possess rasa as its constant theme. Following upon this we have भोज's श्रृङ्गारप्रकाश which deals with the subject in the usual elaborate encyclopedic manner of its author, with profuse illustrations of every phase of the erotic sentiment in no less than eighteen out of thirty-six chapters. After this come innumerable works of a similar nature , which take rasa, especially श्रृङ्गार, as their principal theme and which were composed apparently with the object of guiding the poet in the composition of erotic pieces so popular and profuse in Sanskrit poetry. Of these, the भावप्रकाश of शारदातनय, which reproduces the substance of most of the chapters of भोज's work,

and the exhaustive रसार्णवसुधाकर of सिङ्गभूपाल , as well as the two well known works of भानुदत्त , deserve mention. But none of these later treatises adds anything new or original to a subject already thrashed out it's almost.

A new turn was given to the theory by रूपगोस्वामिन्'s उज्ज्वलनीलमणि, which attempted to deal with rasa in terms of the वैष्णव idea of ujjvala or madhura rasa, by which was meant the श्रृङ्गाररस, the term ujjvala having been apparently suggested by Bharata's description of that rasa . The madhuara rasa, however, is represented not in its primarily a phase of bhakti-rasa (मधुराख्यो भक्तिरसः); for according to वैष्णव theology there are five rasas forming roughly the five degrees of the realization of bhakti or faith. Viz. शान्त (tranquility), दया (servitude or humility, also called प्रीति), sakhya (friendship or equality, also called preyas), वात्सल्य (parental affection) and माधुर्य (sweetness). The last, also called the ujjvala rasa, being the principal, is termed भक्तिरसराज् and constitutes the subject matter of the present treatise. The कृष्णरति or the love of कृष्ण forms the dominant feeling of स्थायीभाव of this sentiment, and the recipient here is not the literary सहृदय but the bhakta or the faithful . This स्थायीभाव, known as मधुराराति, which is the source of the particular rasa, is defined in terms of the love of कृष्ण ; and the nature of नायक and नायिका is defined in the same manner and their feelings and emotions illustrated by adducing examples from poems dealing with the love-stories of कृष्ण and राधा. The work is, therefore, essentially a वैष्णव's religious treatise presented in a literary garb, taking कृष्ण as the ideal hero, with the caution, however, that what is true of कृष्ण as the hero does not apply to the ordinary secular hero (i. 18-21) .

With the exception of the उज्ज्वलनीलमणि, which attempts to bring erotica-religious ideas to bear upon the general theme of rasa, these specialized treatises have, however, very little importance from the speculative point of view; and as they belong property to the province of Erotics rather than poetics, treatment of them should be sought elsewhere. The simple idea, elaborated less in all these works is that awakening of rasa is all important in poetry, and that the fundamental rasa is श्रृङ्गार or the erotic, which is consequently treated in its various phases with copious illustrations. This is clearly expressed in the attitude of the author of अग्निपुराण and of Bhoja, who accept only one poetic rasa, viz. the erotic . In the same way, रुद्रभट्ट declares श्रृङ्गारनायको रसः (i.20), and भानुदत्त appears to take it for granted that श्रृङ्गार occupies an honored place among all the rasa (तत्र रसेषु श्रृङ्गारस्याभ्यर्थितत्वेन etc, ed. Benaras, p. 21).

It is unnecessary, as it is unprofitable, in the discussion of general principles, to enter here into the elaborate definitions, distinctions and classifications of the amorous sentiments with all its varying emotional moods and situations, which these treatise industriously discuss and which have always possessed such attraction to mediaeval scholastic minds. The theorists delight in arranging into division and sub-divisions, according to rank, character, circumstances and the like, all conceivable types of the hero, the heroine and their adjuncts, together with the different shades of their gestures and feelings, in conformity with the tradition which already obtained in the cognate sphere of dramaturgy . Thus रुद्रभट्ट, after a preliminary enumeration and definition of the rasas and the भाव, proceeds to speak of two aspects of श्रृङ्गार, viz. सम्भोग (love of union) and विप्रलम्भ (love of separation) , and classify the hero (नायक) into the faithful (अनुकूल), the gallant whose attention is equally divided among many (दक्षिण), the sly (शठ), and the saucy (धृष्ठ), according to his character as a lover. Later writer, however, subdivide each of these, again, into the best (उत्तम), the middling(मध्यम) and the lowest (अधम), and arrange the whole classification under the fourfold division of the genus hero into four types viz., (i) the brave and the high-spirited (धीरोदात्त) (ii) the brave and haughty (धीरोद्धत) (iii) the brave and sportive (धीरललित) and (iv)the brave serene(धीरप्रशान्त), thus

giving us altogether forty-eight subdivisions of hero . The follows a brief description of the assistants of the hero in matters of love (narma-saciva), viz. the Comrade (पिठमर्द), the Companion (विट) and the Buffon (विदूषक), some adding चेट (or the servant) in the enumeration.

In the same way, the heroine is taken broadly in threefold aspects in her relation to the hero as his wife (स्वीया), or belonging to another, (परकीया) and as common to all (सामान्या) The स्वीया is subdivided again into the adolescent and artless (मुग्धा), the youthful (मध्या), and the mature and audacious (प्रगल्भा), i.e. the inexperienced, the partly experienced and the fully experienced. Later authors introduce greater fineness by subdividing each of these according to her temper, into the partially self-possessed (धीरा), the not self-possessed (अधीरा), and the partially self-possessed (धीराधीरा), higher (ज्येष्ठा) or lower (कनिष्ठा), each holds in the affection of the hero. The परकीया or अन्यदीया who, according to वैष्णव ideas, is the highest type of the heroine, is twofold, according as she is a maiden (कन्या) or married (ऊढा) ; while the सामान्या heroine, who is sometimes extolled (रुद्रभट्ट), and sometimes deprecated (रुद्रभट्ट), is only of one kind, the वेश्या or courtesan . The sixteen types of heroine thus obtained are further arranged according to eightfold diversity in their condition or situation in relation to her lover, viz. heroine who has the lover under absolute control (स्वाधीनपतिका), the heroine disappointed in her assignation through misadventure or involuntary absence (उत्का), the heroine in full dress expectant of her lover(वासकसज्जिका), the heroine deceived (विप्रलब्धा), the heroine separated by a quarrel (कलहान्तरिता as called अभिसन्धिता), the heroine outraged by the discovery of marks of unfaithfulness in the lover (खण्डिता), the heroine who meets her lover by assignation (अभिसारिका) and the heroine pining for the absence of her lover gone abroad(प्रोषितपतिका). We arrive in this way at an elaborate classification of the heroine into three hundred and eighty-four types; and one of the later writers states characteristically that there are other types also, but they cannot be specified for fear of prolixity (SD. iii.88, p. 120).

But here the theorists do not stop. The hero is endowed further by a set of eight special excellences, as springing from his character(सात्त्विक): e.g. brilliance (शोभा) including heroism, cleverness, truthfulness, emulation with superiors and compassion to inferiors; vivacity (विलास) indicated by his glance, step and laughing voice; grace (माधुर्य) displayed in placid demeanour even in trying circumstances; equanimity (गाम्भीर्य) consisting of superiority to emotions; steadfastness (स्थैर्य) in obtaining one's object; sense of honour (tejas) manifested in his impatience of insult; gallantry (lalita) in his word, dress or deportment; magnanimity (औदार्य) exhibited in generosity, agreeable words and equal treatment to friend and foe. The heroine is allowed a more generous set of qualities. First we have the three physical (अङ्गज) characteristics; भाव or first indication of emotion in a nature previously exempt, हाव or movement of eyes and brows indicating the awakening of emotion, हेला of the decided manifestation of feeling. Then we have seven inherent qualities. e.g. brilliance of youth, beauty and passion, the touch of loveliness given by love, sweetness, courage, meekness, radiance and self-control. Then are enumerated her ten graces, to which विश्वनाथ adds eight more. All her gestures, moods or different of delight, involuntary expression of affection, self-suppression through bashfulness, affected repulse of endearments, as well as the deepest and tenderest display of sentiments, are minutely analysed and classified. To this is added a detailed description of the modes in which the different types of heroines display their affection, the maidenly modest demeanour of the मुग्धा or the shameless boldness of the more experienced heroine. We should recognize the subtle power of analysis and insight which these attempts indicate; but speaking generally, the analysis is more of the form than of spirit, based on what we should

consider accidents rather than essentials. At the same time, marked as it is by much of scholastic formalism, there is an unmistakable attempt to do justice to facts, not only as they appeared to the experience of these theorists but to the observation of general poetic usage; and in the elaborate working out of the general thesis that the rasa is evolved on the basis of one or other of what they call the permanent mental moods, with the help of the various emotional adjuncts, the writers on poetics emotions, the psychology of which bears an intimate relation to their theory and in itself deserves a separate study.

The discussion of this extensive topic of the नायक and नायिका comes in topically under the theory of विभाव and अनुभाव, which act as factors of rasa. The mood, which is at the root of sentiment, is held to be the स्थायीभाव, the dominant feeling, the main theme of the composition in question. These feelings, according to Bharata, who is accepted on this point by all writers, can be classified into eight categories, viz. Love (rati), Mirth (हास), Sorrow (शोक), Anger (krodha), Energy (उत्साह), Fear (bhaya), Disgust (जुगुप्सा) and Astonishment (vismaya), though some later writes add, as we shall see. Tranquility (शम or nirveda) to the number. These dominant feelings are worked up into a corresponding number of sentiments of rasas through the means of the विभावs etc . The विभावs or Excitants are said to be of two kinds , viz., (1) the Substantial or Essential (आलम्बन), which consists of such material and dispensable ingredients as the hero, the heroine, the rival hero and their adjuncts, and (2) the Enhancing(उद्दीपन) viz. such condition of time, place and circumstance as serve to foster the rasa, e.g. the rising of the moon, comprise such outward manifestations of feeling as sidelong glances, a smile, a movement of the body, or such involuntary action of sympathetic realization of the persons depicted (सात्त्विक) as fainting (pralaya), change of color (वैवर्ण्य) trembling (vepathu) etc., which are, again dogmatically classified into eight varieties. There are other feelings of a more or less transitory nature, which accompany or interrupt the permanent mood without, however, supplanting it; and these are known, as we have noted, by the name of Accessories or व्यभिचारीभावs. These are linkened to servants following a king or to waves of the sea, whereby the dominant mood is understood as the king and the sea respectively, and classified elaborately into thirty-three categories, first mentioned by Bharata (pp.337f above) and implicitly accepted by his followers.

All these elements contribute towards developing the eight or nine स्थायीभावs into eight or nine different types of rasa. We have the earliest and most orthodox mention in Bharata.(p. 337 above) of eight स्थायीभावs and the resulting eight rasa corresponding to them, of which the Erotic (श्रृङ्गार), the Heroice (वीर), the Furious (raudra), and the Disgustful (बीभत्स) are the main, leading to four others, the Comic (हास्य), the Marvellous (adbhuta), the Pathetic (करुण) and the Terrible(भयानक). दण्डिन् accepts this classification (ii.280-87), but उद्भट (iv.4) adds the Quietist (शान्त) as the ninth rasa, although Bharata neither defines it nor mentions its corresponding विभावs. रुद्रट is singular in postulating a tenth rasa, called the Agreeable(preyas), which is accepted by Bhoja, with the tradition of two new rasa उदात्त and uddhata, as well as शान्त. रुद्रभट्ट admits nine rasas in Poetry; so do Hemachandra and the two वाग्भट्ट. The अग्निपुराण in the same way mentions nine rasas (and eight स्थायीभावs), but follows Bharata in regarding four as principal and says special stress on the श्रृङ्गार. आनन्दवर्धन admits शान्त (pp. 138, 238). Those later authors who accept the ninth rasa, The quietistic, necessarily postulate nirveda or self-disparagement, arising out of the knowledge of reality (तत्त्वज्ञान), as its स्थायीभाव, which is called by some authorities शम, or repose resulting from freedom from mental excitement . The वैष्णव writers (especially कविकर्णपुर add दास्य, sakhya, वात्सल्य,

preman and bhakti .

The author of the दशरूपक, however, contends that there can be no such स्थायीभाव as nirveda or शम, for the development of that state(if it is at all possible to destroy utterly love, hatred and other human feelings) would tend to the absence of all moods; and in the drama, the object of which is to delineate and inspire passion, it is inadmissible. Others, again hold that the Quietistic rasa does exit, as it is experienced by those who have attained that blissful state, but it has no स्थायीभाव in dramatic composition; for nirveda, being the composition; for nirveda, being the cessation of all wordly activity, or शम being freedom from all mental excitement, it is not fit to be represented. Hence मम्मट takes eight rasas in the drama(p.98) and nine in poetry (p.117). Bhoja, in accordance with the views of the school which lays special emphasis on the श्रृङ्गार, accepts only one rasa, the Erotic, in his श्रृङ्गारप्रकाश; and although he mentions as many as ten rasas in his सरस्वतीकण्ठाभरण, including the शान्त and the preyas, he appears to devote almost exclusive attention to the श्रृङ्गार in his treatment of the rasas in his work. The views about the admissibility of the शान्त are discussed by the author of the एकावली (pp.96.7) who maintains that Bharata has mentioned nirveda as व्यभिचारीभाव immediately in context after the enumeration of the स्थायीभावs and at the beginning of the list of the व्यभिचारीभावs; and this fact is interpreted as indicating that the sage meant it both as a स्थायीभाव and as a व्यभिचारीभाव; but Hemacahandra (p.81) anticipates and rejects this quibble of verbal interpretation, though agreeing in the general proposition as to the admissibility of शान्त as the ninth rasa.

विश्वनाथ primarily admits eight orthodox rasas (iii.p.160) but adds the ninth शान्त in deference to the views of these authorities, add a tenth rasa, called वात्सल्य or parental affection, subscribing apparently to वैष्णव ideas (pp. 185-86) . He quotes a verse to explain that the mood, called by the great sages the Quietistic, which has, among all sentiments, tranquility (शम) as its basis, is that state in which there is neither pain nor pleasure, nor hatred, nor affection, nor any desire . But the question arises how can Quietistic, being of the nature described, arising only in a state of emancipation wherein there is an absence of all feelings like the Accessories etc., be rasa, which implies a state of relishable enjoyment . To this objection विश्वनाथ replies that the Quietistic is a rasa because in that state the soul is only about to be emancipated (युक्त-वियुक्त-दशा) and is not completely absorbed in the Divine, so that the presence of feelings, like the Accessories etc. it is not incompatible. As for the statement that there is an absence of even pleasure in it, it is not contradictory, for it refers only to wordly pleasure . जगन्नाथ, the latest writer on the subject, advocates nine rasas and maintains (pp.29-30) that like all other rasa, the शान्त is Capable of being represented and appreciated by the audience. Since the clever performance of the actor, representing such a state of mind, free from disturbance and not affected by the passions or desire, is found in actual experience, to produce an impression on the mind of the audience it is their state of mind, exhibited by their silent and rapt attention, which ought to settle the question. The representation of absolute indifference or the actor's power of representing it is not the point in issue: it is the capacity of the spectator who actually feels the sentiment. जगन्नाथ also adds that even those, who do not admits this rasa in the drama, should accept it in poetry from the fact that poems like the महाभारत have for principal theme the delineation of शान्त rasa, which is thus established by universal experience (अखिललोकानुभवसिद्धत्वात्). नागेश remarks on this that the शान्त rasa should also be admitted in the drama on this ground, in as much as the Prabodha-candrodaya is universally acknowledged as a drama(p.30).

Coming to the essential bliss of rasa, viz. the भाव, we have seen that Bharata defines it in general

terms as that which manifests the sense of poetry through the three kinds of representation. वाचिक, आङ्गिक and सात्त्विक ; it is the emotion which ultimately becomes a sentiment, if it is dominant and therefore, serves as the basis of rasa. But later writers arrive at a greater precision and apply the term technically to those cases where there is no proper or complete development of rasa. Both धनञ्जय and भानुदत्त expand the definition of Bharata, the later defining it as a deviation from the natural mental state (विकार) which is favourable to the development of rasa (रसानुकूल) and which may be either physical (शारीर) or mental (आन्तर). But मम्मट fixes the conception of भाव as रतिर्देवादिविषयाव्यभिचारी तथाञ्जितः ('love having for its object a deity or the like, and also the suggested Accessory'), on which he adds the gloss : आदिशब्दात् मुनि-गुरु-नृप-पुत्रादि विषया, कान्ताविषयया तु व्यक्ता शृङ्गारः ('by the term the like are meant sages, preceptor, the king, the son etc., the one having a beloved woman for its object becomes the erotic') Govinda explains that the word rati here implies the स्थायीभाव which has not attained to the state of rasa . What is meant is that when the स्थायीभावs, like rati, have for their objects god, king, son and the like, or when the व्यभिचारीभावs are manifested as the principal sentiment in a composition, there is no rasa but भाव; and this definition is accepted by all writers after him.

Thus, विश्वनाथ explains the भाव as follows:

सञ्चारिणः प्राधानानि, देवादि-विषया रतिः।
उद्बुद्धमात्रः स्थायी च भावेत्याप्यभिधीयते॥

In other words, when the Accessories are principal, or when love etc. has a deity or the like for its object, or when a dominant feeling (स्थायीभाव) is merely awakened, we have भाव. His own gloss upon the above verse explains it in this way. Although they are always concomitants of rasa in which they finally rest, such Accessories as are for the time being followed by his king in his marriage procession; or love etc. having a deity, a sage, a spiritual guide, a king and the like for its object; or such स्थायीभाव as are merely awakened or have not attained the state of a rasa from their not being fully developed, are denoted by the term भाव. In all these cases apparently there is no complete or proper development of Rasa; and a भाव, therefore, in later terminology, may be generally described as an incomplete rasa. But this must be distinguished from the रसाभास or semblance of rasa and the analogous भावाभास, which occur when the poetic sentiments and emotions are falsely attributed(e.g. sentiments in animals such as described in कुमारसम्भव, iii. 36-37), or when they are brought out improperly, i.e. when there is a lack of entireness in them as regards their ingredients . The cases occur, according to Bhoja (v.20) when the mood or emotion is developed in an inferior character (हीनपात्र), in animals(तिर्यक्), in the rival hero (नायकप्रतियोगिन्) or in any other subordinate object (गौणपदार्थ) , but विश्वनाथ elaborately summaries various other cases (iii. 263-66), especially noting improprieties in connation with particular rasa. Thus, there is an impropriety if the Terrible (भयानक) is made to reside in a noble personage, or the Comic (हास्य) in a spiritual guide. It must be noted, as जगन्नाथ explains, that if a mood or feeling is developed by impropriety, the impropriety, unless it acts as a bar, does not constitute a fault .

In the same way (1) when there is an excitement only (and not full development) of sentiments, (2) when two opposing sentiments, striving for mastery, are represented as being relished in one and the same place and at the same time, or(3) when a number of sentiments, of which each succeeding one puts down the preceding, they constitute respectively भावोदय, भावसमाधि and भावशबलता. Now, all these phases of sentiment are taken as rasa topically, inasmuch as they are capable of being tasted (सर्वेऽपि रसनाद्रसः). These cases do not seem to have been formally recognized by Bharata, though hinted at by him in vi. 40, as

we learn from Abhinava's commentary on ch.vi, which is partially reproduced also in his Locana, p. 66. They are first met with in उद्भट, who includes them under ऊर्जस्विन् (vi. 6); but in रुद्रट (xii.4) and the ध्वनिकार ii.3) we find them definitely established.

This incomplete development of rasa and its subordination must be distinguished from the cases of the opposition (virodha) of simultaneously existing sentiments in the same theme. It is laid down formally that some rasas are intrinsically inconsistent with one another, e.g. the Erotic is opposed to the Disgustful, the Heroic to the Quietistic, and so forth . The incongruity or opposition result in three ways, viz. (1) from identity of the exciting cause (आलम्बनविभाव) (2) from identity of the subject of emotion and (3) from immediacy of succession. The incongruity in the first two cases may be removed by representing the sentiments as having different subjects (e.g. in the hero and the rival hero). The last case conflict may be removed by placing, between the two immediately succeeding sentiments, a sentiment which is not opposed to them. These are cases where two or more rasas stand in the relation of principal and subordinate; the term 'subordinate' being misleading, it is sometimes called a concomitant rasa (सञ्चारिन्), which implies that it cannot terminate absolutely in itself and at the same time is distinct from a fully developed rasa, as well as from a mere undeveloped भाव . There is also no incongruity where a conflicting rasa is recalled or described under comparison. All these questions properly come under the theory of Propriety or Aucitya in relation to rasa, elaborated by आनन्दवर्धन and his followers and is ultimately based on the dictum attributed to the ध्वनिकार (p.145), cf. Locana p.138), which lays down in general terms that the secret of Rasa lies in conforming to the established riles of propriety.

The doctrine of the ध्वन्यालोक that in a composition in which the sentiment is awakened, proprieties of various kinds (e.g. with reference to the speaker, the theme, the employment of the विभावs etc., the use of the अलङ्कारs and other elements, pp. 134f, 144f) should be observed, and that certain items of conflict(virodha) with the dominant sentiment should be avoided, gave rise to a theory of Propriety, which is generally comprehended by later writers under the discussion of the doÒas of rasa. Thus, in later treatises, the conventional doÒas of पद, पदार्थ, वाक्य, वाक्यार्थ recognized since वामन's time. It is क्षेमेन्द्र alone who emphasizes the importance of the subject by making it the theme of his औचित्यविचारचर्चा which will be noticed in its proper place. महिमभट्ट, in the twelfth chapter of his work, considers the question of anaucitya in some details. According to him, impropriety or incongruity has two aspects, according as it refers to शब्द or to अर्थ respectively. Then he speaks of propriety as external (बहिरङ्ग) or internal (अन्तरङ्ग), apparently as it is शब्दविषय or अर्थविषय. The cases of internal propriety, which consists in the proper employment of the विभावs etc. have already been explained by previous writers(e.g. ध्वन्यालोक pp. 144f). महिमभट्ट, therefore, takes up the question of external propriety, which he thinks falls under five faults of composition, viz. विदेहाविमर्श (non- discrimination of the predicate), prakrama-bheda (violation of uniformity in the expression), karma-bheda(syntactical irregularity), paunaruktya (tautology) and वाच्यवचन (omission of what must be expressed), to the explanation and exemplification of which he devotes, amidst several digression, the rest of the chapter(ch. ii). It is difficult to say why these faults of expression alone are singled out as defects resulting in a violation of rasa (rasabhaÉga). Later writers would include them under general defects, reserving the cases of virodha or opposition of rasa as specific instances of rasa-doÒas.

REFERENCES

[1]. But the Natya-darpana, as noted above (p. 446 fn), as well as Bhoja (सुखदुःखावस्थारूपः), believs that Rasa is सुखदुःखात्मक. The रसकलिका (p. 312) also holds this view. See the elaborate arguments set forth in Natya-darpana(ed. GOS, p. 159) in support of this view. Siddhicandra (Kavyaprakasha-khandana pp. 16-21) refers to this theory of the "Navyas" that all Rasas are not pleasurable, but some distinctly painful. They accordingly admit the four pleasurable Rasas, viz. श्रृङ्गार, वीर, हास्य, and अद्भुत only, and not those which involve pain, viz. करुण, रौद्र, बीभत्स and भयानक. See the question discussed by V. Raghavan, Number of Rasas, ch. viii.

[1]. Cf. Jacobi in GgA, 913, pp. 308f.

[1]. These circumstances, Dhanika thinks, disprove the व्यङ्ग्यत्व of Rasa. It seems that Dhanika does not accept the व्यङ्ग्य-व्यञ्जक relation of Rasa to poetry, but holds some views similar to the भाव्य-भावक theory of भट्टनायक (ed. Parab, 1917, p. 96).

[1]. See above p. 337. The fourfold division is probably adopted as an ostensible rationale for the doctrine of four primary and four secondary Rasas recognized by Bharata.

[1]. E.g. Yoga-sutra i. 33.

[1]. न च तथाभूतस्य शान्तरसस्य सहृदयास्वादयितारः शान्ति अथ तदुपायभूतो मुदिता-मैत्री-करुणो प्रेक्षादि लक्षणाः तस्य च विकास विस्तार-क्षोभ-विक्षेपरूपतैवेति।

[1]. भानुदत्तः, who substantially follows the doctrine of Rasa detailed their, is however singular in his classification of some aspects of Rasa. He speaks of Rasa as Laukika and alaukika, subdividing the latter into svapnaika (enjoyed in a dream), manorathika (fanciful like a castle in the air) and anupanayika (as depicted in poetry). He again gives us (रसतरङ्गिणी. Ch. viii, p. 65, ed. Regnaud) a three fold arrangement of Rasa with Reference to its manner of manifestation: (i) abhimukha, when it is manifested by means of the भाव, विभाव and अनुभाव. (ii) vimukha, when these elements are not directly expressed; so called because it is comprehensible with difficulty. (iii) paramukha, which has again two aspects according as it is (a) alamkara-mukha, i.e. where the alamkara is principal and the rasa is secondry. This includes probably the cases of figures like rasavat, which are included in गुणीभूतव्यङ्ग्यकाव्य by the Dhvani theorists, and (b) bhava-mukha where the bhava is in the same way principal.

[1]. This follows धनञ्जय's dictum that the enjoyment of Rasa is not precluded in the actor, if he realizes in himself the feelings depicted.

[1]. The topics dealt with in its three chapters are : I. The rasas, the स्थायिभावाः, the dramatic वृत्तिs, शृङ्गार and its division; the नायक, classified with illustrations; his assistants; classification of the नायिका, II.
Characteristics of love-in-separation, of पूर्वराग, the ten stages of love, the उपायs, etc, III. The other rasas, viz. हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स, अद्भुत and शान्त; the four v[a]ttis appropriate to the rasas.

[1]. See above p. 517.

[1]. See pp. 233f, and chapter on Minor Writers.

[1]. See p. 235.

[1]. See p. 236. The three vilasas of this extensive work deal with the following topics : i. The hero, his qualities and classification; his adjuncts; the heroine, her classification and qualities, her sattvika excellences; the uddipana-vibhavas; the riti and the gunas; the dramatic vrttis; the satvika bhavas, ii. The vyabhicari-bhavas, the anubhavas, the eight rasas, iii. The drama and its varieties, characteristics etc.

[1]. The eight tarangas of Rasa-tarangiÆi are (i) Definition of Bhavas and subdivision there of; the sthayi-bhavas. (ii) The vibhavas. (iii) The anubhavas. (iv) The eight sattvika bhavas. (v) The vyabhicari-bhavas.(vi) The rasas and detailed treatment of sringara. (vii) The other rasas. (viii) The sthayi-bhavaja and rasaja drusti. The Rasamanjari, a much smaller work, devotes more than half of itself to the nayika and her companions and applies the rest to the sringaranayaka, his assistants, the eight sattvika gunas, the two aspects of srnigara and the ten stages of vipralambha-sringara.

[1]. यत्किञ्चिल्लोके शुचिमेध्यमुज्ज्वलदर्शनम् वा तत् शृङ्गारेणोपमीयते, Gaikwad ed., pp. 89-90.

[1].विश्वनाथ चक्रवर्तिन् explained as शान्तप्रीतिप्रेयोवात्सल्योज्ज्वलनामसु मुख्येषु......सैवोज्ज्वलापरपर्यायो भक्तिरसानां राजा मधुराख्यो रसः।

[1]. स्वाद्यत्वं हृदि भक्तानामानीता श्रवणादिभिः एषा कृष्णरतिः स्थायी भावो भक्तिरसो भवेत्।, cited by विश्वनाथ चक्रवर्तिन्, p.4.

[1]. मधुराख्याय रतेर्लक्षणं चोक्तं मिथो हरेर्मृगाख्याश्च सम्भोगस्यादिकारणम्, मधुरापरपर्याया प्रियताख्योदिता रतिः, ibid., Ioc, cit.

[1]. The orthodox theorists (cf. जगन्नाथ pp. 47f) would regard bhakti(which being based on अनुराग or attachment cannot be comprehended by शान्त रस) as included in भाव, being देवादिविषय रतिः, and as inadmissible as a fully developed rasa. Cf. भानुदत्त, रसतरङ्गिणी ch. vi- On उज्ज्वलनीलमणि and वैष्णव theory of Rasa see S.K. De, वैष्णव Faith and movement, Calcutta, 1942.

[1]. See pp. 135-36. Cf. also मन्दारमरन्दचम्पू, ix, p. 107. (ed. काव्यमाला).

[1]. See Bharata नाट्यशास्त्र ch. Xxii-xxiv; दशरूपक iv.50f. and iii.

[1]. This statement follows Bharata and is accepted by most theorists including Bhoja; but धनञ्जज distinguishes three cases, privation (ayoga), sundering (विप्रलम्भ) and union(सम्भोग) : the first denoting the inability of lovers, through obstacles, to secure union, and the second arising from absence or resentment. The first case of love may pass through the well known ten stages(longing, anxiety, recollection, praise of the beloved, distress, raving, insanity, fever, stupor and death; cf. शिङ्गभूपाल ii. 178-201); while the second condition may be caused by a quarrel, due to discovery or inference of unfaithfulness (which may be counteracted bysix उपायs, viz. conciliating, winning over her friends, gifts humility, indifference or distracting her attention) or by absence arising from business, accident or a curse.

[1]. The good qualities of the hero are innumerable. For his characteristics, see धनञ्जज ii. 1 f; विश्वनाथ iii. 30f; शिङ्गभूपाल i. 61; etc. On the theme of नायक-नायिका, as treated in अलङ्कार works, see V. Raghavan, Intro. To his ed. Akbarshahi शृङ्गारमञ्जरी pp. 14-90.

[1]. The प्रतिनायक or the rival of the hero is धीरोदात्त, haughtiness being his essential characteristic; but he is described also as stubborn and vicious(दशरूपक ii. 9; साहित्यदर्पणiii. 130, p. 136). The पीठमर्द of the heropossesses, in a lesser degree, the qualities of the hero(e.g. Markanda in the मालतीमाधव). The term पीठमर्दिका in the feminine occurs in the मालतीमाधव in the sense of a trusty go-between, applied to the nun कौशिकी. The विट, usually neglected in the serious drama, except in चारुदत्त and मृच्छकटिक, appears in all his glory in the भाण, for which he is prescribed as the hero.

[1]. An amour with a married woman cannot, cannot, according to रुद्रट and रुद्रभट्ट form the subject of dominant Rasa in a play or poem; but this is the central theme of वैष्णव lyrics.

[1]. भरत xxii. 197-206 : धनञ्जय ii. 21f : विश्वनाथ iii. 67-70; शिङ्गभूपाल i. 121-51. Rarely a heroine, she must be represented as love when she is a heroine; but she cannot be so when be so when the hero is divine or royal.The exception occurs in a prahasana or farce(and incidentally in a भाण or the erotic monologue) where she can be represented in her low and avaricious character for cosmic effect.

[1]. The usual meeting places are given as a ruined temple, a garden, the house of a go-between, a cemetery, the bank of a stream, or any dark place generally.

[1]. Theoretically the Rasa is one, a single ineffable and impersonal joy, but it can be subdivided, not according to its own nature but according to the emotions which form its basis. भरत (ch. vi) and other theorists give a full description of the स्थायीभावs, विभावs etc. In the case of each Rasa, into which space forbids us to enter. A summary of it will be found in Lindenau Rasalehre Leipzig 1913, pp.8f. Thus, in the case of the heroic sentiment (वीर), the dominant feeling is energy(उत्साह); the excitants(विभावs) are coolness (असम्मोह), resolve(अध्यवसाय), circumspection(नय), strength(बल), etc.; the ensuants (अनुभावs) are firmness(स्थैर्य), heroism (शौर्य), sacrifice(त्याग) etc.; the व्यभिचारिणः or accessory feelings are those of assurance, arrogance. विश्वनाथ gives them somewhat differently. The essential excitant (आलम्बनविभाव) of the heroic sentiment, according to him, consists of those to be vanquished, and their acts and gestures from the enhancing excitants (उद्दीपनविभावs); the ensuants comprehend the desire or seeking for assistants and adherents; while the accessory feelings are patience, intelligence, remembrance, cogitation etc. The sentiment may take three from of corage (Bharata vi. 79=ed. Regnaud vi.80), viz. in battle (युद्धवीर), in virtuous deeds(धर्मवीर), and in liberality (दानवीर), to which later writers (e.g. विश्वनाथ) add दयावीर. It should also be noted that a special color and a presiding deity is attributed to each Rasa. Thus, red, black, white, dark, (श्याम) and grey are associated, not unreasonably with the furious, terrible, cosmic, erotic and pathetic and sentiments, although it is difficult to explain why horror is dark blue (नील), wonder is orange, and heroism us yellow. The respective deities are विष्णु (erotic), यम(pathetic), प्रमथ(comic), रुद्र(furious), इन्द्र(heroic), काल(terrible), महाकाल (disgustful), ब्रह्मा(marvelous),. विश्वनाथ adds that नारायण is the presiding deity of शान्त rasa and the colour associated is that of Jasmine(kunda).

[1]. These two divisions of विभाव are not mentioned by भरत but distinguished by धनञ्जय (iv. 2) and traditionally handed down by विश्वनाथ.

[1]. See above p. 339, fn 2. The सात्त्विकभावs in later works from a special class of अनुभावः.

[1]. If the verse is genuinely UdbhaÔa's. See above p. 431, fn. 2- On the शान्तरस in भरत and धनञ्जयsee S.K. De, Some Problems pp. 139-41. On the number and nomenclature of Rasa generally see V. Raghvan, Number of Rasas, Adyar 1940.

[1]. The शान्त text in Bharata, available in certain recensions, are interpolations. See Bhagavan, op.cit., pp. 15f , विश्वनाथ, कालिदास knew only eight Rasas, विक्रमोर्वशीय ii. 18, where मुनि-भरत is also mentioned.

[1]. This sentiment is also closely related to the sentiment of disgust; for it arises from an aversion to worldly things.

[1]. See S.K. De, वैष्णव Faith and Movement, p. 145.

[1]. भानुदत्त counts (रसतरङ्गिणी) माया under the Rasaa. रुद्रट mentioned preyas (friendship), which Rasa is accepted by भोज. Some writers add श्रद्धा along with भक्ति. See भानुदत्त, op. cit., p. 56, 11. 25f (ed. Regaaud) शिङ्गभुपाल admits only eight Rasas, but his treatment is from the standpoint of dramaturgy.

[1]. न यत्र दुःखं न सुखं न चिन्ता न द्वेष रागौ न च काचिद् इच्छा रसः स शान्तः कथितो मुनिन्द्रैः, सर्वेषु भावेषु शमप्रधानः, cited also in Dasa, iv. 49 (comm.).

[1]. इत्येवं रूपस्य शान्तस्य मोक्षावस्थायां एवात्मस्वरूपापत्तिलक्षणायां प्रादुर्भूतत्वात् तत्र सञ्चारादीनामभावात् कथं रसत्वम्।

[1]. यश्चास्मिन् सुखाभावोप्योक्तस्य वैषयिकसुखपरत्वान्न विरोधः।

[1]. A fourth kind of abhinaya is sometimes added, viz. आचार्य (extraneous), i.e. derived from dress, decoration etc.

[1]. रतिरीति स्थायिभावोपलक्षणं, देवादिविषयेत्यापि अप्राप्तरसावस्थोपलक्षणम्, p. 206.

[1]. अनौचित्यप्रवृत्तत्वे आभासो रसभावयोः(मम्मट) explained as : अनौचित्यं चात्र रसाणां भरतादिप्रणीतलक्षणानां सामग्रीरहितत्वे त्वेकदेशयोगित्वोपलक्षण परं बोध्यम्।

[1]. शिङ्गभूपाल(pp. 141-2) distinguishes two cases (i) where Rasa is ascribe to an inanimate object and (ii) where it is developed in an inferior character or in animals.

[1]. यावता त्वनौचित्येन रसस्य निष्पत्तिः तावत्तु न वार्यते, रसप्रतिकूलस्यैव तस्य निषेधत्वात्।

[1]. Some Rasas again are mutually consistent, e.g. करुण and बिभत्स go with हास्य (cf. भरत vi. 40) etc. this question see Lindenau Rasalehre (pp. 71f). According to विश्वनाथ, The Rasas hostile (i) to शृङ्गार are करुण, बिभत्स, रौद्र वीर and भयानक (ii) to हास्य-भयानक and करुण (iii) to करुण, हास्य शृङ्गार and शृङ्गार (iv) to रौद्र- हास्य, शृङ्गार and भयानक (v) to वीर-भयानक and शान्त (vi) to भयानक, शृङ्गार, वीत, रौद्र, हास्य and शान्त (vii) to शान्त,वीर, शृङ्गार, रौद्र,हास्य, and भयानक (viii) to बिभत्स- शृङ्गार. भानुदत्त gives the antagonistic Rasas as follow: शृङ्गार-बिभत्स; वीर-भयानक; रौद्र-अद्भुत; हास्य-करुण।

[1].अथैवात्र प्रधानेतरेषु रसेषु स्वातन्त्र्य विमर्शराहित्यात्, पूर्णरसभावमात्राश्च विलक्षणतया, सञ्जारि रसनाम्ना व्यपदेशः प्राच्यानाम्, Visvanatha, p.420.

Bibliography:

1. Bhavaprakashana of Saradatanaya, Edited by Madan mohan Agarwal, Chowkhamba Surabharati Prakashana, Varanasi, 1983.
2. Dasarupaka of Dhananjaya with Dipika Commentary, Amarnathvidya Prakashan, Delhi, 1979.
3. History of Sanskrit Poetics by S.K. De, Calcutta Oriental Press, Calcutta, 1925.
4. Introduction Indian Poetics and Aesthetics by Prof. B.K. Dalai and Prof. Ravindra Muley, Centre of Advanced Study in Sanskrit, University of Pune, Pune, 2014.
5. Natyadarpana of Ramacandra & Gunacandra (1st Edn.1986 & 2nd Edn. 1994), Edited by T. C. Upreti, Parimal Publication, Delhi, 2005.
6. Natyashastra of Bharata, (Part - 1: Chapter 1-13 ; Part -2: Chapter 14-28 ; Part – 3: Chapter 29-36 ; Edited by Puspendar Kumar, New Bharatiya Book Corporation, Delhi, 2006.
7. Prataprudriya of Vidyanatha with Commentary of Kumaraswami (2nd Edition), Edited by Dr. Raghvan , Sanskrit Education Society, Madras, 1979.
8. Rasaviveka of Unknown Author, Edited by T.K.V.N. Sudarsanacharya, Sahitya Akademi, Delhi, 1957.
9. Rasapradipa of Prabhakara Bhatta,Saraswati Bhavan, Vanaras, 1982.
10. Rasamimamsa of Gangaram Jadi Edited by Srinivas Sharma, Chowkhamba Sanskrit Series, Vanaras, 2003.

11. Rasamanjari of Bhanudatta Edited by Dr. Jamuna Pathak, Chowkhamba Vidya Bhavan, Varanasi, 2011.
12. Rasakaustubha of Benidatta, Indu Prakashan, Roop Nagar, Delhi, 1978.
13. Rasavilasa of Sukla Bhudev, Edited by Premlata Sharma, Poona Oriental Book House, Sadashiv Peth, Poona, 1952.
14. Rasagangadhara of Panditraja Jagannatha with commentary of Gurumarmaprakasha by
Nagesbhatta, Edited by Sri Parasnsth Dwivedi, SampurnanadaSanskrit Visvavidyalaya, VaraÆasi, 2000.
15. Rasatarangini of Bhanudatta, Published by Sri Venkateswar Press, Mumbai, 1836.
16. Rasaviveka of Unknown author Edited by Sudarsanacsrya, Sri Venkateswar Oriental
Research Institute, Tirupati, 1956.
17. RasakaumudÍ of Srikantha Edited by A.N. Jani, Oriental Research Institute, Baroda, 1959.
18. SahityadarpaÆa by Visvanatha, Bharatiya vidyaprakashan, Baranasi, 2001.
19. The Number of Rasas by V.Raghvan, The Theosophical Publishing House, Adyar, Madrass, 1975.
20. The Post Jagannatha Literary Criticism in Sanskrit by Dr. M. SivakumaraSwamy, Dvaita Vedanta Studies and Research Foundation, Bangalore, 2009.
21. Ujjvalanilamani of Rupagoswamin, Edited by Narayana Goswami Maharaj, Gaudiya Vedanta Prakashana, New Delhi, 2006.

GANDHIAN APPROACH TO CONCEPT OF PEACE AND NON-VIOLENCE

Dr. Sabyasachi Sarangi[1],Pramod Ola[2]
[1](Assistant Professor), Dept of Prakrit and Sanskrit, JVBI, Ladnun (Rajasthan.) 341306.
Email: ssarangi255@gmail.com
[2](Assistant Professor), Dept of Education, JVBI, Ladnun (Rajasthan.), 341306. Email:
pramodola1991@gmail.com

ABSTRACT

This paper has two aspects, one is peace and another is Non-Violence (Ahimsa). Before discussion of the Gandhian approach to peace and Non-Violence it needs to define the term peace and Non-Violence first. But it is not an easy task to define the term peace and Non-Violence, it needs philosophical analysis. Hence, at the outset we will try to define the term peace and thereafter Gandhian notion of Non-Violence. Peace does not mean just an absence of violence, dissension of war; rather Peace is a commitment to refrain someone from any kind of harm and violence and at the same time leads to live in perfect tranquility of mind as well as the balance of the body, mind and the soul of an individual. The word 'Non-Violence' is a translation of the Sanskrit term 'Ahimsa'. He stated that in its positive form, 'Ahimsa' means 'the largest love, the greatest charity'. Gandhian concept of Peace and Non-Violence elaborately discussed in this paper.

Keywords: Gandhi, Peace, Ahimsha, Truth, Philosophy, Challenges

INTRODUCTION:

In today's world violence and war tactics are the biggest challenge to save people. Many people of the world stand on a queue for peace to survive the war. People will promise that no country can exploit any other; no nation can't produce mass-killings arms. They think that their idea can be made by making goodwill and peace-loving efforts the world into peace in heaven. Mahatma Gandhi was the Pioneer of Non-Violence and a great supporter of Peace. He had a great importance to the concept of Peace and Non-Violence. Truth or Satya, Ahimsa or Non-Violence are foundation of Ganghi's philosophy. The word "Non-violence" is a translation of the Sanskrit term "Ahimsa". He stated that in its positive form, "Ahimsa" means "The largest love, the greatest charity". According to him Peace is a commitment to refrain someone from any kind of harm and violence and at the same time leads to live in perfect tranquility of mind as well as the balance of the body, mind and the soul of an individual. Happiness and Peace are co-terminus. Basically, though, happiness is a mental state and peace is a state of the society, a multi-dimensional concept with wider connotations. Peace thus incorporates happiness as well.

CONCEPT OF PEACE:

Peace is basically the absence of conflict, disturbance and disharmony in all spheres of life. There are many controversies concerning the definition of peace. The problem is, of course, that peace derives its meaning and qualities within a theory or framework. Christian, Hindu, Islamic or Buddhist has seen peace differently as like pacifist or internationalist. Socialist, fascist, and libertarian have different approaches of peace, as do power or idealistic theorists of international relations. In this diversity of meanings, peace is not different from such concepts as justice, freedom, equality, power, conflict, class, and, indeed, any other concept. However, Gandhiji's approach to peace has some special import and techniques that basically changed the definition of peace. He never defined the term peace literally rather he realized its inner import and has tried to activate it in global way for common benefits without any sectarian boundary; hence it has practical aspect too. There are many nations in the past have adopted his technique of peace and benefitted largely.

Now this modern world also realized the necessity of his technique of peace and utilized in many nations for building a peaceful society and construction of good individuals. In this way his notion of peace has transcends the boundary and time. Gandhiji's notion of peace can be defined in two angles: On the one hand it implies absence of violence i.e. negative aspect and on the other the presence of positive like harmonious, cooperative relationships with all. These two angles are referred to as negative (non-violence) and positive peace. Gandhiji did not directly use the term peace rather, for peace, Gandhiji used the term ahimsa which has a strength to overpower upon the mind of a man on adversary and evil properties. Their soul force will preponderate over the sensual evil forces. Gandhi's technique of peace basically a soul force and free from any kind of selfish nature. This soul force is a zeal, commitment and quest for Truth. This Truth can be attained from various sides, like social, political, economical, collective and individual too. His concept of society is a just a society, where equal distribution of wealth and opportunities are to be extended towards all in humanistic nature. In political concern it is spiritually altruistic, democratic and people's welfare politics. There is no place of hypocrisy, inequality and disharmony in his democratic notion. Gandhiji connected political and economic pursuits with spirituality and he deviated himself from the age old tradition of peace or liberation. He has tried to achieve peace and liberation by associating with the worldly affairs and not through the renunciation of the world. He is a Satyagrahi and according to him, a Satyagrahi must be conscious for Truth and never be deviated from Truth. It is a rigorous practice and love for Truth. In his eyes Satyagraha is the precondition of peace. Similarly, his notion of religion is a way of life and a quest for truth so that someone may reach in the state of peace, where an individual will exercise his freedom and at the same time he must have a sense of tolerance and respect for others that might help to establish a just and peaceful society and individuals. It is a force that can be used by individuals as well as communities.

This technique of peace may be used both in political and domestic levels. Peace in political level needs just ruler who has strong moral sense and his activities will completely free from all kinds of exploitation, oppression and injustices of the people. In his peace movement everybody can join whether men, women, children and down trodden, it is immaterial to him. According to Gandhiji Satyagraha is an appeal to change the heart of the wrong doer also to achieve peace. In fact, Satyagraha is based on the presupposition of rectification to the wrong doer, so that their heart can be changed. Distrust or hatred has no place in his peace movement; there must be a trust in the goodness of the opponent and also love for them. Not apathy but love can change the mind of wrong doer.

Having political power is therefore just the first step towards peace. We all have to accept the responsibility to change the situation to remove all kind of exploitations. We have a responsibility to cultivate some of the principles by which Gandhiji practiced and lived. We will have to begin to look at sharing, caring and ensuring practices of Gandhiji and at the same time we must ensure the people's security and Sarvadaya in the society. Thus, Gandhiji laid much more emphasis for the progress of village Panchayet system. In addition to political oppression, we have seen economic, intellectual, religious, environmental, and gender oppression and exploitation in South Africa. When we talk about peace, we cannot view the indiscriminate killings and destruction of property in isolation from the poverty, illiteracy, religious intolerance, environmental threats and gender oppression faced by our people in our daily lives. But what we the philosophers will do? Will we remain aloof or keep mum or indifferent? Certainly not, because we cannot elude our responsibility and moral obligations in this regard. Actually, philosophers are the proper representatives of peace in the world. Philosophers have first identified problems and tried for logical solution. It is clear that only the change of political power in itself will not be suffice to achieve peace. So, what can we do to achieve peace in our country? How can we help to build a society where peace will be the central concern of its entire people? We think that

Gandhiji would consider the **following are the essential preconditions for peace:**

a) That people in power, whether political, economic, religious, civic or administrative, needs to develop a holistic view of peace. If we want a better country for our posterior generations then we need to act and ensure that such a holistic view is adopted and that a comprehensive approach is being used in addressing the issue of peace.

b) We also have a responsibility to ensure that the community understands and approves of this approach. We must be willing to share expertise and funds, and at the same time develop the community's capacity to meet the challenges of the future.

c) We cannot expect a new government to change things on its own. We have to take responsibility for bringing about changes and in this we can seek the assistance of the state.

d) We need to develop a climate of love, caring, sharing and communal consciousness as we begin the process of building an equitable society through community programs. We certainly may be able to get more support for such projects from a new government.

e) We need to build a culture of non-violence among our children and youth, through actively ensuring that we (and they) do not support war toys or violent games, media, books, stories, etc., but instead promote a culture of resistance to injustice. We need to inculcate a communal responsibility among all our people.

f) We need to create a culture of work, and recognize the dignity of work, so that we can learn not only to meet our own needs but also those of the whole community. Examples of extreme hindrance of peace are war, systematic repression, sexual and domestic violence, envy and jealousy, totalitarianism and genocide. In conflict both the parties want to win but that often is not possible or does not resolve the conflict completely and permanently.

g) Gandhiji's notion of peace is deeply rooted with civic virtues and liberalism of courage. His ethics has own spiritual cast, hence, he disparaged conventional political ideas that 'ends justifies the means'.

h) Peace never is to be achieved if religious ethics and cardinal virtues will not to be practiced. For this unity of the major religious groups are necessary. In Indian aspect basically the unity between the Hindus and the Muslims are essential. Up-gradation of the sense of toleration is more vital, thus he says- there is no religion which may talk absolute Truth and for that we need inter-religious dialogue. His notion of Truth is highly relevant to establish inter-religious and inter-community peace. For this, Gandhiji unified pro-sanatana, non-sanatana and anti-sanatan's views. And for that he has made the distinction between the society and the state.

According to Gandhi peace is an inevitable sign of prosperity. In his eyes, prosperity does not mean only the progress and flourishing in economic level. His view of prosperity means all round development of the nation and the individuals, like phenomenal level and spiritual level. Prosperity in phenomenal level is related to political, economic, social levels prosperity, where as spiritual prosperity is related to moral practice, individual up-liftmen, freedom, justice and internationalism etc.

Gandhi said, "If we have no charity, and no tolerance, we shall never settle our differences amicably and must therefore always submit to the arbitration of a third party." Many of today's conflict management techniques and resolution process have a clear shadow of what and how Gandhi had seen international issues in his times. A war-hunger nation has nothing in this world whilst a starving nation needs every kind of help from the world. A nation endangering peace in the world has no security for itself. Peace can never be achieved by one-dimensional and unilateral talks or efforts. It has numerous facets of social, ethnical, religious and political elements and copious ways to deal with them to bring and stabilize worsened situations under control. The true character of a conflict must be identified and may perhaps be attributed any of those hidden elements. Gandhi's perception of bringing peace and resolving conflict had such a diversified point of interest every time when he insisted on taking fast to

bring hostile situation under control. Whether there is a riot in the eastern Bengal or unrest in the north-western part of India, peace lived in his soul consciously demanding him to take on fast even if he resides in another corner of the country. Thus, peace becomes universal and eternal.

From the above discussion it is almost vivid to us that peace is the utmost need of our present world's prosperity. The present world is really in danger and the crisis of peace is everywhere. Therefore, Gandhiji's notion of peace is a real technique to achieve peace and prosperity as well.

GANDHI'S TWIN-PRINCIPLES OF PEACE:

Truth and Non-violence In authoritarian societies, whether religious or political, where votes of people do not count, where any opposition voice is silenced with bullets and imprisonment, peace cannot be permanent. Having political power is, therefore, just the first step towards peace. We have to accept the responsibility to change things. We have a responsibility to cultivate some of the principles to look at sharing and ensuring that resources are distributed equitably. We must ensure that people can see and feel the change and be able to identify a niche for themselves in the world. In addition to political oppression, we have economic, intellectual, religious, environmental, and gender oppression all over the world. When people talk about peace, they cannot view the indiscriminate killings and destruction of property in isolation from the poverty, illiteracy, religious intolerance, environmental threats and gender oppression faced by the people.

Attainment of peace should be the ultimate goal of any youthful human emotions andactions. Once their minds are at rest they can concentrate their energies for spreading the message of peace. Youth should know that social harmony is an index of peace. They should strive peacefully to make their and other people's social lives happy and undisturbed which is the aim of any society. Gandhi also warned youngsters against misinterpreting religions. All the religions such as Hinduism, Christianity, Islam, Buddhism, Jainism, etc. have preached peace and harmony so that society can enjoy a happy and peaceful life.

TRUTH :

Gandhi dedicated his life to the wider purpose of discovering truth, or Satya. He tried to achieve this by learning from his own mistakes and conducting experiments on himself. Gandhi stated that the most important battle to fight was overcoming his own demons, fears, and insecurities. Gandhi summarized his beliefs first when he said "God is Truth". He would later change this statement to "Truth is God". Thus, Satya (Truth) in Gandhi's philosophy is "God". Truth was Gandhi's favourite human value which inspired his autobiography "My Experiments with Truth". **Satya Meva Jayate** was his slogan. Gandhi wanted every individual and society to practice truth at any cost. He emphasized that all religions, philosophies, societies have unambiguously advocated truth. According to him, truth was God and that truth must manifest itself in the thought, word and deeds. He did accept that the path of truth will always be full of hardship,difficulties,sufferings,andsacrifice. To tell the truth one must be courageous. Treading the pat h of truth is a continuous and unending process, which has to be followed by every generation. Concepts and means of social transformation and reformation preceded in Gandhi's mind before they are applied as a mass weapon to political ends against the British.

NON-VIOLENCE:

Non-violence and truth are the essence of Gandhian philosophy. Bringing change in the violent exploitative society through non-violent persuasive methods has never been witnessed in the history.

Wrong belief has taken possession of us that non-violence is preeminently a weapon for cowardice, but this is not the case. Gandhi conceived it as weapon of courageous and devoted people to the particular cause. Gandhi was the first to apply non-violence in political field on a massive scale. Gandhi derived the idea of non-violence from the principles '**Ahimsa Paramodharma**' and '**Vasudeva Kutumbakam**', which mean to earn complete freedom from ill-will, anger and hatred, and to nurture love for all. The concept of non-violence and non-resistance has a long history in Indian religious thought and has had many revivals in Hindu, Buddhist, Jain, Jewish and Christian contexts. He was quoted as saying 'when I despair, I remember that all through history the way of truth and love has always won'. Gandhi was aware that this level of non-violence required incredible faith and courage, which he realized not everyone possessed. He, therefore, advised that one need not keep to nonviolence, especially if it were used as a cover for cowardice. Gandhi stated that non-violence is the rule of conduct for a society, if it is to live consistently with human dignity and make total progress towards the attainment of peace. He observed that nonviolence is not a value principle alone but a science based on the reality of mankind, society and polity. In this line, Gandhi's idea of ahimsa entails not just abstaining from all violence but embracing an enemy with love. Ahimsa is the largest love and the greatest charity that implies generally an act not only of not-killing but also abstaining from causing any pain or harm to another living being either by thought, word or deed. To practise ahimsa, one requires the qualities of deliberate self-suffering intended to awaken and convert the soul of the enemy and a harmless mind, mouth and hand; its opposite, '**himsa**', means causing injury and harm to others and it needs no reference or discussion.

CONCLUSION:

In conclusion we can say that both Peace and Non-Violence are closely interrelated. They are the same sides of a same coin. A critical account of the Gandhian concept of Non-Violence shows that Gandhi was not aware of the deep rooted aggressive instinct in man. Contemporary psychologist have pointed out that this instinct plays a major role in the human mental life. Gandhi did not play sufficient attention to it. His account of Non-Violence seems to be more dependent on his reading of religious texts than on psycho-social considerations. This is a major critical point that may be raised against the Gandhian conception of Non-Violence. If Non-Violence is the expression of the life-instinct within man then violence is the expression of the death-instinct.

Bibliography:

1. Mahatma Gandhi(Dynamics of Non-Violent Protest Movement) by Dr. Rajesh Rawat, Pointer Publishers, Jaipur, 2003.
2. Contemporary Indian Philosophy by Basant Kumar Lal, Motilal Banarasidass Publishers Pvt. Ltd., Delhi.
3. The Moral and Political Thought of Mahatma Gandhi by Raghavan Iyer, Oxford Univrsity Press, 2000.
4. The Philosophy of Mahatma Gandhi by Dhirendra Mohan Datta, University of Wisconsin Press, 1953.
5. Selection from Gandhi by Nirmal Kumar Bose, Navajivan Mudranalaya, Ahemadabad, 1960.
6. Studies in Gandhism by Nirmal Kumar Bose, Navajivan Trust, Ahemadabad, 2012.

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

पाश्चात्य जगत पर जैन दर्शन का प्रभाव

डॉ. सत्यनारायण भारद्वाज
प्राकृत एवं संस्कृत विभाग, विभागजैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूँ

डॉ. सब्यसाची सारंगी
प्राकृत एवं संस्कृत विभाग, विभागजैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूँ

जैनदर्शन समर्थ एवं प्रभावशाली दर्शन है। कोई भी दर्शन शक्तिशाली अथवा प्रभावशाली इसलिए नहीं बनता कि उसके अनुयायियों की संख्या अधिक है बल्कि प्रभावशाली बनने की कसौटी है, उस दर्शन के सिद्धान्तों ने जनमानस को कितना प्रभावित किया है। जैन–दर्शन के अहिंसा, अनेकान्त और अपरिग्रह जैसे सर्वमान्य सिद्धान्तों ने इसे सार्वभौम धर्म बनने के सामर्थ्य से युक्त बना दिया। पश्चिम की भोगवादी संस्कृति ने जहां आधुनिक मानव को अनेक प्रकार की सुख–सुविधाएं प्रदान की वहीं उसे तनाव, अवसाद जैसी मानसिक बीमारियों रूग्ण भी बना दिया। अंततः विश्व की सभी संस्कृतियों को अपनी ओर आकर्षित करने वाली पाश्चात्य संस्कृति भी जैन संस्कृति के संयम, त्याग, समता, करूणा जैसे मूल्यों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकी।

प्रस्तुत लेख में उन मूल्यों एवं सिद्धानतों का पश्चिम में प्रचार–प्रसार कैसे हुआ इस वर्णन के साथ–साथ उन पश्चिमी व्यक्तियों का भी उल्लेख करने का प्रयास है जिनके व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व में जैनत्व मुखर है, जिन्होंने जैन–सिद्धान्तों को न केवल जीया है अपितु उसे जन–जन तक पहुंचाने का सफलतम प्रयास भी किया है अथवा कर रहे हैं।

जैन धर्म को पश्चिमी देशों में ले जाने का मुख्य श्रेय जाता है –वीरचंद गांधी को, जिन्होंने प्रथम बार 1893 में शिकांगों में आयोजित वर्ल्ड पार्ल्यामेण्ट ऑफ रिलिजियन्स में जैन दर्शन की प्रभावक प्रस्तुति देकर उत्तर अमेरिका तथा पूरे विश्व को जैनधर्म तथा दर्शन से परिचत कराया। विदेशी धरती पर जैन धर्म के नाम को ले जाने वाले विद्वानों की शृंखला में एक और महत्वपूर्ण व्यक्तित्व है –बैरिस्टर चम्पतराय जैन जिन्होंने इंग्लैण्ड की धरा पर जैन धर्म के प्रचार–प्रसार हेतु महत्वपूर्ण कार्य किये।

पश्चिमी संस्कृति का जैन दर्शन एवं संस्कृति से परिचय कराने में बहुत बड़ा योगदान उन जैन अनुयायियों का भी है जो 20वीं सदी के प्रारंभ में ही व्यापार, आजीविका आदि हेतु पश्चिम देशों में जा बसें। वर्तमान में करीब 200,000 जैन धर्मानुयायी भारत से बाहर रहते हैं एवं उनमें से अधिकतम लोगों का निवास स्थान अमेरिका तथा यूरोप है। वहां भौतिकता प्रधान संस्कृति के बीच रहते हुए भी जैन धर्मानुयायियों ने त्याग प्रधान आध्यात्मिक जैन संस्कृति को न केवल सुरक्षित रखा अपितु संवर्द्धित भी किया, जिसका परिणाम है –विदेशी धरती पर भी अनेक जैन केन्द्रों एवं मंदिरों की स्थापना।[प]

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

अमेरिका में प्रतिवर्ष आयोजित जैन सम्मेलन (Jaina Convention) के कुछ कार्यक्रम में 5000 से भी अधिक जैन भाई–बहनों के साथ विदेशी लोगों की सहभागिता भी इस बात को प्रमाणित करती है कि वहां के लोग जैन संस्कृति से प्रभावित है। विदेशी लोगों का शाकाहार के प्रति निरन्तर बढ़ता आकर्षण भी यही सिद्ध करता है कि जैनदर्शन के आधारभूत सिद्धान्त अहिंसा से वहां का जनमानस प्रभावित है। सांख्यिकी के अनुसार वर्तमान में अमेरिका की करीब 7.3 मिलियन (73 लाख) जनता शाकाहारी है। वहीं अन्य 22.8 मिलियन (2 करोड 28 लाख) लोग ऐसे है जिनका कहना है कि उनका आहार शकाहार सम (Vegetarian inclined) है और एक मिलियन (10 लाख) लोग ऐसे है जिनकी जीवनशैली विगन (vegan) है।[पप] विगेन जीवनशैली का तात्पर्य है –शाकाहारी होने के साथ–साथ पशुओं के द्वारा उत्पादित (animal product) किसी भी वस्तु का उपयोग न करना।

संस्कृति का साहित्य के साथ महत्वपूर्ण संबंध है। पाश्चात्य संस्कृति पर जैन दर्शन के प्रभाव का एक कारण वहां के विद्वानों की जैन साहित्य के प्रति आस्था एवं रूचि भी है। अनेक पाश्चात्य विद्वानों ने जैन साहित्य का गहन अध्ययन कर उसे आधुनिक स्वरूप में प्रस्तुत किया जिससे अन्य लोग भी इस समृद्ध साहित्य को पढ़ सके। जर्मनी के विद्वान हर्मन जेकोबी (1850–1937) ने चार आगम–ग्रन्थों का अंग्रेजी भाषा में अनुवाद किया जो "Saered Books of East" के नाम से विख्यात है। उनकी इस कृति ने अन्य अनेक विद्वानों जैसे Prof. Walther Schubring, Prof. Alsdorf Joseph, Norman Brown के भीतर भी जैन साहित्य एवं दर्शन को पढ़ने की जिज्ञासा पैदा की। Prof. Mausice Bllonfield, William Brown, Heinrich Zinned and Joseph Conpbell, A. Querinot आदि विद्वानों का भी जैन साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान है। Mrs. Sindair Stevensor द्वारा लिखित "The Heart of Jainisom" एवं R. Williams द्वारा लिखित "Jain Yoga" ब्रिटिश विद्वानों के वैदुष्यपूर्ण प्रकाशन है।[पपप]

वर्तमान में ऐसे अनेक विदेशी है, जो जैनदर्शन के विस्तार में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं, जो इटली की प्रसिद्ध गायिका Dandia Pastoriono ने जैन दर्शन से सम्बन्धित अनेक पुस्तकों का इटालियन भाषा में अनुवाद किया है जिनमें से एक महत्वपूर्ण पुस्तक है –समण सुत्तं। वर्तमान में वे पुश–अधिकार एवं शाकाहर पर कार्य कर रही है। जर्मनी के Patrick Krueger, Ceatre of Jain Studies - Freie University (Berlin) के संस्थापक नया विभागाध्यक्ष है। शैक्षणिक गतिविधियों के माध्यम से जैन धर्म–दर्शन के विस्तार के साथ–साथ सामान्य जनता के मध्य भी अहिंसा तथा जैन धर्म के सिद्धान्तों को फैलाने के लिए दृढ़ संकल्पित है। जर्मनी के Peter Finget भी लंदन में स्थित School of oriental and African Studies (SOAS) नामक विश्वविद्यालय में Report of the study of Religion के विभागाध्यक्ष है। और वहा जैन दर्शन के अध्यापन का कार्य भी करते हैं।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

French कहलाने वाले Pierre Amiel फ्रांस के निवृत Public Administrator है जिन्होंने 1998 में Lord Mahavira : Astudy in Historical Perspective का फ्रेंच भाषा मं अनुवद किया केनेडा के Dr. Robert नामक प्रसिद्ध विद्वान ने Moksha in Jainism, Jainism : Today and its Future आदि अनेक पुस्तकों को पश्चिमी जनता के सामने प्रस्तुत किया।[पअ]

फिल्म निर्माता, लेखक एवं पर्यावरण शास्त्री Dr. Michael Tobias ने ''अहिंसा'' पर एक ऐसी फिल्म बनायी जो अमेरिकन जनता के लिए प्रेरक बनी। इसके अलावा अन्य अनेक विदेशी विद्वान जिन्होंने जैन श्रावक का जीवन जीया है और कुछ तो ऐसे भी है जो वर्तमान में जैन श्रावक व्यक्तित्व की भूमिका में आते हैं – हर्बट वोरन इंग्लैण्ड के वे व्यक्ति है जिनकी 12 वृतों के प्रति गहरी आस्था थी और जिन्होंने पूर्ण श्रद्धा के साथ इन व्रतों का पालन किया। जर्मनी के Chrislzian और Carla एक ऐसा युगल है जो स्वयं का अपरिग्रह परिचय आचार्य महाप्रज्ञ द्वारा प्रदत्त नाम करूणा से ही देते हैं। उनका जीवन जैनधर्म के प्रचार–प्रसार के लिए समर्पित है और उन्होंने युगानुसार प्रचार–प्रसार का माध्यम बनाया है। इन्टरनेट को जिससे आज की युवा पीढ़ी जैन सिद्धान्तों को आसानी से जान सके।[अ] जर्मनी की Gabriel (गेब्रीयल) भी एक ऐसी महिला है जो जैन–धर्मानुयायियों के लिए भी आदर्श है। हिंसा के दोष से बचने हेतु स्थानान्तरण के लिए घास के उपर नहीं चलती, हवाई जहाज, कार, ट्रेन का उपयोग न कर साइकिल का उपयोग करती है।[अप] चाहे उसे लम्बा रास्ता ही तय क्यों न करना पड़े। पानी के उपर बने पूल का उपयोग नहीं करती क्योंकि उसका मानना है कि पूल पर से जाने से पानी के जीवों में भय पैदा होता है। आज पश्चिम में "Reverence for life" के सिद्धान्त का समर्थन हो रहा है। इसका कारण है, वहां की संस्कृति में भी अहिंसा के मूल्य को आंका जा रहा है।

जैन धर्म को विश्व के कोने–कोने तक पहुंचाने के लिए 20वीं शताब्दी में भारत प्रवासी अनेक जैन विद्वानों ने पश्चिमी देशों की यात्रा प्रारंभ की। इसी शताब्दी में एक क्रांतिकारी हुए –आचार्य तुलसी जैन धर्म की संयमप्रधान संस्कृति तथा सार्वभौमिक सिद्धान्तों को जन–जन तक पहुंचाने के लिए 1980 में एक से पहचानी जाने लगी। समण श्रेणी के सदस्यों की विदेश यात्रा ने पश्चिम में बसने वाले पश्चिमी लोगों को भी वर्तमान समय में जैन दर्शन की प्रसंगिकता से परिचित कराया। गुरु के आशीर्वाद एवं समण श्रेणी के सदस्यों के सार्थक परिश्रम से मायामी के प्रसिद्ध फ्लोरिड़ा इन्टरनेशनल विश्वविद्यालय में भी जैन दर्शन एवं अहिंसा तथा ध्यान सम्बन्धित पाठ्यक्रमों का अध्यापन प्रारंभ हुआ और वर्तमान में प्रगतिशील है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि पश्चिमी संस्कृति भौतिकता की दौड़ मे जितनी आगे बढ़ी, समस्याएं भी उतनी ही बढ़ती चली गई। आज पश्चिमी विचारकों द्वारा भी समाधान भोग व हिंसा में नहीं त्याग अथवा संयम और अहिंसा अथवा करूणा में ही खोजा जा रहा है। जिन पश्चिमी विद्वानों ने जैन–दर्शन के मूल को समझ लिया है, उनके द्वारा शोधपरक साहित्य सामग्री प्रस्तुत की जा रही है, जो भविष्य में पश्चिमी लोगों का जैन दर्शन व संस्कृति के प्रति आकर्षण बढ़ाने में सहयोगी बन

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

सकेगी। अनेक विदेशी विश्वविद्यालयों में[vii] जैन दर्शन का अध्यापन तथा जैन सिद्धान्तों पर शोध होना वहां पर जैन दर्शन के विस्तार एवं प्रभाव का महत्त्वपूर्ण माध्यम बन रहा है।

सन्दर्भ–सूची

[i]. Jain Temple of Leicester, Potteobar in U.K., Siddhadalan in New Jersey, Jain Temple of Beegiven etc.

[ii]. www.vegetariantimes.com

[iii]. Shah, Natukhai, Jainism : the world of Conquerors, succec Academic Press, Brigheon, great britain, 1998, pp. 255,256

[iv]. jainismus.hubpages.com (Artizle-Jainism : An Inbroduetion to some western Jains by mahavir sangwkar)

[v]. www.herenow4unet

[vi]. Acharya Mahapragya, Training in Nonviolence : Theory and practice, ed. by S.L. Gandhi, Anuwrat Global Organization, 2009, p.21

[vii]. Jain Satish Kumar and K.C. Sogani (editor), Perspectives in Jain Philosophy and culture Ahimsa International, New Delhi, 1985, pp. 68-70. (Jain centre for studies at SOAS in London, Birnigham and demoulford Universities in UK Harvard University in USA, Antwerg University in Belgium.
Hawaian University etc.)

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

पाश्चात्य जगत पर जैन दर्शन का प्रभाव

डॉ. सत्यनारायण भारद्वाज
प्राकृत एवं संस्कृत विभाग, विभागजैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूँ

डॉ. सब्यसाची सारंगी
प्राकृत एवं संस्कृत विभाग, विभागजैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूँ

जैनदर्शन समर्थ एवं प्रभावशाली दर्शन है। कोई भी दर्शन शक्तिशाली अथवा प्रभावशाली इसलिए नहीं बनता कि उसके अनुयायियों की संख्या अधिक है बल्कि प्रभावशाली बनने की कसौटी है, उस दर्शन के सिद्धान्तों ने जनमानस को कितना प्रभावित किया है। जैन–दर्शन के अहिंसा, अनेकान्त और अपरिग्रह जैसे सर्वमान्य सिद्धान्तों ने इसे सार्वभौम धर्म बनने के सामर्थ्य से युक्त बना दिया। पश्चिम की भोगवादी संस्कृति ने जहां आधुनिक मानव को अनेक प्रकार की सुख–सुविधाएं प्रदान की वहीं उसे तनाव, अवसाद जैसी मानसिक बीमारियों रूग्ण भी बना दिया। अंततः विश्व की सभी संस्कृतियों को अपनी ओर आकर्षित करने वाली पाश्चात्य संस्कृति भी जैन संस्कृति के संयम, त्याग, समता, करूणा जैसे मूल्यों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकी।

प्रस्तुत लेख में उन मूल्यों एवं सिद्धानतों का पश्चिम में प्रचार–प्रसार कैसे हुआ इस वर्णन के साथ–साथ उन पश्चिमी व्यक्तियों का भी उल्लेख करने का प्रयास है जिनके व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व में जैनत्व मुखर है, जिन्होंने जैन–सिद्धान्तों को न केवल जीया है अपितु उसे जन–जन तक पहुंचाने का सफलतम प्रयास भी किया है अथवा कर रहे हैं।

जैन धर्म को पश्चिमी देशों में ले जाने का मुख्य श्रेय जाता है –वीरचंद गांधी को, जिन्होंने प्रथम बार 1893 में शिकांगों में आयोजित वर्ल्ड पार्ल्यामेण्ट ऑफ रिलिजियन्स में जैन दर्शन की प्रभावक प्रस्तुति देकर उत्तर अमेरिका तथा पूरे विश्व को जैनधर्म तथा दर्शन से परिचत कराया। विदेशी धरती पर जैन धर्म के नाम को ले जाने वाले विद्वानों की शृंखला में एक और महत्वपूर्ण व्यक्तित्व है –बैरिस्टर चम्पतराय जैन जिन्होंने इंग्लैण्ड की धरा पर जैन धर्म के प्रचार–प्रसार हेतु महत्वपूर्ण कार्य किये।

पश्चिमी संस्कृति का जैन दर्शन एवं संस्कृति से परिचय कराने में बहुत बड़ा योगदान उन जैन अनुयायियों का भी है जो 20वीं सदी के प्रारंभ में ही व्यापार, आजीविका आदि हेतु पश्चिम देशों में जा बसें। वर्तमान में करीब 200,000 जैन धर्मानुयायी भारत से बाहर रहते हैं एवं उनमें से अधिकतम लोगों का निवास स्थान अमेरिका तथा यूरोप है। वहां भौतिकता प्रधान संस्कृति के बीच रहते हुए भी जैन धर्मानुयायियों ने त्याग प्रधान आध्यात्मिक जैन संस्कृति को न केवल सुरक्षित रखा अपितु संवर्द्धित भी किया, जिसका परिणाम है –विदेशी धरती पर भी अनेक जैन केन्द्रों एवं मंदिरों की स्थापना।[प]

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

अमेरिका में प्रतिवर्ष आयोजित जैन सम्मेलन (Jaina Convention) के कुछ कार्यक्रम में 5000 से भी अधिक जैन भाई–बहनों के साथ विदेशी लोगों की सहभागिता भी इस बात को प्रमाणित करती है कि वहां के लोग जैन संस्कृति से प्रभावित है। विदेशी लोगों का शाकाहार के प्रति निरन्तर बढ़ता आकर्षण भी यही सिद्ध करता है कि जैनदर्शन के आधारभूत सिद्धान्त अहिंसा से वहां का जनमानस प्रभावित है। सांख्यिकी के अनुसार वर्तमान में अमेरिका की करीब 7.3 मिलियन (73 लाख) जनता शाकाहारी है। वहीं अन्य 22.8 मिलियन (2 करोड 28 लाख) लोग ऐसे है जिनका कहना है कि उनका आहार शकाहार सम (Vegetarian inclined) है और एक मिलियन (10 लाख) लोग ऐसे है जिनकी जीवनशैली विगन (vegan) है।[पप] विगेन जीवनशैली का तात्पर्य है –शाकाहारी होने के साथ–साथ पशुओं के द्वारा उत्पादित (animal product) किसी भी वस्तु का उपयोग न करना।

संस्कृति का साहित्य के साथ महत्वपूर्ण संबंध है। पाश्चात्य संस्कृति पर जैन दर्शन के प्रभाव का एक कारण वहां के विद्वानों की जैन साहित्य के प्रति आस्था एवं रूचि भी है। अनेक पाश्चात्य विद्वानों ने जैन साहित्य का गहन अध्ययन कर उसे आधुनिक स्वरूप में प्रस्तुत किया जिससे अन्य लोग भी इस समृद्ध साहित्य को पढ़ सके। जर्मनी के विद्वान हर्मन जेकोबी (1850–1937) ने चार आगम–ग्रन्थों का अंग्रेजी भाषा में अनुवाद किया जो "Saered Books of East" के नाम से विख्यात है। उनकी इस कृति ने अन्य अनेक विद्वानों जैसे Prof. Walther Schubring, Prof. Alsdorf Joseph, Norman Brown के भीतर भी जैन साहित्य एवं दर्शन को पढ़ने की जिज्ञासा पैदा की। Prof. Mausice Bllonfield, William Brown, Heinrich Zinned and Joseph Conpbell, A. Querinot आदि विद्वानों का भी जैन साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान है। Mrs. Sindair Stevensor द्वारा लिखित "The Heart of Jainisom" एवं R. Williams द्वारा लिखित "Jain Yoga" ब्रिटिश विद्वानों के वैदुष्यपूर्ण प्रकाशन है।[पपप]

वर्तमान में ऐसे अनेक विदेशी है, जो जैनदर्शन के विस्तार में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं, जो इटली की प्रसिद्ध गायिका Dandia Pastoriono ने जैन दर्शन से सम्बन्धित अनेक पुस्तकों का इटालियन भाषा में अनुवाद किया है जिनमें से एक महत्वपूर्ण पुस्तक है –समण सुत्तं। वर्तमान में वे पुश–अधिकार एवं शाकाहर पर कार्य कर रही है। जर्मनी के Patrick Krueger, Ceatre of Jain Studies - Freie University (Berlin) के संस्थापक नया विभागाध्यक्ष है। शैक्षणिक गतिविधियों के माध्यम से जैन धर्म–दर्शन के विस्तार के साथ–साथ सामान्य जनता के मध्य भी अहिंसा तथा जैन धर्म के सिद्धान्तों को फैलाने के लिए दृढ़ संकल्पित है। जर्मनी के Peter Finget भी लंदन में स्थित School of oriental and African Studies (SOAS) नामक विश्वविद्यालय में Report of the study of Religion के विभागाध्यक्ष है। और वहा जैन दर्शन के अध्यापन का कार्य भी करते हैं।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

French कहलाने वाले Pierre Amiel फ्रांस के निवृत Public Administrator है जिन्होंने 1998 में Lord Mahavira : Astudy in Historical Perspective का फ्रेंच भाषा मं अनुवद किया केनेडा के Dr. Robert नामक प्रसिद्ध विद्वान ने Moksha in Jainism, Jainism : Today and its Future आदि अनेक पुस्तकों को पश्चिमी जनता के सामने प्रस्तुत किया।[पअ]

फिल्म निर्माता, लेखक एवं पर्यावरण शास्त्री Dr. Michael Tobias ने ''अहिंसा'' पर एक ऐसी फिल्म बनायी जो अमेरिकन जनता के लिए प्रेरक बनी। इसके अलावा अन्य अनेक विदेशी विद्वान जिन्होंने जैन श्रावक का जीवन जीया है और कुछ तो ऐसे भी है जो वर्तमान में जैन श्रावक व्यक्तित्व की भूमिका में आते हैं – हर्बट वोरन इंग्लैण्ड के वे व्यक्ति है जिनकी 12 वृतों के प्रति गहरी आस्था थी और जिन्होंने पूर्ण श्रद्धा के साथ इन व्रतों का पालन किया। जर्मनी के Chrislzian और Carla एक ऐसा युगल है जो स्वयं का अपरिग्रह परिचय आचार्य महाप्रज्ञ द्वारा प्रदत्त नाम करूणा से ही देते हैं। उनका जीवन जैनधर्म के प्रचार–प्रसार के लिए समर्पित है और उन्होंने युगानुसार प्रचार–प्रसार का माध्यम बनाया है। इन्टरनेट को जिससे आज की युवा पीढ़ी जैन सिद्धान्तों को आसानी से जान सके।[अ] जर्मनी की Gabriel (गेब्रीयल) भी एक ऐसी महिला है जो जैन–धर्मानुयायियों के लिए भी आदर्श है। हिंसा के दोष से बचने हेतु स्थानान्तरण के लिए घास के उपर नहीं चलती, हवाई जहाज, कार, ट्रेन का उपयोग न कर साइकिल का उपयोग करती है।[अप] चाहे उसे लम्बा रास्ता ही तय क्यों न करना पड़े। पानी के उपर बने पूल का उपयोग नहीं करती क्योंकि उसका मानना है कि पूल पर से जाने से पानी के जीवों में भय पैदा होता है। आज पश्चिम में "Reverence for life" के सिद्धान्त का समर्थन हो रहा है। इसका कारण है, वहां की संस्कृति में भी अहिंसा के मूल्य को आंका जा रहा है।

जैन धर्म को विश्व के कोने–कोने तक पहुंचाने के लिए 20वीं शताब्दी में भारत प्रवासी अनेक जैन विद्वानों ने पश्चिमी देशों की यात्रा प्रारंभ की। इसी शताब्दी में एक क्रांतिकारी हुए –आचार्य तुलसी जैन धर्म की संयमप्रधान संस्कृति तथा सार्वभौमिक सिद्धान्तों को जन–जन तक पहुंचाने के लिए 1980 में एक से पहचानी जाने लगी। समण श्रेणी के सदस्यों की विदेश यात्रा ने पश्चिम में बसने वाले पश्चिमी लोगों को भी वर्तमान समय में जैन दर्शन की प्रसंगिकता से परिचित कराया। गुरु के आशीर्वाद एवं समण श्रेणी के सदस्यों के सार्थक परिश्रम से मायामी के प्रसिद्ध फ्लोरिड़ा इन्टरनेशनल विश्वविद्यालय में भी जैन दर्शन एवं अहिंसा तथा ध्यान सम्बन्धित पाठ्यक्रमों का अध्यापन प्रारंभ हुआ और वर्तमान में प्रगतिशील है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि पश्चिमी संस्कृति भौतिकता की दौड़ मे जितनी आगे बढ़ी, समस्याएं भी उतनी ही बढ़ती चली गई। आज पश्चिमी विचारकों द्वारा भी समाधान भोग व हिंसा में नहीं त्याग अथवा संयम और अहिंसा अथवा करूणा में ही खोजा जा रहा है। जिन पश्चिमी विद्वानों ने जैन–दर्शन के मूल को समझ लिया है, उनके द्वारा शोधपरक साहित्य सामग्री प्रस्तुत की जा रही है, जो भविष्य में पश्चिमी लोगों का जैन दर्शन व संस्कृति के प्रति आकर्षण बढ़ाने में सहयोगी बन

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

सकेगी। अनेक विदेशी विश्वविद्यालयों में[vii] जैन दर्शन का अध्यापन तथा जैन सिद्धान्तों पर शोध होना वहां पर जैन दर्शन के विस्तार एवं प्रभाव का महत्त्वपूर्ण माध्यम बन रहा है।

सन्दर्भ–सूची

[i]. Jain Temple of Leicester, Potteobar in U.K., Siddhadalan in New Jersey, Jain Temple of Beegiven etc.

[ii]. www.vegetariantimes.com

[iii]. Shah, Natukhai, Jainism : the world of Conquerors, succec Academic Press, Brigheon, great britain, 1998, pp. 255,256

[iv]. jainismus.hubpages.com (Artizle-Jainism : An Inbroduetion to some western Jains by mahavir sangwkar)

[v]. www.herenow4unet

[vi]. Acharya Mahapragya, Training in Nonviolence : Theory and practice, ed. by S.L. Gandhi, Anuwrat Global Organization, 2009, p.21

[vii]. Jain Satish Kumar and K.C. Sogani (editor), Perspectives in Jain Philosophy and culture Ahimsa International, New Delhi, 1985, pp. 68-70. (Jain centre for studies at SOAS in London, Birnigham and demoulford Universities in UK Harvard University in USA, Antwerg University in Belgium.
Hawaian University etc.)

ISSN 2394-5303

Printing Area®

Issue-114, Vol-03, June 2024
Peer Reviewed International Multilingual Research Journal

Editor
Dr.Bapu G.Gholap

27) भुजंग मेश्राम यांचे साहित्यविश्व
डॉ.सुलतान पिरू पवार, नंदुरबार ||132

28) राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० की समीक्षा
डॉ. आभा सिंह, लाडनूं, राजस्थान ||136

29) मीराचे पद आणि शास्त्रीय संगीत: एक अध्ययन
प्रा.एन.आर. बोंपिलवार, नांदेड ||140

30) गठबन्धन सरकारें एवम् भारतीय संघीय व्यवस्था के मध्य सकारात्मक सम्बन्ध ...
संजय कुमार शर्मा, डॉ. प्रवीन कुमार, बुलन्दशहर ||142

31) श्री अरविंद घोष के शैक्षिक दृष्टिकोण से पुनर्निर्माण
नीरज कुमार, डा०शैल ढाका, मोदीपुरम (मेरठ), इण्डिया ||149

32) माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण दक्षताओं का अध्ययन
अर्चना अटवाल, डा०शैल ढाका, मोदीपुरम (मेरठ), इण्डिया ||154

33) ब्रिटिश कालीन शिक्षण पद्धतीचे भारतीयांवरील परिणाम
डॉ. एस. यु. गावंडे, अमोल विश्वासराव तायडे, ता. कन्नड ||160

34) Cryptographic Applications of Number Theory
Prof. Hemant Gavde ||163

35) IMPORTANCE OF WOMEN ENTREPRENEURSHIP
Dr.Jeevanjyoti Nikalje, Dist.Jalna ||166

36) STUDY OF ATTITUDE TOWARDS COMPUTER TECHNOLOGY ON SECONDARY LEVEL ...
DR. KAUSER PARVEEN, SHIVAM KUMAR DWIVEDI, LUCKNOW ||169

www.vidyawarta.com/03 | http://www.printingarea.blogspot.com

बोलीभाषेतील कविता आणि त्याचे मराठीत केलेला अनुवाद ह्या गोष्टीही महत्त्वाच्या आहेत. कविता भुजंग मेश्राम यांच्या अभ्यासातून, संशोधनातून सिद्ध झालेल्या वैचारिक लेखांचे, आणि भाषणांचे संपादन करून निर्माण झालेल्या 'आदिवासी साहित्य आणि अस्मितावेध' हा ग्रंथ निश्चितच साहित्यात आदिवासी साहित्याची वैचारिक भूमिका मांडणारे आहे आदिवासींच्या अस्तित्वाची जाणीव करून देणारा आहे.

समृद्ध लोकपरंपरा आणि संपन्न बोलीभाषा असणाऱ्या आदिवासींचीय जगभर चालणाऱ्या दमनकारी, विनाशकारी शोषण व्यवस्थेच्या प्रक्रियेत त्यांचे अस्तित्व अबाधित राहावे, त्यांची बोलीभाषा आणि संस्कृतीविषयक अस्मिता जिवंत राहावी अशा प्रकारची भूमिका भुजंग मेश्राम 'आदिवासी साहित्य आणि अस्मितावेध' या ग्रंथातील लेखांमधून मांडतात. कालवश झालेले कवी भुजंग मेश्राम हे आदिवासी साहित्यातच नव्हेतर मराठी साहित्यातील एक अग्रणी साहित्यिक म्हणून ओळखले जातात.

संदर्भ :

१. मेश्राम भुजंग (संपादक शिलेदार प्रफुल्ल), 'आदिवासी साहित्य आणि अस्मितावेध', लोकवाङ्मय गृह, मुंबई, पहिली आवृत्ती, एप्रिल २०१४, प्रस्तावना ६ व १०.

२. तुनराम विनायक, 'आदिवासी साहित्य : स्वरूप आणि समीक्षा', प्रतिमा प्रकाशन पुणे, पहिली आवृत्ती २००७, पृ.२३७.

३. तुनराम प्रा.डॉ.विनायक (संपा.), 'शतकातील आदिवासी कविता', हरिवंश प्रकाशन चंद्रपूर, पहिली आवृत्ती २००३, पृ.१४३.

४. मेश्राम भुजंग, 'अभुज माड', लोकवाङ्मय गृह, मुंबई, पहिली आवृत्ती २००८, पृ.मलपृष्ठ.

५. उनि., तुनराम प्रा.डॉ.विनायक (संपा.), 'शतकातील आदिवासी कविता', पृ.३६.

६. भवरे महेंद्र, 'दलित कवितेतील नवे प्रवाह', शब्दालय प्रकाशन श्रीरामपूर, पहिली आवृत्ती २००१, पृ.६४.

७. उनि., मेश्राम भुजंग, 'अभुज माड', पृ.मलपृष्ठ.

□□□

28

राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० की समीक्षा

डॉ. आभा सिंह
सहायक आचार्य, शिक्षा विभाग,
जैन विश्व भारती संस्थान लाडनूं, राजस्थान

सारांश — राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० को भारत सरकार द्वारा २९ जुलाई २०२० को घोषित किया गया । १९८६ में जारी हुई नई शिक्षा नीति के बाद भारत की शिक्षा नीति में यह पहला नया परिवर्तन है । समय के साथ सामाजिक आर्थिक प्रौद्योगिकी सभी क्षेत्रों में तेजी से परिवर्तन हुआ है और इस परिवर्तन के साथ देश को विकास के पथ पर ले जाने हेतु हमारी शिक्षा प्रणाली में भी बदलाव की आवश्यकता थी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० आने के बाद देश में शिक्षा पर व्यापक चर्चा प्रारंभ हो गई है। क्या राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० शिक्षा के उद्देश्यों को पूरा करने में सक्षम होगी जिसका स्वप्न गांधी जी एवं स्वामी विवेकानंद ने देखा था।

प्रस्तावना—

बदलते वैश्विक परिदृश्य में तकनिकी एवं औद्योगिक आधारित अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु, शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने, शिक्षा में नवाचारो एवं अनुसन्धानो को बढ़ावा देने तथा भारतीय शिक्षा व्यवस्था को वैश्विक स्तर तक ले जाने हेतु मोजूदा शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन की आवश्यकता थी। ऐसे में वर्तमान सरकार ने शिक्षा तक सबकी आसान पहुच, समता, गुणवत्ता और वहनीयता, और उत्तरदायित्व जैसे आवश्यक तथ्यों को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रिय शिक्षा नीति २०२० को २९ जुलाई २०२० मंजूरी दे दी।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० की प्रमुख बातें —

१ राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० के तहत वर्ष २०३०

तक सकल नामांकन अनुपात को १००% तक लाने का लक्ष्य रखा गया है।

२ शिक्षा नीति के अंतर्गत शिक्षा क्षेत्र पर सकल घरेलू उत्पाद के ६% हिस्से के सार्वजनिक व्यय का लक्ष्य रखा गया है।

३ मानव संसाधन मंत्रालय का नाम परिवर्तित कर शिक्षा मंत्रालय कर दिया गया है।

४ पांचवी कक्षा तक की शिक्षा में मातृभाषा ध्स्थानीय या क्षेत्रीय भाषा को शिक्षा के माध्यम के रूप में अपनाने पर बल दिया गया है, साथ ही मातृभाषा को कक्षा ८ और आगे की शिक्षा के लिए प्राथमिकता देने का सुझाव दिया गया है।

५ देश के उच्च शिक्षा संस्थानों के लिए भारतीय उच्च शिक्षा परिषद नामक एक एकल निकाय की परिकल्पना की गई है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० में स्कूली शिक्षा संबंधी प्रावधान—

१) राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० में स्कूली शिक्षा को ५+३+३+४ डिजाइन वाले शैक्षणिक संरचना का प्रस्ताव किया गया है जो ३ से १८ वर्ष की आयु वाले बच्चों को शामिल करता है।

२) पांच वर्ष के फाउंडेशन स्टेज— ३ साल का प्री प्राइमरी स्कूल और ग्रेड १एवम २

३) ३ वर्ष का प्रीप्रिपेट्री स्टेज

४) ३ वर्ष का मध्य या उच्च प्राथमिक चरण —ग्रेड ६, ७, ८

५) ४ वर्ष का उच्च या माध्यमिक चरण— ग्रेड ९,१०, ११,१२

भाषा से सम्बंधित प्रावधान —

कक्षा ५ तक की शिक्षा में मातृभाषा/स्थानीय या क्षेत्रीय भाषा को शिक्षा के माध्यम के रूप में अपनाने पर जोर दियागया है, मातृभाषा को कक्षा ८ से और आगे की शिक्षा के लिए प्राथमिकता देने का सुझाव दिया गया है।

विद्यालयी एवं उच्च शिक्षा में छात्रों के लिए संस्कृत और अन्य प्राचीन भारतीय भाषाओं का विकल्प उपलब्ध होगा परंतु छात्र पर भाषा के चुनाव के कोई बाध्यता नहीं होगी। छात्र शिक्षा का माध्यम चुनने को स्वतंत्र होगा।

सभी स्तरों की शिक्षा में शारीरिक शिक्षा अनिवार्य होगी, जिसमे खेल कूद, योग, नृत्य, बागबानी, मार्शल आर्ट जैसी शारीरिक गतिविधिया शामिल होंगी।

पाठ्यक्रम और मूल्यांकन संबंधी सुधार हेतु प्रावधान —

कक्षा ६ से ही शैक्षणिक पाठ्यक्रम में व्यावसायिक शिक्षा को शामिल कर दिया जाएगा और इसमें इंटर्नशिप की व्यवस्था भी की जाएगी।

कक्षा १० और कक्षा १२ की परीक्षा में बदलाव किया जाएगा इसमें भविष्य में सेमेस्टर या बहुविकल्पीय प्रश्न आदि जैसे सुधारो को शामिल किया जा सकता है।

छात्रों की प्रगति के मूल्यांकन के लिए मानक निर्धारक निकाय के रूप में परख (PARAKH) नामक एक नए राष्ट्रीय आकलन केंद्र की स्थापना की जाएगी।

छात्रों की प्रगति के मूल्यांकन तथा छात्रों को अपने भविष्य से जुड़े निर्णय लेने में सहायता प्रदान करने के लिए artificial intelligence आधारित सॉफ्टवेयर का प्रयोग किया जाएगा।

शिक्षण व्यवस्था से संबंधित सुधार हेतु प्रावधान—

शिक्षकों की नियुक्ति में प्रभावी और पारदर्शी प्रक्रिया का पालन तथा समय—समय पर किए गए कार्य प्रदर्शन के आकलन के आधार पर पदोन्नति।

राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद द्वारा वर्ष २०२२ तक शिक्षकों के लिए राष्ट्रीय व्यावसायिक मानक का विकास किया जाएगा।

राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद द्वारा एनसीईआरटी के परामर्श के आधार पर अध्यापक शिक्षा हेतु राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा का विकास किया जाएगा।

वर्ष २०३० तक अध्यापन के लिए न्यूनतम डिग्री योग्यता ४ वर्षीय एकीकृत बीएड डिग्री का होना अनिवार्य किया जाएगा।

उच्च शिक्षा से संबंधित प्रावधान—

राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० के तहत को

शिक्षण संस्थानों में सकल नामांकन अनुपात को ५०% तक करने का लक्ष्य रखा गया है इसके लिए उच्च शिक्षण संस्थानों में ३.५ करोड़ नई सीटो को जोड़ा जायेगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० के तहत स्नातक पाठ्यक्रम में मल्टीपल एंट्री एंड एग्जिट व्यवस्था को अपनाया गया है। इसके तहत ३ या ४ वर्ष के स्नातक कार्यक्रम में छात्र कई स्तरों पर पाठ्यक्रम को छोड़ सकेंगे और उन्हें उसी के अनुसार डिग्री या प्रमाण पत्र दिया जाएगा–

१ वर्ष के बाद प्रमाण पत्र, २ वर्ष के बाद एडवांस डिप्लोमा, ३ वर्षों के बाद स्नातक की डिग्री तथा ४ वर्षों के बाद शोध के साथ स्नातक की डिग्री विद्यार्थी को मिलेगी।

विभिन्न उच्च शिक्षण संस्थानों से प्राप्त अंकों या क्रेडिट को डिजिटल रूप से सुरक्षित रखने के लिए एक एकेडमिक बैंक आफ क्रेडिट दिया जाएगा ताकि अलग–अलग संस्थानों में छात्रों के प्रदर्शन के आधार पर उन्हे डिग्री प्रदान की जा सके।

नई शिक्षा नीति के तहत एमफिल कार्यक्रम को समाप्त कर दिया गया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० के क्रियान्वयन में आने वाली चुनौतियाँ–

१९८६ की शिक्षा नीति के ३४ वर्ष उपरांत नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति लाई गई है। समय के साथ सामाजिक आर्थिक प्रौद्योगिकी सभी क्षेत्रों में तेजी से परिवर्तन हुआ है और इस परिवर्तन के साथ देश को विकास के पथ पर ले जाने हेतु हमारी शिक्षा प्रणाली में भी बदलाव की आवश्यकता थी। लम्बे समय से हमारी शिक्षा व्यवस्था में भारी में कमी महसूस की जा रही थी। शिक्षा किसी भी देश और समाज के विकास का मुख्य आधार होती है शिक्षा के द्वारा ही किसी देश समाज का तीव्र विकास किया जा सकता हैइसी को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० में कई महत्वपूर्ण एवं अनुकरणीय सुझाव दिए गए है।

इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति का विश्लेषण करने पर हम देखते हे की यह राष्ट्रीय शिक्षा नीति रोजगार के नए अवसर प्रदान करती है सिखने में नवाचारों को प्रोत्साहित करता है शिक्षा के क्षेत्र में गुणात्मक अभिवृद्धि के रूप में देखा जा सकता है तो इसके क्रियान्वयन में आने वाली चुनौतियों को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के क्रियान्वयन की कुछ चुनौतियां रहेगी जैसे

शिक्षा समवर्ती सूचि का विषय है, इसलिए सभी राज्यों में अपने विद्यालयी शिक्षा बोर्ड है। ऐसे में सभी राज्यों को भी अपने राज्यों के शिक्षा बोर्ड पाठयक्रम में भारी परिवर्तन करने होंगे किन्तु शिक्षा निति को लागु हुए ४ वर्ष से अधिक होने को है किन्तु कुछ राज्यों ने ही अभी तक इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति को अपने राज्यों में लागु किया है। ऐसे में २०३० तक इस नीति के लक्ष्य को प्राप्त करना कठिन होगा।

विद्यालय शिक्षा को ५+३+३+४ पर डिजाइन किया गया हैजिसमें फाउंडेशन स्तर पर ५ वर्ष(३–८ वर्ष) ३ वर्ष प्री स्कूल तथा कक्षा एक एवं दो को सम्मिलित किया गया है। प्रिपेरटॉरी स्तर पर कक्षा ३ से ५ मिडिल स्तर कक्षा ६ से ८ सेकण्डरी स्तर तक पर ४ वर्ष कक्षा ९ से १२ तक रखा गया है। ८ वर्ष तक के बच्चों को किसी भी प्रकार की परीक्षा नहीं देनी होगी यह बहुत ही महत्वपूर्ण तथ्य है इससे बच्चों को पढ़ाई को लेकर कोई मानसिक तनाव नहीं रहेगाद्य किन्तु इससे छात्रो में पढाई को लेकर गंभीरता खत्म होने की सम्भावना बनी रहेगी।

प्राथमिक स्तर पर शिक्षा का माध्यम मातृभाषा/क्षेत्रीय भाषा में ही रहेगा किसी भी विद्यार्थी पर कोई भाषा अध्यारोपित नहीं की जा सकेगी,किंतु कुछ विद्वानों का मत है कि अंग्रेजी भाषा वैश्विक भाषा है यदि प्रारंभ से ही बालक अंग्रेजी भाषा का अध्ययन नहीं करेगा तो उच्च कक्षाओं में अंग्रेजी भाषा सीखने में उसे दिक्कत आएगी चाहे नौकरी हो या अन्य कोई कार्य उसमें अंग्रेजी की महत्ता को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता है। यदि बालक अपने शिक्षा के शिक्षा के प्रारंभिक सालो में अंग्रेजी नहीं सीख रहा है तो वह क्या आसानी से अंग्रेजी सीख पाएगा इस पर विचार किया जाना आवश्यक है।

वही दक्षिण भारतीय राज्यों का यह आरोप है की त्रि–भाषा सूत्र से सरकार शिक्षा का संस्कृतिकरण

करने का प्रयास कर रही है। पूर्व मे भी शिक्षा के माध्यम को लेकर दक्षिण भारतीय राज्य विरोध करते रहे है ऐसे में शिक्षा नीति का विरोध संभव है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० के क्रियान्वयन में एक बड़ी चुनौती जीडीपी का लगभग ६% खर्च किया जाना है, पूर्व में ३% से भी कम खर्च किया जा रहा है तो क्या अब जीडीपी का ६% खर्च किया जाना वास्तव में धरातल पर यह संभव नहीं जान पड़ता है। कोठारी कमीशन (१९६४) में भी जीडीपी का ६% तक शिक्षा पर खर्च किए जाने का प्रावधान दिया था किंतु वह अभी तक संभव नहीं हो पाया है।

राष्ट्रीय टेस्टिंग एजेंसी द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर परीक्षा आयोजित कर देश के सभी विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय में प्रवेश दिया जाएगा तथा समस्त विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय का अलग से अपनी परीक्षा आयोजित नहीं करवा पाएंगे यह एक अच्छी शुरुआत है किंतु शिक्षा समवर्ती सूची का विषय है अत: अलग—अलग राज्य और क्षेत्रवाद भी विभिन्नता से विवाद उत्पन्न होने की संभावना बनी रहेगी।

स्नातक स्तर पर मल्टी डिसीप्लिनरी लागू करना नवाचार है या मनोविज्ञान पर आधारित है इसमें अपनी रुचि का विषय चयन करने पर विद्यार्थी ज्यादा गहनता से अध्ययन कर सकेंगे, अध्ययन में रुचि बनी रहेगी तथा व्यावसायिक तौर पर भी अधिक सफल होंगे किंतु शिक्षा का उद्देश्य केवल उन्हें व्यावसायिक तौर पर तैयार करना नही है अत:उनके सामाजिक संवेगात्मक भावात्मक विकास,नैतिक विकास हेतु कुछ अन्य विषय जैसे पर्यावरण शिक्षा, लैंगिक शिक्षा, स्त्री शिक्षा जैसे विषयों का भी समावेश किया गया हैं किंतु संभावना इस बात की है कि यह सभी विषय जो व्यावसायिक रूप से उपयोगी नहीं है किंतु विद्यार्थियों में जागरूकता फैलाने हेतु पढ़ाया जाना आवश्यक है उनका बालक चयन कम करेंगे । इस प्रकार के विषयों का चयन विद्यार्थियों द्वारा काम किया जाएगा।

माध्यमिक स्तर पर वर्तमान में नामांकन ६८% तथा उच्च स्तर पर २५.८% है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० में माध्यमिक स्तर पर नामांकन १००% प्रतिशत तथा उच्च शिक्षा में नामांकन ५०% तक रखा जाने का लक्ष्य रखा गया है ऐसे में माध्यमिक स्तर पर ड्रॉप आउट बच्चों की संख्या को रोकना एक महत्वपूर्ण चुनौती रहेगी।

नई शिक्षा नीति में विदेशी विश्वविद्यालयों में प्रवेश का मार्ग प्रशस्त किया गया है। विभिन्न शिक्षाविदो का मानना है की यदि भारत में विदेशी विश्व विद्यालो को प्रवेश दिया गया तो भारतीय शिक्षा व्यवस्था के महंगी होने की सम्भावना रहेगी। ऐसे मे गरीब विद्यार्थियों के लिए उच्च शिक्षा प्राप्त करना मुश्किल हो जायेगा। **निष्कर्ष** के तौर परहम कह सकते है कि जहां राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० भारतीय शिक्षा प्रणाली में गुणवत्ता का संवर्धन करेगी। विद्यार्थियों में रोजगार के नए अवसर उपलब्ध करवाएगी,भारतीय संस्कृति एवं इतिहास के संवर्धन का कार्य करेगी। भारत को एक विकसित राष्ट्र के पथ पर तीव्र गति से ले जाने का कार्य करेगी वहीं इस शिक्षा नीति को लागू करने में अनेक चुनौतियां हैं चुनौतियां भी ऐसी जिनका निराकरण किया जाना अनिवार्य है। इस शिक्षा नीति के सकारात्मक पक्षों को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति को पूरी तरह से संपूर्ण भारत में लागू किए जाने पर ध्यान दिया जाना उचित रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ

१ राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२०, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार

२ राठोड, डॉ. अमित सिंहएवं सिंह, डॉ.आभा (२०२३), राष्ट्रीय शिक्षा नीतिऔर आत्मनिर्भर भारत के उभरते प्रतिमान, गंगा प्रकाशन, दिल्ली।

३ रंजीत जगरिया एवं अनुभा शर्मा, राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२०, अवसर और चुनौतियां, http:www.socialalresearchfoundation.com/innovation.php#8

https://www.drishtiias.com/hindi/daily-news-editorials

❑❑❑

International Peer Reviewed,Referred,Indexed,Multidisciplinary, Multilingual,Monthly Research Journal

Month - December - 2023 Vol - I Issue -XII

ISSN (P) : 2250-2556
ISSN (E) : 2320-5458
Impact Factor : SJIF- 6.176

International Research and Review

Editor

Neha Singh

Published By

Captain Netram Singh Charitable Trust

Published By
Captain Netram Singh Charitable Trust,

www.ugcjournal.com/IRR

मुख्य सम्पादक का मानद पद कार्य पूर्णतः अवैतनिक है।

इस शोध पत्रिका के प्रकाशन, सम्पादन मुद्रण में पूर्णतः सावधानी बरती गई है। किसी भी प्रकार की त्रुटि महज मानवीय भूल मानी जाये।

शोध पत्र की समस्त जिम्मेदारी शोधपत्र लेखक की होगी।उक्त जर्नल में प्रकाशन हेतु भेजे गए पेपर सामग्री का सम्पूर्ण नैतिक दायित्व पेपर लेखक का होगा। मुख्य संपादक ,प्रकाशक ,मुद्रक , पिअर रिविव्यु मंडल जिम्मेदार नहीं होगा। लेखकों से अनुरोध है किसी भी प्रकार की साहित्यिक चोरी न करें।

समस्त विवादों का न्याय क्षेत्र जयपुर शहर ही होगा।

1. Editing of the research journal is processed without any remittance. **The selection and publication is done after recommendation of Peer Reviewed Team, Refereed and subject expert Team.**
2. Thoughts, language vision and example in published research paper are entirely of author of research paper. It is not necessary that both editor and editorial board are satisfied by the research paper. **The responsibility of the matter of research paper is entirely of author.**
3. Along with research paper it is compulsory to sent Membership form and copyright form. Both form can be downloaded from website i.e. **www.ugcjournal.com**
4. In any Condition if any National/International university denies to accept the research paper published in the journal then it is not the responsibility of Editor, Publisher and Manangement.
5. Before re-use of published research paper in any manner, it is compulsory to take written acceptance from Chief Editor unless it will be assumed as disobedience of copyright rules.
   In case of plagiarism, the entire moral responsibility of the paper material will rest with the author only.
6. **The entire moral responsibility of the paper material sent for publication in the said journal will be that of the paper author. Chief Editor, Publisher, Printer, Peer Review and Refereed Board will not be responsible.**

Authors are requested not to do any kind of plagiarism

7. All the legal undertaking related to this research journal are subjected to be hearable at jaipur jurisdiction only.

International Research and Review

EDITORIAL BOARD OF OUR JOURNALS

Patron

Prof. Dr. Alireza Heidari
Full Professor And Academic Tenure, USA

Chief Editor

NEHA SINGH
Dr.Krishan Bir Singh

Associate Chief Editor

Ravindrajeet Kaur Arora
S. Bal Murgan
Dr. Sandeep Nadkarni
Dr. A Karnan
Dr. S.R. Boselin Prabhu
Deepika Vodnala
Dr. Kshitij Shinghal
Christo Ananth
Gopinath Palai
Dr. Neeta Gupta
Dr. Vinita Shukla
Harold Jan R. Terano
Dr Sajid Mahmood
Dr Pavan Mishra

Editor

Dr.H.B.Rathod
Dr.Kishori Bhagat
Dr. Mohini Mehrotra
Dr. Arvind Vikram Singh
Dr. Suresh Singh Rathore
Bindu Chauhan
Kamalnayan. B. Parmar
Dr.sanjay B Gore
Dr. A.karnan
Dr.amita Verma
Dr . Ity Patni
Dr. Somya Choubey
Dr.surinder Singh
Dr. Manoj S. Shekhawat,
Dr. Anshul Sharma
Dr. Ramesh Kumar Tandan
S N Joshi
Dr. Sant Ram Vaish
Dr. Vinod Sen
Dr. Sushila Kumari
Dr Indrani Singh Rai
Dr Abhishek Tiwari
Prof.S.K.Meena
Prof.Praveen Goswami
G Raghavendra Prasad

International Advisory Board

Aaeid M. S. Ayoub
Geotechnical Environmental Engineering
Uqbah bin Muhammad Iqbal
Postgraduate Researcher
Badreldin Mohamed Ahmed Abdulrahman
Associate Professor
Dr. Alexander N. LUKIN
Principal Research Scientist & Executive Director
Dr. U. C. Shukla
Chief Librarian and Assistant Professor
Dr. Abd El-Aleem Saad Soliman Desoky
Professor Assistant
Prof. Ubaldo Comite
Lecturer
Moustafa Mohamed Sabry Bakry
Dr Sajid Mahmood
Shameemul Haque

International Research and Review

Dr. Dnyaneshwar Jadhav
Akshey Bhargava
Dr. A. Dinesh Kumar
Dr. Pintu Kumar Maji
Dr Hanan Elzeblawy Hassan
Sandeep Kumar Kar
Dr.R.devi Priya
Dr.P.Thirunavukarasu
Dr. Srijit Biswas
Parul Agarwal
Dr. Preeti Patel
Archana More
Dr. Harish N
Dr. Seema Singh
Dr. Ram Singh Bhati
Dr. Pankaj Gupta
Dr Arvind Sharma
Dr. Ramesh Chandra Pathak

Dr. Ankush Gautam
Dr Markandey Dixit
Dr. Manoj Kumar
Ratko Pavlovi, Phd
Dr.S.Mohan
Dr Ramachandra C G
Dr.Sivakumar Somasundaram
Dr. Sanjeev Kumar
Dr. Padma S Rao
Dr Munish Singh Rana
Dr. Piyush Mani Maurya

Associate Editor

Dr. Yudhvir Redhu
Dr.Kiran B.R
Dr Richard Remedios
Dr. R Arul
Anand Nayyar
Dr . Ekhlaque Ahmad
Dr. Snehangsu Sinha
Dr Niraj Kumar Singh

Sandeep Kataria
Dr Abhishek Shukla
Somesh Kumar Dewangan
Amarendra Kumar Srivastav
Dr K Jayalakshmi
Dilip Kumar Jha

Assistant Editor

Jasvir Singh
Dr.pintu Kumar Maji
Dr. Soumya Mukherjee
Prof Ajay Gadicha
Ashutosh Tiwari
Gyanendra Pratap Singh
Jitendra Singh Goyal
Ashish Jaiswal
Hiten Barman
Dr. Priti Bala Sharma

Subject Expert

Dr. Jitendra Arolia
Dr. Suresh Singh Rathore
Dr.kishori Bhagat
Dr Mrs Vini Sharma
Ranjan Sarkar
Chiranji Lal Parihar
Dr. Lalit Kumar Sharma
Dr Amit Kumar
Santosh Kumar Jha
Dr . Ekhlaque Ahmad
Naveen Kumar Kakumanu
Dr. Chitra Tanwar
Jyotir Moy Chatterjee
Somesh Kumar Dewangan
Raffi Mohammed
Dr. Sunita Arya
Dr. Ram Singh Bhati
Dr. Janak Singh Meena
Dr. Neha Kalyani

International Research and Review

Dr. Rajeev Nayan Singh
Dr. Pankaj Rathore
Dr. Mahendra Parihar
Pradip Kumar Mukhopadhyay
Dr Vijay Gaikwad

Research Paper Reviewer

Dr. B H Kirdak
Amit Tiwari
Dr Dheeraj Negi
Dr. Shailesh Kumar Singh
Dr. Meeta Shukla

Dr. Ranjana Rawat
Sonia Rathi
Dr.Anand Kumar
Dr.Pardeep Sharma
Anil Kumar
Dr. Deepa Dattatray Kuchekar
Dr Ade Santosh Ramchandra

Guest Editor

Dr. Lalit Kumar Sharma
Dr. Falguni S. Vansia

Chief Advisory Board

Ashok Kumar Nagarajan

Advisory Board

Dr. Naveen Kumar
Manoj Singh Shekhawat
Pranit Maruti Patil
Vishnu Narayan Mishra

international Research and Review

International Research And Review

ISSN(P) : 2250-2556
ISSN(E) : 2320-5458
Impact Factor : 6.176(SJIF)

Issue- December-2023

Research Paper - Education

international Research and Review

आर्थिक विकास में महिलाओं का योगदान

प्रो. बी. एल. जैन
विभागाध्यक्ष, शिक्षा विभाग,
जैन विश्व भारती संस्थान लाडनूं (राज.)

डॉ अमिता जैन
सहायक आचार्य, शिक्षा विभाग,
जैन विश्व भारती संस्थान लाडनूं (राज.)

सारांश–

महिलाएँ प्रत्येक क्षेत्र में अग्रणी भूमिका का निर्वहन कर रही हैं और वर्तमान में महिलाओं ने एक सशक्त नारी की छवि स्थापित की है। महिलाओं की आर्थिक भागीदारी के बिना देश की प्रगति, उन्नति एवं समृद्धि संभव नहीं है। सरकार भी महिलाओं को आर्थिक क्षेत्र से जोड़ने हेतु उनका प्रशिक्षण, बाजारों से वस्तुओं का विनिमय, उद्योग खोलने हेतु ऋण उपलब्धता आदि अनेक सहयोग प्रदान किये जा रहे हैं। आज अर्थ के अनेक क्षेत्रों में महिलायें सहयोग से अग्रिम भूमिका की ओर बढ़ रही है। आज दलित, पिछड़ी, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, ग्रामीण महिलाओं के विकास पर जोर देने की आवश्यकता है। वे अपने घर में भोजन बनाने, कपड़े धोने, बच्चे पालने तक अपने को सीमित मानती है। काफी महिलाएं शिक्षा के द्वार पर नहीं पहुंच पाई है, उनका आर्थिक विकास छोटे–छोटे लघु उद्योगों से किया जा सकता है। उनके अंदर हुनर है लेकिन हुनर को प्रकट करने का परिवेश नहीं है।

मूल शब्द–व्यावसायिक स्थिति, आर्थिक भागीदारी, महिला शिक्षा,लघु उद्योग

प्रस्तावना–

भारत सरकार ने नारी शक्ति का संवर्धन करने हेतु अनेक उद्यमिता कार्यक्रम संचालित किए हैं। महिलाओं की आर्थिक भागीदारी के बिना देश की प्रगति, उन्नति एवं समृद्धि संभव नहीं है। सरकार भी महिलाओं को आर्थिक क्षेत्र से जोड़ने हेतु उनका प्रशिक्षण, बाजारों से वस्तुओं का विनिमय, उद्योग खोलने हेतु ऋणउपलब्धता आदि अनेक सहयोग प्रदान किये जा रहे हैं। आज अर्थ के अनेक क्षेत्रों में महिलायें सहयोग से अग्रिम भूमिका की ओर बढ़ रही है। भारत की महिलाओं का कार्य सहभागिता अनुपात 25% है, उसे आगे बढाने का प्रयास हमें निरंतर करना है। एमएसएमई महिलाओं के विकास में मूल्य संवर्धन, रोजगार सृजन, आय की समानता, क्षेत्रीय असमानताओं से मुक्त कर आर्थिक, सामाजिक विकास में प्रगति करता है। 27 जनवरी 2023 तक एमएसएमई में कुल रोजगार के 23.59% रोजगार सृजित हुए हैं। महिला उद्यमिता के अंतर्गत महिला दस्तकारी, मधुमक्खी पालन,पॉटरी, चमड़े का सामान बनाना, फल और सब्जियों के प्रसंस्करण,बेकरी पाठ्यक्रम, टेलरिंग, सिलाई–कढ़ाई (एंब्रॉयडरी), सर्फ बनाना, साबुन बनाना, ब्यूटीशियन कोर्स करना, नए क्षेत्रों में कार्य उत्पादन बढ़ाना, सूक्ष्म,लघु, मध्यम उद्योग खोलना, मैन्युफैक्चरिंग का काम आदि। आज दलित, पिछड़ी, अनुसूचित जाति,अनुसूचित जनजाति, ग्रामीण महिलाओं के विकास पर जोर देने की आवश्यकता है। वे अपने घर में भोजन बनाने, कपड़े धोने, बच्चे पालने तक अपने को सीमित मानती है। काफी महिलाएं शिक्षा के द्वार पर नहीं पहुंच पाई है, उनका आर्थिक विकास छोटे–छोटे लघु उद्योगों से किया जा सकता है। उनके अंदर हुनर है लेकिन हुनर को प्रकट करने का परिवेश नहीं है। हुनर प्रकट करने के कार्यक्रम, मेले, प्रशिक्षण आदि आयोजित करने चाहिए। भारत सरकार, राज्य सरकारें भी इस प्रकार पिछड़ी हुई महिलाओं के विकास को समृद्ध बनाने हेतु कार्यक्रम आयोजित करती है ताकि विकास के कदम में वे भी अपना हाथ बढ़ावें। आर्थिक कारण से वह उद्योग नहीं खोज पाती हैं तो सरकार उनको ऋण उपलब्ध कराती है ताकि वे अपना आर्थिक विकास कर सके। इन महिलाओं को कार्यबल में अग्रसर करना, उनके मन मुताबिक रोजगार दिलाना, समर्थन एवं प्रोत्साहन देना, उत्पाद के क्षेत्र में, अक्षम ऊर्जा के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास करना, कृषि के नवाचारों से भी ओतप्रोत कराना, फसल प्रबंधन, खाद्य सुरक्षा से जागरुक करना आदि कार्य आर्थिक कारण हेतु किये जा रहे है।

नारियों का देश की अर्थव्यवस्था में प्राचीनकाल से ही किसी–न–किसी रूप में योगदान रहा है। नारियों के आर्थिक एवं उत्पादक कार्यों का निर्धारण मानव सभ्यता के प्रारम्भिक काल से ही चला रहा है। यद्यपि नारियाँ

International Research and Review

शिकार करने नहीं जाती थीं, लेकिन उनको परिवार में ही रहकर विभिन्न कार्य जैसे अनाज साफ करना व उसे काटना, छानना, पीसना आदि प्रमुख थे। पशुपालन युग प्रारम्भ हुआ तो उसमें भी महिलाओं को अनेक घरेलू कार्य करने पड़ते थे जिनमें पशुओं की देखभाल करना, दूध से अनेक व्यंजन बनाना, पशुओं की सेवा टहल करना आदि प्रमुख थे। इसके बाद जब कृषि युग आया तब महिलाओं को जो विभिन्न घरेलू कार्य करने पड़ते थे उनमें घर में कपड़ा बुनना, मिट्टी के बर्तन बनाना, टोकरियाँ बनाना तथा कूटना–पीसना आदि प्रमुख थे।

1. औद्योगिक क्रान्ति का प्रभाव– औद्योगिक क्रान्ति ने महिलाओं की आर्थिक स्थिति को भी प्रभावित किया। इसका प्रभाव यह हुआ कि महिलाओं ने पारिवारिक सीमाओं का परित्याग करके घर से बाहर भी कार्य करना प्रारम्भ कर दिया, क्योंकि औद्योगिक जगत में महिलाओं को अब श्रम करने के अधिक अवसर प्राप्त होने लगे। जिस समय उन्नीसवी शताब्दी का समापन हुआ तो उस समय सम्पूर्ण महिलाओं का वर्ग 'श्रमजीवी वर्ग' के रूप में अपना स्थान ग्रहण कर चुका था। उस समय श्रमिक महिलाओं की स्थिति का प्रतिशत विभिन्न देशों में इस प्रकार था–अमेरिका में 33%, जर्मन में 36%, पोलैण्ड में 44.8%, रूस में 45% तथा भारत में 27% जो विभिन्न व्यवसायों में आज भी व्यापक रूप से कार्यरत हैं।

2. भारतीय महिलाओं की व्यावसायिक स्थिति– यद्यपि भारत में महिलाओं के घरेलू कार्यों का निर्धारण प्राचीन काल में ही हो गया था, लेकिन इन कार्यों में महिलाओं की सहभागिता में उन्नीसवी सदी के अन्तिम चरण में काफी तेजी आ गयी थी, जिसका प्रभाव समाज के प्रत्येक वर्ग की महिलाओं पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित हुआ। इसका विवरण इस प्रकार है–

(i) निम्न वर्गीय महिलाओं के प्रमुख कार्य:– जब औद्योगिक क्रान्ति का समापन हुआ तो उस समय महंगाई अपनी चरम सीमा पर थी। इस महँगाई के कारण समाज की निम्नवर्गीय महिलाओं को परिवार से निकलकर विभिन्न व्यावसायिक कार्य करने पड़े। इस वर्ग की महिलाओं के प्रमुख कार्यखेतों का जोतना, पत्थर की खानों तथा चाय के बागानों में चाय की पत्तियां निकालना आदि था।

(ii) मध्यम वर्गीय महिलाओं के प्रमुख कार्य:– भारतीय व्यवसायों में मध्यम वर्गीय महिलाओं का प्रवेश काफी समय बाद हुआ। इस सम्बन्ध में सुप्रसिद्ध समाजशास्त्री **श्री पी० सेन गुप्ता** ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि "महिला शिक्षा को गति प्रदान करने के लिए और महिलाओं को आर्थिक रूप से अपने पैरों पर खड़ा करने के लिए सर्वप्रथम शिक्षक के धन्धे का द्वार खुला।"महिलाओं का दूसरा प्रमुख कार्य परिचारिकाका कार्य था। इसीलिए ब्रिटिश सरकार द्वारा स्त्रियों को सन् 1875–76 ई० में 'परिचारिका' का प्रमुख रूप से प्रशिक्षण दिया गया। महिलाओं की व्यावसायिक गतिविधियाँ देश के आर्थिक विकास के साथ–साथ बढ़ती चली गई।जैसे–जैसे शैक्षिक प्रचार होता गया वैसे–वैसे सरकार के प्रशिक्षणयुक्त व्यवसायों में महिलाओं की सहभागिता में उत्तरोत्तर वृद्धि होने लगी। सन् 1920 में महिलाओं ने व्यावसायिक क्षेत्र में अपना एक निश्चित स्थान बना लिया था। स्वतन्त्र भारत में भी मध्यम वर्गीय महिलाओं के कार्य करने के अधिकार को मान्यता प्रदान की गयी तथा उनकी विभिन्न समस्याओं को ध्यान में रखते हुए सरकार द्वारा विभिन्न कानून पारित किए गए। मध्यम वर्गीय महिलाओं द्वारा किए जाने वाले प्रमुख कार्यों का विवरण **श्रीमति पी० सेन गुप्ता** ने अपनी 'वीमेन वर्कर्स ऑफ इण्डिया' में निम्न प्रकार प्रस्तुत किया है–

1. शैक्षिक कार्य: – मध्यम वर्गीय महिलाओं का सबसे प्रथम व प्रमुख कार्य शिक्षण कार्य है। इसीलिए आज महिलाएँ शिक्षिका, प्रोफेसर या मुख्य आचार्य के पद पर कार्य कर रही है।

2. स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्य: – मध्यम वर्गीय महिलाओं का द्वितीय प्रमुख कार्य स्वास्थ्य कार्य है। इसलिए आज

स्वास्थ्य विभाग में दाई, परिचायिका, स्वास्थ्य निरीक्षिका, सामान्य डॉक्टर या चिकित्सक के पद पर अधिकांश महिलाएं कार्य कर रही है।

3. कारखाना सम्बन्धी कार्यः – प्रायःआज विभिन्न प्रकार के कारखानों में भी विभिन्न कार्यों के लिए महिलाओं को ही नियुक्त किया जाता हैजिनमें कपड़े, तम्बाकू, आटा मीलें, तेल तथा काजू आदि के कारखाने प्रमुख है।

4. खान सम्बन्धी कार्यः – कोयला, इस्पात, पत्थर, अभ्रक, मैगनीज, इस्पात आदि खानों में महिलाओं की संख्या सबसे अधिक है।

5. बगीचे (बागान) सम्बन्धी कार्यः – आज महिलाएँ चाय, कॉफी, रबर के बागानों में भी पर्याप्त संख्या में कार्य कर रही है।

6. कला सम्बन्धी कार्यः– प्राचीन काल में नृत्य करने वाली महिलाओं को आलोचना युक्त दृष्टिकोण से देखा जाता था क्योंकि यह कार्य बाह्य बालाओं या वेश्याओं का ही माना जाता था, लेकिन आजकल ऐसा नहीं है। आज समाज में नृत्य, संगीत तथा कला को काफी महत्त्व दिया जाने लगा है। इसीलिए इस क्षेत्र में महिलाओं का प्रवेश सम्माननीय हो गया है।

7. विधिक क्षेत्र में: – आज महिलाओं ने विधिक क्षेत्र पर भी अपना अधिकार स्थापित कर लिया है, क्योंकि आजकल वकील, बैरिस्टर या न्यायाधीशों के पद पर महिलाएँ कार्य कर रही है, विधिक क्षेत्र के अतिरिक्त कूटनीतिक क्षेत्र में भी महिलाएँ कार्य कर रही हैं।

8. ग्रामीण क्षेत्र सम्बन्धी कार्यः– आधुनिक काल में सरकार द्वारा संचालित सामुदायिक योजना के अन्तर्गत ग्राम सेविकाओं के पद पर महिलाओं को नियुक्त किया जाता है, जिनका कार्यक्षेत्र ग्रामीण क्षेत्र ही होता है। सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के रूप में भी महिलाओं को ही नियुक्त किया जाता है।

9. सार्वजनिक निर्माण विभाग के कार्यः– आज महिलाओं से सस्ती दरों पर विभिन्न प्रकार के निर्माण कार्य कराए जाते हैं, जिनमें नये रास्तों का निर्माण, भवन निर्माण कार्य तथा नदी योजनाओं में बांध निर्माण आदि का कार्य प्रमुख है।

10. लघु व्यवसायः– महिलाएं कुछ व्यावसायिक कार्य घर पर रहकर ही करती हैं, क्योंकि इनमें मशीनो तथा बिजली की आवश्यकता नहीं होती है। इन कार्यों में मछली पकड़ना, बीड़ी बनाना, रंगाई, सिलाई–कढ़ाई, बुनाई आदि का कार्य करना, छपाई का कार्य करना, खिलौने बनाना आदि प्रमुख कार्य हैं। कुछ महिलाएँ घर पर रहकर ही पापड़, आचार भी बनाती है। घर पर कागज के थैले आदि भी तैयार करना, गत्ते के डिब्बे बनाना, चटाई व टोकरियाँ आदि बनाना भी इन्हीं कार्यों में शामिल होते हैं।कुछ महिलाएं रेलवे तथा अन्य विभागों में भी परिचारिकाओं के रूप में कार्य कर रही हैं।

11. अन्य कार्यः– उपर्युक्त कार्यों के अतिरिक्त महिलाएँ दुकानों, दफ्तरों तथा वितरण केन्द्रों पर भी कार्य कर रही हैं। महिलाएं सहायकटाइपिस्ट, टेलीफोन ऑपरेटर आदि के पदों पर भी कार्य करती हैं। आज बहुत सी महिलाएं सिलाई–कढ़ाई की दुकानों पर कार्य ही नहीं कर रही है, अपितु बैंकों आदि से ऋण प्राप्त कर स्वयं इनके केन्द्रों का संचालन कर रही हैं।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि आज भारत केआर्थिक विकास में महिलाओं का योगदान पुरुषों से कम नहीं है। जिस महिला को कुछ समय पूर्व तक अबला, निम्न स्तर की स्त्री माना जाता था, आज वही महिला पुरुषों से सम्बन्धित क्षेत्रों में उनसे आगे निकल गयी है।

वर्तमान वैश्वीकरण के युग में **महिलाओं की स्थिति** में परिवर्तन हो रहे हैं। वे अब अपने अधिकारों के प्रति न केवल जागरूक होती जा रही हैं बल्कि अपने अधिकारों को प्राप्त भी कर रही हैं। भारत में महिलाओं के

आर्थिक तथा राजनैतिक अधिकारों तथा उनकी प्राप्ति का उल्लेख निम्नलिखित रूप से किया जा सकता है–

• **महिलाओं के आर्थिक या सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार** –भारतीय समाज में विभिन्न धर्मों, जनजातियों, वर्गों तथा सम्प्रदायों में सम्पत्ति के सम्बन्ध में अलग–अलग प्रावधान या नियमों का प्रचलन पाया जाता है। वर्तमान बदलते परिवेश में सम्पत्ति सम्बन्धी मूल्यों में परिवर्तन हो रहे हैं जिनका उल्लेख निम्न प्रकार से किया जा सकता है–

1. **विवाहित महिला का सम्पत्ति अधिकार अधिनियमः** – इस अधिनियम के पारित होने से पहले स्त्रियों को पारिवारिक सम्पत्ति पर अधिकार नहीं था, किन्तु इस अधिनियम के द्वारा महिलाओं को परिवार की सम्पत्ति पर अधिकार प्राप्त हो गया है। अब महिला को परिवार की किसी भी स्रोत से होने वाली आय पर अधिकार प्राप्त है। स्त्री को कला, बौद्धिक या साहित्यिक स्रोत से होने वाली आय, पारिवारिक बचत से होने वाली आय, महिला के बीमा पॉलिसी से होने वाली आय इत्यादि।

2. **हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियमः** – इस अधिनियम से महिलाओं को जो आर्थिक अधिकार प्राप्त हुए हैं, उनका उल्लेख निम्नलिखित रूप से किया जा सकता है–

1. मातृसत्तात्मक परिवारों पर भी यह अधिनियम लागू होता है।
2. महिला धन तथा महिला के विरासत सम्बन्धी कानूनों को समाप्त कर दिया गया है।
3. महिला को पारिवारिक सम्पत्ति पर अधिकार प्राप्त हो गया है।
4. चल तथा अचल सभी प्रकार की सम्पत्ति पर महिलाओं को अधिकार प्राप्त हो गया है।
5. पुरुषों तथा महिलाओं को सम्पत्ति सम्बन्धी समान अधिकार प्राप्त हो गए हैं।
6. उत्तराधिकार का आधार पिण्डदान या रक्त सम्बन्ध के साथ–साथ स्नेह तथा प्रेम भी माना गया है।
7. इस संविधान में दूर के सम्बन्धियों का भी उल्लेख मिलता है।
8. यह संविधान महिला तथा पुरुष में कोई भेद नहीं करता है।
9. रोग सम्पत्ति के उत्तराधिकार में बाधक नहीं है।
10. यह संविधान पुत्रियों को पुत्रों के समकक्ष मानता है।
11. इस कानून ने महिलाओं को उच्च स्थिति प्रदान की है।

3. **मुस्लिम महिलाओं का सम्पत्ति पर अधिकारः** – मुस्लिम समाज में स्त्रियों को तुलनात्मक रूप से अधिकार प्राप्त हैं, जैसे–

1. मुस्लिम महिलाओं को पारिवारिक सम्पत्ति पर अधिकार प्राप्त है।
2. मुस्लिम समाज में महिला को शरीयत या इस्लामिक कानून के अनुसार अपने पिता की सम्पत्ति में अधिकार प्राप्त है।
3. विवाह के समय स्त्री जो धन लाती है वह अपने पति से वापस मांग सकती है।
4. पत्नी के भरण–पोषण का उत्तरदायित्व पति का होता है।

• **महिलाओं के राजनैतिक अधिकार**–यदि राजनैतिक क्षेत्र पर दृष्टि डाली जाए तो यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि राजनैतिक क्षेत्र में भी महिलाओं में जागरूकता का अभाव है। इसीलिए वह सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अधिक भागीदारी नहीं कर पाती हैं। भारत में अनेक ऐसी कुप्रथाएं प्रचलित हैं जो महिलाओं का राजनैतिक दृष्टिकोण से जागरूक होने में बाधा उत्पन्न करती हैं। अशिक्षा, बाल विवाह, पर्दा प्रथा इत्यादि के कारण महिलाएँ

International Research and Review

राजनैतिक क्षेत्र में पिछड़ी हुई हैं। अभी भी महिलाएं परिवार के पुरुष सदस्यों की इच्छा के अनुसार मतदान करती हैं। यद्यपि महिलाएं ग्राम प्रधान से लेकर राष्ट्रपति पद तक पर विराजमान हैं। यदि कुछ अपवादों को छोड़ दें तो महिलाएं अभी भी अपने परिवार के पुरुष सदस्यों के सहयोग से इन पदों पर कार्य कर रही हैं। किन्तु अब धीरे–धीरे परिस्थितियां बदल रही है और वे राजनैतिक दृष्टिकोण से न केवल जागरूक हो रही हैं वरन् सक्रिय रूप से राजनीति में भागीदारी भी कर रही हैं।स्वतन्त्रता संग्राम के दौरान **गाँधीजी** ने यह अनुभव किया कि महिलाएँ स्वतन्त्रता संग्राम में महती भूमिका निभा सकती हैं। अतः उन्होंने स्वतन्त्रता संग्राम में महिलाओं का आह्वान किया जिसका परिणाम यह हुआ कि अनेको महिलाएं गाँधीजी के साथ स्वतन्त्रता संग्राम में कूद पड़ी। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद 1951 से लेकर 2009 तक जो लोकसभा, विधानसभा, ग्राम पंचायत, नगर पंचायत इत्यादि के जो चुनाव हुए उनमें महिलाओं ने चुनाव लड़ा और अनेक महिलाएँ चुनाव जीतकर विभिन्न राजनैतिक पदो पर आसीन हुई। यद्यपि प्रारम्भ में चुनावों में महिलाओ का प्रतिशत कम था किन्तु धीरे–धीरे चुनावों में महिला प्रत्याशियों का प्रतिशत बढ़ता जा रहा है।भारत की प्रथम महिला प्रधानमन्त्री के रूप में श्रीमती **इन्दिरा गांधी** का चुना जाना भारतीय महिलाओं का राजनीति में सक्रिय होना ही दर्शाता है, प्रथम महिला राष्ट्रपति के रूप में श्रीमती **प्रतिभा देवी पाटिल** का चुना जाना भी इस ओर संकेत करता है कि भारत में महिलाएं जागरूक होती जा रही हैं। श्रीमती **सोनिया गांधी, विजयराजे सिंधिया, मायावती, ममता बनर्जी, जय ललिता, शीला दीक्षित, उमा भारती, सुषमा स्वराज, नजमा हेपतुल्ला, वसुंधरा राजे, स्मृति ईरानी, द्रौपदी मुर्मु, दिया कुमारी** आदि महिलाओं का राजनीति में सक्रिय होना महिलाओं की राजनैतिक जागरुकता तथा सक्रियता को ही दर्शाता है।पृथ्वी शिखर सम्मेलन के बाद भारत ने ग्राम पंचायतों में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण दिया, जिससे ग्राम पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि हुई है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भारत में महिलाओं में जैसे–जैसे साक्षरता का प्रतिशत बढ़ता जा रहा है, वैसे–वैसे उनकी राजनैतिक जागरुकता तथा सक्रियता बढ़ती जा रही है।इस बढ़ती साक्षरता दर ने महिलाओं को राजनैतिक रूप से जागरुक तथा सक्रिय किया है।

निष्कर्ष–

स्टार्टअप नए भारत की रीढ़ है। यह स्टार्टअप नवाचार को प्रोत्साहित के साथ महिला विकास में अनूठा योगदान प्रदान करेगा। नवाचार महिलाओं के अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में घरेलू जीवनोपयोगी सामग्री निर्माण, दैनिक जीवन से संबंधित व्यवसाय उन्हें आत्मनिर्माण बनाने में सक्षम होंगे। आत्मनिर्भर भारत ही हमें विकसित देशों की श्रेणी में अग्रसरित कर सकेगा। देश में महिलाएं जितनी समृद्ध होंगी, उतना ही हम आर्थिक विकास कर सकेंगे। महिलाओं को समृद्ध बनने हेतु उन्हें अपने पर खड़ा होना सीखना चाहिए। नवाचार को बढ़ावा देना,उद्धमियों में उनकी सहायता प्रदान करना, स्टार्टअप में महिला निदेशक, महिला सदस्यों की कार्यकारिणी बनानी चाहिए, महिलाओं का स्टार्टअप हब बने, असाधारण नवाचारों को ग्रामीण महिलाओं के क्षेत्र में भी लाने का प्रयास करना चाहिए, नए कार्यों की संकल्पना को बढ़ाने का प्रयास महिलाओं को अपने जीवन चक्र में करना चाहिए।

International Research and Review

सन्दर्भ ग्रन्ध सूची–

- कोठारी, गुलाब (2006), नारी, पत्रिका प्रकाशन, जयपुर
- नीरज, सुरेश (2005), शिक्षा मेंक्रांति, ताओपब्लिशिंगप्रा. लि., 50 कोरगांवपार्क, पुणे
- गुप्ता,एस.पी. (2005), भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवंसमस्याएं, शारदापुस्तकभवन, 11 यूनिवर्सिटीरोड़, इलाहाबाद
- आचार्यश्रीराम शर्मा (2006), गृहलक्ष्मी की प्रतिष्ठा, युगनिर्माण योजना, गायत्री तपोभूमिमथुरा
- कोठारी, गुलाब (2015), मानस, नारीऔरमातृत्व, पत्रिका प्रकाशन, जयपुर
- निर्वाणश्री, साध्वी (2012), आदर्शनारियां (खण्ड–1) आदर्शसाहित्य संघ, नईदिल्ली
- निर्वाणश्री, साध्वी (2012), आदर्शनारियां (खण्ड–2) आदर्शसाहित्य संघ, नईदिल्ली

international Research and Review

Peer Reviewed Journal for M.Phil., Ph.D. & Appointment of Teacher in Universities & College

ISSN : 2454-4655 VOLUME - 10 No. : 3, April - 2024

International Journal of Social Science & Management Studies

Peer Reviewed & Refereed Journal

Indexing & Impact Factor 5.2

राष्ट्रीय संगोष्ठी

"लैंगिक संवेदनशीलता एवं समानता"

(Gender Sensitivity & Equality)

दिनांक : 27 अप्रैल, 2024, शनिवार

श्री अग्रसेन स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय, जामडोली, जयपुर

I.J.S.S.M.S

Indian Tech

GLOBAL CERTIFICATION SERVICES

ISRS International Scientific Research Solution

International Journal of Social Science & Management Studies

CONTENTS

S.No.	Paper Title	Author Name	Page No.
1	लैंगिक असमानता : कारण एवं समाधान	प्रो. (डॉ.) रीटा शर्मा सुरुचि श्रीवास्तव	1-2
2	लैंगिक समानता में परिवार, विद्यालय एवं समाज की भूमिका	अंकिता कुमारी	3-5
3	लैंगिक संवेदनशीलता और ई-लर्निंग	डॉ. सन्तोष उपाध्याय अमृत यादव	6-10
4	लैंगिक असमानता : कारण एवं समाधान	प्रो. (डॉ.) रीटा शर्मा सुनीता शर्मा	11-13
5	भारतीय परिप्रेक्ष्य में लैंगिक समानता और नीति निर्धारण का एक अध्ययन	डॉ. रेखा सिंह अमित कुमार	14-17
6	लैंगिक समझ और संवेदनशीलता	अनीता शर्मा	18-20
7	लैंगिक असमानता : कारण और समाधान	डॉ. प्रियंका जैन	21-24
8	लैंगिक समानता में परिवार, विद्यालय एवं समाज की भूमिका	डॉ. छगनलाल कुमावत	25-26
9	लैंगिक संवेदनशीलता के विकास में अध्यापक शिक्षा की भूमिका	डॉ. पूजा कनौजिया नरेश मीणा	27-30
10	लैंगिक असमानता : कारण एवं समाधान	नीतू कुमारी	31-33
11	लैंगिक समानता की आवश्यकता	डॉ. पूजा कनौजिया	34-35
12	लैंगिक संवेदनशीलता एवं समानता	राकेश कुमार शर्मा	36-37
13	लैंगिक समानता में परिवार, विद्यालय एवं समाज की भूमिका	डॉ. आर.के. शर्मा	38-39
14	लैंगिक समानता में परिवार विद्यालय और समाज की भूमिका	प्रो. डॉ. विनोद कुमार उपाध्याय लक्ष्मी शर्मा	40-41
15	लैंगिक संवेदनशीलता एवं समानता	वेद प्रकाश नागर	42-45
16	किशोरावस्था में लैंगिक संवेदनशीलता	मुकेश कुमार शर्मा	46-47
17	लैंगिक समानता में परिवार की भूमिका	डॉ. अनिता जैन	48-51
18	भारत में लैंगिक असमानता को दूर करने के नीतिगत निर्णय	डॉ. अल्पना शर्मा अर्चना शर्मा	52-55
19	लैंगिक असमानता : कारण एवं समाधान	खारिया पुलकित एस.	56-58
20	कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न (निवारण, निषेध व निवारण अधिनियम 2013)	डॉ. मोहनलाल जाट भूपेन्द्र सिंह	59-61
21	मानव जीवन में सफल होने के लिए भावनात्मक बुद्धिमता की उपयोगिता	डॉ. दुर्गा नायक दलीप सिंह शेखावत	62-65
22	लैंगिक असमानता कारण एवं उपाय	डॉ. रेखा मालवीय	66-68
23	छात्राओं की व्यावसायिक आकांक्षा व उनके माता–पिता की तत्संबंधी आकांक्षा तथा व्यावसायिक स्तर के पुनर्निर्धारण का अध्ययन	डॉ. सन्तोष उपाध्याय सुश्री कल्पना सोनी	69-74
24	लैंगिक समझ और संवेदनशीलता	डॉ. छगनलाल कुमावत लोकेश कुमार कहनुजा	75-77
25	किशोरावस्था में लैंगिक संवेदनशीलता	डॉ. कृष्णकुमार गौतम सीमा मीणा	78-80
26	लैंगिक समानता एवं समान नागरिक संहिता	मिनाक्षी जान्दू	81-85
27	भारतीय परिप्रेक्ष्य में लैंगिक संवेदनशीलता एवं समानता	डॉ. सतीश चन्द्र रावत श्री मुकेश कुमार शर्मा	86-91

लैंगिक समानता में परिवार की भूमिका

डॉ. अमिता जैन
सहायक आचार्य, शिक्षा विभाग, जैन विश्व भारती संस्थान लाडनूं, नागौर

सारांश :– लैंगिक समानता में परिवार की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। पिछले कुछ साल में लैंगिक समानता की दिशा में काफी कामयाबी मिली है, फिर भी महिलाओं की परम्परागत भूमिका को लेकर समाज की जो सोच है वो महिलाओं की शिक्षा और रोज़गार के मौके मिलने को बहुत हद तक प्रभावित करते हैं। प्रत्येक बच्चे का अधिकार है कि उसकी क्षमता के विकास का पूरा मौका मिले, लेकिन लैंगिक असमानता की कुरीति की वजह से वह ठीक से फल फूल नहीं पाते है। भारत में लड़कियों और लड़कों के बीच न केवल उनके घरों और समुदायों में बल्कि हर जगह लिंग असमानता दिखाई देती है। पाठ्यपुस्तकों, फिल्मों, मीडिया आदि सभी जगह उनके साथ लिंग के आधार पर भेदभाव किया जाता है। लैंगिक समानता का मतलब है कि सभी लिंग बिना किसी भेदभाव के अपना मनचाहा करियर, जीवनशैली और क्षमताएं अपनाने के लिए स्वतंत्र हैं। उनके अधिकार, अवसर और समाज तक पहुंच उनके लिंग के आधार पर भिन्न नहीं हैं। लैंगिक समानता का मतलब यह नहीं है कि सभी के साथ बिल्कुल एक जैसा व्यवहार किया जाए। उनकी अलग–अलग जरूरतों और सपनों को समान रूप से महत्व दिया जाता है।

मूल शब्द :– शिक्षा, समर्थन, लैंगिक समानता, समरसता, साझा जिम्मेदारी

प्रस्तावना :– लैंगिक समानता में परिवार की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। परिवार एक समाज में लैंगिक समानता को स्थापित करने और बनाए रखने का मुख्य संगठन होता है। एक समर्थ, संतुलित परिवार जीवन के सभी क्षेत्रों में लैंगिक समानता को प्रोत्साहित करता है। परिवार में लैंगिक समानता को स्थापित करने के लिए कई तरह के कदम उठाए जा सकते हैं, जैसे– शिक्षा, समर्थन, बातचीत, उदाहरण, साझा जिम्मेदारी, विकास, समरसता आदि।

1. **शिक्षा** :– परिवार के सदस्यों को लैंगिक समानता के महत्व को समझाने के लिए शिक्षा देना बहुत महत्वपूर्ण है। यहाँ कुछ कदम हैं जिनका अनुसरण किया जा सकता है:–

- **खुली बातचीत** :– पहले तो, परिवार के सदस्यों के बीच खुली और सहज बातचीत को प्रोत्साहित करें। इसके माध्यम से लैंगिक समानता के महत्व को समझाएं और उनसे इसके बारे में उनके विचार साझा करें।
- **उदाहरण सेट करें** :– परिवार के व्यक्तियों को लैंगिक समानता के महत्व को समझाने के लिए, आप स्वयं ही उनके सामने एक अच्छा उदाहरण प्रदान कर सकते हैं। अपने व्यवहार और विचारों के माध्यम से उन्हें दिखाएं कि आप लैंगिक समानता को कितना महत्व देते हैं।
- **शिक्षा और जागरूकता** :– लैंगिक समानता के विषय में जागरूकता फैलाने के लिए, आप परिवार के सदस्यों को संबंधित लेखों, किताबों या वीडियोज़ का प्रसार कर सकते हैं। विभिन्न समाधान और निर्देशों को साझा करने के माध्यम से उन्हें लैंगिक समानता के विभिन्न पहलुओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।
- **समर्थन और प्रेरणा** :– अपने परिवार के सदस्यों को लैंगिक समानता को समर्थन और प्रेरणा का स्रोत बनाए रखने के लिए, उन्हें उनकी भूमिका में महत्वपूर्ण महिलाओं और पुरुषों के उदाहरण दिखाएं।
- **समाज में योगदान** :– लैंगिक समानता के महत्व को समझाने के लिए परिवार के सदस्यों को समाज में इसके लिए कुछ करने के लिए प्रेरित करें, जैसे कि समाज सेवा, जागरूकता कार्यक्रमों में शामिल होना या अन्य लोगों की सहायता करना।

ये सभी कदम परिवार के सदस्यों को लैंगिक समानता के महत्व को समझाने में मदद कर सकते हैं और एक समर्थ सम्मानित और समरस परिवार की भूमिका को मजबूत कर सकते हैं।

2. **समर्थन** :– परिवार के सदस्यों के लिए समर्थन और प्रेरणा का स्रोत बनना उनके विकास और समृद्धि में महत्वपूर्ण है। निम्नलिखित कुछ तरीके हैं जिनके माध्यम से हम परिवार के सदस्यों का समर्थन और प्रेरणा का स्रोत बन सकते हैं:–

- **सहयोग और प्रोत्साहन** :– परिवार के सदस्यों को उनके साथी के रूप में सहयोग करें और उन्हें

अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित करें।

- **उन्नति के लिए अवसर प्रदान करें** :– उन्नति के लिए नए अवसर प्रदान करें और उन्हें अपनी क्षमताओं का परिचय कराने के लिए प्रेरित करें।
- **उनके सपनों को समर्थन करें** :– उनके सपनों और लक्ष्यों के प्रति समर्थन और आदर्शों को बढ़ावा दें, और उन्हें अपने सपनों को पूरा करने के लिए सहायता करें।
- **संवाद और सुनवाई** :– उनके मन की स्थिति को समझें, उनकी बात सुनें, उनके विचारों का सम्मान करें और उन्हें सही दिशा में मार्गदर्शन करें।
- **सकारात्मक प्रतिक्रिया** :– उनकी प्रतिभा, प्रयासों और उपलब्धियों को सकारात्मक रूप से निभाएं और सराहें।
- **संघर्ष में सहायता** :– जब आपके परिवार के सदस्य किसी संघर्ष का सामना कर रहे हों, तो उनके साथ होकर समाधान निकालने में सहायता करें और उन्हें प्रेरित करें कि वे संघर्षों का सामना कर सकते हैं।
- **स्वतंत्रता और स्वाधीनता का समर्थन** :– उन्हें स्वतंत्रता और स्वाधीनता का समर्थन करें ताकि वे अपने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से सफलता प्राप्त कर सकें।

इन सभी तरीकों से हम परिवार के सदस्यों के लिए समर्थन और प्रेरणा का स्रोत बन सकते हैं और उन्हें अपने लक्ष्यों की ओर अग्रसर करने में मदद कर सकते हैं।

3. **बातचीतः**– खुली बातचीत के माध्यम से लैंगिक समानता पर विचार करना चाहिए। परिवार में बातचीत के माध्यम से लैंगिक समानता को प्रोत्साहित करना बहुत महत्वपूर्ण है। यह एक स्वाभाविक माध्यम है जिससे बच्चों को समझाया जा सकता है कि सभी लोगों को समान अधिकार और स्वतंत्रता मिलनी चाहिए चाहे वे लड़के हों या लड़कियां। यहाँ कुछ महत्वपूर्ण तरीके हैं जिनसे हम अपने परिवार के सदस्यों के साथ बातचीत करके लैंगिक समानता को समझा सकते हैंः–

- **समझौता और संवाद** :– बच्चों को यह समझाएं कि लड़के और लड़कियों के बीच कोई भेदभाव नहीं होना चाहिए। उन्हें समझाएं कि सभी को उनके विचारों, भावनाओं और अधिकारों का समान रूप से मूल्य देना चाहिए।
- **उदाहरण स्थापित करें** :– अपने परिवार के सदस्यों को समझाने के लिए हम स्वयं उदाहरण स्थापित कर सकते हैं। उनके साथ लड़कों और लड़कियों के बीच समान व्यवहार करें और उन्हें समानता की महत्ता समझाएं।
- **जागरूकता बढ़ाएं** :– बच्चों को लैंगिक समानता के महत्व पर जागरूक करने के लिए उन्हें इसके बारे में पुस्तकें, फिल्में और अन्य संसाधनों से अवगत कराएं।
- **सवालों का समर्थन** :– अपने बच्चों के साथ खुलकर बातचीत करें और उनके सवालों का समर्थन करें। यदि वे किसी भी प्रकार के समानता या विभेद के बारे में सवाल पूछते हैं, तो उन्हें सही जानकारी और समझ प्रदान करें।
- **संवैधानिकता की प्रेरणा** :– बच्चों को समझाएं कि लैंगिक समानता एक मूलभूत मानवीय अधिकार है और इसका समर्थन करना चाहिए। उन्हें बताएं कि इसका मतलब है कि सभी लोगों को समान रूप से विकास, स्वतंत्रता और सम्मान की अपेक्षा की जानी चाहिए।

बातचीत के माध्यम से बच्चों को लैंगिक समानता की महत्वपूर्णता समझाने के साथ हम उन्हें इस मूल्यवान धारणा का पालन करने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। यह उन्हें समाज में न्याय की भावना को समझने में मदद करेगा और उन्हें समानता के महत्व को समझने में सहायक होगा।

4. **उदाहरण** :– परिवार के व्यक्तियों को लैंगिक समानता के अच्छे उदाहरण प्रदान करना। लैंगिक समानता के अच्छे उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए निम्नलिखित तरीके हो सकते हैंः–

- **संयुक्त निर्णय और सहभागिता** :– परिवार के सदस्यों को संयुक्त निर्णय लेने और पारिवारिक कार्यक्रमों, उत्सवों या संघर्षों में समान रूप से सहभागी होने का उदाहरण प्रस्तुत करें।
- **काम का समान वितरण** :– परिवार के सदस्यों को विभिन्न कार्यों का समान रूप से हिस्सा लेने के लिए प्रेरित करना चाहिए। यह स्थितियों के अनुसार हो सकता है जैसे घरेलू काम, पैसे कमाने या फैसलों में समान योगदान।
- **उत्पादक और उत्कृष्ट कामकाजी साथी** :– परिवार के सदस्यों को उत्पादक और उत्कृष्ट कामकाजी साथी के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए प्रेरित करें, चाहे वे लड़का हों या लड़की।
- **समर्थन और प्रेरणा** :– लैंगिक समानता के मुद्दों

पर विचार करने और समर्थन प्रदान करने के लिए प्रोत्साहित करें। किसी भी सदस्य के सपनों और लक्ष्यों का समर्थन करने में समान रूप से विश्वास करें।

- **बातचीत और समझौता** :— समय–समय पर, बच्चों के साथ लैंगिक समानता पर बातचीत करें। उन्हें समझाएं कि सभी को इस मामले में समान अधिकार होते हैं और वे इसे समर्थन करने की महत्वपूर्णता को समझें।
- **सामाजिक आंतरिकता का उत्कृष्ट उदाहरण** :— अपने परिवार के सदस्यों को सामाजिक आंतरिकता, उत्कृष्ट संबंध और सम्मान भाव से बात करने का उदाहरण प्रस्तुत करें।

ये उदाहरण परिवार के सदस्यों को लैंगिक समानता के महत्व को समझाने में मदद कर सकते हैं और उन्हें इसे प्रैक्टिकल रूप से अपनाने के लिए प्रेरित कर सकते हैं।

5. **साझा जिम्मेदारी** :— सभी सदस्यों को समान रूप से घरेलू कामों और जिम्मेदारियों में शामिल करना। लैंगिक समानता को समर्थन और संरक्षण करने के लिए परिवार में साझा जिम्मेदारी का महत्वपूर्ण योगदान होता है। एक समर्पित और सम्मानित परिवार में सभी सदस्यों को समान अधिकार, जिम्मेदारियाँ और स्वतंत्रता मिलनी चाहिए। यहाँ कुछ महत्वपूर्ण भूमिकाएँ हैं जो परिवार के सदस्यों के लिए होती हैं:—

- **शिक्षा और संज्ञान को संवाहित करना** :— परिवार के सदस्यों को लैंगिक समानता के महत्व को समझाने का महत्वपूर्ण काम होता है। इसके लिए उन्हें उचित शिक्षा और जागरूकता प्रदान की जानी चाहिए।
- **साझा गृह कार्य** :— घर के कामों को संभालने में सभी सदस्यों को साझा योगदान देना चाहिए, चाहे वह घरेलू काम हों या बाहर के काम।
- **समान मुद्दों पर संवाद** :— सभी सदस्यों को लैंगिक समानता और उससे जुड़े मुद्दों पर खुलकर बातचीत करने का अवसर मिलना चाहिए।
- **समर्थन और समर्पण** :— परिवार के सदस्यों के बीच समर्थन और समर्पण का माहौल होना चाहिए।
- **बच्चों की शिक्षा** :— बच्चों को लैंगिक समानता के महत्व को समझाने और उन्हें लैंगिक संरक्षण, समर्थन और समानता की महत्वपूर्ण शिक्षा प्रदान करने की ज़िम्मेदारी भी परिवार की होती है।
- **अदालत और सम्मानिता का समर्थन** :— परिवार में सम्मान और अदालत के मानकों का पालन करने का माहौल होना चाहिए, जिससे किसी भी प्रकार का भेदभाव या न्यायिक अन्याय न हो।

लैंगिक समानता की भूमिका को परिवार में साझा करने से समाज में सामाजिक सुधार और प्रगति के मार्ग को बढ़ावा मिलता है।

6. **विकास** :— परिवार के सदस्यों को समाज में समान रूप से विकास को प्रोत्साहित करना चाहिए। लैंगिक समानता को परिवार में स्थायी रूप से स्थापित करने के लिए परिवार के सदस्यों को लैंगिक समानता के लिए प्रोत्साहन करने के लिए निम्नलिखित कदम उठाने चाहिए:—

- **शिक्षा और जागरूकता** :— परिवार के सदस्यों को लैंगिक समानता के महत्व को समझाने के लिए उचित शिक्षा और जागरूकता प्रदान की जानी चाहिए। इसके लिए विभिन्न स्रोतों से जानकारी प्राप्त करना और समर्थन करना महत्वपूर्ण है।
- **उदाहरण स्थापित करें** :— परिवार के वयस्क सदस्यों को अपने बालक/बालिकाओं के साथ लैंगिक समानता के मामले में उदाहरण स्थापित करना चाहिए। वे समझाएं कि सभी व्यक्तियों को समान अधिकार और सम्मान मिलना चाहिए।
- **खुले और सहयोगपूर्ण बातचीत** :— परिवार के सदस्यों को खुले मन से लैंगिक समानता पर बातचीत करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इससे उन्हें अपने विचारों को साझा करने और उनके विचारों को समझने का मौका मिलता है।
- **बच्चों को समझाना** :— बच्चों को लैंगिक समानता के महत्व को समझाने के लिए, उन्हें समय–समय पर संवाद में शामिल किया जाना चाहिए। उन्हें लैंगिक समानता, समर्थन और समानता के महत्वपूर्ण सिद्धांतों की समझ और स्वीकृति प्रदान करनी चाहिए।
- **सामाजिक पर्यावरण में प्रभाव डालें** :— परिवार के सदस्यों को अपने सामाजिक पर्यावरण में लैंगिक समानता का समर्थन करना चाहिए। वे लोगों के बीच समानता और समर्थन के मानकों को बढ़ावा देने में सक्रिय भूमिका निभाएं।

ये सभी कदम लैंगिक समानता को परिवार में विकासित करने में मददगार हो सकते हैं, जिससे समर्थ और समान या समानाधिकार के एक समृद्ध परिवार का

निर्माण हो सके।

7. **समरसता** :– विभिन्न लैंगिक भूमिकाओं को समरसता से स्वीकार करना चाहिए। लैंगिक समानता को परिवार में स्थापित करने के लिए समरसता की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। समरसता वास्तविक और स्थिर संबंधों का आधार होती है, जिसमें समानता, सम्मान और साथीपन की भावना होती है। यहाँ कुछ महत्वपूर्ण तत्व हैं जो परिवार में समरसता को प्रोत्साहित करते हैं:–

- **संवेदनशीलता और सहभागिता** :– समरसता का आधार है संवेदनशीलता और सहभागिता। परिवार के सदस्यों को एक–दूसरे की भावनाओं के प्रति संवेदनशील होना चाहिए और उनके साथ सहभागिता करनी चाहिए।
- **समर्थन और सम्मान** :– परिवार के सदस्यों को एक–दूसरे के विचारों, भावनाओं और प्रतिभाओं का समर्थन करना चाहिए। समर्थन और सम्मान की भावना होने से सदस्यों के बीच समरस संबंध बनते हैं।
- **सामंजस्य और समझौता** :– समरसता का मतलब है सामंजस्य और समझौता करना। परिवार के सदस्यों को एक–दूसरे के साथ समझौता करने और उनकी जरूरतों को समझने की क्षमता होनी चाहिए।
- **समान संघर्ष और लाभ** :– समरसता में समान संघर्ष और लाभ का अनुभव होता है। सभी सदस्यों को समान अवसर मिलने चाहिए और उन्हें समान रूप से साथ मिलकर संघर्ष करने और लाभ को बाँटने की क्षमता होनी चाहिए।
- **समान अधिकार और जिम्मेदारी** :– समरसता में सभी सदस्यों को समान अधिकार और जिम्मेदारियाँ मिलती हैं। कोई भी सदस्य अपनी जिम्मेदारियों का पालन करने के लिए संबलित होता है और उन्हें समान रूप से समर्थन प्राप्त होता है।

इन तत्वों के संगठित रूप के अनुसरण से परिवार में समरसता की भावना और वातावरण विकसित होता है। जिससे लैंगिक समानता को प्रोत्साहित करने में मदद मिलती है। एक समर्थ और सम्मानित परिवार न केवल अपने अंदर लैंगिक समानता को स्थापित करता है, बल्कि समाज में भी इसे प्रोत्साहित करता है। इस तरह के परिवार से ही समाज में व्यापक परिवर्तन आ सकता है जो लैंगिक समानता को बढ़ावा देता है।

निष्कर्ष :– लैंगिक समानता की दिशा में अभी हमें बहुत काम करना है। इस बात की समीक्षा करनी होती है कि महिलाओं को लेकर लोगों की सोच में कितना बदलाव आया है। हालांकि पिछले कुछ साल में लैंगिक समानता की दिशा में काफी कामयाबी मिली है लेकिन महिलाओं की पारंपरिक भूमिका को लेकर समाज की जो सोच है, इसका असर अब भी उनकी शिक्षा, रोज़गार और फैसला लेने की प्रक्रिया पर दिखता है। समाज ने महिलाओं के लिए जो मानक तय कर रखे हैं, वो लैंगिक असमानता को बरकरार रखने में अहम भूमिका तो निभाते ही हैं, साथ ही महिलाओं को उनके अधिकार दिलाने और उनकी क्षमता का पूरा इस्तेमाल करने में रुकावट भी पैदा करते हैं। ·हमारी सामाजिक व्यवस्था के तहत ही बच्चों की परवरिश के दौरान हम लैंगिक भेदभाव के बीज बो देते हैं। ये ही बीज आगे चलकर हमारे समाज में लैंगिक अपराध को जन्म देते हैं। लैंगिक असमानता कोई एक ही दिन में आ जाने वाली बुराई नहीं है। असल में इसका संबंध हमारे दृष्टिकोण और परवरिश से है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

- आचार्य श्रीराम शर्मा (2006), गृहलक्ष्मी की प्रतिष्ठा, युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि मथुरा
- सिन्हा, अरविन्द (2006) आपका व्यक्तित्व आपकी सफलता, रामचन्द्र अग्रवाल जयपुर पब्लिशिंग हाउस, चौड़ा रास्ता, जयपुर–302003
- आचार्य महाश्रमण (2014), आओ हम जीना सीखें, जैन विश्व भारती, लाडनूं–341306
- आचार्य महाश्रमण (2014), सुखी बनो, जैन विश्व भारती, लाडनूं–341306
- कोठारी, गुलाब (2015), मानस, नारी और मातृत्व, पत्रिका प्रकाशन, जयपुर
- कोठारी, गुलाब (2016) मानसः संस्कृति और सभ्यता, पत्रिका प्रकाशन, जयपुर।

PICTURE STYLE AND THEORY REPRESENTATION IN TIME RELATIVITY

Professor Banwari Lal Jain
Dr. Amita Jain
Assistant Professor, Department of Education,
Jain Vishva Bharati Institute, Ladnun, (Raj.) INDIA

Abstract-Colours have been important in Indian painting from prehistoric times to modern times. In painting, the feelings of the artist are expressed through paintings. Art is born in the mind of the painter. It develops from the unconscious unknown depths of the mind. Painting has been an important medium in converting these feelings into concrete form. Colours have their own distinct importance. Along with this, colours have their own expressions and language. They have a deep connection with human emotions. In Indian aesthetic philosophy, the colours depicted in the pictures have different meanings. Like white colour is a symbol of peace and goodness, red colour is a symbol of courage and bravery, black colour is a symbol of evil and mental tendencies. The genre of pictures plays a special role in awakening and developing this feeling of aliveness about the past among the students. Pictures provoke thought among students. Pictures encourage students to think on their own instead of giving ready-made answers so that students can come to their own conclusions and meaningful learning occurs.

***Keywords* –**Cooperation, Harmony, Balance, Effectiveness, Flow,Picture

Introduction -Symbolically, colour balance means the well-organized combination of colours in a picture, that is, colour is a big topic in painting and the combination of colours in a picture is very important. Colours have been important in Indian painting from prehistoric times to modern times. In painting, the feelings of the artist are expressed through paintings. Art is born in the mind of the painter. It develops from the unconscious unknown depths of the mind.Painting has been an important medium in converting these feelings into concrete form. Colours have their own distinct importance. Along with this, colours have their own expressions and language. They have a deep connection with human emotions. In Indian aesthetic philosophy, the colours depicted in the pictures have different meanings.Like white colour is a symbol of peace and goodness, red colour is a symbol of courage and bravery, black colour is a symbol of evil and mental tendencies. Combination is the melodious arrangement of any two or more elements. From the point of view of art, composition means displaying artistic ideas systematically. The combination can also be called cherishing in simple words. This cherishing may be a sweet plan of the elements related to the medium in which we work. When we talk about painting. So, in this the six elements of painting are cherished, those six elements are: - 1. Line 2. Form 3. Colour 4. Tone 5. Vessel. 6. Interval. In picture composition, we employ lines, forms, colours etc. in such a way that the picture looks balanced and attractive.**For example**, when we decorate the room in our new house with various items, we place chairs, tables, beds etc. at different places in such a way that the room looks balanced and attractive. Care is also taken to ensure that the colour of the walls of the room, the colour of the curtains, sofa cushions etc. match with each other. We do similar planning in our pictures by using different shapes and colours related to the subject. While making every picture, there is a difference in the thinking and making of every artist, but some rules apply to everyone by which the picture can be made attractive. We know these rules as principles of combination. By using these principles, the picture appears balanced and attractive. The rules of combination have not been made arbitrarily but we find the same rules in nature. A good painting has unity in diversity.By following the following six

ISSN: 0022-3301 | YEAR 2023

principles the picture becomes attractive and balanced. This is called the principle of combination.

1.Cooperation-Collaboration means unity, equality, and a relationship among the various elements of the picture which binds the entire composition into a single thread. Due to this, there is no scattering of different shapes, colours etc. in the picture. The various shapes and characters in the picture should be combined in such a way that the picture appears to be one, that is, the purpose of unity is to prevent the picture from breaking into pieces and to avoid giving the impression of multiple pictures in one picture. A group of several pictures does not seem like a good combination.Looking at the picture, it should not appear that the various shapes and other elements of the picture are all different from each other. It is like in clothes we buy paint with the shirt and notwith the dhoti. To cooperate in drawing, similarity in various shapes and colours etc. often leads to monotony. To create attraction in a picture, some contradiction should also be created in it.For this, some shapes of different types can be depicted along with shapes of similar size. And similar usage can also be done in varna, taan, pot etc. But care should be taken that this contradiction does not affect the subject of the picture. Contradiction should be done in moderation just for the sake of attraction.

2.Harmony- Many shapes are made in any picture. When these shapes have one or more types of similarity, their combination creates harmony. Harmony means that all the elements of the picture, like form, colour, tone, vessel etc. should match each other. It should be kept in mind that all the elements like lines, shapes, colours etc. are related to the subject of the picture. The urban environment in the village scene disturbs the harmony of the picture. Harmony is the opposite of contradiction. But this does not mean that contradiction should not be used at all in the picture. Harmony awakens the sense of beauty in a picture. There are some main figures and some auxiliary figures in the picture. There must be harmony in the main shapes. For attraction, contrast should be used in supporting figures. Similarly, harmony between line, colour and vessel also brings beauty to the picture. Adjacent colour scheme can be used to harmonize colours.Use of cool colours along with cool colours brings a sense of harmony to the picture.

3. Balance- According to balance, all the elements of the illustration should be arranged in such a way that their weight is properly distributed over the entire picture plane. Here weight means the ability to catch the viewer's eye in attraction. This attraction depends on the use of various elements of illustration. This load can be balanced by other loads. To understand this, we can take the example of scales. Both the scales of the scale move up and down due to unequal weight. To bring them equal, equal weight must be placed on both the pans. Wemust apply the same principle in painting also. Uneven weights are placed at unequal distances from the centre of the figure. The larger figure in the picture has more weight. Larger sizes are combined near the centre. And smaller sizes are combined away from the centre. Warm colours have more weight and cool colours have less weight. The use of a vessel in its shape increases its weight. The influence of larger areas of colour should be calm while smaller areas should have powerful contrasts. For this, cool colours should be used in large areas and use of warm colours in small areas brings balance.

4. Effectiveness-Effectiveness means that our attention should first fall on the most important element of the picture and then move to other elements in the order of importance. The picture should have the power to catch the viewer's eye. There should be a centre of attraction in the picture. Whatever element takes the viewer's gaze towards this centre is good from the point of view of composition and whatever element takes

the viewer's gaze away from this centre is not good. The centre of attraction in the human figure is the human face. To create impact, while painting the main figures, care should be taken that they do not get buried or hidden in the group of figures. Just as a person standing in a crowd is not visible even though he is in front of him, in the same way the main figure in a group of figures is not visible. Therefore, by keeping empty space behind the main figure, it can be made bigger than other figures and given importance with attractive colour. The contrast in shadow and light also gives effect to the form. The eye is attracted to a decorated place or form. But it should be kept in mind that excessive ornamentation distracts the viewer from the subject.

5. Flow-Flow means the free, uninterrupted, and sweet movement of the viewer's vision. In a good picture, the viewer's eyes can roam over the entire picture without any confusion. While viewing any picture, the viewer's gaze enters the picture from the lower left part and then rotates over the entire picture. A good painter has this quality that he controls the viewer's vision and moves it along the desired path and brings it to the main place of the picture. This flow together produces the elements of depiction like line, form, character, tone etc. We feel more joy in the wavy flow. For example, if we are traveling on a highway, within a short time we start feeling monotonous in the journey and if we are walking on a village path, we remain excited and joyful every moment. We experience the same happiness in our mother's lap or cradle.There is a sense of monotony in the straight and simple movement. Wavy lines give the impression of movement more than angular lines. Wavy lines are the basis of ancient Indian arts. Wavy flowing lines have been used in various wall paintings made in Ajanta caves, Rajasthani painting style, Mughal painting style etc. Apart from this, flow in the picture can also be experienced by repeating the shapes i.e., drawing one type of shape again and again at different places in the picture.

6.Pramana- Pramana means ratio. While making any picture, a question comes in our mind that how big or small should we make the shape in the picture, this measurement of length and width is called ratio. If we must create a scene of a village, then determining how big the mountains should be, what should be the size of the treesetc. is called proof. The proportions of all the shapes are related to each other; human figures are made in the same proportion as the mountains and trees.Through Pramana, we determine the differences between animals and birds, difference in the height of men and women, differences in the pictures of humans and gods and goddesses. It is necessary to have knowledge of Pramana even while making the human body. There is also a proportional relationship between different parts of the human body. If we place our palm on our mouth on the line joining the hair and forehead from the chin, then we will know that the proof of our mouth and palm is the same, it should be counted as one unit. They speak.Some human measurements have been mentioned in ancient Indian texts which are called 'Uttam Navtal'.

Painting is an important part of Kama Sutra. Indian painting has had an important place in every period (prehistoric, protohistoric, historical, medieval, literary). How many types and parts of Indian painting are there and where is their purpose and in what form, the details are as follows –

1. **Prehistoric period: -** The word prehistoric is made up of prehistory. Which literally means – the era before history. Thousands of years ago, humans used to live in caves and satisfy their hunger by hunting wild animals. Early humans displayed their art and skills by carving pictures on the walls of these caves. The pictures written on these cave walls introduced us to the reality of the then life of our ancestors.Many pictographic remains of this period are found all over the world. The contemporary paintings obtained in India along with the entire world hold their important place. The first evidence of prehistoric

times was found in France and Italy in 1887 AD. The credit for bringing prehistoric painting to light in India goes to institutions like Carlyle, Corkburn and Panchanan Mishra and the Asiatic Society. Who revealed through cave paintings of hills of Kaimur, Mirzapur (Uttar Pradesh).

2. **Protohistoric period: -** The next phase of the tradition of Indian painting is the protohistoric period. During this period, a highly developed civilization existed in the lowlands of the Indus Valley. Various remains of this civilization were initially found from Harappa and Mohenjo-Daro. Till now the remains of this civilization have been found from many places like Rangpur, Lothal, Atranjikheda and Alamgirpur. In this civilization, along with other materials, innumerable pieces of pottery have been found on which paintings in black or white colours have been found. These utensils were used for worship and rituals as well as for daily use. These utensils were also buried with the dead during that period. This clearly shows how art-loving the people of that time were. Art was his companion in life and death.
3. **Historical period: -** Painting of Indian historical period is famous all over the world today. The reason for this fame is the paintings found in the caves of Ajanta.2nd century BC We have started finding remains of Indian painting in the caves of Ajanta, where the gradual development of the tradition continued till the seventh century AD. Apart from Ajanta, evidence of Indian historical painting has also been found in places like Bagh, Badami, Aurangabad, Sittannavasal etc.
4. **Medieval period: -** Since the medieval period, painting in India was limited to miniature paintings. Various subjects and stories started being depicted on the pages of books. Later, many styles of painting in the form of miniature painting became popular, among which Pahari style, Rajasthani style and Mughal style are especially notable. In the last 100-150 years, since we got information about the paintings of Ajanta, there has been a redevelopment of Indian painting. Many painters of Bengal have tried to revive their old tradition. Among these, the names of Rabindranath Tagore, Asitkumar Haldar, Yamini Rai, Rajarvi Verma etc. are notable. Thus, the tradition of Indian painting has remained intact from ancient times till today.
5. **Literary evidence: -** According to Raikrishna Das, a great scholar of Indian painting, there is a discussion of the picture of Agni made on leather in Rigveda (1/145). Buddhist period i.e., sixth century B.C. There are clear mentions of drawings and paintings. Painting was very popular in that era. This is reflected in the order given to Buddhist monks in which they were asked to abstain from painting. Pictures are mentioned in Vinay Pitaka and Theri-Theri Gatha. In Mahaummag Jatak, various instructions for painting and painting are available. There is a description of the ruined Ayodhya Puri in Kalidasa's Raghuvansham, whose paintings on the walls had beautiful depictions of elephants playing in the Padam Sarovar. The materials for painting are mentioned in Kama Sutra.

Indian painting is very rich, it has antiquity, diversity and based on vastness, there are many regional and local specialties. The following four forms of Indian painting are visible-

- Murals
- Movie
- Picture panel
- Miniature picture

Man's thirst to create art, which started with cave paintings, gave birth to visual art. Visual art means visual art which is related to the eyes.

Painting, sculpture, and architecture are referred to under this. Painting is considered the best among these three arts. The following formula from Chitrasutra of Vishnudharmottara Purana is proof of this -

"Kalanam Pravaram Chitram Dharmarthkaamokshard
Mangalya Pratham Dotad Grihe Satra Pratishthatam"

That is, painting is the highest among the arts. In which religion, wealth, work, and salvation are attained. Therefore, the presence of Mars is always considered to be present in the house where paintings are highly respected.

Students are required to be aware of the pictorial material in historical sources. In the modern environment, the child is forgetting his practical and social conduct. The child should develop interest in the subject of history and understanding it through pictures of ancient history provides easy and direct knowledge. In the subject of painting, students develop their abilities by painting various activities, objects and forms of inanimate consciousness related to life based on visual knowledge. Indian painting, like Indian culture, shows a special kind of unity from ancient times till today. During the ancient and medieval period, Indian painting was mainly inspired by religious sentiments, but by the modern period, it depicted secular life to a great extent. Even today, Indian painting is taking up the subjects of folk life and making them concrete.Painting contributes organically to the physical, mental, moral, and emotional development of a child. Its value can be experienced at various levels in school education.

In painting, the senses of the students work, hence it is helpful in the development of consciousness. By giving pictures in the textbook, it becomes easier to understand the various abstract concepts contained in the text.

Because with the help of pictures the conceptual power of students increases. He can conceptualize well and understand the idea and concept.

Amaravati sculpture is an ancient sculpture style. Which occurred in south-eastern India around the second century BC. to the 3rd century BC. It flourished during the reign of Satavahana dynasty. It is known for its magnificent relief wall paintings.

Like rivers, valleys, civilizations and developing to developed cities have been depicted through various maps. At the same time, through palm leaves and manuscripts and inscriptions of archaeological importance, pictures of various policies developed with human civilization can be seen. By looking at the pictures of stone and iron tools and weapons developed in the Stone Age and Iron Age, one can get an idea of the skilful methods of humans.Along with this, the coins and currencies of Shaka, Hun, Kushan, Satvahana, Hind, Yavana, Maurya, Gupta and Mughal periods, which were used for economic activities along with the developed civilization in different periods, are very useful in understanding the economy of the then society. To understand the architecture, architecture, and building construction art developed by human civilization, the social standard of living can be ascertained by looking at the urban settlements of the civilized society of Harappa and Mohenjo-Daro period.Later, with the development of human civilization, one cannot help but be surprised to see the temples and monasteries built by many dynasties, and the building art developed by the Mughals and the British. Seeing each level of the learning situation in concrete form for the students through pictures. The child can remember them in his mind for a longer time, and by knowing their relation with other things, he can get information about their real importance.To compose the history of any country, one must take the help of historical sources related to that country through pictorial material. Materials obtained from excavation of these sources, inscriptions, samples of ancient ruins, architecture and paintings, poetry, and fame, genealogy, permits, documents, donation letters issued by rulers, bravery stories of freedom fighters shown through pictures, temples, mosques, pilgrimage centers etc.

are considered very important.

Major sources of Indian history

We can divide all the sources of Indian history into three parts: -

1. Archaeological sources
2. Literary sources
3. Accounts of foreign travelers and writers

1 Archaeological source – Special importance has been given to archaeological sources for the study of ancient India. These are considered more authentic than literary sources. The major archaeological sources providing information about ancient Indian history have been classified as follows-

(1.) Records
(2.) Monuments and ruins
(3.) Currencies, coins, and seals
(4.) Artefacts (buildings, temples, stupas, chaitya Bihar)
(5.) Earthen pots

1 Records: - Records are considered important and authentic sources of ancient Indian history because the records are contemporary. According to Dr. Ramesh Chandra Majumdar, "The records being contemporary are reliable evidence and they have helped us the most."

From time to time, ancient Indian rulers, feudal lords, and rich people got many inscriptions engraved to commemorate their victory, fame, charity, good deeds or celebrations. Depending on the object on which the inscription is engraved, there are several categories: -

(1.) Inscription, (2.) Pillar inscription (3.) Copper plate inscription
(4.) Cave inscription (5.) Sculpture

1. Inscriptions: - Inscriptions provide important information about the political, social, economic, religious, and cultural conditions of contemporary India. For example, if we find Hathigumpha inscription of Kalinga king Kharavela, Prayag-Prasashti inscription of Samudragupta, Girnar inscription of Rudra Daman etc. then it confirms our information about the above-mentioned persons.

2. Pillar inscription: - Where natural stones were not available, stone pillars were used for inscription. Ashoka's pillar inscriptions are the most important among the pillar inscriptions. Apart from these, the Greek Heliodorus's pillar writing on foreign countries, Brahmagupta's Prayag pillar writing and Skanda Gupta's internal pillar writing are especially important.

3. Copper plate inscription: - In ancient times, when kings or feudal lords donated land or gave rewards to any person, they used to get it engraved on copper plates. Many types of information are available from such copper plates. Such as brief introduction of the scriptures and its lineage, victory, pilgrimage, eclipse, religious activities, description of gotra etc.

4. Cave inscriptions: - The inscriptions engraved in the caves used for the residence of monks and saints are called cave inscriptions. Among these cave writings, Nagarjuniya Guha writings of Dasharatha, Nashik writings of Sarvanana's, Nanaghat and Kaal writings etc. are especially noteworthy.

5. Statue Writings: - Sometimes some writings are found on specific parts or lower parts of Brahmin, Buddhist, and Jain statues, which have proved to be very helpful in making history.

2. Monuments and ruins: - Ancient buildings and ruins have had special importance in the making of ancient Indian history. Although the monuments and ruins do not throw much light on the political situation, they provide adequate information about the religious, social, economic, and cultural situation.

Information about the world's oldest civilization 'Indus Valley Civilization' has probably been obtained from the ruins obtained from the excavations in Harappa and Mohenjo-Daro, in which remains of the then human civilization have been found.

3. Currencies, coins, and seals: - Currencies or coins have also helped a lot in the making of

ISSN: 0022-3301 | YEAR 2023

ancient Indian history. The oldest coins of India are punch-marked coins. However, the names of rulers, their titles, dates, royal insignia, and religious symbols were inscribed on gold, silver, copper, and brass coins. For example, the names of Buddhist, Hindu, Iranian and Greek gods inscribed on the coins of Kanishka are indicative of the religiosity and tolerance of that Buddhist leader.

Similarly, in ancient times, seals were made of both clay and metal. Usually these bear the name or signature of a king, feudal lord, official, corporation, businessman or individual. These seals were used to imprint letters or parcels. The most and impressive is "Pashupati seal." Which is considered the first evidence of Shiva in Indian tradition.

4. Artefacts: - Many artefacts like murals, pillars, statues, temples, toys, jewellery etc. have been found from the excavations done at various places in India, which provide special information about ancient Indian history, civilization, and culture. Information is available. Toys, statues, and ornaments recovered from the Indus Valley, Ashoka's pillars, various Buddhist statues, copper and bronze statues, wall paintings of Ajanta and Wagh caves are typical examples of this.

5. Earthen pots: - Earthen pots have also been found from various places in India. These utensils also have immense historical importance. These utensils are not only useful from the point of view of art, but by examining the soil and finding out their age, it helps in knowing the chronology of history.

Thus, there is no dearth of sources to know ancient Indian history. Various types of literary and archaeological material are available in abundance for the above information.

- **Conclusion-** Using imagination instead of the size of the actual object, you can make it thick, thin, long, or short. Apart from this, instead of drawing the actual objects as they are, you can use your imagination to draw the shapes at different places in the picture. The picture is two dimensional. The objects and shapes that we see in real form are only a source of inspiration for us to make pictures.While drawing a picture, we should depict only the original shape of the object. In trying to depict the details of an object, the essence of the object or shape is lost. The artist should leave aside the small details and portray the entire effect. Rajasthan has a rich tradition of folk painting. In the last days of the Mughal period, many Rajput states came into existence in different regions of India, the main ones being Mewar, Bundi, Malwa etc. A specific type of painting style developed in these states. Due to the characteristics of these different styles, they were given the name of Rajput style. In fact, Rajasthani painting refers to the painting which is the heritage of this province and was formerly prevalent in Rajputana. Rajasthani painting, nurtured in various styles and sub-styles, holds an important place in Indian painting. Despite being influenced by other styles, Rajasthani painting has its original identity. Expressing the invisible feelings of the mind through pictures and lines is called painting. Cultural development is visible in the art of illustration. The paintings in the Bhimbetka caves of Madhya Pradesh are the most ancient in prehistoric times. Rajasthani painting is known for its antiquity. Many ancient evidences undoubtedlyConfirms glorious existence. When the painting of Rajasthan was going through its initial phaseat that time the Ajanta tradition was infusing a new life into the painting of India. Arab invasionsto avoid the hassles, many artists left the states like Gujarat, Lat etc. and moved to other parts of the country.Started settling down. The painters who came here introduced the style of Ajanta tradition into the local styles. Coordinated with naturalness. Rajasthani painting is so deeply ingrained in its tradition that its symptoms are visible even in modern times. Even today many Rajasthani artists are doing miniature paintings on silk, ivory, cotton cloth and paper. Pahari painting also developed in India in the form

of Basauli and Kangra painting styles. From the coordination of Mughal style and Rajdhani style, the folk-art mural style of Kashmir was born. In Kangra style both love of nature and love of GodCarefully presented through pictures. Thus, the contribution of Rajasthani painting in the development of Indian painting cannot be denied. It is an integral part of the cultural development of India. Rajasthani paintings are an important source for the study of history as cultural evidence.

- **References -**

- Singh, Mamta (2015). Basic elements and principles of visual arts and folk arts, Rajasthan Hindi Granth Academy, Jaipur.
- Aggarwal, Giriraj Kishore (2002). Art and Pen, Ashoka Prakashan Mandir, Aligarh
- Shrotriya, Sukhdev (2002). Kala Vichar, Chitrayan Prakashan, Muzaffarnagar
- Shrotriya, Sukhdev (2002). Foundations of Painting, Chitrayan Prakashan, Muzaffarnagar
- Aggarwal, Shyam Bihari (2000). History of Indian Painting, Roop Shilpa, Allahabad
- Verma, Avinash Bahadur (1998). Art and Technology, Bareilly
- Verma, Avinash Bahadur (1998). History of Indian Painting, Bareilly
- https://www.selfstudys.com/sitepdfs/xC9of5HjGsmj7zyaDv2v

Journals and Survey-

- Anveshika, Indian Journal of Teacher Education, NCERT, New Delhi, Volume-7, Number-1 (June 2010)
- Emerging Trends in Education Association for Innovative Education, Varanasi, Volume-1 (No.-2 February 2011)
- Indian Education Abstract NCERT, New Delhi, Volume-5, Number 1 and 2 (January and July 2005)
- Indian Education Abstract NCERT, New Delhi, Volume-5, Number 2 (July 2006)
- Indian Education Abstracts (April 4, 2005), CBSE, New Delhi.
- International Studies Jawahar Lal Nehru University, New Delhi, Volume-48, Number-1 (January 2011)
- Education Herald A Quarterly Journal of Education Research Volume-40, No.-4, Jodhpur (October-December 2011) Page No. 5-13, 41-49, 75-83, 125-129
- Education Technology Research General, (March-April 2013), NCR Volume-53, Number-2
- Karunya, General of Research, Karunya University, Karunya Nagar Coimbatore, Volume-3, Number-2 (April 2012)
- Journal of Education and Psychological Research, Haryana, Volume-2, Number-2 (January 2012)

Impact Factor (SJIF): 6.092 E-ISSN: 2583-1615

International Journal of Research in Academic World

Received: 05/November/2023 IJRAW: 2023; 2(12):05-07 Accepted: 08/December/2023

Relevance of Inclusive Education

*[1]Dr. Amita Jain

*[1]Assistant Professor, Department of Education, Jain Vishwa Bharati Institute, Ladnun, Nagaur, Rajasthan, India.

Abstract

To improve the quality of Indian education, it is very important to adopt inclusive education and expand its scope. It works to strengthen democracy. Through this it is possible to fully achieve the fundamental rights given by the constitution. It is possible to fully implement the right to equality through inclusive education. Through inclusive education, students get equal opportunities for education. In this, there is no discrimination based on mental, intellectual, and physical ability of the students and it works to provide education at one place considering all as equal. Through this, the education level of disabled students and backward class students can be improved. It is a model of special education. It provides equal teaching-learning opportunities to all the students. Since it provides equal opportunities for education to all, the objectives of the Right to Education Act, 2009 can also be achieved through it. Inclusive education provides vocational opportunities to all without any discrimination.

Keywords: Inclusive education, generalization, inclusion, equality

Introduction

We all believe that education is the cornerstone of the development of any country. On which the progress, unity and integrity of society and nation depends. Education is not given only for business and livelihood, but it also develops various types of cognitive, creative, moral, co-operation, equality, emotionality etc. qualities in children. At present, according to programs like Sarva Shiksha Abhiyan and Right to Education, it has become the right of every child to get education. These programs can be successful only when we include all those who are physically, mentally, emotionally different in the main stream of education. The modern ideology for the education of children with these differences is not to provide special education to these children. Many educationists are not in Favor of this type of education. Until recently, no special attention was paid to the education of these special children. Then special schools started opening for the education of these children. These schools were looked upon separately. From this point of view, these children consider themselves separate from the society and they have a feeling of inferiority. At present, many educationists and scientists have given the idea that integrated education should be provided in schools only so that education can be provided equally to all. On the one hand, there is talk of equal opportunities for education, and on the other hand, to arrange separate schools for special children? This question comes up. Providing education to special children in general schools for equal opportunities of education is inclusive education. Although it is a difficult task to give education to all in normal schools, but it is not impossible. Inclusive education means that education which is provided to a particular student according to his physical and mental abnormality. Educational inclusion is not for any one person or student but also for all the students who are not able to function in normal environment. Some of these students are physically disabled and some students may be gifted and other types as well. Inclusive education is that education, through which knowledge is imparted to children with special abilities such as retarded children, blind children, deaf children, and gifted children. Through inclusive education, the intellectual educational level of the students is first examined, then the level of education to be given to them is determined. Therefore, it is such an education system that is prescribed only for children with special abilities. Hence it was named inclusive or inclusive education.

Four Main Processes are Important in Inclusive Education

i). **Normalization:** Normalization is the process that creates a normal social environment for gifted children and youth to learn work as far as possible.

ii). **Deinstitutionalization:** Deinstitutionalization is such a process in which more and more talented children and young students are removed from the boundaries, who get education in residential schools and provide opportunities to get education among the masses.

iii). **Mainstreaming of Education:** Mainstreaming of education is the process in which gifted children interact with ordinary children through day-to-day education.

***Corresponding Author:** Dr. Amita Jain

iv). Inclusion: Inclusion is the process which is done to the gifted children in every condition for their education in the general education class. Integration is such a process in which all the characteristics of 'some part' of the society (which is physically handicapped or disabled) are found in the society. The signs of generalization are

a) Children with disabilities have the same rights as other normal children.
b) Children with disabilities have the same rights for progress and upliftment in the society as other normal children.
c) Equal opportunities to reach the sphere of life as other citizens and
d) Equally in the society are partners in (equality).

This process starts with people coming closer and reducing the distance from each other. This process reduces social distance and promotes cooperation. In this way social inclusion is strengthened and different groups of children become equal participants in the society.

In inclusive or inclusive education, gifted children and normal children take full time or half time education in classes together. In this way meeting, adjustment, social and educational or coordinate both. Educationists think that inclusive education is to be established in normal schools for our children. Where they are given help and facilities in special education.

Features of Inclusive Education

- Inclusive education supports the feelings of democracy and works to provide education to the students on that basis only.
- In inclusive education, the number of students is limited to 20-25 and teachers with special training are appointed to teach the students.
- Students gain new experiences through inclusive education. Due to which their confidence has increased.
- Inclusive schools are also inspected from time to time. Due to which the inspectors also suggest changes for improvement as per the need.
- In inclusive classes, full care is taken of the facilities of the disabled. Complete arrangements are made for their travel, food, and drink.
- Continuous efforts are made to improve their morale to increase their confidence.

Need and Importance of Inclusive Education

At present, due to increase in population, along with the number of children, their growing differences are also taking the form of a problem. The main objective of inclusive education is to provide equal education to all by taking all these types of differences together. This education provides children with diversity of language, religion, gender, culture, and social and physical, mental qualities to learn from each other, relate socially and adjust. At present, inclusive education has become an inevitable necessity. It is very important from the point of view of personal, family, social and national development. The need and importance of inclusive education are as follows-

Raising the Standard of Education

Inclusive education is based not only on the concept of "Education for all but on the concept of quality education for all." In this education system, the curriculum is designed keeping in mind the physical, mental, emotional, social, cultural needs of the children. In this method, the teaching process is planned in such a way that every child can develop himself completely and can develop his ability or potential.

Fulfilment of Constitutional Responsibility

The Constitution of India also clearly states that no child can be denied education because of caste, religion, language, physical disability, gender etc. Right to education law has also been made for its discharge and its progress. According to which it is the right of every child to get education. No educational institution can deny him education. Inclusive education also calls for providing education to all.

Social Equity

Inclusive education follows the principle of equity that the International Conference held in Geneva stated that "school is the only place where all children are participants and all are treated equally." This means that school is the only place where all the children are taught equally by the teacher. Where children of different caste, religion, gender, community, language, mental qualities are given equal education together. Inclusive education emphasizes on providing education to physically, mentally, emotionally, and socially handicapped children along with all.

Development of Personal Life

This education is beneficial in the development of personal life. The main objective of inclusive education is to change the mindset and attitude of the children. The centre of this education is the child. It has special significance for the cognitive, emotional, social, and mental development of children.

For the Development of the Society

Individuals make the society. Society cannot be imagined without the combination of individuals. If the whole society must be developed then it is necessary to provide education to all. A person's life is improved only by his hard work, understanding and efforts and the contribution of education is maximum in this. Thus, the development of the society depends on its qualified citizens. It is the demand of the present time that every child should be empowered through education and such efforts should be made so that each child develops his/her own abilities and skills. In inclusive education, there is a provision to provide education to every child of the society, so that all of them can get educated and get employment and help in building a good society.

Development of Democratic Qualities

Inclusive education helps in the development of democratic qualities of children. Democratic qualities include love, goodwill, co-operation, tolerance, respect for each other etc. In inclusive education, development of these qualities is possible by teaching all the children together in the same class. This is because this education system emphasizes mobility and adjustment in its curriculum, teaching methods, interactions, and behaviour in school and in the classroom, or outside the classroom.

Proper Adjustment

Through inclusive education, students learn to adjust to different situations and environments, many studies show that regular teamwork creates a positive attitude in students.

Progress of the Nation

Education is essential for the development and progress of any country. UNESCO gave a report in the conference 2008 in Geneva and explained that despite this expansion of primary education, 72 million children are still unable to enter school due to poverty or social status. For the development and progress of the nation, it is necessary for the human resource to be skilled and this skill can be achieved only through education. If a disabled child gets education, then there is desired development of all those qualities which are expected from education. If a person or a child is educated, then he will do employment and work in some field and will demonstrate his abilities to the fullest. Therefore, in inclusive education, education is provided to all, so that every child of the country gets education, which is necessary for the progress of the nation.

Use of Modern Technologies

At present, the use of computer, projector, internet etc. has become a common thing. They are also being used in the field of education. Students are made aware of these tools through education. A person can get employment by using this knowledge in his personal life and develops his knowledge.

Universality of Education

The government makes many plans for the universality of education, until these plans are not implemented properly, this goal cannot be achieved. Education (especially primary education) can be made universal only when education is expanded keeping in mind the qualities, level and needs of each child. Inclusive education emphasizes on implementing and cooperating with the schemes of the government. In this all religion, caste, language and physically challenged children are also taught along with normal children.

Satisfying Effect for Parents

Mostly it is seen that along with the birth of a disabled child, their parents are worried about how the education system of the child will be? This type of despair and apathy persists. They look at such children with kindness from the very beginning. Earlier, these children had to be sent to special schools far away for education, parents used to be more worried. Since now due to the concept of inclusive education, such children can stay with their families and get education in normal schools. Which is a satisfactory effect for parents and guardians.

Increase in Employment Opportunities

Education is considered as a helpful tool in earning a living. In a country like India, on the one hand, education is helpful in the accumulation of knowledge and on the other hand, it is a means of getting employment. An educated person can do any job efficiently, while an uneducated person is helpless due to his inability, as a result of which the cycle of poverty continues. It is our need to spread education and inclusive education is an effort in this direction.

Conclusion

In the modern era, it is necessary to expand inclusive education, considering the conditions of the society and the inequalities prevailing in education. But the reality is that at present equal opportunities of education are not available to all the students. Such students who want to get higher education but their economic or social condition is not such that they can be able to get education. Inclusive education is primarily concerned with students with disabilities, who are included in the mainstream of education through various efforts. In this education system, there is an integrated presentation of various resources which improves the learning level of students with disabilities. In this way, by resorting to integration in inclusive education, the purpose of educating all children together was emphasized, where no discrimination is done with normal and special children. Inclusive education is an ideal form and not a program in which the general teacher is to be able to do special education. In the National Curriculum Framework for School Education, 2000, the NCERT emphasized on inclusive education. In 1994, SEN (Special Needs Education) organized internationally and UNESCO also emphasized on the adoption of inclusive education. In 1948, the universal recommendation of human rights "Education is the right of every child" was talked about internationally in 1990 by EFA (Education for All). The Government of India considered the basic act of education "Education for all" as the main objective of which is to reach education to every child.

References

1. Thakur, Yatindra. Inclusive Education, Agarwal Publication, Agra, 2018.
2. Sharma, RK. Inclusive Education, Radha Prakashan Mandir, Agra, 2015.
3. Uday, Deepak, Uday, Abha. Inclusive School Structure, Alka Publication, Ajmer, 2015.
4. Bhargava, Mahesh. Distinguished Children: Education and Rehabilitation, H.P. Bhargava Book House, Agra, 2012.
5. Pre-School Education Curriculum Framework. Ministry of Women and Child Development Government of India, 2012.

सम्बोधि एवं गीता के शैक्षिक दर्शन में निहितार्थ मनोवैज्ञानिक तत्वों की अवधारणा का विश्लेषण

श्री मनोज कुमार जैन

शोधार्थी, शिक्षा संकाय, जैन विश्व भारती संस्थान, लाडनूँ, राजस्थान

manojjainjha@gmail.com

डॉ. अमिता जैन

सहायक प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, जैन विश्व भारती संस्थान, लाडनूँ, राजस्थान

amitajainjuly1@gmail.com

सारांश : वर्तमान वैज्ञानिक प्रगति के युग में आधुनिकता से प्रभावित मानव संस्कृति पार्थिव होती जा रही है। व्यक्ति भौतिकता की दौड़ में चकाचौंध होकर मानवीय जीवन मूल्यों को भूलता जा रहा है। मानव व्यक्तित्व का ह्यस तथा बुद्धि अस्थिर होती जा रही है। व्यक्ति भय, क्रोध, चिन्ता, मनस्ताप, कुण्ठा तथा विषाद से ग्रसित होता जा रहा है। मानवीय शिक्षा भी इससे प्रभावित हो रही है। वर्तमान में शिक्षा का उद्देश्य नौकरी प्राप्त करना, धन कमाना तथा भोग–विलासों से युक्त जीवन यापन करना ही रह गया है। मानव अपने कर्त्तव्यों से विमुख हो रहा है। ऐसी स्थिति में सम्बोधि एवं गीता में निहित शिक्षा द्वारा शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक तत्वों को जानकर ही हम अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सफल हो सकते है।

संकेतांक शब्द– सम्बोधि, गीता, शिक्षा, उद्देश्य, शिक्षण विधि, पाठ्यक्रम, अनुशासन, व्यक्तित्व अभिप्रेरणा, संवेग, बुद्धि व दुश्चिन्ता आदि।

प्रस्तावना –

भारतीय समाज एवं संस्कृति में प्रारम्भ से ही शिक्षा को विशेष महत्व दिया गया है। ज्ञान के प्रभाव से ही भारत वर्ष को विश्व गुरू के नाम से जाना जाता है।

यद्यपि वर्तमान युग सांस्कृतिक संक्रांति व वैज्ञानिक प्रगति का युग है। जो अतीत की अपेक्षा अधोगामी होता जा रहा है। आज की दुनिया पर भौतिकवाद जरूरत से अधिक हावी हो गया है। इससे मानवों में रहन–सहन, आचार–विचार, धर्म–कर्म, सभ्यता और संस्कृति में अभूत पूर्व परिवर्तन हो गया है। मानव जीवन में अनेक व्यक्तिगत सामाजिक, धार्मिक, नैतिक, शैक्षिक और मनोवैज्ञानिक समस्याओं का जन्म हुआ है। मानव मन राग–द्वेष, घृणा, ईर्ष्या, लोभ, मोह, क्रोध, तृष्णा तथा विषाद आदि मनोविकारों से ग्रसित होता जा रहा है। जिससे मानव में सरलता, विनम्रता, सहनशीलता, सहिष्णुता, उदारता, संवेदनशीलता आदि मानवीय गुणों का ह्रास हुआ है।

सम्बोधि एवं गीता में निहित शिक्षा का उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति को अन्तर्निहित आत्मा की अनुभूति कराकर उसके व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना है। तथा वर्तमान समय में आदर्श, सद् प्रवृत्तियों से युक्त तथा नैतिक आध्यात्मिक, सामाजिक, चारित्रिक मूल्यों से युक्त एक पूर्ण मानव का निर्माण करने की जो आवश्यकता महसूस की जा रही है, उसकी सम्पूर्ति सम्बोधि एवं गीता में निहित शिक्षा द्वारा की जा सकती है।

इस संदर्भ में शिक्षा के साथ–साथ मनोविज्ञान का महत्व भी व्यक्ति के चरित्र निर्माण तथा व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास हेतु बढ़ जाता है।

समस्या का औचित्य–

आधुनिक संचार साधनों के माध्यम से मुख्य रूप से फैशन, उपभोक्तावाद तथा वासनाओं को प्रोत्साहन मिल रहा है। असंयम और अनियमितता के कारण हमारा स्वास्थ दिन प्रतिदिन बुरी तरह गिरता जा रहा है। नैतिक मान मर्यादाओं का उल्लंघन करने की प्रवृति तथा अपराध प्रवृति बढ़ती जा रही है। जो सार्वजनिक जीवन के लिए संकट का रूप धारण कर रही है। धर्म के नाम पर मानसिक पतन व शोषण हो रहा है। सामान्यतया लोगों में सद्भावना व आदर्शवादिता की दिन प्रतिदिन कमी होती जा रही है। ऐसी विषम परिस्थितियों की उपेक्षा नही की जा सकती है। भगवान महावीर और कृष्ण के समय भी ऐसी परिस्थितिया थी। उन विषम परिस्थितियों में भगवान महावीर ने शिष्य मुनि मेघकुमार तथा भगवान कृष्ण ने शिष्य अर्जुन को सम्बोधित करके सम्पूर्ण मानव जाति के कल्याण के लिए उपदेश दिए।

सम्बोधि एवं गीता दोनो ग्रन्थ विषाद से प्रारम्भ होकर प्रसाद पर समाप्त होते है। विषाद व अवसाद एक मानसिक बीमारी है। इससे ग्रसित व्यक्ति स्वयं को कर्त्ता मानते है। तथा प्रकृति की शक्तियों पर ध्यान नहीं देते है।

सम्बोधि एवं गीता में मनः प्रसाद को स्पष्ट करते हुए कहा है कि विषय चिन्तन से वासनाऐं बढ़ती है, कामनाओं के बढ़ने से क्रोध बढ़ता है, क्रोध के बढ़ने से व्यक्ति में अविवेक उत्पन्न होता है। तथा अविवेक से स्मृति नष्ट होती है। स्मृति के नष्ट होने से बुद्धि का नाश होता है। तथा बुद्धि के नाश होने से सबकुछ नष्ट हो जाता है। किन्तु संयमी व्यक्ति इन्द्रियों को वश में करके राग–द्वेष रहित होकर मन के प्रसाद को प्राप्त करता है। इन दोनो ग्रन्थों में मनोविज्ञान का परिपाक् है। इन ग्रन्थों में प्रथम अध्याय से लेकर अन्तिम अध्याय तक मनोवैज्ञानिकता स्पष्टया दिखाई देती है। इन ग्रन्थों में निहित विभिन्न मनोवैज्ञानिक तत्वों का अध्ययन, इन ग्रन्थों में उल्लेखित तत्व विषयक विचारों को समाज के लिए सरल, बोधगम्य एवं सम बनाने में सहायक होगा।

अतः इन ग्रन्थों में कहॉ–कहॉ किस रूप में शिक्षण के उद्देश्य, शिक्षण विधियॉ, गुरू–शिष्य सम्बन्ध, पाठ्यक्रम एवं अनुशासन आदि शैक्षिक तत्व तथा व्यक्तित्व, अभिप्रेरणा, संवेग, बुद्धि व दुश्चिन्ता आदि मनोवैज्ञानिक तत्व उपस्थित हुए है। शोधार्थी ने उनका विश्लेषण करने का प्रयास किया है।

शोध के उद्देश्य –

1. सम्बोधि एवं गीता का परिचय प्राप्त करना।
2. सम्बोधि एवं गीता के अनुसार शैक्षिक तत्वों (शिक्षा, शिक्षा के उद्देश्य, शिक्षण विधियाँ, गुरू–शिष्य सम्बन्ध, पाठ्यक्रम व अनुशासन आदि) का अध्ययन करना।
3. सम्बोधि एवं गीता के अनुसार मनोवैज्ञानिक तत्वों (व्यक्तितत्व, अभिप्रेरणा, संवेग के रूप में भय,

क्रोध तथा बुद्धि व दुश्चिन्ता आदि) का अध्ययन करना।

4. सम्बोधि एंव गीता में निहित शैक्षिक व मनोवैज्ञानिक तत्वों की वर्तमान उपयोगिता का अध्ययन करना।

शोध विधि–

प्रस्तुत शोध अध्ययन दार्शनिक अनुसंधान का भाग है। शोधकर्त्ता द्वारा सम्बन्धित अध्ययन हेतु दार्शनिक अनुसंधान विधि को स्वीकार किया गया है। किसी दार्शनिक समस्या का व्यवस्थित रूप से किया गया अध्ययन ही दार्शनिक शोध कहलाता है।

प्रस्तुत शोंध कार्य में सम्बोधि एवं गीता के शैक्षिक दर्शन में निहितार्थ मनोवैज्ञानिक तत्वों का अध्ययन करना है। अतः विश्लेषणात्मक एवं व्याख्यात्मक विधि का प्रयोग किया गया है।

सम्बोधि एवं गीता में निहित मनोवैज्ञानिक तत्वों का विश्लेषण–

1. **व्यक्तित्व की संकल्पना –**

सामान्तया किसी भी व्यक्ति का विशिष्टम लक्षण ही उसका व्यक्तित्व होता है। व्यक्ति के गुण या विशेषताओं का समुच्चय ही व्यक्ति का व्यक्तित्व कहलाता है। व्यक्ति के आचार–विचार, व्यवहार, क्रियाऐं और गतिविधियों में व्यक्ति का व्यवहार झलकता है। मनोविज्ञान में व्यक्तित्व का अर्थ व्यक्ति के रूप और गुणों की समष्टि से है। अर्थात व्यक्ति के बाह्य आवरण के गुण तथा आन्तरिक गुण दोनों ही व्यक्तित्व में समाहित होते है। इस सम्बन्ध में आईजेंक ने कहॉ है कि व्यक्तित्व व्यक्ति के चरित्र, स्वभाव, बुद्धि और शारीरिक आकार का ऐसा संगठन है। जो वातावरण के साथ उसका अपूर्व समायोजन करता है।

सम्बोधि के अनुसार रूचि के आधार पर भिन्न–भिन्न व्यक्तित्व होते है। इसके अनुसार दो प्रकार के व्यक्ति होते है– आत्मवादी और अनात्मवादी । आत्मवादी व्यक्ति आत्मा में श्रद्धा रखते है तथा अपने लक्ष्य की और अग्रेषित होते है तथा अनात्मवादी लोग आत्मा में श्रद्धा नहीं रखते है और संसार में जन्म–मरण के दुःख को प्राप्त करते है।

गीता में भगवान श्रीकृष्ण शिष्य अर्जुन को व्यक्तित्व के तीन गुणों के बारे में बताते हुए कहते है भौतिक प्रकृति इन सत्वं, रज और तमो गुण से युक्त होती है। जब प्राणी प्रकृति के संसर्ग में आता है तो वह इन तीनों गुणों में बन्ध जाता है। मनुष्य के व्यक्तित्व में ये तीनों गुण पाये जाते है। इन गुणों के वशीभूत होकर ही वह व्यवहार करता है। व्यक्ति में जिस गुण की प्रधानता होती हैं। वह व्यक्ति उस गुण के अनुसार स्वभाव रखता है तथा व्यवहार करता है। इसमें सतो गुण से सम्पन्न व्यक्ति के व्यक्तित्व सर्वोत्तम माना है।

2. **बुद्धि की संकल्पना –**

बुद्धि के कारण ही मानव अन्य प्राणीयों से श्रेंष्ठ होता है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में बुद्धि का स्थान सर्वोपरि होता है। बुद्धि एक मानसिक शक्ति हैं। जो वस्तु एवं तथ्यों को समझने,

उनके आपसी सम्बन्धों को खोजने तथा तर्क पूर्ण ढ़ग से ज्ञान प्राप्त करने में सहायक होती है। अतः समस्त मानसिक क्रियाओं का योग ही बुद्धि कहलाता है।

सम्बोधि के अनुसार बुद्धि वह है जो मन पर नियंत्रण करती हैं तथा व्यक्ति को उत्तम कार्य करने के लिए प्रेरित करती है तथा व्यक्ति को अपने लक्ष्य प्राप्ति की ओर आगे बढ़ाने में साहयक होती है। बुद्धि से ही मन की अस्थिरता को दूर कर स्थिर किया जा सकता है। बुद्धि के कारण ही भगवान महावीर ज्ञान और दर्शन की सम्पदा से वर्धमान हुए। उनके अनुसार अहिंसा युक्त बुद्धि से ही व्यक्ति महावीर बन सकता है। इसी आध्यात्मिक बुद्धि के कारण ही भगवान वीर के नाम से प्रसिद्ध हुए। उनका आध्यात्मिक ज्ञान ही उनके आध्यात्मिक बुद्धि है। ज्ञान को ही बुद्धि कहा जाता है। इसी से मन को संयमित किया जाता है। इसी से व्यक्ति शारीरिक, मानसिक, भावानात्मक दुःखों से छुटकारा प्राप्त कर चिर स्थायी शांति को प्राप्त कर सकता है। इसके अनुसार सम्यक बुद्धि श्रेष्ठ होती है।

गीता के द्वितीय अध्याय में भगवान कृष्ण ने बुद्धि के महत्व को स्पष्ट करते हुए कहा है–

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना।
न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम्।।

अर्थात आसक्त या अयुक्त पुरूष के पास न तो बुद्धि होती है और न ही भावना होती है। बिना आस्तिक भावना के व्यक्ति को शांति भी प्राप्त नहीं होती है। तो फिर शांति रहित पुरूष को सुख कैसे मिल सकता है? इसके अनुसार बुद्धि वह होती है। जो प्राणी को शांति प्रदान करे, शोक से परे कर दे, इन्सानियत उत्पन्न करें, श्रेष्ठ और विश्वसनीय बनाए, उद्विग्नता और द्वन्द्वों से मुक्त कराये। बुद्धि वह जो व्यक्ति को अपने कर्त्तव्य कर्म की और प्रेरित करे। अतः बुद्धि वही श्रेष्ठ है जो समता से युक्त हो।

3. **संवेग की संकल्पना –**

संवेग वह मानसिक अवस्था है। जिसमें व्यक्ति अतिशीध्रता से उत्तेजित हो जाता है। संवेग शब्द की उत्पति लेटिन भाषा के Emovede से हुई है। जिसका अर्थ उत्तेजित दशा से है। अर्थात संवेग व्यक्ति की उत्तेजित दशा होता है।

सामान्यतयाः व्यक्ति में दुःख, आनन्द, प्रेम, सहानुभूति, क्रोध, भय, चिन्ता तथा आश्चर्य आदि संवेग पाये जाते है।

सम्बोधि में भगवान महावीर के उपदेश सुनकर मुनि मेघकुमार के मन में मोक्षभिलाषा संवेग जागृत हुआ। वह साधना के मार्ग पर चलकर मोक्ष रूपी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उद्यत हुआ। लेकिन साधना की समर भूमि में एक दिन के कष्टो ने उसके मन को अस्थिर बना दिया। उसके मन में साधना की समर भूमि में कषाय (काम, क्रोध, लोभ, मोह) रूपी प्रतिपक्ष के शत्रुओं को देखकर भय एवं चिन्ता के संवेग की उत्पति हुई। जिससे वह साधना पथ से विमुख हो गया। अतः भगवान महावीर ने मोक्ष अभिलाषा संवेग को पुनः जागृत किया। जिससे वह अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सफल हो सके। इसमें क्रोध संवेग की संकल्पना का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। भगवान महावीर मुनि मेघकुमार को कषाय रूपी शत्रुओं का स्वरूप बताते हुए कहते है कि काम, क्रोध, लोभ, मोह ये नरक के द्वार तथा बन्धन के हेतु है। तथा आत्मा का नाश करने वाले है। इसलिए इन कषाय रूपी शत्रुओं का त्याग कर देना

चाहिए। क्रोध तब उत्पन्न होता है। जब कामना तो उत्पन्न होती है, परन्तु उसकी पूर्ति में विध्न उत्पन्न हो जाता है।

गीता में शिष्य अर्जुन के मन में युद्ध स्थल पर प्रतिपक्ष के योद्धाओं का अवलोकन करने पर भय एवं चिन्ता के संवेग उत्पन्न हुए तथा उनका शरीर कम्पीत हो उठा। इसके मनोवैज्ञानिक अध्ययन में क्रोध का भी विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। भगवान कृष्ण शिष्य अर्जुन से आसुरी सम्पदा के स्वरूप को बताते हुए कहते है कि ये काम, क्रोध, लोभ, मोह नरक के द्वार तथा आत्मा का नाश करने वाले हैं। इसलिए इनका त्याग कर देना चाहिए। मनोविज्ञान में भी क्रोध व भय जैसी संवेगात्मक अवस्थाओं के सम्बन्ध में कहा है कि क्रोध व भय की अवस्था में बौद्धिक क्षमताऐं प्रायः समाप्त हो जाती है।

शोध कार्य के निष्कर्ष –

सम्बोधि एवं गीता गुरू एवं शिष्य के लिए आवश्यक पात्रताओं, योग्यताओं का निर्धारण करती है। इनके अनुसार गुरू व शिष्य दोनों में श्रद्धा, उत्सुकता, समर्पण तथा तन्मयता समान रूप से होनी चाहिए। तभी वे अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सफल हो सकते है। मनोविज्ञान भी इस तथ्य पर जोर देता है कि गुरू को विषय का ज्ञाता, शिक्षण कुशुलता, दया, सहानुभूति, उत्सुकता तथा शिष्य के प्रति संदेह से रहित आदि गुण होना आवश्यक है तथा विद्यार्थी में भी जिज्ञासा, श्रद्धा, समर्पण, त्याग, सेवा, विनम्रता तथा गुरू के प्रति संदेह से रहित आदि गुणों का होना आवश्यक है। तभी वह अधिगम प्राप्त कर अपने लक्ष्य की प्राप्ति कर सकता है।

सम्बोधि एवं गीता के अनुसार स्थिर बुद्धि युक्त व्यक्ति अपने वातावरण से समायोजित होकर निष्काम एवं समत्व भाव से युक्त होकर कर्म करता है। मनोविज्ञान भी हमें यह बताता है कि बुद्धि ऐसी योग्यता है जो हमे वातावरण के साथ समायोजन करना सिखाती है। अतः समायोजन क्षमता का विकास करने के लिए बुद्धि को स्थिर किया जाना आवश्यक है।

सम्बोधि एवं गीता में सुख–दुःख, ईर्ष्या, भय, चिन्ता, क्रोध आदि संवेगो को विकार कहा है। जो आत्म सिद्धी के मार्ग में बाधा उत्पन्न करते हैं। मनोविज्ञान में भी विकारों को संवेग कहा जाता है। जिनका असन्तुलन व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास का बाधक होता है।

सम्बोधि में भगवान महावीर अपने शिष्य मुनि मेघकुमार को स्वधर्मानुसार कार्य करने के लिए प्रेरित करते है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण शिष्य अर्जुन को स्वधर्मानुसार कार्य करने के लिए प्रेरित करता है। जो प्रेरणा मनोवैज्ञानिक पहलू है।

सम्बोधि एवं गीता योग का विज्ञान और कर्म प्रेरणा का दर्शन है। इसके अनुसार स्वभाव ही अध्यात्म है। मनोविज्ञान ही स्वभाव व व्यवहार का अध्ययन करता है।

शैक्षिक निहितार्थ–

सम्बोधि में भगवान महावीर एक दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक शिक्षक के रूप में अपने आप में सद्वृत्तियों और अहिंसा धर्म से युक्त पूर्ण व्यक्तित्व है। तथा शिष्य मुनि मेघकुमार एक सुपात्र श्रमण (विद्यार्थी) के रूप में सदाचरण से युक्त अपने आप में पूर्ण व्यक्तित्व हैं। भगवान महावीर एक महान शैक्षिक प्रशासक एवं शिक्षण व्यूह रचनाविद् के समस्त गुण अर्थात् आचार्य के समस्त गुणों से सम्पन्न है। वर्तमान में शिक्षकों के लिए एक महान आदर्श के रूप में है। भगवान महावीर ने एक गुरू के रूप में समस्त मर्यादाओं का पालन करते हुए अपने शिष्य मुनि मेघकुमार को उद्देश्य प्राप्ति के लिए प्रेरित किया। शिष्य मुनि मेघकुमार ने भी अपना सम्पूर्ण जीवन गुरू के चरणों में समर्पित कर दिया। जो

वर्तमान में समस्त विद्यार्थीयों के लिए एक आदर्शमय है।

गीता में भगवान श्रीकृष्ण एक शिक्षक के रूप में पूर्ण व्यक्तित्व हैं। अर्जुन एक सुपात्र विद्यार्थी के रूप में अपने आप में पूर्ण व्यक्तित्व हैं। भगवान कृष्ण में शिक्षक के समस्त गुण विद्यमान है। वर्तमान समय में शिक्षकों के लिए एक महान आदर्श है। इसमें भगवान श्रीकृष्ण ने एक गुरू के रूप में समस्त मान मर्यादाओं का पालन करते हुए अर्जुन को उसके उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रेरित किया। सम्बोधि एवं गीता का ज्ञान न केवल गुरू व शिष्य के लिए वरन्, सम्पूर्ण मानव जाति के कल्याण के लिए लाभदायक है। सम्बोधि एवं गीता में शिक्षण कौशल, गुरू–शिष्य सम्बन्ध, गुरू–शिष्य के लक्षण एवं कर्त्तव्य, शैक्षिक उद्देश्य, शिक्षण विधियों, अनुशासन, पाठ्यक्रम, विद्यालय एवं मूल्यांकन आदि शैक्षिक तत्व निहित है।

इस प्रकार सम्बोधि एवं गीता शिक्षा सम्बन्धी तथ्यों से परिपूर्ण है। जिसका अध्ययन शिक्षा के क्षेत्र में अपरिहार्य है।

संदर्भ ग्रन्थ–

[1] रामसुखदास, स्वामी (1997), श्रीमद् भगवद् गीता साधक संजीवनी भाषा टीका, गीता प्रेस गोरखपुर।

[2] रीता, अरोड़ा (2006), शिक्षण एवं अधिगम के मनोसामाजिक आधार, शिक्षा प्रकाशन, जयपुर।

3 आचार्य, महाप्रज्ञ (2005), सम्बोधि, जैन विश्वभारती लाडनू।

4 आचार्य, महाप्रज्ञ (2010), अणुव्रत पाक्षिक पत्रिका, अणुव्रत महासमिति 210, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग,
नई दिल्ली।

5 आचार्य, रजनीश (1980), गीता दर्शन, डायमण्ड़ बुक डिपों, दिल्ली।

7 भक्तिवेदान्त, ए.सी, स्वामी प्रभुपाद (1990), श्रीमदभगवतगीता भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट, मुम्बई।

8 पाठक, पी.डी. (2005), शिक्षा मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

9 भटनागर, सुरेश (2008), शिक्षा मनोविज्ञान, लायल बुक डिपो, मेरठ।

ATISHAY KALIT

A U.G.C Care Listed Peer Reviewed and Referred International Bilingual Research Journal of Humanities, Social Science & Fine-Arts

LOTUS (July-December) Vol. 10, Pt. B Sr. 18 Year 2023

ISSN 2277-419X
RNI-RAJBIL01578/2011-TC

PART-II

Chief Editor :
Dr. Rita Pratap (M.A. Ph.D.)

Co-Editors :
Dr. Shashi Goel (M.A. Ph.D., Postdoc.), Prof. S.D. Mishra (M.A., Ph.D., Postdoc.)

66.	Reproductive Rights and Women's Health	Piyush Prof. (Dr.) Nitu Nawal	454
67.	Right to Privacy: The Conceptual and Legal Journey in India	Dr. Girish Kulkarni	462
68.	Analysis of E-Commerce via Competition Law in India	Dr. Vijayata G. Uikey	466
69.	Legislator's Privileges vis-a-vis Safeguarding Legislature's Property in India: An Analysis	Dr. Pradeep Kumar Pandey	471
70.	An Analysis of Growth and Performance of Minimum Support Price	Sunil Phougat	477
71.	The Impact of Inflation and GDP on India's Stock Market Returns	Dr. Pravin Pundalik Rajguru	483
72.	हरियाणा राज्य में प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना का एक विश्लेषण	दीपक कुमार सुनील फौगाट	492
73.	बिहार में महिलाओं की प्रशासनिक सहभागिता के विभिन्न आयाम	सौरभ सुमन प्रो. (डॉ.) विनय सोरेन	498
74.	Religion in a Secular Age: Kierkegaard's Perspective	Konsam Romabati	502
75.	Impact of Social Factors on Nutritional Status and Dietary Habits among Primary School Going Children	Sukanya Chakravorty Pratima Gond Manisha Aishwarya Das	507
76.	A Study on Challenges faced by Consumers during Online Shopping	Ms. Savita Dr. Varsha Goel Dr. Parmod Kumar	517
77.	महात्मा गांधी उच्च प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों के सम्मुख आने वाली समस्याओं का अध्ययन	रश्मि दाधिच डॉ. पूनम मिश्रा	524
78.	समेकित प्रशिक्षुओं के संदर्भ में अध्यापक मूल्यों की आवश्यकता एवं प्रासंगिकता	श्री रंजीत सिंह डॉ. अमिता जैन	528
79.	Secularism and the Role of the State : An Analysis of the Debate on the Hijab Ban in India and France	Aadya Mishra	534
80.	Women's Representation Through Reservation : An Analysis of Women Reservation Bills	Rida Khan	545
81.	माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत लैंगिक पक्षपात एंव पक्षपात रहित बालिकाओं के समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन	श्रीमति नीलम जैन श्रीमति प्रो. डॉ. सुमन लता यादव	559
82.	स्वतंत्रता सेनानी श्री भूरादास कामड़ मानवता की संकल्पना	धर्मराज सुनीता वर्मा डॉ. कविता	564
83.	Need for Quality Education	Dr. Mala Sharma	568

ATISHAY KALIT
Vol. 10, Pt. B, Sr. 18, 2023
ISSN : 2277-419X

समेकित प्रशिक्षुओं के संदर्भ में अध्यापक मूल्यों की आवश्यकता एवं प्रासंगिकता

श्री रंजीत सिंह
शोधार्थी, शिक्षा संकाय, जैन विश्व भारती संस्थान, लाडनूँ, राजस्थान
डॉ. अमिता जैन
सहायक प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, जैन विश्व भारती संस्थान, लाडनूँ, राजस्थान

सारांश

आज मानव अपनी शक्ति और ज्ञान का सदुपयोग न करके उसका दुरुपयोग कर रहा है, जिसके द्वारा व्यक्ति का व्यक्ति से, समाज का समाज से तथा राष्ट्र का राष्ट्र से विश्वास समाप्त हो रहा है। आज चारों ओर छल कपट, बेईमानी, चोरी, रिश्वतखोरी, अनुशासनहीनता, शोषण, भ्रष्टाचार, तस्करी, धोखाधड़ी दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। शिक्षा ही वह साधन है जो इन सभी बुराइयों से छुटकारा दिला सकती है। इसके लिए शिक्षकों में मूल्यों का होना परम आवश्यक है जो भावी नागरिकों को जीवन के मूल्यों की शिक्षा प्रदान कर सकता है तथा उनको भौतिकता के अंधकार से मुक्ति दिला सकता है। अध्यापक का आदर्श आचरण विद्यार्थियों को प्रभावित करता है और उन्हें संवेदनशील बनाता है। शिक्षक की अपने कार्य के प्रति जवाबदेही, उसकी वृत्तिक प्रतिबद्धता, शिक्षक का वृत्तिक मानक, शिक्षा की आचार संहिता, वह आदर्श गुण है जिनको आत्मसात कर एक शिक्षक विद्यार्थियों में मूल्यों का विकास कर सकेगा। भविष्य की शिक्षा व्यवस्था का भार समेकित प्रशिक्षुओं के कंधों पर होगा क्योंकि यह भविष्य के शिक्षक होंगे तथा शिक्षा व्यवस्था के निर्माता व संचालन कर्ता के रूप में अपनी भूमिका सुनिश्चित करेंगे। अतः यह आवश्यक है कि समेकित प्रशिक्षु व्यापक रूप से अध्यापक मूल्यों का बोध कर उसे अपने व्यवहार में आत्मसात करें, जिसके परिणाम स्वरूप एक स्वस्थ समाज का निर्माण हो सकेगा तथा भविष्य के नागरिकों में उत्तम मूल्यों का विकास संभव होगा। अध्यापक क0 अपने अध्यापन में दया, क्षमा, देशभक्ति तथा राष्ट्र समर्पण के प्रेरक प्रसंग भी विद्यार्थियों को सुनाने चाहिए जिसके द्वारा उनमें देश रक्षा, देश प्रेम, विश्व बंधुत्व जैसे राष्ट्रीय व वैश्विक मूल्यों का विकास हो सकेगा।

संकेतांक शब्द : समेकित प्रशिक्षु, अध्यापक मूल्य, प्रजातांत्रिक गुण, मानवता की शिक्षा, शाश्वत मूल्य।

प्रस्तावना

शिक्षा एक आजीवन चलने वाली सर्वांगीण विकास की प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मानव समस्त जंतु जगत में है। इस श्रेष्ठता का आधार मानव जीवन के विभिन्न प्रकार की मूल्य है। मानव मूल्यों का जीवन में अत्यधिक महत्व है, यही व्यक्ति के व्यक्तित्व को निर्धारित करते हैं तथा अस्तित्व को व्यापक व श्रेष्ठतम बनाते हैं। शिक्षा प्रक्रिया को संपन्न करने में शिक्षक का महत्वपूर्ण स्थान है। विद्यार्थी, शिक्षक के ज्ञान को ही नहीं सीखते बल्कि उसके आचरण एवं व्यक्तित्व का प्रभाव भी विद्यार्थियों के जीवन पर पड़ता हैं। मानव जीवन को सवारने तथा सुसज्जित बनाने में अनेक तत्वों का समावेश रहता है। मूल्य उनमें से एक परम आवश्यक तत्व है जिसके अभाव में सामाजिक जीवन संभव नहीं है। मूल्य मानव जीवन में बहु आयामी भूमिका

निभाते हैं। विश्व इतिहास में जितने भी महान व्यक्तित्व हुए हैं वे सभी महान मूल्यों को अपने जीवन में आत्मसात करने के कारण ही हुए हैं। आधुनिक समय में भी यह तथ्य प्रासंगिक है।

जीवन में मूल्यों के अभाव में मानव का व्यवहार पशुवत हो जाता है। मूल्यों को किसी पर थोपा नहीं जा सकता है बल्कि मूल्य ग्रहण किए जाते हैं। प्रत्येक प्रकार के मूल्यों में निर्णय का गुण निहित रहता है जो व्यक्ति को किसी कार्य को करने अथवा ना करने की प्रेरणा प्रदान करता है। जब व्यक्ति मूल्यों को आत्मसात कर लेता है तब यही मूल्य जीवन के आदर्श बन जाते हैं जो व्यक्ति की सामाजिक, राष्ट्रीय एवं वैश्विक छवि को उत्तम बनाता है। **ऑलपोर्ट** के अनुसार- ''मूल्य एक मानव विश्वास है जिसके आधार पर मनुष्य वरीयता प्रदान करते हुए कार्य करता है।'' **सी.वी. गुड** के अनुसार- ''मूल्य वह चारित्रिक विशेषता है जो मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और सौंदर्यबोध की दृष्टि से महत्वपूर्ण मानी जाती है। लगभग सभी विचार मूल्यों के अभीष्ट चरित्र को स्वीकार करते हैं।'' अत: अध्यापक में आदर्श मूल्यों का होना आवश्यक है, जिसका अनुसरण करके भावी पीढ़ी योग्य नागरिकों के रूप में विकसित हो सकेगी तथा समाज व राष्ट्र के निर्माण में अपनी सकारात्मक भूमिका सुनिश्चित कर सकेगी। अध्यापक को राष्ट्र निर्माता की संज्ञा प्रदान की गई है। अत: प्रत्येक अध्यापक में आदर्श मूल्यों का होना परम आवश्यक है, जिसके द्वारा अध्यापक अपने दायित्व, कर्तव्य, सत्यनिष्ठा, तथा समयबद्धता का पालन कर सकेगा। अध्यापकों के अंदर विभिन्न गुणों का होना अति आवश्यक है, जैसे - संवेदनशील, सत्यनिष्ठा, परोपकारी, न्यायप्रिय, साहसी, ईमानदार, सहयोगी, अनुशासित, परिश्रमी इत्यादि।

तकनीकी शब्दों का परिभाषीकरण

- **समेकित प्रशिक्षु** - समेकित प्रशिक्षुओं से तात्पर्य शिक्षक शिक्षा के एकीकृत पाठ्यक्रम यथा -बी0एससी0-बी0एड0 तथा बी.ए.-बी.एड. के वे छात्र जो उच्चतर माध्यमिक स्तर अथवा समकक्ष शिक्षा पूर्ण कर उपरोक्त किसी अध्यापक शिक्षा के प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में प्रवेश लेकर प्रशिक्षण की समस्त सैद्धांतिक, प्रयोगात्मक, इंटर्नशिप इत्यादि में नियमित रूप से भाग लेते हैं।
- **अध्यापक मूल्य** - अध्यापक मूल्यों से तात्पर्य शिक्षक के उन गुणों से होता है जिसे विद्यार्थी अपने आचरण में उतार कर सर्वांगीण विकास को प्राप्त कर सकते हैं। शिक्षक की ईमानदारी, कर्तव्यपरायणता, नैतिकता, सेवा भावना, सामाजिक जनकल्याण, प्रेमभाव, उत्तम चरित्र, साहसी, मृदुभाषी, विनम्रता, सत्यनिष्ठा, सहयोग, समानता इत्यादि अध्यापक मूल्य की श्रेणी में आते हैं।

राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद की मान्यता, मानदंड तथा क्रियाविधि विनियम- 2014 की परिशिष्ट संख्या-13 के अनुसार बी.ए.-बी.एड. व बी.एससी.-बी.एड. कराने वाला 4 वर्षीय एकीकृत कार्यक्रम लागू किया गया। इस पाठ्यक्रम में प्रवेश हेतु विद्यार्थियों की निम्नतम योग्यता उच्चतर माध्यमिक अथवा इसके समकक्ष हैं। इन प्रशिक्षुओं की आयु सामान्यतया 17 से 21 वर्ष होती है, जिसके कारण इनमें किशोरावस्था के लक्षण विद्यमान होते हैं तथा अपरिपक्वता एवं चंचलता का भाव परिलक्षित होता है, जिसका नकारात्मक प्रभाव उनकी कर्तव्यनिष्ठा, ईमानदारी, समयबद्धता, उत्तरदायित्व की भावना, शिक्षक छात्र अंर्तसंबंध इत्यादि अध्यापक मूल्यों पर पड़ता है। अत: एकीकृत शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के समेकित प्रशिक्षुओं के अध्यापक मूल्यों के क्षेत्र में अनुसंधान कार्य किए जाने की अत्यंत आवश्यकता है। इसके साथ ही इन प्रशिक्षुओं के अध्यापक मूल्यों के संवर्धन हेतु प्रयासों की आवश्यकता है।

अध्यापक मूल्य शिक्षा की आवश्यकता

शिक्षक समाज में मूल्यवान संसाधन हैं जो शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उन्होंने हमारे समाज को ज्ञान, संस्कृति और सभ्यता के मूल्यों से परिचय कराया है और उन्हीं के द्वारा नवीन विचार और विकास की कोशिश की जाती है। शिक्षकों का सिर्फ शिक्षा संसाधनों में ही योगदान नही होता है, बल्कि उनके नेतृत्व में छात्रों की व्यक्तिगत प्रगति को प्रोत्साहित करने की भी जिम्मेदारी होती है। एक अच्छे शिक्षक के पास उदार मन, उत्साह, सहयोगिता और धैर्य की गुणवत्ता होती है। वे अपने छात्रों के संदेहों और समस्याओं को समझते हैं और सही मार्गदर्शन करके उन्हें समस्याओं का सामना करना सिखाते

हैं। शिक्षक अपने छात्रों के साथ संवाद में रहते हैं और उन्हें नैतिक मूल्यों, समाजिक सभ्यता और जीवन के मूल तत्वों के प्रति जागरूक बनाते हैं। शिक्षक का अध्यापन उच्चतम गुणवत्तापूर्ण होना चाहिए, ताकि छात्र न केवल विद्या में उन्नति करें, बल्कि समझदार नागरिक के रूप में भी विकसित हों। शिक्षक के प्रभाव से होने वाला सकारात्मक परिवर्तन छात्रों के जीवन में बहुमूल्य होता है, जो उन्हें सक्षम और सफल व्यक्ति बनाने में मदद करता है।

समेकित प्रशिक्षु अध्यापकों के मूल्यों की आवश्यकता और प्रासंगिकता पर विचार करना, समेकित प्रशिक्षु अध्यापकों को समर्थ और संवेदनशील बनाने के लिए एक महत्वपूर्ण उपाय है। शिक्षा विधायिका में अध्यापकों के मूल्यों की आवश्यकता को समझने के लिए हमें अध्यापकों की भूमिका और उनके प्रभाव को समझना महत्वपूर्ण है। अध्यापक न केवल ज्ञान के प्रसार में बल्कि छात्रों के विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। शिक्षा का महत्व मानव समाज के विकास में अत्यधिक है और इसका मूल आधार अध्यापकों के मूल्यों में निहित होता है। अध्यापक न केवल ज्ञान के प्रदान करते हैं, बल्कि उनका उद्देश्य छात्रों को सही मार्गदर्शन देकर उन्हें नैतिक मूल्यों से भरपूर नागरिक बनाना भी होता है। अध्यापक का मार्गदर्शन, प्रेरणा, और मूल्यों की शिक्षा से ही समाज में सशक्ति, सद्गुण और समृद्धि की दिशा में प्रगति हो सकती है। अध्यापक मूल्य शिक्षा प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। समेकित प्रशिक्षु अध्यापकों में मूल्यों की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से हैं -

1. नैतिक मूल्यों का प्रतिष्ठापन- अध्यापकों के मूल्य छात्रों को नैतिक और नैतिक मूल्यों की महत्वपूर्णता को सिखाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे न केवल विद्यार्थियों को ज्ञान देते हैं, बल्कि उन्हें ईमानदारी, सजगता, समर्पण और सहानुभूति जैसे मूल्यों का पालन करने की प्रेरणा देते हैं। अत: यह अति आवश्यक है कि समेकित प्रशिक्षुओं में उच्च कोटि के नैतिक मूल्यों का प्रतिष्ठापन होना चाहिए जिसके द्वारा वह भविष्य के विद्यार्थियों में नैतिक मूल्यों का विकास सुनिश्चित कर सकेंगे।

2. विद्यार्थी केंद्रित शिक्षा- अच्छे अध्यापक विद्यार्थियों के विकास को अपनी प्राथमिकता मानते हैं। वह प्रत्येक विद्यार्थी की व्यक्तिगत आवश्यकताओं और प्रतिबद्धताओं को समझते हैं और उन्हें उनके समृद्धि के पथ पर मार्गदर्शन करते हैं। अनेक मनोवैज्ञानिक प्रयोगों एवं तथ्यों से स्पष्ट है कि प्रभावी शिक्षा व्यवस्था विद्यार्थी केंद्रित होनी चाहिए जिसके अंतर्गत विद्यार्थी अपनी रुचि, अभिक्षमता, आवश्यकता एवं उपयोगिता के आधार पर शिक्षा ग्रहण करना चाहता है। इस प्रकार की शिक्षा व्यवस्था में छात्रों की उपलब्धि श्रेष्ठतम होती है। अत: समेकित प्रशिक्षु अध्यापकों को अपनी शिक्षा व्यवस्था में विद्यार्थियों का स्थान प्राथमिक रखना चाहिए। विद्यार्थी केंद्रित शिक्षा व्यवस्था में शिक्षक की भूमिका एक पद प्रदर्शक की होती है।

3. ज्ञान और विचारों को प्रोत्साहन- अध्यापकों के मूल्य छात्रों को नए ज्ञान और विचारों की खोज में प्रोत्साहित करते हैं। उनकी प्रेरणा और मार्गदर्शन से विद्यार्थी सीमाओं को पार करने का साहस दिखाते हैं और नए दिशा निर्देश में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं। शिक्षक को छात्रों के ज्ञान एवं विचारों को महत्व देना अत्यावश्यक है जिसके परिणाम स्वरूप छात्रों में समस्या समाधान की योग्यता, निर्णय क्षमता व प्रबंधन कौशल जैसे उच्च कोटि के गुणों का विकास सुनिश्चित किया जा सकता हैं।

4. सामाजिक और मानविकी अभिवृद्धि- सामाजिक और मानविकी अभिवृद्धि समाज और मानवता के प्रति सकारात्मक परिवर्तन को सूचित करता है। यह विशेष रूप से समाज में सामाजिक सुधार, व्यक्तिगत एवं सामुदायिक विकास, और मानवीय समृद्धि के प्रति प्रयासों को दर्शाता है। इसका मुख्य उद्देश्य समाज को उन्नति, समृद्धि, सामाजिक न्याय, समानता, और मानवाधिकारों की प्राथमिकता की दिशा में आगे बढ़ाना है। आरोग्य और स्वास्थ्य की देखभाल मानविकी अभिवृद्धि का महत्वपूर्ण हिस्सा है। आदर्श जीवन शैली, पोषण, जलवायु बदलाव के प्रति जागरूकता आदि इसमें शामिल होते हैं। अध्यापक छात्रों को सामाजिक जागरूकता, सामाजिक समरसता और मानविकी अभिवृद्धि के मूल्यों की महत्वपूर्णता को समझाते हैं। इससे वे समाज में उत्तरदायित्व समझते हैं और सकारात्मक परिवर्तन के लिए सहयोग करते हैं।

5. व्यक्तिगत विकास और आत्मविश्वास में वृद्धि- व्यक्तिगत विकास और आत्मविश्वास में वृद्धि व्यक्ति के व्यक्तिगत और पेशेवर जीवन के महत्वपूर्ण पहलु है। यह उनकी सामाजिक, पेशेवर, और आवश्यकता के अनुसार सकारात्मक रूप से विकसित होने की क्षमता है। सकारात्मक मानसिकता व्यक्ति के आत्मविश्वास को बढ़ावा देती है। नकारात्मक सोच को दूर करने के लिए मनन तकनीकों का उपयोग करना महत्वपूर्ण है। शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की देखभाल करना

आत्मविश्वास में सुधार कर सकता है। योग, ध्यान, व्यायाम, और स्वस्थ आहार का पर्याप्त मात्रा में सेवन इसमें मदद कर सकते हैं। अध्यापकों के मूल्य छात्रों के व्यक्तिगत विकास और आत्मविश्वास को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे छात्रों के साथ व्यक्तिगत संवाद करके उनके आत्मविश्वास में वृद्धि करते हैं और उन्हें स्वयं के कौशलों और क्षमताओं की पहचान करने में मदद करते हैं।

6. **समृद्धि की दिशा में मार्गदर्शन**– समृद्धि की दिशा में मार्गदर्शन एक चुनौतीपूर्ण प्रक्रिया है जिसमें समृद्धि की प्राप्ति के लिए मार्ग तय किया जाता है। यह मार्गदर्शन व्यक्ति को निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति, सकारात्मक परिणामों की प्राप्ति और उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार की दिशा में मदद करता है। समृद्धि की दिशा में मार्गदर्शन के लिए नियमितता महत्वपूर्ण है। समय का अच्छे से प्रबंधन करना, कार्रवाईयों की नियमितता बनाए रखना और योजना का पालन करना महत्वपूर्ण होता है। अध्यापक छात्रों के लक्ष्य और सपनों को साकार करने के लिए मार्गदर्शन करने में मदद करते हैं। उनकी प्रेरणा से छात्र अपने संघर्षों का सामना करते हैं और आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित होते हैं।

7. **समाज में सकारात्मक परिवर्तन**– सामाजिक परिवर्तन में शिक्षकों की भूमिका महत्वपूर्ण और प्रभावी होती है। शिक्षक समाज में नवाचार, सुधार, और सकारात्मक परिवर्तन लाने में अग्रणी में होते हैं। उनका मार्गदर्शन और प्रेरणा छात्रों के जीवन में सकारात्मक बदलाव लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अध्यापक छात्रों को सोचने, प्रश्न करने, और नई दिशाओं की ओर प्रेरित करते हैं, जिससे उनकी सोच में परिवर्तन आ सके। वे उन्हें सामाजिक और सांस्कृतिक मुद्दों के प्रति जागरूक करते हैं जो समाज में सकारात्मक परिवर्तन का मूल माने जाते हैं। शिक्षक समाज के नियम, मूल्य, और मान्यताओं को समझाने का भी कार्य करते हैं। उनका उद्देश्य न केवल विशिष्ट विषयों की पढ़ाई करवाना होता है, बल्कि उन्हें नैतिक मूल्यों, समाजसेवा, सहयोग, और समरसता के महत्व को भी सिखाने का होता है। मार्गदर्शन समाज में उद्देश्यों की प्राप्ति, समाजसेवा और सामाजिक सुधार की दिशा में छात्रों को प्रोत्साहित करता है। इस प्रकार, एक अच्छे शिक्षक की भूमिका समाज में सकारात्मक बदलाव की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करती है और नवीन पीढ़ियों को ज्ञान, समर्पण, और नैतिक मूल्यों के साथ समृद्धि की दिशा में आगे बढ़ने की क्षमता प्रदान करती है।

8. **शिक्षा प्रणाली का उन्नतीकरण**– शिक्षा प्रणाली का उन्नतीकरण आज के विकासशील समय में अत्यंत महत्वपूर्ण और आवश्यक विषय है। शिक्षा प्रणाली के माध्यम से समाज को समृद्धि, सामाजिक सुधार, और व्यक्तिगत विकास को दिशा प्राप्त होती है। अध्यापक शिक्षा प्रणाली के माध्यम से न केवल ज्ञान प्रदान करते हैं, बल्कि उनकी महत्वपूर्ण भूमिका यह है कि वे छात्रों को सोचने, समझने, और समस्याओं के समाधान के लिए प्रोत्साहित करते हैं। उनका उद्देश्य केवल जानकारी देना नहीं होता है, बल्कि वे छात्रों को स्वतंत्रता से सोचने की क्षमता प्रदान करते हैं। इस प्रकार, अध्यापकों की भूमिका शिक्षा प्रणाली के उन्नतीकरण में कुंजी है। उनके सकारात्मक दृष्टिकोण, समझदारी, और प्रेरणा से ही शिक्षा प्रणाली का विकास संभव होता है।

9. **प्रजातांत्रिक गुणों का विकास**– आज अधिकांश विश्व के राष्ट्र प्रजातंत्र का अनुसरण करते हैं, इसके लिए आवश्यक है कि वहां के नागरिकों में प्रजातांत्रिक गुणों का उचित विकास होना चाहिए जिसके द्वारा उनमे न्याय, सहयोग, स्वतंत्रता, समानता, सह अस्तित्व जैसे गुणों का विकास संभव है। प्रजातांत्रिक गुणों का विकास समृद्धि, सामर्थ्य, और सामाजिक समानता की दिशा में महत्वपूर्ण होता है। ये गुण एक समृद्ध और विकसित समाज की नींव होते हैं और सही दिशा में प्रगति के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। समाज में स्वतंत्रता एक महत्वपूर्ण मूल्य है। यह नागरिकों को उनके विचारों, धार्मिकता, और अधिकारों का समर्थन करता है। स्वतंत्रता के लिए समाज में समर्पित नागरिकों की आवश्यकता होती है। प्रजातांत्रिक समाज में सभी लोगों को समान अधिकार और अवसर मिलते हैं। इसका मतलब है कि जनसामान्य की आवश्यकताओं और अधिकारों का समर्थन किया जाता है और समाज में विभिन्न वर्गों और समुदायों के बीच न्यायपूर्ण वितरण की प्राथमिकता होती है। प्रजातांत्रिक समाज में संविधान के आदर्शों का पालन किया जाता है, जिससे संविधान में स्थापित मूल अधिकारों की सुरक्षा और संरक्षण किया जा सकता है। यह न्यायपूर्ण और नैतिक मूल्यों की स्थापना करने में मदद करता है और नागरिकों को सामाजिक और राजनीतिक प्रक्रियाओं में भागीदारी की भावना प्रदान करता है।

10. शाश्वत मूल्यों का विकास- हमारा समाज बहुसंस्कृति समाज है। प्राचीन शाश्वत मूल्य को बनाए रखना शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य होना चाहिए, इसके द्वारा धार्मिक कट्टरता, हिंसा, अंधविश्वास तथा भाग्यवाद को समाप्त करने में भी सहायता मिलेगी। शाश्वत मूल्यों का विकास समाज में शांति, समरसता, और समाजिक उत्थान को प्रोत्साहित करता है। यह मूल्य लोगों को एक-दूसरे की समझ में मदद करते हैं और समाज में सहयोग के आदर्शों को स्थापित करते हैं। शाश्वत मूल्यों के पालन से समाज में विवादों और असहमतियों की कमी होती है तथा लोग एक-दूसरे के साथ मिलजुलकर रहने के तरीकों को सीखते हैं। व्यक्तिगत स्तर पर भी शाश्वत मूल्यों का विकास समर्पण की भावना को बढ़ावा देता है। शाश्वत मूल्य व्यक्ति को उसके लक्ष्यों की प्राप्ति में मदद करते हैं और उसे सहयोग और सहानुभूति की महत्वपूर्णता को समझने में मदद करते हैं।

11. चरित्र निर्माण- महात्मा गांधी की मान्यता थी कि ''ज्ञान का अंतिम लक्ष्य चरित्र निर्माण है''। गांधीजी के अनुसार सच्चरित्रता के अभाव में बौद्धिक ज्ञान सुगंधित शव के समान है। अच्छे चरित्र का आधार मूल्य हैं। चरित्र के निर्माण में शिक्षा एवं शिक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। हमारा देश एक भौगोलिक इकाई है तथा यहां के नागरिकों में अनेकता में एकता की भावना निहित है, इसका आधार व्यक्तियों का उत्तम चरित्र तथा निस्वार्थ प्रेम रहा है। भारत में आजादी की लड़ाई के उत्तम चारित्रिक गुणों जैसे अहिंसा, असहयोग, सत्याग्रह और सत्य को आधार बनाकर विद्यार्थियों मैं चारित्रिक गुणों का विकास संभव है।

12. मानवता की शिक्षा-मूल्यों में मानवता की शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान देने की आवश्यकता है, जिसके द्वारा मानवतावाद शिक्षा का आधार बनेगा। शिक्षा की प्रक्रिया से संबंधित सभी गतिविधियां मानव कल्याण से संबंधित होनी चाहिए तथा समाज में व्याप्त बुराइयों को समाप्त किया जाना चाहिए। शिक्षा विश्व बंधुत्व और विश्व शांति का संदेश देती है जिसके द्वारा व्यक्ति में समता की भावना का विकास संभव हो सकेगा।

अध्यापक मूल्यों की प्रासंगिकता शिक्षा प्रक्रिया के सभी पहलुओं में दिखती है। शिक्षा के इस प्रक्रियात्मक प्रसंग में, अध्यापक छात्रों के साथ सहयोगी और मार्गदर्शक के रूप में कार्य करते हैं। उनके द्वारा सिखाये गए मूल्य और नैतिकता से छात्र न केवल विद्या में सफल होते हैं, बल्कि उन्हें अच्छे नागरिक बनने की क्षमता प्राप्त होती है। अध्यापक मूल्यों की प्रासंगिकता आज के विशेषणात्मक समाज में भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। वर्तमान समय में, छात्रों का व्यक्तिगत और सामाजिक विकास केवल शिक्षा से ही संभव नहीं है, बल्कि नैतिक मूल्यों की मजबूती भी आवश्यक है। अध्यापक मूल्य छात्रों को आज के चुनौतीपूर्ण समय में सही और गलत के बीच सही निर्णय लेने में मदद करते हैं। समर्पित और नैतिकता से परिपूर्ण अध्यापक ही छात्रों को सही मार्ग पर चलने की प्रेरणा देने में सक्षम होते हैं। उनके द्वारा सिखाए गए मूल्यों की प्रासंगिकता निश्चित रूप से शिक्षा प्रणाली के सभी पहलुओं में दिखाई देती है, जिससे हमारे समाज में नैतिक मूल्यों की महत्वपूर्णता को पुनः स्थापित किया जा सकता है। नैतिकता से परिपूर्ण अध्यापकों का योगदान समाज के सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण होता है। उनके माध्यम से ही हमारे छात्र सशक्त और समर्थ नेता बन सकते हैं, जो समाज में सुधार और प्रगति की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

समेकित प्रशिक्षुओं अध्यापकों का यह कर्तव्य है कि वे छात्रों को न केवल ज्ञान के साथ, बल्कि नैतिकता, समर्पण, और सहयोग के साथ भी सशक्त और सफल बनाएं। उनके मूल्यों की प्रासंगिकता वर्तमान में और आने वाले समय में भी निरंतर महत्वपूर्ण रहेगी, क्योंकि वे हमारे समाज की मूल आवश्यकताओं को पूरा करने में सकारात्मक भूमिका निभायेंगें। अध्यापकों के मूल्यों की आवश्यकता और प्रासंगिकता विभिन्न समय, स्थान, और सामाजिक संदर्भों में बदलती रहती है। इसलिए, अध्यापकों के मूल्यों की समझ, संरक्षण, और प्रशिक्षण, शिक्षा से संबंधित क्षेत्रों में महत्वपूर्ण है।

संदर्भ सूची

1. आचार्य, महाश्रमण (2019), आओ हम जीना सीखें, जैन विश्व भारती प्रकाशन, लाडनूँ, राजस्थान।
2. जैन, पायल भोला (2012), मूल्य पर्यावरण तथा मानवाधिकारों की शिक्षा, अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा।
3. जोशी, हेमलता (2013),जीवन विज्ञान: मूल्यपरक शिक्षा, जैन विश्व भारती संस्थान, लाडनूँ, राजस्थान।
4. मल्लीप्रज्ञा, श्रमणी(2009), शिक्षा दर्शन एवं मूल विकास, जैन विश्व भारती प्रकाशन लाडनूँ, राजस्थान।

5. पाण्डेय, रामशकल (2016), मूल्य शिक्षा के परिप्रेक्ष्य, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।
6. शर्मा, आर. ए. (2008), मानव मूल्य एवं शिक्षा, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।
7. सहाय, जगदीश (2005), मानव जीवन और उसके मूल्य, पारसनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान, वाराणसी।

Web references

1. https://www.educationtopia.net/blog/core-values-teacher-demonstrate
2. https://www.theclassroom.com/advantages-disadvantages-becoming-teacher-17753.html
3. https://www.frontiersin.org/articles/10.3389/fpsyg.2019.01645/full
4. https://edusanchar.com/wp-content/uploads/2019/02/NJRIP-Dr-Riddhi-Chandra-Gupta.pdf
5. https://www.e-adhyapak.com/Data/Product/PRO-95/PRO-95-ExtDemo.pdf
6. https://hi.triangleinnovationhub.com/role-school-teachers-inculcation-values
7. http://echetana.com/wp-content/uploads/2019/01/mulya-new.pdf
8. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/

❑❑

समेकित प्रशिक्षुओं की अध्यापन अभिक्षमता का तुलनात्मक अध्ययन

श्री रंजीत सिंह
शोध छात्र, शिक्षा संकाय
जैन विश्व भारती संस्थान, लाडनूँ, राजस्थान
ranjeetsinghvgi@gmail.com

डॉ0 अमिता जैन
सहायक प्रोफेसर, शिक्षा संकाय
जैन विश्व भारती संस्थान, लाडनूँ, राजस्थान
amitajainjuly1@gmail.com

सारांश– समेकित प्रशिक्षुओं की शिक्षण अभिक्षमता उनके शिक्षानुभव की गहराईयों को प्रकट करती है, जो उन्हें शिक्षण के क्षेत्र में उत्तरदायित्वपूर्ण बनाता है। शिक्षण अभिक्षमता का मूल उद्देश्य शिक्षार्थियों के विकास को समर्पित होना चाहिए। शिक्षण अभिक्षमता समेकित प्रशिक्षुओं को अद्वितीय शिक्षात्मक तकनीकों, प्रेरणादायक पाठ प्रणालियों और शिक्षण के मूल सिद्धांतों को समझने में मदद करती है। समेकित प्रशिक्षुओं की यह योग्यता उन्हें शिक्षा मंच पर आत्मविश्वासपूर्णता से कार्य करने की क्षमता प्रदान करती है ताकि वे अपने छात्रों को न केवल ज्ञान से समृद्ध करें, बल्कि उनको आदर्शों और मूल्यों को भी अपनाने में मदद कर सकें। प्रदत्त विश्लेषण के आधार पर विज्ञान वर्ग के समेकित प्रशिक्षुओं की अध्यापन अभिक्षमता, कला वर्ग समेकित प्रशिक्षुओं की अध्यापन अभिक्षमता की तुलना में अधिक है। विज्ञान वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता तथा कला वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता समान है। विज्ञान वर्ग की छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता की निष्पत्ति कला वर्ग की छात्राध्यापिकाओं तुलना में अधिक है। विज्ञान वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता तथा विज्ञान वर्ग के ही समेकित छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता समान है। कला वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता तथा कला वर्ग के ही समेकित छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता समान है।

संकेतांक शब्द– समेकित प्रशिक्षु, अध्यापन अभिक्षमता।

प्रस्तावना – अध्यापन अभिक्षमता किसी शिक्षक की वह विशिष्ट योग्यता होती है जिसके आधार पर वह कक्षा की विभिन्न परिस्थितियों में नियंत्रण स्थापित करने में समर्थ होता है। इसके साथ ही शिक्षण कार्य के लिए अपनी विशिष्ट योग्यताओं तथा कौशल का विधिवत प्रयोग करने हेतु सफल होता है। शिक्षण अभिक्षमता के कारण शिक्षक अपने कार्य को अत्यंत सरलता के साथ संपन्न करता है तथा शिक्षार्थियों को मार्गदर्शन, कक्षा प्रबंधन एवं अधिगम उपलब्धियों का आकलन प्रभावशाली रूप में संपन्न करता है। शिक्षण अभिक्षमता के कारण ही उसमें तार्किक चिंतन, नवीन ज्ञान की प्राप्ति हेतु निरंतर प्रयास करने की क्षमता विकसित होती है। अतः शिक्षक में शिक्षण अभिक्षमताओं का होना अत्यंत आवश्यक है।

तकनीकी शब्दों का परिभाषीकरण :–

- **समेकित प्रशिक्षु**–समेकित प्रशिक्षुओं से तात्पर्य शिक्षक शिक्षा के एकीकृत पाठ्यक्रम यथा – बी0एससी0–बी0एड0 तथा बी0ए0–बी0एड0 के प्रशिक्षु जो प्रशिक्षण की समस्त सैद्धांतिक, प्रयोगात्मक, सहगामी क्रियाओं, इंटर्नशिप इत्यादि में भाग लेते हैं।
- **अध्यापन अभिक्षमता**–अध्यापन अभिक्षमता से तात्पर्य शिक्षक के उन गुणों एवं योग्यताओं से है जो शिक्षक के शिक्षण कौशल, छात्रों के साथ संवाद करने की क्षमता, और उनके विकास को समझने

और समर्थन करने की क्षमता, नेतृत्व, निर्देशक, मूल्यांकनकर्ता, शिक्षण रुचि, शिक्षण दक्षता इत्यादि गुणों को प्रदर्शित करता है।

अध्ययन के उद्देश्य–प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्य निम्नलिखित हैं –

1. विज्ञान वर्ग के समेकित प्रशिक्षुओं की अध्यापन अभिक्षमता का अध्ययन करना।
2. कला वर्ग के समेकित प्रशिक्षुओं की अध्यापन अभिक्षमता का अध्ययन करना।
3. विज्ञान एवं कला वर्ग के समेकित प्रशिक्षुओं की अध्यापन अभिक्षमता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पनाएँ – अध्ययन की शोध परिकल्पनाएँ निम्नलिखित हैं–

1. विज्ञान वर्ग के समेकित प्रशिक्षुओं की अध्यापन अभिक्षमता तथा कला वर्ग के समेकित प्रशिक्षुओं की अध्यापन अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।
2. विज्ञान वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता तथा कला वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।
3. विज्ञान वर्ग की छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता तथा कला वर्ग की छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।
4. विज्ञान वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता तथा विज्ञान वर्ग की समेकित छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।
5. कला वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता तथा कला वर्ग की समेकित छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध विधि– प्रत्येक प्रकार के अनुसंधान के तीन मुख्य उद्देश्य होते हैं– सैद्धांतिक, तथ्यात्मक एवं उपयोग इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अनुसंधान की विभिन्न विधियों एवं अनुसंधान आव्यूह का प्रयोग किया जाता है। विधि अनुसंधान कार्य को संपन्न करने का एक तरीका है जो शोध समस्या की प्रकृति के द्वारा निर्धारित की जाती है। शोधकर्ता द्वारा प्रस्तुत शोध में सर्वेक्षण शोध विधि का प्रयोग किया है।

अध्ययन में प्रयुक्त जनसंख्या– अनुसंधानकर्ता के लिए जनसंख्या का अध्ययन, उसकी विशेषताओं तथा संरचना का व्यापक ज्ञान अति आवश्यक है क्योंकि इसी जनसंख्या में से वह उपयुक्त विधियों के द्वारा न्यादर्श का चयन करता है। न्यादर्श विश्लेषण के द्वारा प्राप्त परिणामों को समग्र जनसंख्या पर सामान्यीकरण करना ही अनुसंधान का लक्ष्य होता है। प्रस्तुत अनुसंधान कार्य में जनसंख्या के रूप में मुरादाबाद जनपद के चार एकीकृत शिक्षक शिक्षा महाविद्यालयओं के 800 प्रशिक्षु हैं।

अध्ययन में प्रयुक्त न्यादर्श– प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श के रूप में उत्तर प्रदेश राज्य के मुरादाबाद जनपद के शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों के एकीकृत शिक्षक शिक्षा पाठ्यक्रम यथा– बी0एस0सी0–बी0एड0 एवं बी0ए0–बी0एड0 के समेकित प्रशिक्षु है। उन संस्थानों में से यादृच्छिक विधि से दो बी0एस0सी0–बी0एड0 एवं दो बी0ए0–बी0एड0 के संस्थानों का चयन किया गया है। इन संस्थानों में से 200 समेकित प्रशिक्षुओं का चयन स्तरीकृत यादृच्छिक निदर्शन विधि द्वारा किया गया, जिसके अन्तर्गत विज्ञान वर्ग तथा कला वर्ग के समेकित प्रशिक्षुओं यथा–छात्राध्यापक एवं छात्राध्यापिकाओं का चयन किया गया, तत्पश्चात इन्हीं 200 विद्यार्थियों की अध्यापन अभिक्षमता का अध्ययन किया गया है।

प्रस्तुत अध्ययन में प्रयुक्त चरों का विवरण– शोध अध्ययन हेतु दो प्रकार के चर लिए गये हैं–

- स्वतन्त्र चर – अध्यापन अभिक्षमता।
- आश्रित चर –समेकित प्रशिक्षु।

अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण– प्रस्तुत अध्ययन में समेकित प्रशिक्षुओं की अध्यापन अभिक्षमता के आकलन आकलन हेतु डॉ0 आर0पी0 सिंह एवं डॉ0 एस0एन0 शर्मा द्वारा निर्मित एवं मानकीकृत "अध्यापक अभिक्षमता परीक्षण माला" का प्रयोग किया गया है।

शोध अध्ययन में प्रयुक्त सांख्यिकी– अध्ययन में शोधकर्ता द्वारा न्यादर्श के विश्लेषण हेतु निम्नलिखित सांख्यिकी विधियों का प्रयोग किया है– मध्यमान, मानक विचलन तथा टी–परीक्षण।

प्रदत्त विश्लेषण–

परिकल्पना संख्या–1 विज्ञान वर्ग के समेकित प्रशिक्षुओं की अध्यापन अभिक्षमता तथा कला वर्ग के समेकित प्रशिक्षुओं की अध्यापन अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका क्रमांक –1

क्रम संख्या	समेकित प्रशिक्षुओं का वर्ग	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (S.D.)	स्वतंत्रता अंश (df)	टी–का प्राप्त मान	सार्थकता का स्तर एवं परिकल्पना की स्वीकृति / अस्वीकृति	
							.05	.01
1	विज्ञान वर्ग	100	72.30	9.24	198	3.06	1.97	2.60
2	कला वर्ग	100	68.66	7.53			अस्वीकृत	अस्वीकृत

परिकल्पना संख्या– 1 की पुष्टि हेतु तालिका क्रमांक–1 में प्रदत्त विश्लेषण के आधार पर आंकड़े प्रस्तुत किए गए हैं। उक्त तालिका के अनुसार टी–का मान 3.06 प्राप्त हुआ जो सार्थकता के दोनों स्तरों के मानों से अधिक है। अतः विज्ञान वर्ग समेकित प्रशिक्षुओं की अध्यापन अभिक्षमता के मध्यमानों का अंतर सार्थक है। शून्य परिकल्पना उक्त प्राप्तांको के लिए अस्वीकृत होती है। प्रदत्त विश्लेषण के आधार पर स्पष्ट है कि विज्ञान वर्ग के समेकित प्रशिक्षुओं की अध्यापन अभिक्षमता, कला वर्ग समेकित प्रशिक्षुओं की अध्यापन अभिक्षमता की तुलना में अधिक है।

परिकल्पना संख्या–2 विज्ञान वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता तथा कला वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका क्रमांक –2

क्रम संख्या	समेकित प्रशिक्षुओं का वर्ग	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (S.D.)	स्वतंत्रता अंश (df)	टी–का प्राप्त मान	सार्थकता का स्तर एवं परिकल्पना की स्वीकृति / अस्वीकृति	
							.05	.01
1	छात्राध्यापक विज्ञान वर्ग	50	70.74	8.56	98	1.83	1.98 स्वीकृत	2.63 स्वीकृत
2	छात्राध्यापक कला वर्ग	50	68.18	4.94				

परिकल्पना संख्या–2 की पुष्टि हेतु तालिका क्रमांक 2 में प्रदत्त विश्लेषण के आधार पर आंकड़े प्रस्तुत किए गए हैं। उक्त तालिका में टी–का प्राप्त मान 1.82 सार्थकता के दोनों स्तरों के मानों से कम है। अतः यह स्पष्ट है कि विज्ञान वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता तथा कला वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता के मध्यमानों का अंतर सार्थक नहीं है। उक्त प्राप्तांको के संदर्भ में शून्य परिकल्पना स्वीकृत की जाती है। अतः यह स्पष्ट है कि दोनों समूहों के मध्यमानों का अंतर सार्थक नहीं है तथा प्राप्त अंतर न्यादर्श की त्रुटि के कारण है। प्रदत्त विश्लेषण के आधार पर विज्ञान वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता तथा कला वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता समान है।

परिकल्पना संख्या–3 विज्ञान वर्ग के समेकित छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता तथा कला वर्ग के समेकित छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका क्रमांक –3

क्रम संख्या	समेकित प्रशिक्षुओं का वर्ग	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (S.D.)	स्वतंत्रता अंश (df)	टी–का प्राप्त मान	सार्थकता का स्तर एवं परिकल्पना की स्वीकृति / अस्वीकृति	
							.05	.01
1	छात्राध्यापिका विज्ञान वर्ग	50	72.90	10.24	98	2.61	1.98 अस्वीकृत	2.63 स्वीकृत
2	छात्राध्यापिका कला वर्ग	50	68.26	7.36				

परिकल्पना संख्या– 3 की पुष्टि हेतु तालिका क्रमांक–3 में प्रदत्तों के विश्लेषण पर आधारित आंकड़े प्रस्तुत किए गए हैं। प्रदत्तों के विश्लेषण पर आधारित टी का प्राप्त मान 2.61 सार्थकता के 0.05 स्तर के मान 1.98 से अधिक है। स्पष्ट है कि सार्थकता के 0.05 स्तर पर शून्य परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है। मध्यमानों का अंतर सार्थक है। अतः विज्ञान वर्ग की समेकित छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता, कला वर्ग के समेकित छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता की तुलना में अधिक है। इसके विपरीत सार्थकता के 0.01 स्तर पर प्रदत्तों के विश्लेषण पर आधारित टी के प्राप्त मान 2.61, टी परीक्षण तालिका पर प्राप्त मान 2.63 से कम है। इस आधार पर सार्थकता के 0.01 स्तर पर शून्य परिकल्पना स्वीकृत की जाती है। इसके लिए मध्यमानों का अंतर सार्थक नहीं है। यह अंतर न्यादर्श की त्रुटि के कारण है। अतः यह स्पष्ट है कि 0.01 स्तर पर विज्ञान वर्ग की समेकित छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता तथा कला वर्ग की समेकित छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता समान है।

परिकल्पना संख्या–4 विज्ञान वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता तथा विज्ञान वर्ग के समेकित छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका क्रमांक –4

क्रम संख्या	समेकित प्रशिक्षुओं का वर्ग	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (S.D.)	स्वतंत्रता अंश (df)	टी–का प्राप्त मान	सार्थकता का स्तर एवं परिकल्पना की स्वीकृति / अस्वीकृति	
							.05	.01
1	छात्राध्यापक विज्ञान वर्ग	50	70.74	10.24	98	1.15	1.98 स्वीकृत	2.63 स्वीकृत
2	छात्राध्यापिका विज्ञान वर्ग	50	72.90	8.56				

प्रस्तुत अध्ययन में प्रदत्तों के विश्लेषण पर आधारित टी का मान 1.15, सार्थकता के दोनों स्तरों के मानों से कम है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि विज्ञान वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता तथा विज्ञान वर्ग के ही समेकित छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता के मध्यमानों का अंतर सार्थक नहीं है। शून्य परिकल्पना स्वीकृत की जाती है। इस प्रकार यह स्पष्ट है विज्ञान वर्ग के समेकित छात्र– अध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता तथा विज्ञान वर्ग के ही समेकित छात्र– अध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता समान है।

परिकल्पना संख्या–5 कला वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता तथा कला वर्ग की समेकित छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता में सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका क्रमांक –5

क्रम संख्या	समेकित प्रशिक्षुओं का वर्ग	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (S.D.)	स्वतंत्रता अंश (df)	टी–का प्राप्त मान	सार्थकता का स्तर एवं परिकल्पना की स्वीकृति / अस्वीकृति	
							.05	.01
1	छात्राध्यापक कला वर्ग	50	68.26	7.36	98	0.06	1.98 स्वीकृत	2.63 स्वीकृत
2	छात्राध्यापिका कला वर्ग	50	68.18	4.94				

परिकल्पना संख्या–5 की पुष्टि हेतु तालिका क्रमांक– 5 में प्रदत्त विश्लेषण पर आधारित आंकड़ों को प्रस्तुत किया गया है। प्रदत्त विश्लेषण पर आधारित टी का प्राप्त मान 0.60 सार्थकता के दोनों स्तरों के मानों से कम है। इससे यह स्पष्ट होता है कि कला वर्ग के समेकित छात्राध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता तथा कला वर्ग के ही समेकित छात्राध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता के मध्यमानों का अंतर सार्थक नहीं है। अतः शून्य परिकल्पना स्वीकृत की जाती है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि दोनों समूहों के मध्यमानों का अंतर सार्थक नहीं है तथा प्राप्त हुए अंतर न्यादर्श की त्रुटि के कारण हैं। यह अंतर वास्तविक नहीं है। यह स्पष्ट है कि कला वर्ग के समेकित छात्र– अध्यापकों की अध्यापन अभिक्षमता तथा कला वर्ग के ही समेकित छात्र– अध्यापिकाओं की अध्यापन अभिक्षमता समान है।

अध्ययन की सीमाएँ –किसी भी अनुसंधान कार्य को सम्पन्न करने के लिए धन, समय और शक्ति तीनों की आवश्यकता पड़ती है। उक्त साधन सीमित होने के कारण विषय के सभी पक्षो का गहन और सर्वांगीण अध्ययन करना कठिन होता है। प्रस्तुत अध्ययन भी इसका अपवाद नहीं है।

प्रस्तुत शोध कार्य की सीमायें निम्नवत हैं–

(1) प्रस्तुत अध्ययन शिक्षक शिक्षा में अध्ययनरत समेकित प्रशिक्षुओं तक ही सीमित है, जबकि अध्ययन का क्षेत्र विस्तृत है।

(2) प्रस्तुत अध्ययन उ0प्र0 राज्य के मुरादाबाद जनपद के शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों तक ही सीमित है।

(3) प्रस्तुत अध्ययन केवल एक आयाम– अध्यापन अभिक्षमता तक ही सीमित है।

(4) प्रस्तुत अध्ययन को 200 विद्यार्थियों पर सम्पन्न किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. गुप्ता, एस0पी0 (2012), उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
2. सिंह, आर0एन0, भारद्वाज, एस0एस0 (2014), आधुनिक मनोवैज्ञानिक प्रयोग एवं परीक्षण, अग्रवाल पब्लिकेशंस आगरा।
3. सिंह, गया, राय, अनिल कुमार (2019), शिक्षा अनुसंधान की विधियां, आर0 लाल बुक डिपो, मेरठ।
4. शर्मा, आर0ए0 (2019), शिक्षा अनुसंधान के मूल तत्व एवं शोध प्रक्रिया, आर.0 लाल बुक डिपो, मेरठ।
5. Bhushan, Shanti Mishra, Alok Shashi (2017) Handbook of Research Methodology A Compendium for Scholars & Researchers, Educreation Publishing, New Delhi.
6. Singh, Yogesh Kumar (2006) Fundamental of Research Methodology and Statistics, New Age International Publishers (P) Ltd. New Delhi.

Web. References : .

1. https://www.dietmathura.org/pdf/books/sem3/samaveshi_shiksha.pdf
2. https://www.uou.ac.in/sites/default/files/slm/B6.pdf
3. https://www.e-adhyapak.com/Data/Product/PRO-95/PRO-95-ExtDemo.pdf
4. file:///C:/Users/Admin/Downloads/BookResearchMethodology.pdf
5. https://en.wikipedia.org/wiki/Statistics_education
6. https://www.scribbr.com/statistics/null-and-alternative-hypotheses/
7. https://www.scribbr.com/methodology/population-vs-sample/

शिक्षा में डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम की प्रभावकता

अमिता जैन

शिक्षा के क्षेत्र में प्राचीनकाल से लेकर वर्तमान तक कई क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। प्राचीन शिक्षण व्यवस्था व नवीन शिक्षण व्यवस्था में समय–समय पर कई परिवर्तन हुए है। प्राचीन शिक्षण पद्धति में विद्यार्थी को एक निष्क्रिय श्रोता समझ शिक्षा प्रदान की जाती थी। जिसका प्रमुख लक्ष्य सीखे गए ज्ञान को कंठस्थ करना था। शनैः शनैः शैक्षिक व्यवस्था में मनोवैज्ञानिक कारकों के समावेश से शिक्षार्थी को शिक्षा की प्रमुख धुरी माना गया और शिक्षा विद्यार्थी केन्द्रित हो गई। जिसमें शिक्षार्थी अपने सीखे गए ज्ञान का प्रदर्शन परीक्षा में कर अधिकाधिक अंक अर्जन करना अपना लक्ष्य मानता था। किन्तु वर्तमान युग की शैक्षिक व्यवस्था व नई शिक्षा नीति 2020 शिक्षा में प्रजातान्त्रिक गुणों का समावेश कर विद्यार्थियों की सुविधा व रुचि अनुसार शिक्षा लेने हेतु प्रेरित करती है। इस हेतु शिक्षा में नवीन विधियों तथा नवाचारों का प्रयोग किया जा रहा है। तकनीकी के इस युग में शिक्षा को नवाचारों से जोड़कर उच्च प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाया जा सकता है। जिसके लिए विद्यार्थियों में विषय के अधिगम के प्रति तत्परता, रूचि, पूर्वज्ञान, एकाग्रता आदि गुणों का समावेशीकरण आवश्यक हैं। वर्तमान युग में कई आधुनिक शिक्षण पद्धतियों का शिक्षण के दौरान, लक्ष्य प्राप्ति हेतु उपयोग किया जाता है। इन्ही में एक शिक्षण पद्धति है– ''डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम''। आधुनिक शिक्षा प्रणाली के अन्तर्गत शिक्षा में अनेक नवाचार स्थापित किए गए हैं, जिससे बालक आसानी से सीख सके। डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम के तहत बालकों को सफलतापूर्वक शैक्षिक प्रक्रिया की ओर उन्मुख किया जा सकता है, जिससे बालक शिक्षण में रूचि लेकर सक्रिय सहभागिता के साथ शिक्षा के मार्ग पर अग्रसर हो सकें।

शिक्षा में हुए कई क्रान्तिकारी परिवर्तनों, वैश्वीकरण, मनौवैज्ञानिक कारण तथा समय की मांग के अनुसार वर्तमान युग में शनैःशनैः शिक्षण की इन नवीन तकनीकों में बालक को शिक्षण का केन्द्र मानते हुए शिक्षण प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी का अवसर प्रदान किया जाता है। परम्परागत शिक्षण विधियों से उलट नवीन शिक्षण विधियाँ, मनौवैज्ञानिक शिक्षण पद्धति छात्रों को शिक्षण प्रक्रिया में बनाए रखनें में सक्षम व छात्रों को शिक्षा में रूचि जाग्रत करने हेतु प्रेरित करती है। नई शिक्षा नीति 2020 में भी शिक्षा में नवाचारों के उपयोग पर बल दिया गया है। जिससे बालकों में भयमुक्त शिक्षा का संचरण हो सके। वर्तमान युग में कई आधुनिक शिक्षण पद्धतियों का शिक्षण के दौरान, लक्ष्य प्राप्ति हेतु उपयोग किया जाता है। इन्ही में एक शिक्षण पद्धति है– ''डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम''। आधुनिक शिक्षा प्रणाली के अन्तर्गत शिक्षा में अनेक नवाचार स्थापित किए गए हैं, जिससे बालक आसानी से सीख सकें। डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम के तहत बालकों को सफलतापूर्वक शैक्षिक प्रक्रिया की ओर उन्मुख किया जा सकता है, जिससे बालक शिक्षण में रूचि लेकर सक्रिय सहभागिता के साथ शिक्षा के मार्ग पर अग्रसर हो सकें। अतः डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन शिक्षा की ऐसी विधि है, जिसे बालकों में ऑनलाइन तथा ऑफलाइन दोनों ही प्रकार से प्रदर्शित कर शिक्षण कार्य सुगम तरीके से करवाया जा सकता है। वर्तमान कोविड–19 के दौर में यह शिक्षण विधि शिक्षकों व विद्यार्थियों दोनों के लिए ही उत्तम साधन साबित हुई है। जिसका प्रयोग कर वर्तमान परिस्थितियों में भी शिक्षण कार्य बिना रूकावट के रूचिकर ढंग से आगे बढ़ सका है। डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम में बालक की अधिकाधिक ज्ञानेन्द्रियों को सक्रिय रख शिक्षण प्रक्रिया का हिस्सा बनाया जाता है, जिससे शिक्षण प्रक्रिया सरल, बोधगम्य व रूचिकर हो जाती है। वर्तमान वैश्विक महामारी कोविड–19 के दौर में जहाँ एक ओर सम्पूर्ण देश में लॉकडाउन जैसी समस्या उत्पन्न हुई, जिसके फलस्वरूप कई अन्य आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, मनोवैज्ञानिक आदि समस्याएँ उत्पन्न हुई, वहीं दूसरी ओर शैक्षिक वातावरण भी कुछ समय हेतु डगमगा गया। परन्तु शिक्षा में निरन्तर होने वाले नवीन प्रयोगों अथवा नवाचारों के प्रयोगों से शैक्षिक व्यवस्था में सुदृढ़ीकरण हुआ। इसी दिशा में देश में ऑनलाइन शिक्षा व्यवस्था मील का पत्थर साबित हुई। प्राइवेट या निजी शिक्षण संस्थानों में भी ऑनलाइन कक्षाओं को रूचिकर व ज्ञानवर्धक बनाने हेतु शिक्षकों द्वारा विभिन्न शैक्षिक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों का प्रयोग किया जा रहा है। ''डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम'' द्वारा ऑनलाइन व ऑफलाइन दोनों प्रकार से बालक की

डॉ अमिता जैन, सहायक आचार्य, शिक्षा विभाग, जैन विश्व भारती संस्थान, लाडनूं (राजस्थान)

अधिकतम ज्ञानेन्द्रियों को सक्रिय रख शैक्षिक कार्यक्रमों के उद्देश्य की प्राप्ति की जा सकती है।

डॉक्यूमेन्ट्री का अर्थ व परिभाषा– डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म एक गैर–काल्पनिक गति चित्र है। जिसका उद्देश्य ''दस्तावेज वास्तविकता'' मुख्य रूप से शिक्षा, शिक्षा के उद्देश्यों या एक ऐतिहासिक रिकॉर्ड बनाए रखने के लिए है। डॉक्यूमेन्ट्री शब्द का उद्गम 'डॉक्यूमेन्ट' शब्द से हुआ है, जिसका शाब्दिक अर्थ लिखित रूप में निहित, प्रमाणिक अथवा दस्तावेजी साक्ष्य होता है। वास्तव में डॉक्यूमेन्ट्री एक सच्चे या वास्तविक सबूतों के साथ किसी विशेष परिस्थिति, व्यक्ति या घटना को उजागर करने वाली लघु फिल्म होती है अर्थात् डॉक्यूमेन्ट्री टेलीविजन, रेडियो, कम्प्यूटर अथवा तकनीकी संसाधनों द्वारा प्रदर्शित ऐसा कार्यक्रम अथवा लघु फिल्म है, जो किसी विशेष सूचना देने हेतु या जागरूकता हेतु सच्ची घटनाओं अथवा लेखों पर आधारित होती है। जिससे घटित हुई उस घटना या सूचना को दर्शकों तक सरलता से पहुँचाया जा सकें। डॉक्यूमेन्ट्री एक ऐसी लघु फिल्म है, जो मुख्य रूप से लाइव या अनियन्त्रित फुटेज, वास्तविक दस्तावेजों, साक्षात्कार या आंशिक प्रतिक्रियात्मक नाटकीयता से बनी हो जिसका समग्र जोर तथ्यों पर होता है। प्रारम्भिक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में, जिन्हें मूल रूप से 'वास्तविकता फिल्में' कहा जाता है, एक मिनट या उससे भी कम समय की होती थी। समय के साथ डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में लम्बें समय तक बनने के लिए विकसित हुई और साथ ही अधिक श्रेणियों में इनकों शामिल किया गया। जैसे– शैक्षणिक, पर्यवेक्षणिक, सांस्कृतिक, सामाजिक आदि। डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में बहुत रोचक, जानकारीपूर्ण और अक्सर विद्यालयों के भीतर प्रयोग की जाने वाली एवं विभिन्न सिद्धान्तों को आसानी से पढ़ाने के लिए एक संसाधन के रूप में प्रयोग की जाती है। इस कड़ी में सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म जैसे–यू–ट्यूब, फेसबुक आदि ने डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म शैली के विकास हेतु एक अवसर प्रदान किया है। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म ने डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म के वितरण क्षेत्र और सहजता में वृद्धि की है। इससे दर्शकों की अधिक संख्या को शिक्षित करने की क्षमता में वृद्धि हुई है और इससे संबंधित जानकारी प्राप्त करने वाले व्यक्तियों की पहुँच को व्यापक बनाया है। बिल निकोलस के अनुसार– ''डॉक्यूमेन्ट्री एक फिल्म निर्माण प्रथा या एक सिनेमाई परम्परा और दर्शकों के स्वागत की एक विधा है। जिसकी विशेषता स्पष्ट सीमाओं के बिना एक अभ्यास है। डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों के माध्यम से किसी देश, स्थान, संस्कृति, समाज, संस्था, व्यक्ति या ऐसे ही किसी अन्य विषय से सम्बन्धित प्रमाणिक व सत्य तथ्यों को प्रस्तुतीकरण किया जाता है। इन्हें आकर्षक व रूचिकर बनाने के लिए इनमें साक्षात्कार, संवाद, संगीत, वृतांत तथा ध्वनि प्रभावों का आवश्यकतानुसार प्रयोग किया जाता है। डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों की सफलता इस बात पर भी निर्भर करती है कि वह गागर में सागर की भांति संबंधित विषय के बारे में सारी जानकारी किस प्रकार प्रस्तुत करती है। डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों में स्क्रिप्ट या आलेख का बहुत महत्व होता है। क्योंकि इस आलेख या स्क्रिप्ट को आधार बनाकर ही डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म का निर्माण किया जाता है। डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म एक प्रकार का दस्तावेज ही है, जिसे चित्रों व ध्वनि प्रभावों से रचा जाता है। डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म किसी भी विषय पर बनाई जा सकती है और यह उस विषय पर एक प्रमाणिक दस्तावेज जैसी होती है। डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म जन संचार माध्यमों के साथ–साथ जन शिक्षण के लिए भी बनाई जाती है।

डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम की विशेषताएँ–

डॉक्यूमेन्ट्री शिक्षण में विद्यार्थियों को स्वंय को व्यक्त करने की कला सिखाई जाती है।

डॉक्यूमेन्ट्री शिक्षण से नवीन विषय वस्तु, नवीन अवधारणाओं और नवीन प्रौद्योगिकी का परिचय सरलता से होता है।

शिक्षण कार्य रूचिकर तथा बोधगम्य हो जाता है।

डॉक्यूमेन्ट्री शिक्षण द्वारा विभिन्न परिस्थितियों में छात्रों में अनुकूलता का गुण विकसित होता है।

इसके प्रभाव से प्रेरित होकर छात्रों में चिन्तनशीलता, सृजनात्मकता एवं सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास होता है।

डॉक्यूमेन्ट्री शिक्षण द्वारा सीखने की क्षमता का सकारात्मक विकास होता है।

डॉक्यूमेन्ट्री शिक्षण में बालक की अधिकाधिक ज्ञानेन्द्रियों को सक्रिय कर सहभागिता से अधिगम करवाया जाता है, जो ज्ञान के स्थायित्व रहने में सहायता प्रदान करती है।

डॉक्यूमेन्ट्री शिक्षण एक मनोवैज्ञानिक विधि है, जिसमें संबंधित विषय वस्तु को विद्यार्थियों की रुचि अनुसार प्रस्तुत कर रूचिकर व बोधगम्य बनाया जाता है।

डॉक्यूमेन्ट्री शिक्षण द्वारा कठिन विषयवस्तु, सिद्धांतो आदि को रूचिकर ढंग से प्रस्तुत कर आसानी से सिखाया जा सकता है।

डॉक्यूमेन्ट्री शिक्षण विद्यार्थियों को विषय के प्रति संवेदनशील तथा वास्तविक परिस्थितियों में सीखे गए ज्ञान का प्रयोग करने योग्य बनाती है।

आधुनिक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में –शुरूआती दौर से आधुनिक युग में डॉक्यूमेन्ट्री के निर्माण, शैली, विषय आदि में कई परिवर्तन आए हैं। आधुनिक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में नाटकीयता के जुड़ने से अधिक तेजी से सफल व दर्शकों तक पकड़ बनाने में सफल हुई है। लोगों को शिक्षित करने, किसी विषय के प्रति जागरूक करने आदि हेतु नाटकीय कथानक फिल्मों की अपेक्षा डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में अधिक प्रभावकारी व आकर्षक है। डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म निर्माता अपनी फिल्मों के साथ सामाजिक प्रभाव अभियानों का उपयोग तेजी से कर रहे हैं। ऐसी डॉक्यूमेन्ट्री के उदाहरणों में कोनी (2012), सलमा नेबर, गैसलैंड, गर्ल राइजिंग आदि शामिल है। वर्तमान तकनीकी व डिजिटल युग ने हल्के डिजिटल वीडियो के निर्माण में अत्यधिक सुविधा सहायता प्रदान की है। वर्तमान में डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों में नवाचार व उन्नत प्रदर्शन हेतु कुछ डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म पुरस्कार भी दिए जाते हैं जैसे–

ग्रियर्सन पुरस्कार

सर्वश्रेष्ठ डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म हेतु अकादमी पुरस्कार

जॉरिस इवेन्स पुरस्कार

अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म महोत्सव एम्स्टर्डम (आई.डी.एफ.ए.)

मार्गरेट मिड फिल्म महोत्सव

ग्रांड पुरस्कार, विजन डू रील

कुछ प्रमुख शैक्षिक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में हैं–

नेवर गिव अप (मोटिवेशनल मूवी)

बुरा वक्त

डॉक्यूमेन्ट्री के प्रकार– चूंकि सभी डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में समान नहीं होती है, विभिन्न प्रकार की डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों को सिनेमैटोग्राफर से विभिन्न तकनीकों की आवश्यकता होती है। डॉक्यूमेन्ट्री शैली के छः प्रमुख प्रकार है–

1 काव्यात्मक डॉक्यूमेन्ट्री शैली– काव्यात्मक डॉक्यूमेन्ट्री शैली को सर्वप्रथम 1920 के दशक में लाया गया। जिसका उद्देश्य विभिन्न अनुभवों, छवियों व दर्शकों को अलग–अलग आँखों से दुनिया दिखाना था। इसमें किसी भी सामग्री के सार या कथा को काव्य उप शैली के रूप में अपरम्परागत या प्रयोगात्मक रूप से प्रस्तुत किया गया है। इसका अन्तिम लक्ष्य एक सच्चाई के बजाए एक भावना पैदा करना है। काव्यात्मक डॉक्यूमेन्ट्री शैली में रचनात्मक रचनाओं, चुनौतीपूर्ण तुलनाओं और सिनेमाई कहानी कहने के विभिन्न रूपों को ढूँढ़कर डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म निर्माण के सभी तत्वों के साथ प्रयोग करने में एक मूल्यवान सबक प्रदान करता है। इस शैली में अस्पष्ट, काव्यात्मक, अमूर्त कल्पना शक्ति का प्रयोग कर कहानी का वर्णन किया जाता है।

2 वर्णनात्मक डॉक्यूमेन्ट्री शैली– यह शैली काव्यात्मक डॉक्यूमेन्ट्री शैली के ठीक विपरीत है। काव्यात्मक शैली में जहाँ अस्पष्ट व काव्यात्मक सामग्री का प्रयोग किया जाता है, वहीं वर्णनात्मक शैली में सर्वव्यापी ''वॉयस ऑफ गॉड'' या ''कथन के माध्यम से'' प्रदर्शन करने के नियम पर जोर दिया जाता है। इसलिए वर्णनात्मक शैली अधिक लोकप्रिय शैली है, जिसे लोगों द्वारा वास्तविक डॉक्यूमेन्ट्री कहा जाता है। इस शैली पर अधिकांशतः

टेलीविजन के हिस्ट्री चैनल, डिस्कवरी चैनल आदि आधारित है।[1] वर्णनात्मक शैली किसी भी प्रकार की सूचना या जानकारी देने हेतु सर्वोत्तम तरीकों में से एक है। वर्णनात्मक डॉक्यूमेन्ट्री शैली को एक वीडियो निबंध के रूप में पेश किया जा सकता है जो किसी विशिष्ट विषय को रोमांचक दृश्यों व तर्को से संबंध स्थापित करके सीधे वर्णन के रूप में प्रस्तुत करता है।

3 सहभागिता डॉक्यूमेन्ट्री शैली– सहभागिता डॉक्यूमेन्ट्री शैली में कथा या कहानी में फिल्म निर्माता का कथानक के रूप में समावेश होना पाया जाता है। यह समावेश उतना ही मामूली हो सकता है जितना कि एक फिल्म निर्माता कैमरे के पीछे से सवालों या संकेतो के साथ अपने विषय को अपनी आवाज में उपयोग कर रहा है या एक फिल्म निर्माता के रूप में प्रमुख रूप से कथा के कार्यों को सीधे प्रभावित कर रहा है। ''निकोल्स (2010) के अनुसार, डॉक्यूमेन्ट्री के सहभागिता शैली में फिल्म निर्माता किसी अन्य की तरह एक सामाजिक अभिनेता बन जाता है। साक्षात्कार के माध्यम से फिल्म निर्माता की आवाज को दिखाया जाता है, क्योंकि यह कहानी के बारे में योगदान देने वाली सामग्री को जोड़ती है जिसे वे बताने की कोशिश कर रहे हैं। इसका एक उदाहरण एरोल मोरिस द्वारा आविष्कृत मशीन है, जिसे 'इंटरट्रोट्रॉन' कहते हैं। यह मशीन कैमरे के लैंस में देखने में सक्षम होने के साथ–साथ विषय को निर्देशक के साथ सीधे जुड़ने की अनुमति देती है।

4 पर्यवेक्षणीय डॉक्यूमेन्ट्री शैली– डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों की पर्यवेक्षणीय शैली का प्रमुख उद्देश्य उनके आस–पास की दुनिया का निरीक्षण करना होता है। पर्यवेक्षणीय डॉक्यूमेन्ट्री शैली दर्शकों को विषय के कुछ सबसे महत्वपूर्ण क्षणों तक प्रत्यक्ष पहुंच प्रदान करके किसी मुद्दे के सभी पक्षों को आवाज देने का प्रयास करती है। वर्षों से यह शैली अत्यन्त प्रभावशाली रही है और फिल्म निर्माता अक्सर वास्तविकता और सच्चाई की भावना पैदा करने के लिए अन्य फिल्म शैलियों में इसका उपयोग करते हैं। इसका सबसे प्रसिद्ध उदाहरण बारबरा कोप्पल द्वारा निर्देशित हॉर्लन काउंटी, यू.एस.ए. है। फ्रेड विस्मैन एक ऐसे फिल्म निर्माता है जिन्होंने अपने पूरे करियर में केवल पर्यवेक्षणीय शैली पर आधारित डॉक्यूमेन्ट्री का ही निर्माण किया है। उदाहरण के लिए इनकी फिल्म ''बाक्सिंग जिम'' जो कि एक बाक्सिंग जिम व इसके माध्यम से आने वाले सभी लोगों की डॉक्यूमेन्ट्री है। उनकी फिल्मों का वर्णन करने का सबसे अच्छा तरीका ''दीवार पर उड़ना'' है। यह किसी एक व्यक्ति का दृष्टिकोण नहीं है, यह सर्वज्ञ दृष्टिकोण है, जो दर्शकों को बाहर देखने के लिए बाहर बैठने की अनुमति देता है। ऐसा करने से दर्शक किसी निश्कर्ष पर आ सकते हैं और स्वतन्त्र रूप से निर्णय ले सकते हैं।

5 रिफ्लेक्टिव डॉक्यूमेन्ट्री शैली– रिफ्लेक्टिव डॉक्यूमेन्ट्री शैली सहभागिता डॉक्यूमेन्ट्री शैली के समान है, जिसमें अक्सर फिल्म निर्माता को फिल्मों में शामिल किया जाता है। हालांकि सहभागी शैली के विपरीत रिफ्लेक्टिव डॉक्यूमेन्ट्री के अधिकांश निर्माता किसी बाहरी विषय का पता लगाने का कोई प्रयास नहीं करते हैं, बल्कि वे पूर्ण रूप से खुद पर और फिल्म बनाने की प्रक्रिया पर ध्यान देते हैं। इसका प्रमुख लक्ष्य दर्शकों को फिल्म निर्माण की प्रक्रिया को समझने में सहायता करना होता है ताकि दर्शक एक परिष्कृत व आलोचनात्मक दृष्टिकोण विकसित कर सकें। डॉक्यूमेन्ट्री की रिफ्लेक्टिव शैली अक्सर अपने स्वयं के नियामक बोर्ड के रूप में कार्य करती है, जो डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म के भीतर ही नैतिक और तकनीकी सीमाओं को नियन्त्रित करती है। रिएक्टमेन्ट (घटना का वास्तविक फुटेज नहीं होने पर उसके समान दृश्य साध्यक सामग्री का प्रयोग) का उपयोग करने की तकनीक डॉक्यूमेन्ट्री के रिफ्लेक्टिव शैली का एक पहलू है।

6 प्रदर्शनकारी डॉक्यूमेन्ट्री शैली– यह शैली एक प्रायोगिक संयोजन है, जिसका उपयोग विषय के अनुभव पर जोर देने और दुनिया के साथ भावनात्मक प्रतिक्रिया साझा करने के लिए किया जाता है। अक्सर व्यक्तिगत खातों को बड़े राजनीतिक या ऐतिहासिक मुद्दों से जोड़ते हैं और उनके बीच तुलना करते हैं। इसे कई बार ''माइकल मूर'' शैली के नाम से भी जाना जाता है, क्योंकि वह अक्सर अपनी निजी कहानियों का उपयोग सामाजिक सच्चाईयों के निर्माण के तरीके के रूप में करते हैं।

विषय वस्तु के आधार पर डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म को पाँच वर्गो में बाँटा जा सकता है–व्यक्तिपरक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म, विज्ञान विषयक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म, ऐतिहासिक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म, सांस्कृतिक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म, विशेष प्रयोजन के लिए बनायी

डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म

1. व्यक्तिपरक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म– इस प्रकार की डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में मुख्य रूप से किसी व्यक्ति की जीवनी, उसके व्यक्तित्व के विशेष गुणों, उसके जीवन की प्रमुख उपलब्धि अथवा उसके जीवन की किसी खास घटना को केन्द्र में रखकर बनायी जाती है। इस तरह की डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों में संबंधित व्यक्ति के जीवन से जुड़े लोगों से बातचीत करके, उसके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं का प्रदर्शन होता है। उदाहरणार्थ– ए.पी.जे. अब्दुल कलाम का साधारण व्यक्ति से वैज्ञानिक व इसके बाद राष्ट्रपति बनने तक का सफर पर स्वर कोकिला लता मंगेशकर को भारत रत्न मिलने पर लता जी के जीवन पर बनी डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म आदि।

2. विज्ञान विषयक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म– ऐसी डॉक्यूमेन्ट्री मुख्य रूप से विज्ञान विषय से संबंधित होती है। विज्ञान विषयक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों में मल्टीमीडिया और ग्रॉफिक्स का खूब प्रयोग किया जाता हैं। इसके प्रयोग से विज्ञान की उपलब्धियों, प्रयोगों, खोजों तथा परीक्षणों को लोगों तक पहुँचाया जाता है। वनस्पति जगत, जीव जगत, पर्यावरण, अन्तरिक्ष विज्ञान, जीव विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान, वन्य जीवन आदि विज्ञान विषयक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों के प्रमुख विषय हैं। उदाहरणार्थ– बिग बैंग सिद्धान्त के आधार पर पृथ्वी की उत्पति की कहानी पर बनायी गई डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म।

3. ऐतिहासिक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म– ऐतिहासिक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों द्वारा इतिहास के रहस्यों को बताने का कार्य किया जाता है। ये इतिहास की महत्वपूर्ण घटनाओं, भूलों आदि के बारे में हमें जानकारी प्रदान करते हैं। ऐतिहासिक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में अतीत की घटनाओं को जीवन्त बनाते हैं और दर्शकों के ज्ञान में वृद्धि करते हैं। उदाहरणार्थ– आजादी के प्रमुख आन्दोलन, 1857 की क्रान्ति, जलियाँवाला बाग हत्या काण्ड, आजाद हिन्द फौज के नेतृत्व में द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान भारत भूमि पर पहली बार अंग्रेजों को पराजित कर तिंरगा फहराने की घटना आदि पर बनी डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में ऐतिहासिक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों के उदाहरण है।

4. सांस्कृतिक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म– सांस्कृतिक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में कला, संस्कृति, सामाजिक उत्सवों आदि से जुड़े तथ्यों व घटनाओं की जानकारी प्रदान करती है। देश–दुनिया की अलग–अलग संस्कृतियों, कला, सभ्यता, त्यौहारों, खानपान, उत्सवों, रीति–रिवाजों आदि जीवन के विभिन्न रंगों पर बनी सांस्कृतिक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में विश्व की अलग–अलग जातियों को एक दूसरें के करीब लाती है। देश की किसी आदिवासी या जनजाति समाज के रहन–सहन, खानपान आदि पर आधारित फिल्में, विभिन्न राज्यों के नृत्य, नाट्य शैली पर आधारित डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में सांस्कृतिक डॉक्यूमेन्ट्री शैली के प्रमुख उदाहरण है।

5. विशेष प्रयोजन के लिए बनायी डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में– उपर्युक्त समस्त श्रेणियों के अतिरिक्त किसी विशेष प्रयोजन के लिए बनाई जाने वाली डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में इस श्रेणी के अन्तर्गत आती है। इस प्रकार की डॉक्यूमेन्ट्री का प्रमुख लक्ष्य इस बात पर होता है कि उसके जरिए दर्शकों को किसी विशेष विषय पर जागरूक बनाया जाए। दर्शकों को किसी खास कार्य को करने से रोका जाए या खास कार्य करने हेतु प्रेरित किया जाए। वर्तमान में कोविड–19 से बचाव व रोकथाम हेतु जागरूकता लाने हेतु बनायी गई डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। इसी के साथ जल संरक्षण, सामाजिक कुप्रथा या बुराई आदि पर बनी डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में भी इसी श्रेणी में आती है।

इसके अलावा निर्माण तकनीक के आधार पर डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों को दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है–

1 वास्तविक दृश्यों और सामग्री के आधार पर बनाई गई फिल्में।

2 दृश्यों की पुनर्रचना, कलाकारों के अभिनय और प्रतीकात्मक बिम्बों के आधार पर निर्मित डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म।

1. वास्तविक दृश्यों और सामग्री के आधार पर निर्मित फिल्में– वास्तविक दृश्यों और सामग्री के आधार पर बनायी जाने वाली डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों में वास्तविकता का चित्रण अधिक सरलता से होता है। जीवित व्यक्तियों के जीवन से जुड़ी घटनाओं पर बनी डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म, प्राकृतिक सौन्दर्य, पर्यटन स्थलों, पहाड़ी स्थलों आदि से जुडे विषयों पर निर्मित डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में, त्यौहारों, उत्सवों, पर्वों, समारोहों, रीति–रिवाजों, खान–पान आदि विषय से संबंधित डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में इसी श्रेणी की फिल्में हैं।

2. दृश्यों की पुनर्रचना व प्रतीकात्मक बिम्बों के आधार पर निर्मित फिल्में– इस श्रेणी में प्रायः ऐतिहासिक विषय की डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में, अपराध और विज्ञान के प्रयोगों से जुड़ी डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में, खगोल विज्ञान, प्राकृतिक घटनाओं आदि विषय से जुड़ी डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में आती है। इन डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों के निर्माण में निर्देशक की कल्पनाओं के लिए बहुत संभावनाएँ होती है। इन डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों का निर्माण तुलनात्मक रूप से अधिक खर्चीला है। उदाहरण के लिए रानी पद्मावती के जीवन पर बनने वाली डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म में तत्कालीन सामाजिक जीवन, वेशभूषा, परिवेश, युद्ध के दृश्यों हेतु हाथी–घोड़ों का इन्तजाम आदि सभी की हू–ब–हू पुनर्रचना करनी होती है।

डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम के लाभ–

- डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन से छात्रों को नई अवधारणाओं और नवीनतम प्रौद्योगिकी का परिचय आसानी से होता है।
- डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन द्वारा विद्यार्थियों को स्वयं को व्यक्त करने की कला भी सिखायी जाती है।
- डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन द्वारा सीखने की क्षमता का सकारात्मक विकास होता है।
- डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन द्वारा विभिन्न परिस्थितियों में अनुकूलता का गुण विकसित होता है।
- डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन द्वारा वर्तमान घटनाओं से छात्र प्रेरित होता है। चिन्तनशील लेखन को बढ़ावा मिलता है।

- डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम में बरतने वाली सावधानियाँ– 2012 के एक कार्यक्रम ''टेड टॉक'' के निर्देशक बीबन क्रीडॉन ने अपने लेख में बताया था कि 20वीं सदी की डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में एक प्रभावशाली कला है, क्योंकि शैक्षिक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में विद्यार्थियों को उनके दैनिक अनुभवों से परे मूल्यों, संघर्षो, नैतिकता तथा नवाचारों से परिचित करवाते हुए उनके जीवन के विकास को विस्तार देने में मदद करती है। शिक्षा के क्षेत्र में शैक्षिक डॉक्यूमेन्ट्री फिल्में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अतः डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम के संचालन करते समय कुछ सावधानियाँ अवश्य बरतनी चाहिए। शिक्षक और शैक्षिक पत्राचार में ''मार्क फिलिप्स" ने अपने लेख में डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों को एक महान प्रेरक के रूप में बताया है कि विद्यार्थियों की वर्तमान पीढ़ी वीडियो और डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों की ओर उन्मुख हो रही है। हमें इनका उपयोग शैक्षिक कार्यो में करना चाहिए ना कि इन्हें एक मनोरंजन का साधन बनाया जाए। लगातार बढ़ता डिजिटल परिदृश्य शिक्षकों के लिए भी एक महत्वपूर्ण अवसर है। डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम में बरतने वाली सावधानियाँ निम्नलिखित हैं–

1. सही तथ्यों का प्रदर्शन– शिक्षक विद्यार्थियों के लिए ज्ञान का प्रत्यक्ष स्रोत होते हैं, इसलिए शिक्षकों द्वारा प्रदर्शित तथ्यों का सही होना अत्यन्त आवश्यक है। अतः डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम के प्रयोग में विषय की गहराई को समझते हुए संबंधित विषय के सही तथ्यों का प्रदर्शन आवश्यक है।

2. शिक्षण के संसाधन के रूप में प्रयोग– डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों का प्रयोग विषय के सिद्धान्तों को आसानी से विद्यार्थियों तक पहुँचाने हेतु किया जाना चाहिए। इन्हें एक मनोरंजनात्मक रूप से विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया जाना चाहिए।[6] अतः डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों का प्रदर्शन शिक्षण संसाधन के रूप में किया जाना चाहिए।

3. सकारात्मक वातावरण का निर्माण– कक्षाकक्ष में डॉक्यूमेन्ट्री कार्यक्रम के प्रदर्शन से पहले शिक्षक द्वारा कक्षा में संबंधित विषय के प्रति प्रेरित कर डॉक्यूमेन्ट्री विधा से छात्रों को अवगत कराना चाहिए ताकि जिस उद्देश्य के लिए डॉक्यूमेन्ट्री कार्यक्रम का निर्माण किया गया है, उसकी प्राप्ति हो सके।

4. डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन हेतु उपयुक्त तकनीकी संसाधनो का प्रयोग– कक्षाकक्ष में डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन हेतु उपयुक्त माध्यम होना चाहिए। जैसे– प्रोजेक्टर, लेपटॉप, स्मार्ट बोर्ड आदि तकनीकी संसाधनों के प्रयोग से डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों का प्रदर्शन सरलता से किया जा सकता है।

5. छात्रों की रूचि बनाए रखना– कक्षाकक्ष में डॉक्यूमेन्ट्री फिल्मों का प्रदर्शन करते समय शिक्षक को बीच–बीच में शिक्षण बिन्दु को बताते हुए वीडियो का प्रदर्शन करना चाहिए ताकि विद्यार्थी विषय के प्रति रूचि रखते हुए संबंधित प्रकरण से जुड़े रहें।

6. भौतिक संसाधनों की पर्याप्तता– कक्षाकक्ष में डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन से पूर्व कक्षा में पर्याप्त रोशनी, बिजली व तकनीकी भौतिक संसाधनों जैसे– माइक, स्पीकर, लेपटॉप, प्रोजेक्टर, स्मार्ट बोर्ड आदि की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

7. छात्रों को डॉक्यूमेन्ट्री की जानकारी– कक्षाकक्ष में ''डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम'' के संचालन से पहले विद्यार्थियों को डॉक्यूमेन्ट्री से परिचित कराना एक शिक्षक हेतु अत्यन्त आवश्यक है। जिससे विद्यार्थी इस विधि को मनोरंजन का साधन न समझ कर अधिगम में इसका प्रयोग कर सकें।

डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम को प्रभावित करने वाले कारक–

शिक्षक की शिक्षण कौशल में दक्षता– डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम के सफल संचालन के लिए शिक्षक का इस कार्य में दक्ष होना अत्यन्त आवश्यक है। यदि शिक्षक को डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन जैसे नवाचार का पूर्ण बोध नहीं होगा तो वह विद्यार्थियों के अधिगम उद्देश्य की प्राप्ति में सफल नहीं होगा। अतः शिक्षक को डॉक्यूमेन्ट्री शिक्षण कार्यक्रम का ज्ञान परम आवश्यक है।

विद्यालय में तकनीकी संसाधनों की उपलब्धता– विद्यालय में तकनीकी संसाधनों की उपलब्धता डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम को प्रभावित करने वाला कारक है। तकनीकी संसाधनों जैसे प्रोजेक्टर, कम्प्यूटर या लेपटॉप, स्पीकर, माइक आदि के बिना डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम की कल्पना भी नहीं की जा सकती। अतः तकनीकी संसाधनों की उपलब्धता डॉक्यूमेन्ट्री शिक्षण को प्रभावित करती है।

विषय का चयन– सही विषय का चयन भी डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम को प्रभावित करने वाला कारक है। डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन द्वारा ऐतिहासिक घटनाओं, वर्तमान समाज के ज्वलंत मुद्दों, रूढ़ियों, नवीन तकनीकों, विज्ञान की उपलब्धता आदि सैद्धान्तिक विषयों को सरलता व रूचि के साथ पढ़ाया जा सकता है, किन्तु गलत प्रकरण या विषय के चयन से सही समय पर अधिगम लक्ष्यों की प्राप्ति करना संभव नहीं होगा। अतः सही विषय का चयन भी डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम को प्रभावित करता है।

विद्यार्थियों की रूचि– विद्यार्थियों की रूचि भी एक ऐसा कारक है जो डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम को प्रभावित करता है। कई बार ऐसी तकनीकों के प्रयोग से विद्यार्थियों में विषय के अधिगम के साथ साथ मनोरंजन की रूचि जाग्रत हो जाती है जो कि शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति को प्रभावित करती है।

परम्परागत शिक्षण तथा डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन शिक्षण में अन्तर–

परम्परागत शिक्षण व्यवस्था शिक्षक केन्द्रित होती है, जबकि डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन में शिक्षक गौण व विद्यार्थियो को ध्यान में रखकर पाठ्यसामग्री तैयार की जाती है।

परम्परागत शिक्षण में चॉक–बोर्ड तथा व्याख्यान विधि का प्रयोग होता है, जबकि डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन में शिक्षक के निर्देशन में किसी विषय का ऑडियो–वीडियो रुचिकर स्वरुप में प्रस्तुत किया जाता है।

परम्परागत शिक्षण में विद्यार्थियों को निष्क्रिय श्रोता बना दिया जाता है जबकि डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन में विद्यार्थियों की अधिकाधिक ज्ञानेंद्रियों को सक्रिय रखा जाता है।

परम्परागत शिक्षण अरुचिकर व उबाऊ रुप से शिक्षा प्रदान करता है, जबकि डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन में छात्रों में विषय के प्रति रुझान, रुचि व सक्रियता बनी रहती है।

परम्परागत शिक्षण अवधारणाओं की समझ के बजाए परीक्षा व परिणाम पर अधिक जोर देता है, जबकि डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन का प्रमुख लक्ष्य ही छात्रों को संबंधित विषय की अवधारणा को समझाना होता है।

निष्कर्षतः– इन विभिन्न प्रकार की शैलियों का प्रयोग विभिन्न विषयों से संबंधित जानकारी प्रदर्शन करने हेतु किया जाता है। इस प्रकार शिक्षा में प्राचीन शैक्षिक विधियों के स्थान पर नवीन शैक्षिक विधियों जैसे डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम जैसे नवाचारों के प्रयोग से शिक्षा के ना केवल लघुकालिक उद्देश्यों वरन् दीर्घकालिक उद्देश्यों की प्राप्ति में भी बल मिलता है। वर्तमान शैक्षिक पद्धति केवल ज्ञानार्जन तक ही सीमित नहीं है, बल्कि प्राप्त ज्ञान का जीवन में वास्तविक

धरातल पर प्रयोग किस प्रकार किया जाए पर अधिक बल देती है। अतः डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन जैसे नवाचारों का शिक्षा में प्रयोग एक अच्छा विकल्प है और वर्तमान में महामारी जैसी परिस्थिति में भी ऑनलाइन माध्यम से इसका प्रयोग इसकी उपयोगिता को और अधिक सकारात्मक दिशा प्रदान कर रहा है। डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम जैसे नवाचारों के प्रयोग से शिक्षा के ना केवल लघुकालिक उद्देश्यों अपितु दीर्घकालीन उद्देश्यों की प्राप्ति में भी बल मिलता है। इस प्रकार ज्ञान के स्थायित्व व व्यवहारशील होने से आज का बालक इस बदलती दुनिया में खुद को समायोजित कर मजबूत वैश्विक नागरिक बनाकर राष्ट्र निर्माण व विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान देता है। अतः डॉक्यूमेन्ट्री प्रदर्शन कार्यक्रम शिक्षा के क्षेत्र में ऐसा नवाचार है जो विभिन्न मानवीय मूल्यों व सकारात्मक दृष्टिकोण को एकत्रित कर उन्नत समाज के विकास को मजबूती प्रदान करता है।

सन्दर्भ सूची–

1. अग्रवाल, जे.सी., प्रिंसिपल्स, मैथ्डस् एण्ड टेक्नीक्स ऑफ टीचिंग, न्यू देहली, विकास पब्लिशिंग हाऊस, 2009
2. अग्रवाल, आर. एण्ड गौतम, ए., इफेक्ट ऑफ कन्सट्रक्टिविस्ट मैथड ऑफ टीचिंग ऑन एकेडमिक अचीवमेन्ट ऑफ प्राइमरी स्कूल स्टूडेन्ट, ज्ञानोदयः द जनरल ऑफ प्रोगेसिव एज्युकेशन, 2011, 1–6
3. अलयाज, युनुस., द इम्पेक्ट ऑफ इन्वायरमेन्टल डॉक्यूमेन्ट्री मूवीज ऑन प्री सर्विस जर्मन टीचर्स, एन्वायरमेन्टल एटीट्यूटस; जनरल ऑफ एज्यूकेशन एण्ड ट्रेनिंग स्टडीज, वोल्यूम 5, नं. 1, जनवरी 2017
4. बीटर, जी.जी.एण्ड पीयर्सन, एम.ई., यूजिंग टेक्नोलॉजी इन क्लासरूम (4 एडीशन), बोस्टनः एल्थी एण्ड बेकन, 1999
5. चेक्पोक्स, जे.ई., फिल्मस् एज ए टीचिंग रिसोर्स, जनरल ऑफ मेनेजमेंट इनक्वायरी, 1999, 240–251
6. डन्समोर, के.एण्ड लॉगोस, टी.जी., पोलिटिक्स मीडिया एण्ड यूथ अन्डरस्टेडिंग पॉलिटिकल सोशलाइजेशन वाया वीडियो प्रोडेक्शन इन सैकण्डरी स्कूल्स। लर्निंग, मीडिया एण्ड टेक्नोलॉजी, 2008, 1–10
7. फोर्टनर, आर. डब्ल्यू., रिलेटिव इफेक्टिवनेस ऑफ क्लासरूम एण्ड डॉक्यूमेन्ट्री फिल्म प्रजेंटेशन ऑन मरीन मेमल्स जनरल ऑफ रिसर्च इन साइन्स टीचिंग 1985, क्रासरेट, 1985
8. जेनिफर मेल्स, पीटर वेन एलेस्ट., डिड द ब्लू प्लेनेट सेट द एजेन्डा फॉर प्लास्टिक पॉल्यूशन ? एन एक्सप्लोरेटिव स्टडी ऑन द इनफलूऐंस ऑफ ए डाक्यूमेन्ट्री ऑन द पब्लिक, मीडिया एण्ड पोलिटिकल एजेन्डाज एन्वायरमेन्टल कम्यूनिकेशन, 2021 पेज नं. 40–54।
9. कैली, पी. गुन्टर, बी. एण्ड बकल, एल., रीडिंग टेलीविजन इन द क्लासरूमः मोर रिजल्टस फ्रॉम द टेलीविजन लिट्रेसी प्रोजेक्ट लर्निंग, मीडिया एण्ड टेक्नालॉजी, 1987
10. माथुर, एस.एस., डवलेपमेंट ऑफ लर्नर एण्ड टीचिंग, लर्निंग प्रोसेस, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन, 2010
11. मेहरोत्रा, एस.एल., यूनिवर्सलाईजिंग एलीमेन्ट्री एज्यूकेशन इन इण्डिया अनकेजिंग द 'टाइगर' इकोनॉमी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यू दिल्ली, 2005
12. ओव्ज. आर. डी., इफैक्ट ऑफ एज, एज्यूकेशन एण्ड एटीट्यूटस् ऑन लर्निंग बाय ओल्डर अडल्स्टस फ्रॉम ए डॉक्यूमेन्ट्री प्रोग्राम लर्निंग मीडिया एण्ड टेक्नोलॉजी, 1985
13. स्टीफन हाइन्स, इजेक एनकमाह–येबीह, स्टीफन ओ नैल, केथरिन नीडल, क्लेरी आर्मस्ट्रॉग., द इम्पेक्ट ऑफ नेचर डॉक्यूमेन्ट्रीज एण्ड विलिंगनेस टू पे एन्ट्रॉफी बैलेन्सिंग एण्ड द एण्ड ब्लू प्लेनेट इफेक्ट जनरल ऑफ इनवायरमेन्टल प्लेनिंग एण्ड मेनेजमेन्ट, 2020

आलोचना
त्रैमासिक
ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

उच्च प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों की अधिगम शैली का विश्लेषणात्मक अध्ययन

रेहाना उस्मानी
शोधार्थी : शिक्षा संकाय, जैन विश्वभारतीय विश्वविद्यालय, लाडनूं, नागौर(राज.)

डॉ. गिरिराज भोजक
शोध निर्देशक : सहायक आचार्य, शिक्षा संकाय, जैन विश्वभारतीय विश्वविद्यालय, लाडनूं, नागौर(राज.)

सारांश :

अधिगम शैली वह मार्ग है जिसके द्वारा व्यक्ति अपना ध्यान विषय पर केंद्रित करता है तथा नये कौशलों को अपने मस्तिष्क में संग्रहित कर लेता है। ये वे साधन है जो व्यक्ति के जीवन शैली को पूर्ण करते है।

अधिगम के दौरान व्यक्ति या विद्यार्थी जो तरीके अपनाता है वह सबके भिन्न–भिन्न होते हैं, वही उनकी अधिगम शैली होती है या साधारण शब्दों में कहा जा सकता है कि व्यक्ति के सीखने के विभिन्न तरीकों को अधिगम शैली कहा जाता है।

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में अधिगम या सीखने की प्रक्रिया बराबर चलती रहती है। जिस प्रकार व्यक्ति को विभिन्न कार्यों के लिए विभिन्न क्षमताएं प्रकृति प्रदत्त होती हैं, ठीक उसी प्रकार अधिगम की भी क्षमता मनुष्य को प्राप्त होती है। भिन्न–भिन्न व्यक्तियों में अधिगम की विभिन्न क्षमताएं होती हैं। विद्यार्थियों की लैंगिक प्रस्थिति और उनके क्षेत्र की पृष्ठभूमि का अधिगम शैली से सार्थक संबंध का अध्ययन करना शोध का प्रमुख उद्देश्य है। शोध में छह अधिगम शैली है, इन्हीं के आधार पर विद्यार्थियों पर इसका अध्ययन किया गया है।

मुख्य शब्द : अधिगम शैली, उच्च प्राथमिक, विद्यार्थी।

प्रस्तावना :

अधिगम शैली सामान्यतः भिन्न उपागम या अधिगम के भिन्न तरीके हैं। अधिगम के प्रति यह उपागम इस तथ्य पर बल देता है कि अधिगमकर्ता बहुत ही भिन्न तरीके से सूचनाओं के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं और उन्हें अनुभव भी करते हैं। अधिगम शैलियों के सिद्धांत यह दर्शाते हैं कि कितने अधिक अधिगमकर्ता जो सीखते हैं वह शैक्षिक अनुभवों के साथ सीखे गये अनुभवों का कितना अधिक उपयोग करते हैं जिससे उनकी विशेष अधिगम शैली विकसित होती है, चाहे वह इसमें कुशल हो या न हो। वास्तव में शिक्षा शास्त्री को यह प्रश्न कभी भी नहीं करना चाहिए कि क्या यह विद्यार्थी चुस्त (स्मार्ट) है बल्कि इसकी अपेक्षा यह प्रश्न करना चाहिए कि यह विद्यार्थी अपनी अधिगम शैली के प्रयोग में कहा तक स्मार्ट है?

अधिगम शैली वैयक्तिक विभिन्नता को जानने के अनेक उपकरणों में एक प्रकार का उपकरण है जिससे यह जाना जा सकता है कि विद्यार्थी अधिगम की प्रक्रिया में किस प्रभावी तरीके को अपने अनुभवों के लिए माध्यम बनाता है।

अधिगम शैली व्यक्ति का वह गुण है जो अनुदेशनात्मक परिस्थितियों के साथ इस तरह अन्तःक्रिया करता है कि इन परिस्थितियों में परिवर्तन के परिणामस्वरूप विभिन्न अधिगम उपलब्धि प्राप्त होती है।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

बालकों में अधिगम की एक शैली होती है जो उनकी परिस्थितियों के अनुरूप होती है तथा जिनका वह स्वाभाविक रूप से उपयोग करते हैं, जब तक कि हम उन्हें अन्य तरीके से प्रशिक्षित न कर दें।

प्रत्येक छात्र की सहायता करने के लिए और उनके स्वाभाविक रूझान को समझने का लाभ उठाने के लिए हमें केवल उनकी अधिगम शैली का ही पता नहीं लगाना चाहिए बल्कि इसे स्वीकार भी करना चाहिए।

अधिकांश लोग अपनी शैलियों के प्रयोग में कुछ लचीले होते हैं और परिस्थितियों के अनुसार अपनी शैलीपूर्ण तरीके में परिवर्तन करते हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि भिन्न प्रकार के कार्यों की सम्पूर्णता में मस्तिष्क एक लचकदार भूमिका निभाता है। इसी कारण यह माता–पिता और अध्यापकों के लिए विद्यार्थियों की मस्तिष्क की प्रकृति को समझने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

व्यक्तिगत विभिन्नता व्यक्ति की अधिगम शैली एवं सोच को भी प्रभावित करती है। माता–पिता एवं अध्यापक बच्चों को और उनकी स्वाभाविक प्रवृत्तियों को अनुभव करने में समर्थ होते हैं और यह स्वाभाविक प्रवृत्तियॉ उनके सोचने, कार्य करने व भिन्न–भिन्न तरीके से विभिन्न परिस्थितियों में सीखने से संबंधित होती है।

शैलियॉ योग्यताओं की अपेक्षाकृत प्रवृत्तियॉ अधिक होती है, ये बुद्धि से निर्देशित करने के तरीके होते हैं, जिसका उपयोग कर व्यक्ति आरामदायी महसूस करता है।

विद्यार्थियों को विषय–वस्तु से जोड़ने के पूर्व उनकी पसंदीदा सोच एवं शैलियों पर उनके अवधान पर प्रकाश डालना अध्यापक के लिए सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। अगर वह ऐसा करने में असफल रहते हैं तो इसके परिणाम गंभीर होते हैं क्योंकि अध्यापक विद्यार्थियों के मस्तिष्क की उलझन भरी शैलियों को विकसित कर सकते हैं। चूंकि शिक्षकों द्वारा शिक्षण की जिस पद्धति को अपनाया गया प्रायः उनके व्यक्तिगत चिन्तन शैली को प्रतिबिम्बित करती है। वे विद्यार्थी जो अध्यापकों की इसी चिन्तन शैली को धारण किए हुए हैं लाभान्वित होते हैं, पुरस्कृत होते हैं। अन्यथा वे विद्यार्थी जिनकी शैलियॉ भिन्न है वह अध्यापकों की शैलियों को समझ नहीं सकते हैं, जैसे–मंद अधिगमकर्ता, मंद बुद्धि विद्यार्थी, मूर्ख इत्यादि।

शैलियॉ योग्यताओं की तरह जन्मजात नहीं होती है। इनका अधिकांश रूप पर्यावरणीय स्थिति, माता–पिता और अध्यापकों द्वारा बच्चों को पालन करने से सम्बन्धित होता है। किसी व्यक्ति की एक विशेष अवस्था पर उसकी पसंदीदा शैली हो सकती है और वही शैली अन्य व्यक्ति की दूसरी अवस्था में दिखाई दे सकती है। शैलियॉ निश्चित नहीं होती बल्कि परिवर्तनशील होती है। हमें हमारी स्वयं की, विद्यार्थियों की पसंद की शैलियों को पहचानने की आवश्यकता है।

अधिगम शैली इस विस्तार का समर्थन करती है कि प्रत्येक छात्र असाधारण, अद्वितीय है तथा उसे उस तरीके से सिखाया जाना चाहिए जिसमें वह सर्वोत्तम सीखे। अधिगम शैली को विशेषतः किसी विशेष अधिगम क्षेत्र में एक व्यक्ति के अर्जित व्यवहार के विशिष्ट प्रतिरूप के रूप में मानना चाहिए। इस प्रकार अधिगम शैली में वैयक्तिक विभिन्नता उन उपागमों के प्रकार का मुख्य निर्धारक है जो विभिन्न छात्रों को यह बताने में अच्छी तरह समर्थ है कि वे विभिन्न तरीकों से कैसे सीखते हैं।

अधिगम शैली के निदान में वैयक्तिक अनुदेशन के लिए तार्किक आधार पर नवीन द्वार खोल दिए है। इसने शिक्षकों के लिए विद्यालय में छात्रों को प्रेरित करने, उन्हें समझने तथा सहायता

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

पहुँचाने के लिए अधिक प्रभावी संसाधन उपलब्ध कराएँ है, जो शिक्षा में एक वास्तविक आधुनिक उपागम का आधार है।

विद्यार्थियों में प्रभावशाली अधिगम के लिए उन्हें शैक्षिक संवेदनापरक समूह में समूहबद्ध करने और व्यक्तिगत अधिगम शैली के निदान करने की आवश्यकता है। इस कार्य में शिक्षक उनकी प्रभावी ढंग से मदद करें।

कुरे का मत है कि बालक की जटिल परन्तु मौलिक या विशिष्ट अधिगम शैली से कई तत्व या कारक निर्धारित होते हैं। शिक्षक छात्रों की अधिगम शैली को जानकर उस जानकारी का उपयोग छात्रों के समूह में बॉटने, उपयुक्त शिक्षण विधियों का चयन करने तथा छात्रों के उपलब्धि स्तर में वृद्धि करने के लिए प्रयुक्त कर सकता है। शोधकार्य बताते हैं कि अधिगम शैली का अध्ययन एवं उपयोग शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के तात्कालिक एवं दीर्घकालिक परिणामों को समृद्ध करने में पूर्णतः सहायक हुआ है।

अधिगम शैली की परिभाषाए :

सीगल और **कूप** के मतानुसार ''अधिगम शैली व्यक्तियों के बीच में उनके ज्ञानात्मक सबंध को जोड़ने के लिए एक पुल का कार्य करती है।''

जॉन. पी. डिसेस्को का कथन है कि ''अधिगम शैली नवीन सम्प्रत्यय एवं सिद्धांतो के अधिगम के पाठ्यक्रम में अपनायी गयी व्यक्ति की एक अपनी व्यक्तिगत प्रक्रिया है।'' अर्थात इसमें भी व्यक्तिगत विभिन्नताएँ है और सभी अपने अनुसार की अधिगम शैली से सीखते हैं।

अधिगम शैली के प्रकार :

शिक्षाशास्त्रियों एवं मनोवैज्ञानिकों ने अधिगम शैली को दृष्टिगत किया है। इस शोध अध्ययन में जिन अधिगम शैलियों का अध्ययन किया जा रहा है वे निम्नलिखित है –

1. **सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली** – सक्रिय शिक्षण 'सीखने' का एक तरीका है जिसमें छात्र सक्रिय रूप से या अनुभवात्मक रूप से सीखने की प्रक्रिया में शामिल होते है और सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम में छात्र की भागीदारी के आधार पर सक्रिया सीखने के विभिन्न स्तर होते हैं।
2. **सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली** – सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली में खेल के मध्यमान से सीखना, गतिविधि आधारित शिक्षा, प्रौद्योगिकी आधारित शिक्षा, समूह कार्य, परियोजना पद्धति आदि सम्मिलित है। सक्रिय रचनात्मक अधिगम निष्क्रिय अधिगम के विपरीत है। यह शिक्षार्थी–केन्द्रित है। सक्रिय रचनात्मकता में सक्रिय सीखने में प्रत्येक विद्यार्थी की सक्रिय भागीदारी एक आवश्यक पहलू है।
3. **चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली –** चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली सीखने के सबसे आम लक्ष्यों में से एक दृश्य सीखने की शैली है। कुछ छात्र चार्ट, आरेख, रेखाचित्र आदि के मध्यमान से वस्तु का दृश्य देखते है जो विस्तृत उदाहरणों के साथ विषयों को चित्रित करते है और उन्हें बेहतर तरीके से समझने में सहायता करते है।
4. **चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली** – चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली में विद्यार्थी चित्रों के मध्यमान से देखकर सीखते हैं और इससे उनकी कल्पनाशक्ति विकसित होती है।
5. **मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली** – मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली वाले विद्यार्थी ध्वनि और श्रवण के मध्यमान से सीखते हैं। मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली सीखने को श्रव्य और दृश्य से जोड़ती है जिससे विद्यार्थियों को सीखने में सरलता होती है।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

6. **मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली** – मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली वाले विद्यार्थी ऐसी गतिविधियों से आनन्द प्राप्त करते है जिसमें सुनना सम्मिलित होता है, जैसे ऑडियोबुक, पॉडकास्ट या मौखिक कहानी।

शोध औचित्य :

विद्यार्थियों की अधिगम शैली पर कई शोध कार्य हुए है। व्यक्तिगत कारक लोगों की अधिगम शैली में योगदान करते हैं और कई शोधों का केंद्र बिंदु रहे हैं (होसेनी, 2019, सुह और चो, 2018, सादेत और सादेघी, 2005, याजिसी, 2017)। अधिकांश दृष्टिकोणों में व्यक्तिगत कारकों को लोगों की अधिगम शैली का अभिन्न अंग माना जाता है और शोधकर्ताओं द्वारा इस पर जोर दिया गया है। अधिगम शैली में प्रभावी सबसे महत्वपूर्ण व्यक्तिगत स्तर के चर में से, लोगों की क्षमता, व्यक्तित्व विशेषताएं, अनुभूति शैली, बुद्धिमत्ता और चुनौतीपूर्ण व्यक्तित्व का उल्लेख किया जा सकता है। निरंतरता में, सीखने की शैलियों और रचनात्मकता के क्षेत्र में किए गए शोध के कई उदाहरण बताए गए हैं। एचएसयू (1999) ने डायवर्जर्स को सभी प्रकार के शिक्षार्थियों में सबसे अधिक कल्पनाशील बताया। ओश्हारा और स्टर्नबर्ग (2001) द्वारा किए गए शोध में 110 छात्रों के अधिगम शैली के उनके प्रदर्शन पर प्रभाव की रिपोर्ट दी गई है ताकि यह साबित हो सके कि अधिगम शैली का प्रभाव छात्रों के व्यक्तित्व और अनुभूति पर निर्भर है। पाशा (2008) ने छात्रों में रचनात्मकता को बढ़ाने पर अधिगम शैली को बढ़ावा देने के तीन तरीकों के प्रभाव का अध्ययन और तुलना की। नतीजे बताते हैं कि शिक्षण पद्धति की परवाह किए बिना, रचनात्मकता शिक्षण ने छात्रों में रचनात्मकता के विकास और बढ़ावा देते में मदद की। भट्ट(2019) दर्शाता है कि हाई स्कूल के छात्रों की सीखने की शैली और समस्या समाधान के बीच एक सार्थक सम्बन्ध है। जिन 559 छात्रों पर परीक्षण किया गया, उनमें से सीखने की शैली को आत्मसात करने और अलग करने वाले छात्रों में बेहतर तर्क और समस्या सुलझाने की क्षमता थी। ईशानी एट.अल. (2014)ने सीखने की शैलियों और रचनात्मकता के बीच सम्बन्ध की जांच की। अध्ययन नमूने में 354 छात्र (164 लड़के और 190 लड़कियां) शामिल थे। निष्कर्षों से अधिगम शैली और व्यक्तिगत कारकों के बीच एक महत्वपूण्र संबंध का पता चला। गर्ग (2015) ने जबलपुर भारत के 600 हाई स्कूल छात्रों में व्यक्तिगत कारकों पर सीखने और सोचने की शैलियों के प्रभाव का अध्ययन किया। निष्कर्ष दर्शाते हैं कि सीखने और सोचने की शैलियों का व्यक्तिगत कारकों पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। उच्च प्राथमिक स्तर पर अभी तक इस समस्या से संबंधित ना के बराबर शोध कार्य हुए है अतः यही कारण रहा कि शोधार्थी ने उच्च प्राथमिक स्तर पर इस समस्या का अध्ययन करने का विचार किया क्योंकि वर्तमान में उच्च प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों की शिक्षण पद्धति में काफी परिवर्तन हो रहे है। इन परिवर्तनों के कारण विद्यार्थियों की स्मरण रखने की क्षमता, लिखने की क्षमता आदि प्रभावित हो रहे है क्योंकि बच्चों के व्यक्तिगत कारकों जैसे उनकी लैंगिक प्रस्थिति और क्षेत्र की पृष्ठभूमि को सम्मिलित नहीं किया जा रहा है। ऐसे में यह देखना आवश्यक है कि क्या विद्यार्थियों के लिंग और पृष्ठभूमि का उनकी अधिगम शैली से सार्थक संबंध है अथवा नहीं। जिससे उच्च प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों की अधिगम शैली के आधार पर उनकी शिक्षण विधियों में परिवर्तन किया जा सके। अतः शोधार्थी ने विचार किया कि इस समस्या पर अध्ययन किया जाए।

अध्ययन के उद्देश्य :

(1) उच्च प्राथमिक स्तर पर शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की अधिगम शैली का अध्ययन करना।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

(2) उच्च प्राथमिक स्तर पर शहरी एवं ग्रामीण छात्रों का अधिगम शैली का अध्ययन करना।
(3) उच्च प्राथमिक स्तर पर शहरी एवं ग्रामीण छात्राओं की अधिगम शैली का अध्ययन करना।
(4) उच्च प्राथमिक स्तर पर शहरी छात्र एवं छात्राओं की अधिगम शैली का अध्ययन करना।
(5) उच्च प्राथमिक स्तर पर ग्रामीण छात्र एवं छात्राओं की अधिगम शैली का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ :

1. उच्च प्राथमिक स्तर पर शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों का अधिगम शैली में सार्थक अन्तर होता है।
2. उच्च प्राथमिक स्तर पर शहरी एवं ग्रामीण छात्रों का अधिगम शैली में सार्थक अन्तर होता है।
3. उच्च प्राथमिक स्तर पर शहरी एवं ग्रामीण छात्राओं की अधिगम शैली में सार्थक अन्तर होता है।
4. उच्च प्राथमिक स्तर पर शहरी छात्र एवं छात्राओं की अधिगम शैली में सार्थक अन्तर होता है।
5. उच्च प्राथमिक स्तर पर ग्रामीण छात्र एवं छात्राओं की अधिगम शैली में सार्थक अन्तर होता है।

तकनीकी शब्दों का परिभाषीकरण :

1. **उच्च प्राथमिक विद्यालय स्तर** – औपचारिक शिक्षा की प्राप्ति हेतु गठित विद्यालय, जहां कक्षा 6 से 8वीं तक के विद्यार्थियों को अध्ययन करवाया जाता है, उन्हें उच्च प्राथमिक स्तर के विद्यालय कहा जाता हैं।
2. **अधिगम शैली** – अधिगम शैली वह मार्ग है जिसके द्वारा व्यक्ति अपना ध्यान विषय पर केंद्रित करता है तथा नये और कठिन प्रश्नों एवं कौशलों को अपने मस्तिष्क में संग्रहित कर लेता है वे न तो भौतिक साधन है, न विधियाँ हैं और न ही कौशल है जिनका कि व्यक्ति सीखने में प्रयोग करता है ये तो केवल वे साधन है जो व्यक्ति की शैली को पूर्ण करते है।

चर

स्वतंत्र चर – ऑन लाइन शिक्षण प्रक्रिया ।

आश्रित चर – अधिगम शैली।

शोध का परिसीमन :

प्रस्तुत शोध कार्य जयपुर जिले के सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों के उच्च प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों तक ही सीमित है।

प्रस्तुत शोध कार्य अधिगम शैली तक ही सीमित है।

शोध विधि :

प्रस्तुत शोध अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया है।

जनसंख्या :

प्रस्तुत शोध में राजस्थान राज्य के जयपुर जिले के उच्च प्राथमिक विद्यालय स्तर के विद्यार्थियों को जनसंख्या के रूप में लिया गया है।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

न्यादर्श :

शोधकार्य में यादृच्छिक विधि द्वारा 60 विद्यार्थियों का चयन निम्न प्रकार किया गया है–

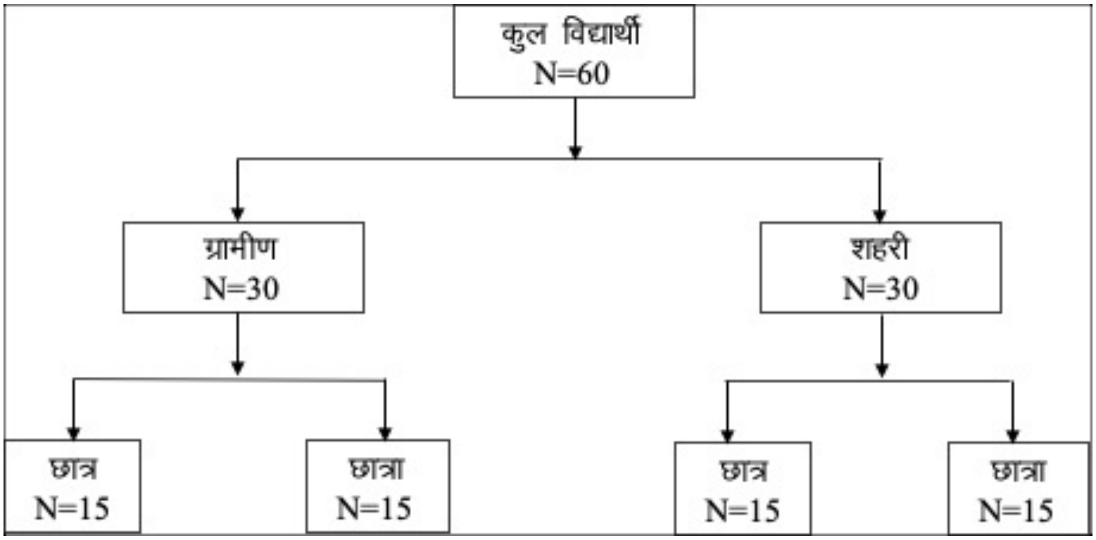

शोध के उपकरण :

अधिगम शैली मापनी–शोध में करूणा शंकर मिश्रा द्वारा निर्मित अधिगम शैली मापनी का उपयोग किया गया है।

शोध में प्रयुक्त सांख्यिकी

प्रस्तुत शोध में परिणाम जानने हेतु निम्न सांख्यिकी विधियों का उपयोग किया गया है–

1 मध्यमान
2. मानक विचलन
3 टी परीक्षण

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

सारणी संख्या 1
उच्च प्राथमिक स्तर पर शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की अधिगम शैली का अध्ययन

क्र. सं.	अधिगम शैली	विद्यार्थियों का प्रकार	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (SD)	टी–मान (t-value)	सार्थकता स्तर (0.05 एवं 0.01) Significant/ Not Significant (S/NS)
1	सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली	ग्रामीण	30	15.16	6.17	3.77	सार्थक है
		शहरी	30	10.46	2.92		
2.	सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली	ग्रामीण	30	10.23	3.39	3.09	सार्थक है
		शहरी	30	13.30	4.24		
3.	चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली	ग्रामीण	30	12.13	4.87	2.62	सार्थक है
		शहरी	30	15.66	5.52		
4.	चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली	ग्रामीण	30	18.66	6.25	4.65	सार्थक है
		शहरी	30	27.00	3.02		
5.	मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली	ग्रामीण	30	22.20	6.24	4.06	सार्थक है
		शहरी	30	27.90	4.49		
6.	मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली	ग्रामीण	30	18.90	4.22	0.10	सार्थक नहीं है
		शहरी	30	18.80	3.26		
	कुल अधिगम शैली	ग्रामीण	30	95.80	9.46	3.09	सार्थक है
		शहरी	30	103.30	9.30		

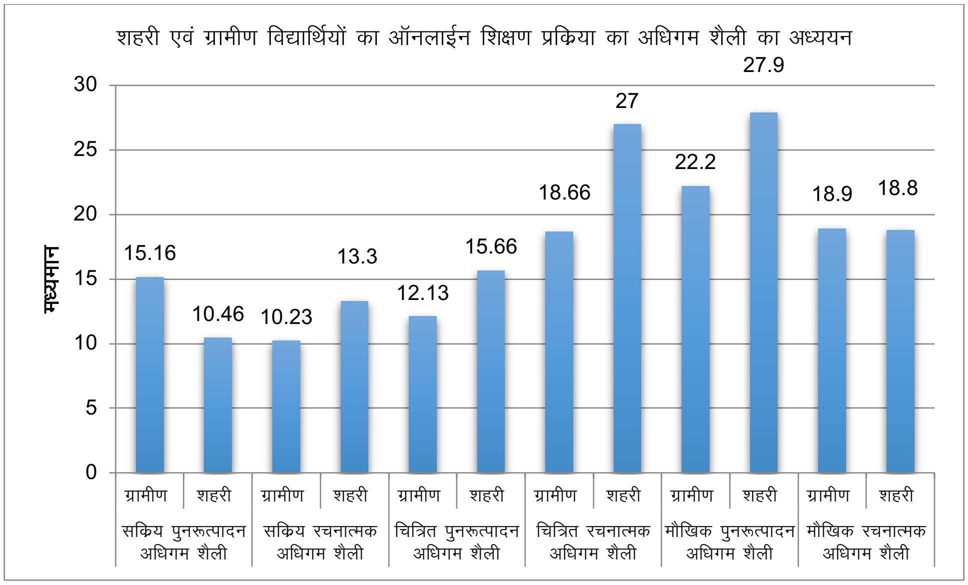

व्याख्या :

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों का मध्यमान क्रमशः 15.16 और 10.46 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

समूहों के विद्यार्थियों के सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 3. 77 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों में सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों का मध्यमान क्रमशः 10.23 और 13.30 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के विद्यार्थियों की सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 3. 09 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों में सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों का मध्यमान क्रमशः 12.13 और 15.66 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के विद्यार्थियों की चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 2. 62 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों में चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों का मध्यमान क्रमशः 18.66 और 27.00 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के विद्यार्थियों की चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली में अंतर नहीं है। इससे प्राप्त टी का मान 4.65 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों में चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों का मध्यमान क्रमशः 22.20 और 27.90 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के विद्यार्थियों की मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 4.06 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों में मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों का मध्यमान क्रमशः 18.90 और 18.80 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के विद्यार्थियों की मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली में अंतर नहीं है। इससे प्राप्त टी का मान 0.10 है जो .01 स्तर के मानक मान से कम है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों में मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों का मध्यमान क्रमशः 95.80 और 103.30 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के विद्यार्थियों की अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 3.09 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों में अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

अतः स्पष्ट है कि परिकल्पना ''शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की अधिगम शैली के घटकों में सार्थक अन्तर पाया गया।'' सत्य सिद्ध होती है।

सारणी संख्या 2

उच्च प्राथमिक स्तर पर शहरी एवं ग्रामीण छात्रों का अधिगम शैली का अध्ययन

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

क्र. सं.	अधिगम शैली	छात्र	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (SD)	टी–मान (t-value)	सार्थकता स्तर (0.05 एवं 0.01) Significant/ Not Significant(S/ NS)
1	सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली	ग्रामीण	15	15.40	7.47	2.07	सार्थक है
		शहरी	15	11.00	3.40		
2.	सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली	ग्रामीण	15	8.46	2.77	6.49	सार्थक है
		शहरी	15	15.80	3.40		
3.	चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली	ग्रामीण	15	9.86	3.93	2.05	सार्थक है
		शहरी	15	13.20	5.01		
4.	चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली	ग्रामीण	15	18.60	7.04	0.58	सार्थक नहीं है
		शहरी	15	17.33	4.71		
5.	मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली	ग्रामीण	15	18.66	6.25	4.65	सार्थक है
		शहरी	15	27.00	3.02		
6.	मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली	ग्रामीण	15	19.46	4.61	1.13	सार्थक नहीं है
		शहरी	15	17.86	2.97		
	कुल अधिगम शैली	ग्रामीण	15	90.46	8.60	3.10	सार्थक है
		शहरी	15	102.20	11.86		

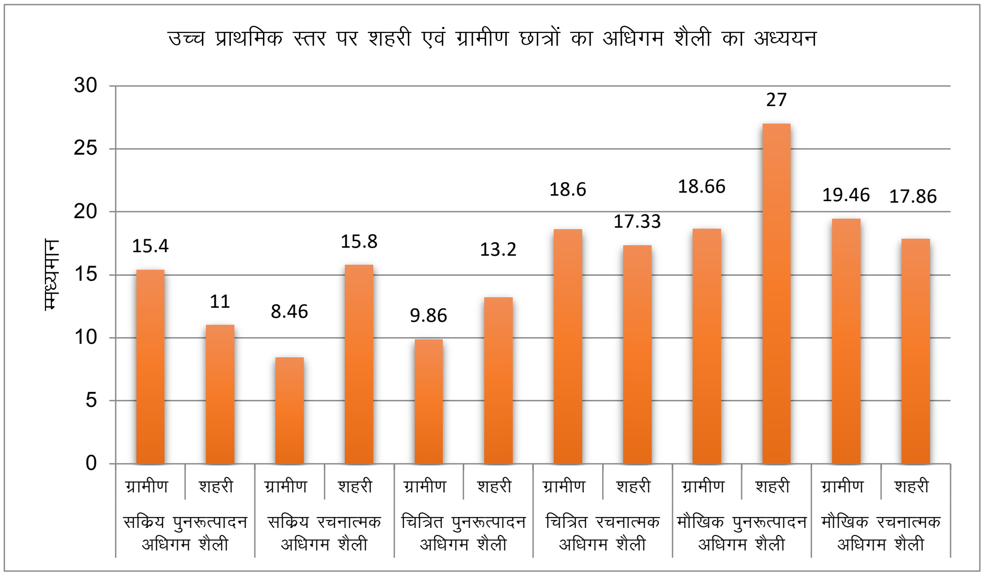

व्याख्या :

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी छात्रों का मध्यमान क्रमशः 15.40 और 11.00 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्रों सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 2.07 है जो .01

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

और के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी छात्रों में सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी छात्रों का मध्यमान क्रमशः 8.46 और 15.80 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्रों की सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 6.48 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी छात्रों में सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी छात्रों का मध्यमान क्रमशः 9.86 और 13.20 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्रों की चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 2.05 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी छात्रों में चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी छात्रों का मध्यमान क्रमशः 18.60 और 17.33 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्रों की चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली में अंतर नहीं है। इससे प्राप्त टी का मान 0.58 है जो .01 स्तर के मानक मान से कम है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी छात्रों में चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी छात्रों का मध्यमान क्रमशः 18.66 और 27.00 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्रों की मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 4.65 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी छात्रों में मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी छात्रों का मध्यमान क्रमशः 19.46 और 17.86 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्रों की मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली में अंतर नहीं है। इससे प्राप्त टी का मान 1.13 है जो .01 स्तर के मानक मान से कम है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी छात्रों में मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी छात्रों का मध्यमान क्रमशः 90.46 और 102.20 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्रों की अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 3.10 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी छात्रों में अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

अतः स्पष्ट है कि परिकल्पना ''शहरी एवं ग्रामीण छात्रों की अधिगम शैली के घटकों में सार्थक अन्तर पाया गया।'' सत्य सिद्ध होती है।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

सारणी संख्या 3

उच्च प्राथमिक स्तर पर शहरी एवं ग्रामीण छात्राओं की अधिगम शैली का अध्ययन

क्र. सं.	अधिगम शैली	छात्रा	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (SD)	टी–मान (t-value)	सार्थकता स्तर (0.05 एवं 0.01) Significant/ Not Significant(S/NS)
1	सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली	ग्रामीण	15	14.93	4.80	3.62	सार्थक है
		शहरी	15	9.93	2.34		
2.	सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली	ग्रामीण	15	12.00	3.07	0.99	सार्थक नही है
		शहरी	15	10.80	3.50		
3.	चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली	ग्रामीण	15	14.40	4.85	2.07	सार्थक है
		शहरी	15	18.13	4.99		
4.	चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली	ग्रामीण	15	15.73	3.36	1.11	सार्थक नहीं है
		शहरी	15	17.00	2.85		
5.	मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली	ग्रामीण	15	25.73	3.36	1.75	सार्थक है
		शहरी	15	28.80	5.57		
6.	मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली	ग्रामीण	15	18.33	3.56	1.05	सार्थक है
		शहरी	15	19.73	3.36		
	कुल अधिगम शैली	ग्रामीण	15	101.13	7.11	1.36	सार्थक है
		शहरी	15	104.40	5.99		

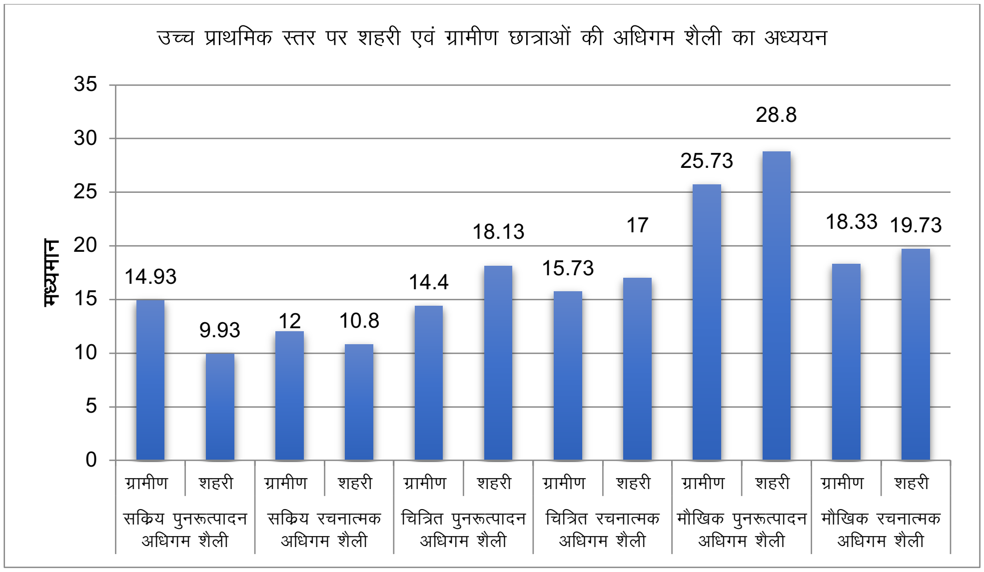

व्याख्या :

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 14.93 और 9.93 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्राओं की सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 3.62 है जो

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

.01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी छात्राओं में सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 12.00 और 10.80 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्राओं की सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली में अंतर नहीं है। इससे प्राप्त टी का मान 0.99 है जो .01 स्तर के मानक मान से कम है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी छात्राओं में सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 14.40 और 18.13 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्राओं की चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 2.07 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी छात्राओं में चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 15.73 और 17.00 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्राओं की चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली में अंतर नहीं है। इससे प्राप्त टी का मान 1.11 है जो .01 स्तर के मानक मान से कम है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी छात्राओं में चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 25.73 और 28.80 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्राओं की मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली में अंतर नहीं है। इससे प्राप्त टी का मान 1.75 है जो .01 स्तर के मानक मान से कम है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी छात्राओं में मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 18.33 और 19.73 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्राओं की मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली में अंतर नहीं है। इससे प्राप्त टी का मान 1.05 है जो .01 स्तर के मानक मान से कम है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी छात्राओं में मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि अधिगम शैली में ग्रामीण और शहरी छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 101.13 और 104.40 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्राओं अधिगम शैली में अंतर नहीं है। इससे प्राप्त टी का मान 1.36 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण और शहरी छात्राओं में अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

अतः स्पष्ट है कि परिकल्पना ''शहरी एवं ग्रामीण छात्राओं की अधिगम शैली के घटकों में सार्थक अन्तर पाया गया।'' असत्य सिद्ध होती है।

सारणी संख्या 4

उच्च प्राथमिक स्तर पर शहरी छात्र एवं छात्राओं की अधिगम शैली का अध्ययन

क्र. सं.	अधिगम शैली	शहरी	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन	टी–मान	सार्थकता स्तर (0.05 एवं 0.01)

					(SD)	(t-value)	Significant/ Not Significant(S/NS)
1	सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली	छात्र	15	11.00	3.40	1.00	सार्थक नहीं है
		छात्रा	15	9.93	2.34		
2.	सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली	छात्र	15	15.80	3.40	3.96	सार्थक है
		छात्रा	15	10.80	3.50		
3.	चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली	छात्र	15	13.20	5.01	2.70	सार्थक है
		छात्रा	15	18.13	4.99		
4.	चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली	छात्र	15	17.33	4.71	0.23	सार्थक नहीं है
		छात्रा	15	17.00	2.85		
5.	मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली	छात्र	15	27.00	3.02	1.10	सार्थक नहीं है
		छात्रा	15	28.80	5.57		
6.	मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली	छात्र	15	17.86	2.97	1.61	सार्थक नहीं है
		छात्रा	15	19.73	3.36		
	कुल अधिगम शैली	छात्र	15	102.20	11.86	0.64	सार्थक नहीं है
		छात्रा	15	104.40	5.99		

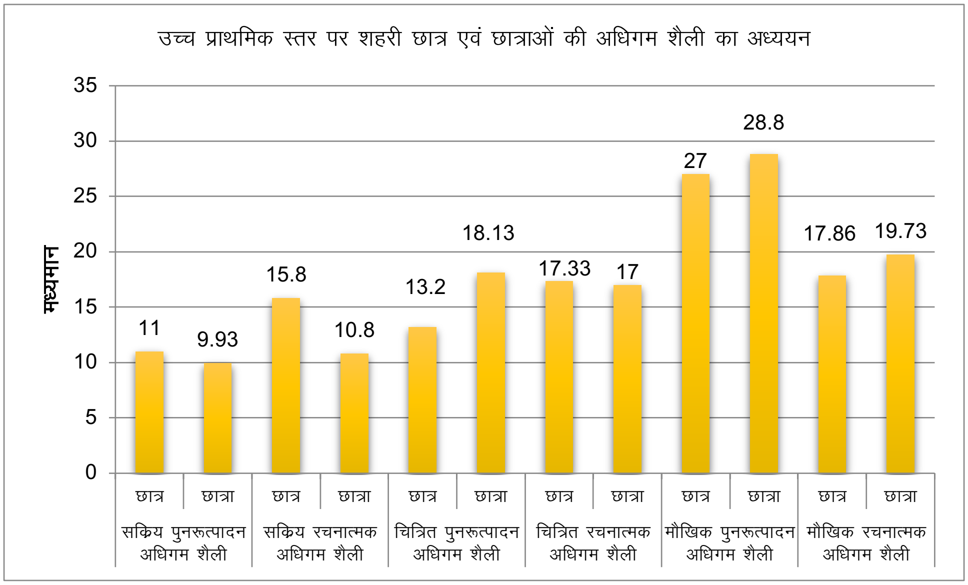

व्याख्या :

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली में शहरी छात्र–छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 11.00 और 9.93 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्र–छात्राओं की सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली में नहीं अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 1.00 है जो .01 स्तर के मानक मान से कम है अतः स्पष्ट है कि शहरी छात्र–छात्राओं में सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली में शहरी छात्र–छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 15.80 और 10.80 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्र–छात्राओं की सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 3.6 है जो .01 के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि शहरी छात्र–छात्राओं में सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली में शहरी छात्र–छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 13.20 और 18.13 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्र–छात्राओं की चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 2.07 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि शहरी छात्र–छात्राओं में चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली में शहरी छात्र–छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 17.33 और 17.00 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्र–छात्राओं की चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली में अंतर नहीं है। इससे प्राप्त टी का मान 0.23 है जो .01 स्तर के मानक मान से कम है अतः स्पष्ट है कि शहरी छात्र–छात्राओं में चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली में शहरी छात्र–छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 27.00 और 28.80 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्र–छात्राओं की मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली में अंतर नहीं है। इससे प्राप्त टी का मान 1.10 है जो .01 स्तर के मानक मान से कम है अतः स्पष्ट है कि शहरी छात्र–छात्राओं में मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली में शहरी छात्र–छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 17.86 और 19.73 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्र–छात्राओं की मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली में अंतर नहीं है। इससे प्राप्त टी का मान 1.61 है जो .01 स्तर के मानक मान से कम है अतः स्पष्ट है कि शहरी छात्र–छात्राओं में मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि अधिगम शैली में शहरी छात्र–छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 102.20 और 104.40 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्र–छात्राओं अधिगम शैली में अंतर नहीं है। इससे प्राप्त टी का मान 0.64 है जो .01 स्तर के मानक मान से कम है अतः स्पष्ट है कि शहरी छात्र–छात्राओं में अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

अतः स्पष्ट है कि परिकल्पना ''शहरी छात्र–छात्राओं की अधिगम शैली के घटकों में सार्थक अन्तर पाया गया।'' असत्य सिद्ध होती है।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

सारणी संख्या 5

उच्च प्राथमिक स्तर पर ग्रामीण छात्र एवं छात्राओं की अधिगम शैली का अध्ययन

क्र. सं.	अधिगम शैली	ग्रामीण	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (SD)	टी–मान (t-value)	सार्थकता स्तर (0.05 एवं 0.01) Significant/ Not Significant(S/NS)
1	सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली	छात्र	15	15.40	7.47	0.20	सार्थक नहीं है
		छात्रा	15	14.93	4.80		
2.	सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली	छात्र	15	8.46	2.77	3.31	सार्थक है
		छात्रा	15	12.00	3.07		
3.	चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली	छात्र	15	9.86	3.83	2.84	सार्थक है
		छात्रा	15	14.40	4.85		
4.	चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली	छात्र	15	18.60	7.04	1.42	सार्थक नहीं है
		छात्रा	15	15.73	3.36		
5.	मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली	छात्र	15	18.66	6.25	3.72	सार्थक है
		छात्रा	15	25.73	3.86		
6.	मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली	छात्र	15	19.46	4.61	0.72	सार्थक नहीं है
		छात्रा	15	18.33	3.86		
	कुल अधिगम शैली	छात्र	15	90.46	8.60	3.70	सार्थक है
		छात्रा	15	101.13	7.11		

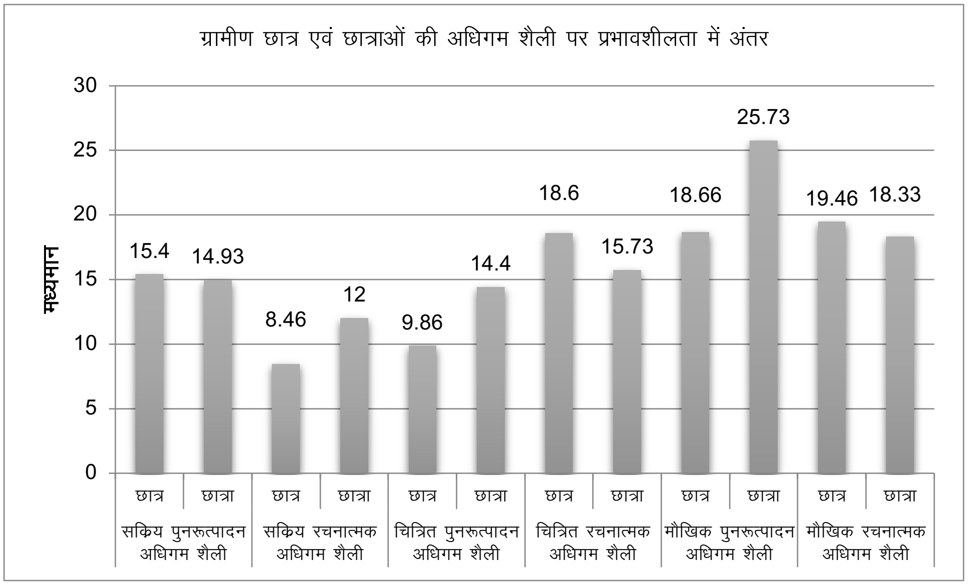

व्याख्या :

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली में ग्रामीण छात्र–छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 15.40 और 14.93 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्र–छात्राओं की सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली में अंतर नहीं है। इससे प्राप्त टी का

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

मान 0.20 है जो .01 स्तर के मानक मान से कम है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण छात्र–छात्राओं में सक्रिय पुनरूत्पादन अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली में ग्रामीण छात्र–छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 8.46 और 12.00 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्र–छात्राओं की सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 3.31 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण छात्र–छात्राओं में सक्रिय रचनात्मक अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली में ग्रामीण छात्र–छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 9.86 और 14.40 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्र–छात्राओं की चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 2.84 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण छात्र–छात्राओं में चित्रित पुनरूत्पादन अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली में ग्रामीण छात्र–छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 18.60 और 15.73 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्र–छात्राओं की चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली में अंतर नहीं है। इससे प्राप्त टी का मान 1.42 है जो .01 स्तर के मानक मान से कम है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण छात्र–छात्राओं में चित्रित रचनात्मक अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली में ग्रामीण छात्र–छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 18.66 और 25.73 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्र–छात्राओं की मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 3.72 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण छात्र–छात्राओं में मौखिक पुनरूत्पादन अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली में ग्रामीण छात्र–छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 19.46 और 18.33 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्र–छात्राओं की मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली में अंतर नहीं होता है। इससे प्राप्त टी का मान 0.72 है जो .01 स्तर के मानक मान से कम है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण छात्र–छात्राओं में मौखिक रचनात्मक अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि अधिगम शैली में ग्रामीण छात्र–छात्राओं का मध्यमान क्रमशः 90.46 और 101.13 पाया गया है। इससे पता चलता है कि दोनों समूहों के छात्र–छात्राओं अधिगम शैली में अंतर है। इससे प्राप्त टी का मान 3.70 है जो .01 स्तर के मानक मान से अधिक है अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण छात्र–छात्राओं में अधिगम शैली के मध्य सार्थक अंतर पाया जाता है।

अतः स्पष्ट है कि परिकल्पना ''ग्रामीण छात्र–छात्राओं की अधिगम शैली के घटकों में सार्थक अन्तर पाया गया।'' सत्य सिद्ध होती है।

निष्कर्ष :

परिकल्पना 'शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की अधिगम शैली का स्तर लगभग समान है।' सत्य सिद्ध होती है। सभी उच्च प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों की अधिगम शैली का स्तर उच्च पाया गया है जबकि अधिगम शैली के प्रकारों में विभिन्नता पायी गई है।

परिकल्पना ''शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की अधिगम शैली के घटकों में सार्थक अन्तर पाया गया।'' सत्य सिद्ध होती है।

परिकल्पना ''शहरी एवं ग्रामीण छात्रों की अधिगम शैली के घटकों में सार्थक अन्तर पाया गया।'' सत्य सिद्ध होती है।

परिकल्पना ''शहरी एवं ग्रामीण छात्राओं की अधिगम शैली के घटकों में सार्थक अन्तर पाया गया।'' असत्य सिद्ध होती है।

परिकल्पना ''शहरी छात्र–छात्राओं की अधिगम शैली के घटकों में सार्थक अन्तर पाया गया।'' असत्य सिद्ध होती है।

परिकल्पना ''ग्रामीण छात्र–छात्राओं की अधिगम शैली के घटकों में सार्थक अन्तर पाया गया।'' सत्य सिद्ध होती है।

संदर्भ सूची :

1. Bhat, M. (2019) Learning Styles in the Context of Reasoning and Problem-Solving Ability: An Approach based on Multivariate Analysis of Variance, International Journal of Psychology and Educational Studies, 6 (1), pp. 10–20.
2. Casakin, H. (2010) Learning styles and students' performance in design problem solving. Archnet-IJAR: International journal of Architecture Research.
3. Demirbas, O.O. & Demirkan, H. (2003) Focus on architectural design process through learning styles. Design studies, 24(5), pp.437-456.
4. Demirkan, H. & Demirbas, O.O. (2010) The effects of learning styles and gender on the academic performance of interior architecture students, Procedia-Social and Behavioral Sciences, 2(2), pp.1390-1394.
5. Eishani, K. A., Saad, E. A. & Nami, Y. (2014) The Relationship between Learning Styles and Creativity, Procedia - Social and Behavioral Sciences, 114, pp. 52–55
6. Garg, M. R. (2015) A Study of Styles of Learning and Thinking in Relation to Creativity of High School Level Students, Indian Journal of Research, 4 (11), pp. 127–128
7. Hawk, S. (2007) Using Learning Style Instruments to Enhance Student Learning. Decision Sciences Journal of Innovation Education, 5 (1), pp.1-19
8. Herwindo, R. P., Dwisusanto, Basuki Y. & Nirwan, E. H. (2023) Architectonic creativity in the dynamics of Indonesian Pre-colonial Architecture. ISVS e Journal, 10(1), 49-70
9. Hosseini, E. S., Falamaki, M. M.& Hojat, I. (2019). The Role of Creative Thinking and Learning Styles in the Education of Architectural Design, Journal of Architectural Thought, 3(5), pp. 125- 140.
10. Hsu, H. C. (1999) Learning styles of hospitality students: Nature or nurture? International Journal of Hospitality Management, 18(1), pp. 17-30.
11. Joyce, S. S., Chundeli, F. A. & Vijayalaxmi, J. (2022) The impact of Outdoor School Environments on Students' Overall Development: A Review of Current Knowledge. ISVS e- Journal, 9(5), 155- 167
12. O'Hara, L. A. & Sternberg, R. J. (2001) It Doesn't Hurt to Ask: Effects of Instructions to Be Creative, Practical, or Analytical on Essay-Writing Performance and Their Interaction with Students' Thinking Styles, Creativity Research Journal, 13 (2), pp. 197–210.
13. Onsman, A. (2016) Assessing creativity in a new generation architecture degree. Thinking skills and creativity, Vol. 19, pp. 210-218.
14. Pasha, S. (2008) The relationship between creativity and personality traits of high school students in Tehran, Journal of Educational Innovation, pp. 11-32.
15. Saadet, E. & Sadeghi, M. (2005). Model to explain the design and creativity in preparing the groundwork for the country's research institutes, Journal of Daneshvar Behavior, 14, pp. 35-46

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

16. Suh, J. & Cho, J. Y. (2018) Analyzing Individual Differences in Creative Performance: A Case Study on the Combinational Ideation Method in the Interior Design Process, Journal of Interior Design, 43 (3), pp. 9–23.
17. Willcoxson, L. and Prosser, M. (1996) Kolb's Learning Style Inventory (1985): review and further study of validity and reliability, British Journal of Educational Psychology, 66 (2), pp. 247–257.
18. Yazici, K. (2017) The Relationship between Learning Style, Test Anxiety and Academic Achievement, Universal Journal of Educational Research, 5 (1), pp. 61–71

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF HUMANITIES AND INTERDISCIPLINARY STUDIES
(Peer-reviewed, Refereed, Indexed & Open Access Journal)
DOI : 03.2021-11278686 ISSN : 2582-8568 IMPACT FACTOR : 7.560 (SJIF 2024)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और शिक्षक शिक्षा

(National Education Policy 2020 and Teacher Education)

डॉ. गिरधारी लाल शर्मा
सहायक आचार्य,
शिक्षा विभाग,
जैन विश्वभारती संस्थान,
लाडनूं, राजस्थान - 341306
E-mail: Girdhari1976@gmail.com

DOI No. 03.2021-11278686 DOI Link :: https://doi-ds.org/doilink/04.2024-31246845/IRJHIS2404066

सारांश :

प्राचीन काल से ही भारतवर्ष में शिक्षा व्यवस्था का केन्द्र बिन्दु शिक्षक या गुरु रहा है, जिसके बिना जीवन का अर्थ समझ पाना संभव नहीं है। शिक्षक वास्तव में बच्चों के भविष्य को आकार देते हैं तथा छात्र और शिक्षक दोनों मिलकर हमारे समृद्ध राष्ट्र का निर्माण करते हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में अध्यापक की शिक्षा गुणवत्ता, भर्ती, पदस्थापना, सेवा शर्तें और शिक्षकों के अधिकारों की स्थिति पर विशेष ध्यान दिया गया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में विभिन्न शिक्षा आयोगों एवं समितियों के सुझावों के जरिये अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में सुधार एवं परिवर्तन किया गया। इसमें 1964-66 के राष्ट्रीय शिक्षा आयोग, राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968) और राष्ट्रीय शिक्षक आयोग (चट्टोपाध्याय आयोग) 1983-85 ने सुधारात्मक सुझाब प्रस्तुत किये । अध्यापक शिक्षा के मामले में राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 एक मील का पत्थर प्रतीत होती है, जो वर्तमान अध्यापक शिक्षा में सुधार और शिक्षण को आकार देने के लिए सभी आवश्यक कारकों का समावेश करती है। यह अपने बहुआयामी दृष्टिकोण से अध्यापक शिक्षा को पुनर्जीवित करने को समर्पित है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के अध्याय 15 में अध्यापक शिक्षा में सुधार से सम्बंधित प्रमुख प्रावधान वर्णित हैं। नई शिक्षा नीति ने बहुविषयक संस्थानों में चारवर्षीय एकीकृत शिक्षक शिक्षा लाने पर पर्याप्त जोर दिया है। इसके साथ ही विश्व विद्यालयों में शिक्षा विभाग खोलने पर भी बल दिया गया है। प्रस्तुत शोधपत्र में राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 में शिक्षक शिक्षा के विभिन्न सुधारात्मक प्रावधानों एवं उनके प्रभाव का प्रस्तुतीकरण किया गया है ।

मुख्य शब्दावली - *राष्ट्रीय शिक्षा नीति, शिक्षक शिक्षा, अध्यापक शिक्षा, शिक्षक*

मुख्य विषय वस्तु-

“शिक्षा करेगी नव युग का निर्माण, आने वाला समय देगा इसका प्रमाण।”

शिक्षा मानव-जीवन के सर्वांगीण विकास का सर्वोत्तम साधन है। प्राचीन शिक्षा-व्यवस्था मानव

को उच्च-आदर्शों की उपलब्धि के लिए अग्रसर करती थी और उसके वैयक्तिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन के सम्यक् विकास में सहायता करती थी। शिक्षा की यह व्यवस्था हर देश और काल में तत्कालीन सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन-सन्दर्भों के अनुरूप बदलती रहनी चाहिए।

जीवन में शिक्षा के महत्त्व को देखते हुए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराने के उद्देश्य से वर्तमान सरकार ने शिक्षा क्षेत्र में व्यापक बदलावों के लिये **नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति** को मंजूरी दी है। करीब तीन दशक के बाद देश में नई शिक्षा नीति को मंजूरी दी गई है। इससे पूर्व वर्ष 1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनाई गई थी और वर्ष 1992 में इसमें संशोधन किया गया था। उम्मीद है कि यह शिक्षा नीति शिक्षा क्षेत्र में नवीन और सर्वांगीण परिवर्तनों की आधारशिला रखेगी।

विदित है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 को तैयार करने के लिये विश्व की सबसे बड़ी परामर्श प्रक्रिया आयोजित की गयी थी। जिसमें देश के विभिन्न वर्गों से रचनात्मक सुझाव माँगे गए थे।

प्राप्त सुझावों और विभिन्न शिक्षाविदों के अनुभव तथा **के. कस्तूरीरंगन समिति** की सिफारिशों के आधार पर **शिक्षा तक सबकी आसान पहुँच, समता, गुणवत्ता, वहनीयता और जवाबदेही** के आधारभूत स्तंभों पर निर्मित यह नई शिक्षा नीति **सतत विकास** के लिये '**एजेंडा 2030**' के अनुकूल है और इसका उद्देश्य 21वीं शताब्दी की आवश्यकताओं के अनुकूल स्कूल और कॉलेज की शिक्षा को अधिक समग्र लचीला बनाते हुए भारत को एक ज्ञान आधारित जीवंत समाज और वैश्विक महाशक्ति में बदलकर प्रत्येक छात्र में निहित अद्वितीय क्षमताओं को सामने लाना है।

लम्बे इंतजार और विचार-विमर्श के बाद नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 को भारत सरकार द्वारा लाया गया है, जो भारत की वर्तमान शिक्षा व्यवस्था को देखते हुए एक स्वागत योग्य कदम हैवास्तव में ., स्वतंत्रता प्राप्ति के लगभग 70 वर्षों के बाद तक हम भारत की शिक्षा नीति को भारत की प्रकृति, संस्कृति एवं प्रगति के अनुरूप बनाने में विफल रहे हैंऐसे में , स्वतंत्रता के बाद पहली बार कोई शिक्षा नीति बनी है, जिसमें समग्रता में भारतीयता का समावेशन देखा जा सकता हदृष्टि इस . से'नई शिक्षा नति-2020' स्वयं में अद्वितीय है, 'नई शिक्षा नीति-2020' में कई ऐसी महत्वपूर्ण बातें हैं, जिनके व्यावहारिक अनुप्रयोग से भारत की शिक्षा को एक नया स्पर्श मिलेगा, जिसके बल पर हम भारतवर्ष को पुनः विश्वगुरु के पद पर आसीन करने की दिशा में अग्रसर होंगे।

यह हमारी आने वाली पीढ़ी को हमारे नैतिक मूल्यों, प्राचीन भारतीय विद्याओं, हमारी मातृभाषा के साथ तो जोड़ेगी ही, साथ में आत्मनिर्भर और समृद्ध भारत का हमारा सपना भी साकार करेगी। हमारे गौरवशाली इतिहास को पुनर्जीवित करेगी। क्योंकि नई शिक्षा नीति की मुख्य विशेषता सबको सस्ती व अच्छी शिक्षा, व्यवसायिक शिक्षा, कौशल विकास पर आधारित शिक्षा, रोजगार मुहैया कराने वाली शिक्षा हैं। समानता के साथ सबको गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिले हैं, यही इस शिक्षा नीति का मुख्य उद्देश्य हैं।

शिक्षक शिक्षा सम्बन्धी सुधारात्मक प्रावधान -

राष्ट्रीय शिक्षा नीति प्रारूप के खंड संख्या 15 में शिक्षक शिक्षा से सम्बंधित प्रावधानों का उल्लेख किया किया गया है जो निश्चित ही शिक्षक शिक्षा की दशा व दिशा बदलने में महत्वपूर्ण साबित होंगे । राष्ट्रीय शिक्षा नीति शिक्षकों और शिक्षकों को सीखने की प्रक्रिया के केंद्र के रूप में पहचानती है। जैसा कि माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी ने कल्पना की थी, नीति भारत के शिक्षकों को सशक्त बनाएगी और उनकी भर्ती, निरंतर व्यावसायिक विकास, सेवा शर्तों आदि के लिए विभिन्न सुधारों को सूचीबद्ध करेगी।

- एनईपी 2020 मानता है कि शिक्षकों को उच्च गुणवत्ता वाली सामग्री के साथ-साथ अध्यापन में प्रशिक्षण की आवश्यकता होगी। 2030 तक, शिक्षक शिक्षा को धीरे-धीरे बहु-विषयक कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में स्थानांतरित करने का प्रावधान है ।
- हमारे शिक्षकों के लिए न्यूनतम डिग्री योग्यता 4 वर्षीय एकीकृत बी.एड. होगी जो ज्ञान सामग्री और शिक्षाशास्त्र की एक श्रृंखला सिखाती है। इस डिग्री में स्थानीय स्कूलों में छात्र-शिक्षण के रूप में मजबूत व्यावहारिक प्रशिक्षण भी शामिल किया गया है ।
- 2 वर्षीय बी. एड. 4-वर्षीय एकीकृत बी.एड की पेशकश करने वाले समान बहु-विषयक संस्थानों द्वारा कार्यक्रम भी पेश किए जाएंगे। यह केवल उन शिक्षकों के लिए अभिप्रेत होगा जिन्होंने पहले ही अन्य विशिष्ट विषयों में स्नातक की डिग्री प्राप्त कर ली है।
- ये बी.एड. कार्यक्रमों को उपयुक्त रूप से 1-वर्षीय बी.एड के रूप में भी अनुकूलित किया जा सकता है। कार्यक्रम। उन्हें केवल उन लोगों के लिए पेश किया जाएगा जिन्होंने 4-वर्षीय बहु-विषयक स्नातक की डिग्री के समकक्ष पूरा किया है या जिन्होंने एक विशेष स्ट्रीम में मास्टर डिग्री प्राप्त की है।
- इसके अलावा, विशेष लघु स्थानीय शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम BITEs, DIETs और स्कूल परिसरों में भी उपलब्ध होंगे। ये पाठ्यक्रम स्थानीय कला, संगीत, कृषि, व्यवसाय, खेल, बढ़ईगीरी और अन्य व्यावसायिक शिल्प जैसे स्थानीय व्यवसायों, ज्ञान और कौशल को बढ़ावा देंगे। यह समग्र शिक्षा प्रदान करने की नीति के दृष्टिकोण के साथ भी संरेखित होता है।
- शिक्षक शिक्षा के लिए एक नया और व्यापक राष्ट्रीय पाठ्यचर्या ढांचा, एनसीएफटीई 2021 तैयार किया जाएगा। राज्य सरकारों, केंद्र सरकार के संबंधित मंत्रालयों / विभागों और विभिन्न विशेषज्ञ निकायों सहित सभी हितधारकों के साथ चर्चा के बाद रूपरेखा विकसित की जाएगी और सभी क्षेत्रीय भाषाओं में उपलब्ध कराई जाएगी। NCFTE 2021 व्यावसायिक शिक्षा के लिए शिक्षक शिक्षा पाठ्यक्रम की आवश्यकताओं का भी कारक होगा।
- शिक्षकों को शिक्षाशास्त्र के पहलुओं को चुनने में अधिक स्वायत्तता दी जाएगी, ताकि वे अपनी कक्षाओं में छात्रों के लिए सबसे प्रभावी तरीके से पढ़ा सकें। शिक्षक सामाजिक-भावनात्मक

सीखने पर भी ध्यान केंद्रित करेंगे - किसी भी छात्र के समग्र विकास का एक महत्वपूर्ण पहलू।

- शिक्षकों को उनकी कक्षाओं में सीखने के परिणामों में सुधार करने वाले शिक्षण के लिए नए दृष्टिकोण के लिए पहचाना जाएगा।
- शिक्षकों को आत्म-सुधार और अपने व्यवसायों में नवीनतम नवाचारों और प्रगति को सीखने के लिए निरंतर अवसर दिए जाएंगे। इन्हें स्थानीय, क्षेत्रीय, राज्य, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय कार्यशालाओं के साथ-साथ ऑनलाइन शिक्षक विकास मॉड्यूल सहित कई तरीकों से पेश किया जाएगा।
- प्रत्येक शिक्षक से अपने स्वयं के व्यावसायिक विकास के लिए प्रत्येक वर्ष कम से कम 50 घंटे के सीपीडी अवसरों में भाग लेने की अपेक्षा की जाएगी, जो उनके स्वयं के हितों से प्रेरित है। सीपीडी के अवसर, विशेष रूप से, मूलभूत साक्षरता और संख्यात्मकता, सीखने के परिणामों के रचनात्मक और अनुकूली मूल्यांकन आदि के बारे में नवीनतम शिक्षाशास्त्र को व्यवस्थित रूप से कवर करेंगे।
- प्रत्येक शिक्षक चरण के भीतर कई स्तरों के साथ कार्यकाल, पदोन्नति और वेतन संरचना की एक मजबूत योग्यता-आधारित संरचना विकसित की जाएगी, जो उत्कृष्ट शिक्षकों को प्रोत्साहित करती है और पहचानती है। जैसा कि माननीय प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने कहा है, "हम दिमाग को आकार देने और हमारे राष्ट्र के निर्माण में उनके योगदान के लिए मेहनती शिक्षकों के आभारी हैं।" NEP 2020 भारत को विश्वगुरु बनाने में सभी शिक्षकों के प्रयासों का सम्मान और सम्मान करेगा।
- शिक्षकों की नियुक्ति में प्रभावी और पारदर्शी प्रक्रिया का पालन तथा समय-समय पर लिये गए कार्य-प्रदर्शन आकलन के आधार पर पदोन्नति।
- राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद वर्ष 2022 तक 'शिक्षकों के लिये राष्ट्रीय व्यावसायिक मानक' (National Professional Standards for Teachers- NPST) का विकास किया जाएगा।
- राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद द्वारा NCERT के परामर्श के आधार पर '**अध्यापक शिक्षा हेतु राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा' [National Curriculum Framework for Teacher Education- NCFTE)** का विकास किया जाएगा।
- शिक्षा नीति में वर्ष 2022 तक 'नेशनल काउंसिल फॉर टेक्निकल एजुकेशन' (NCTE) को टीचर्स के लिए एक समान मानक तैयार करने को कहा गया है। ये पैरामीटर 'नेशनल प्रोफेशनल स्टैंडर्ड फॉर टीचर्स' कहलाएंगे। यह कार्य जनरल एजुकेशन काउंसिल के निर्देशन में पूरा करेगी।
- शिक्षा शास्त्र की सभी विधियों को शामिल करते हुए नए बीएड. कोर्स का सिलेबस तैयार

किया जायेगा। इसमें साक्षरता, संख्यात्मक ज्ञान, बहुस्तरीय अध्यापन और मूल्यांकन को विशेष रूप से सिखाया जाएगा। इसके अलावा 'टीचिंग मेथड' में टेक्नोलॉजी को खास तौर पर जोड़ा जाएगा। अयोग्य शिक्षक हटाए जाएंगे, स्तरहीन स्कूल बंद किए जाएंगे। पूरे भारत में एक जैसे शिक्षक और एक जैसी शिक्षा को आधार बनाकर इस समिति की सिफारिशों को लागू किया गया है।

नई शिक्षा नीति एवं चुनौतियां :

हालांकि नई शिक्षा नीति में बहुत सारी बातें ऐसी हैं जो आज और आने वाले समय में विद्यार्थियों की जरूरतों को ध्यान में रखकर बनाई गई है। जिसकी हर तरफ सराहना की जा रही है लेकिन इस शिक्षा नीति को ढंग से लागू करना भी सरकार के लिए एक बड़ी चुनौती होगी।34 साल से चली आ रही एक ऐसी व्यवस्था को अचानक से बदल देना और लोगों द्वारा उसे स्वीकार कर ईमानदारी से उस पर अमन करना, यह सरकार और लोगों, दोनों के लिए काफी चुनौती भरा होगा।

- **राज्यों का सहयोगः** शिक्षा एक समवर्ती विषय होने के कारण अधिकांश राज्यों के अपने स्कूल बोर्ड हैं इसलिये इस फैसले के वास्तविक कार्यान्वयन हेतु राज्य सरकारों को सामने आना होगा। साथ ही शीर्ष नियंत्रण संगठन के तौर पर एक राष्ट्रीय उच्चतर शिक्षा नियामक परिषद को लाने संबंधी विचार का राज्यों द्वारा विरोध हो सकता है।
- **प्रवेश नीति एवं पाठ्यक्रम -** देश के विभिन्न राज्यों में शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों में प्रवेश की प्रक्रिया तथा पाठ्यक्रम में अत्यधिक विविधता विद्यमान है, इसे परिवर्तित कर समान पाठ्यक्रम एवं समान प्रवेश नीति बनाना और उसे लागू करना अत्यंत चुनोतिपूर्ण होगा।
- **शिक्षा का संस्कृतिकरणः** दक्षिण भारतीय राज्यों का यह आरोप है कि 'त्रि-भाषा' सूत्र से सरकार शिक्षा का संस्कृतिकरण करने का प्रयास कर रही है।
- **वित्तपोषणः** नई शिक्षा नीति के मुताबिक सरकार जीडीपी का 6% खर्च करने की बात कह रही है ।हालांकि 1986 के नई शिक्षा नीति में भी यही बात कही गई थी ।लेकिन वास्तविकता अलग है।2017-18 में भारत सरकार ने जीडीपी का केवल 2.7% ही शिक्षा पर खर्च किया । 2017-18 में शोध कार्य पर जीडीपी का 0.7% खर्च किया गया। तो खर्च के मामले में सरकार इतनी बड़ी छलांग कैसे लगा पाएगी। इस पर स्थिति साफ नहीं है।
- **मानव संसाधन का अभावः** वर्तमान में प्रारंभिक शिक्षा के क्षेत्र में कुशल शिक्षकों का अभाव है, ऐसे में राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के तहत प्रारंभिक शिक्षा हेतु की गई व्यवस्था के क्रियान्वयन में व्यावहारिक समस्याएँ हैं।
- **शिक्षकों की मानसिकता में परिवर्तन करना कठिन चुनौती होगी -** 34 साल पुरानी शिक्षा पद्धति के कारण एक ही ढर्रे में ढल चुके शिक्षकों की मानसिकता में परिवर्तन लाना बहुत कठिन चुनौती होगी। इसके लिए शिक्षकों की ट्रेनिंग का पूरा फ्रेमवर्क तैयार कर उन्हें जल्दी

से जल्दी ट्रेनिंग भी देनी पड़ेगी।क्योंकि शिक्षकों को इस नीति को समझने और फिर उसे अमल में लाने के लिए पहले उन्हें खुद आवश्यक ट्रेनिंग लेने की जरूरत पड़ेगी।

- **भारतीय उच्च शिक्षा व शिक्षण संस्थानों की गुणवत्ता बढ़ाना भी चुनौतीपूर्ण -** उच्च शिक्षा में शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारना भी चुनौतीपूर्ण हैं। इसके लिए विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में प्रोफेसरों की जवाबदेही तय करनी होगी और उनके अच्छे प्रदर्शन को सुनिश्चित करने के लिए कोई निश्चित व्यवस्था बनानी होगी। उच्च शिक्षण संस्थानों की गुणवत्ता को बढ़ाना भी चुनौतीपूर्ण है। क्योंकि बहुत कम भारतीय शिक्षण संस्थानों को शीर्ष विश्व रैंकिंग में जगह मिलती है।
- **अकादमिक क्रेडिट बैंक स्थापित करना होगा -** विश्वविद्यालयों में अकादमिक क्रेडिट बैंक स्थापित करना आवश्यक होगा जिससे अगर कोई विद्यार्थी एक संस्थान से दूसरी संस्थान में स्थानांतरित होगा, तो उसके पूर्व के अर्जित क्रेडिट अंक आगे जोड़े जा सकें।
- **मल्टीपल एंट्री एग्जिट सिस्टम -** उच्च शिक्षा में "मल्टीपल एंट्री एग्जिट सिस्टम" किया गया है। और छात्रों को एक वर्ष में सर्टिफिकेट और दो वर्ष में डिप्लोमा दिया जायेगा। नौकरी या अन्य जगहों पर इनकी उपयोगिता भी निश्चित करनी होगी। शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों में इसे लागू करना अपने आप में चुनोतिपूर्ण होगा।
- **मल्टीपल एंट्री एग्जिट सिस्टम** - उच्च शिक्षा में "मल्टीपल एंट्री एग्जिट सिस्टम" किया गया है। और छात्रों को एक वर्ष में सर्टिफिकेट और दो वर्ष में डिप्लोमा दिया जायेगा। नौकरी या अन्य जगहों पर इनकी उपयोगिता भी निश्चित करनी होगी। शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों द्वारा इसका विरोध होना भी निश्चित है ।

निष्कर्ष -

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में अनेक ऐसे सकारात्मक सुझाव हैं जो भारत को शिक्षा के क्षेत्र में नए मानक स्थापित करने में मदद करेंगे। शक्षक शिक्षा की दशा व दिशा को परिवर्तित कर यह नीति गुणवत्तापूर्ण शिक्षक तैयार करने में सफल होगी। लेकिन इसकी सफलता के लिए आवश्कता है समग्र प्रयास की । इस नीति को आवश्कता है सम्पूर्ण जन समर्थन की , जिसमे भाषा, प्रान्त या मजहब की कोई दीवार ना हो । समग्रता में कहा जाए तो नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति के माध्यम से भारत की शिक्षा में भारतीयता का सही अर्थों में प्रादुर्भाव हुआ है सैद्धांतिक और व्यावहारिक शिक्षा के मध्य, भौतिकता और आध्यात्मिकता के मध्य, परंपरागत मूल्यबोध और आधुनिक तकनीक के मध्य समन्वय की एक सुंदर चेष्टा इस नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में देखी जा सकती है. आवश्यकता है, इस नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति को सम्यक तरीके से व्यावहारिक धरातल पर उतारने की।

सन्दर्भ -

1. सोडानी, कैलाश (2021). राष्ट्रीय शिक्षा निति : 2020 - क्रियान्वयन, एपेक्स पब्लिशिंग हाउस

2. National Education Policy 2020 document, Govt. Of India
3. National and international webinars and FDPs organized by different universities and colleges all over India on NEP-2020
4. https://www.education.gov.in
5. https://www.dristiias.com
6. https://www.hindiswaraj.com
7. https://www.education.gov.in
8. https://www.hindi.rajras.in
9. https://www.prindia.org
10. https://www.pmmodiyojana.in

Received: Jun '23
Revised:
Accepted: Aug '23

© 2023 by the authors. This article is an open access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY) license (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/).

CYBERSECURITY IN EDUCATIONAL INSTITUTIONS: NEED AND EFFORTS
शिक्षण संस्थानों में साईबर सुरक्षा – आवश्यकता एवं प्रयास

Dr. Girdhari Lal Sharma[1] and Dr. Vishnu Kumar[2]
[1,2]Assistant Professor, Dept of Education, Jain Vishva Bharati Institute, Deemed University, Ladnun, Rajasthan, India- 341306
E-mail: [1]girdhari1976@gmail.com

ABSTRACT

The Internet has made information widely available to the public at all times, which is both a blessing and a curse. This is important for any type of business, including educational institutions. Cybersecurity awareness is paramount, as it can help us identify potential threats before they happen. It also provides us with the necessary knowledge to protect ourselves from malicious sites or attacks. Cybersecurity awareness training is important because it teaches students how to protect themselves from phishing scams, malware, ransomware, and cyberattacks on computers. In view of increasing cybercrime, the University Grants Commission (UGC) has asked all universities and higher educational institutions to make the necessary preparations and create an environment to deal with cyber security in their institutions.

इंटरनेट ने हर समय व्यापक रूप से जनता के लिए जानकारी उपलब्ध कराई है, जो एक आशीर्वाद और अभिशाप दोनों है। शिक्षण संस्थानों सहित किसी भी प्रकार के व्यवसाय के लिए यह महत्वपूर्ण है। साइबर सुरक्षा जागरूकता सर्वोपरि है क्योंकि यह संभावित खतरों को होने से पहले पहचानने में हमारी मदद कर सकती है। यह हमें खुद को दुर्भावनापूर्ण साइटों या हमलों से बचाने के लिए आवश्यक ज्ञान भी प्रदान करता है। साइबर सुरक्षा जागरूकता प्रशिक्षण महत्वपूर्ण है क्योंकि यह छात्रों को सिखाता है कि वे फ़िशिंग घोटालों, मैलवेयर, रैंसमवेयर और कंप्यूटर पर होने वाले साइबर हमलों से खुद को कैसे बचा सकते हैं। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) द्वारा बढ़ते साइबर अपराध को देखते हुए सभी विश्वविद्यालय और उच्च शिक्षण संस्थानों को जरूरी तैयारी करने तथा संस्थानों में साइबर सुरक्षा से निपटने के लिए एक वातावरण तैयार करने को कहा गया है।

Keywords: -Cyber Security, Cyber Security in Educational Institutions, Need for Cyber Security.
मुख्य शब्दावली - साईबर सुरक्षा, शिक्षण संस्थानों में साईबर सुरक्षा, साईबर सुरक्षा की आवश्यकता

मुख्य विषय वस्तु

दुनियां ने जिस गति से तकनीकी क्षेत्र में उन्नति की है, उसी गति से मनुष्य की इंटरनेट पर निर्भरता भी बढ़ी है। आज घर बैठे हमारी पहुच, इंटरनेट के जरिये विश्व के हर कोने तक आसान हो गई है। आज हर वो चीज़ जिसके विषय में इंसान सोच सकता है, उस तक उसकी पहुँच इंटरनेट के माध्यम से हो सकती है, जैसे कि सोशल नेटवर्किंग, ऑनलाइन शॉपिंग, डेटा स्टोर करना, गेमिंग, ऑनलाइन स्टडी, ऑनलाइन जॉब इत्यादि। वर्तमान में इंटरनेट का उपयोग लगभग हर क्षेत्र में किया जाता है। इंटरनेट के विकास और इसके संबंधित लाभों के साथ साइबर अपराधों की अवधारणा भी विकसित हुई है।

साइबर अपराध

साइबर अपराध एक आपराधिक गतिविधि है, जिसे कंप्यूटर और इंटरनेट के उपयोग द्वारा अंजाम दिया जाता है। साइबर अपराध, जिसे 'इलेक्ट्रॉनिक अपराध' के रूप में भी जाना जाता है, एक ऐसा अपराध है जिसमें किसी भी अपराध को करने के लिए, कंप्यूटर, नेटवर्क डिवाइस या नेटवर्क का उपयोग, एक वस्तु या उपकरण के रूप में किया जाता है। जहाँ इनके (कंप्यूटर, नेटवर्क डिवाइस या नेटवर्क) जरिये ऐसे अपराधों को अंजाम दिया जाता है वहीँ इन्हें लक्ष्य बनाते हुए इनके विरुद्ध अपराध भी किया जाता है। ऐसे अपराध में साइबर जबरन वसूली, पहचान की चोरी, क्रेडिट कार्ड धोखाधड़ी, कंप्यूटर से व्यक्तिगत डेटा हैक करना, फ़िशिंग, अवैध डाउनलोडिंग, साइबर स्टॉकिंग, वायरस प्रसार, सहित कई प्रकार की गतिविधियाँ शामिल हैं। गौरतलब है कि सॉफ्टवेयर चोरी भी साइबर अपराध का ही एक रूप है, जिसमें यह जरूरी नहीं है कि साइबर अपराधी, ऑनलाइन पोर्टल के माध्यम से ही अपराध करे।

साइबर अपराधों को दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है। 1. वे अपराध जिनमें कंप्यूटर पर हमला किया जाता है। इस तरह के अपराधों के उदाहरण हैकिंग, वायरस हमले, डॉस हमले आदि हैं। 2. वे अपराध जिनमे कंप्यूटर को एक हथियार/उपकरण/ के रूप में उपयोग किया जाता है। इस प्रकार के अपराधों में साइबर आतंकवाद, आईपीआर उल्लंघन, क्रेडिट कार्ड धोखाधड़ी, ईएफटी धोखाधड़ी, पोर्नोग्राफी आदि शामिल हैं।

सीईआरटी-इन (इंडियन कम्प्यूटर इमरजेंसी रिस्पांस टीम) के आंकड़ों के अनुसार 2022 में भारत में सबसे अधिक साइबर क्राइम

के मामले दर्ज किए गए हैं। सीईआरटी साइबर सुरक्षा हमलों से निपटने के लिए केन्द्र सरकार की एक नोडल एजेंसी है, जो सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय के तहत काम करती है। 2022 के पहले दो महीनों में 2,12,285 मामले दर्ज किए गए हैं, जबकि इसकी तुलना में साल 2018 में 2,8,456 साल 2019 में 3,94,499 घटनाएं 2020 में 11,58,208 और 2021 में 14,2,809 घटनाएं दर्ज की गयी हैं। ये आंकड़े बताते हैं इन तीन बर्षो में साइबर क्राइम के मामले लगभग 7 गुना और कोविड के दौरान अधिक तेजी से बड़े हैं।

ऑनलाइन धोखाधड़ी सबसे ज्यादा भारत में

सीईआरटी से अलग एनसीआरबी के आंकड़े अलग ही कहानी बयां करते हैं। साल 2019 में अपराध दर 3.3 से बढ़कर 2020 में 3.7 हो गयी। रिपोर्ट के मुताबिक साल 2020 में अधिकतर केस धोखाधड़ी के मकसद से दर्ज किए गए 2020 में 60.2 प्रतिशत मामले तकरीबन (50,035 मामलों में से 30,142) दर्ज किए गए। जबकि 6.6 प्रतिशत (3,293) मामले यौन शोषण के पाए गए। इसके अलावा 4.9 प्रतिशत (2,440) केस जबरन वसूली के जारी किए गए थे। आंकड़ों के मुताबिक साल 2020 में ऑनलाइन बैंकिंग धोखाधड़ी के 4047 मामले, ओटीपी जालसाजी के 1093 केस, डेबिट क्रेडिट कार्ड से ठगी की 1194 घटनाऐं, और एटीएम से सम्बन्धित 2160 मामले दर्ज किए गए। रिपोर्ट में बताया गया कि सोशल मीड़िया पर फर्जी सूचना के 578 केस, ऑनलाइन परेशान करने या महिलाओं और बच्चों को साइबर धमकी से जुड़े 972 मामले, जबकि फर्जी प्रोफाइल के 149 और आंकड़ों की चोरी के 98 मामले जारी किए गए हैं।भारत 560 मिलियन से अधिक इंटरनेट यूजर्स के साथ दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा ऑनलाइल मार्केट है, इस मामले में भारत केवल चीन से पीछे है। ऐसा अनुमान है 2023 तक देश में 650 मिलियन से ज्यादा इंटरनेट उपयोगकर्ता होंगे। इतना विशाल मार्केट होने के कारण यहां साइबर अपराधों में दिन दिन तेजी बढ़ती ही जा रही है। (पत्रिका , 6 December, 2022)

शिक्षण संस्थानों में साईबर सुरक्षा की आवश्यकता

सिंगापुर स्थित एआई-संचालित डिजिटल रिस्क मैनेजमेंट एंटरप्राइज क्लाउडसेक (CloudSEK) के थ्रेट रिसर्च एंड इंफोर्मेशन एनालिटिक्स डिवीजन द्वारा "साइबर थ्रेट टार्गेटिंग द ग्लोबल एजुकेशन सेक्टर" शीर्षक से जारी एक रिपोर्ट में दावा किया गया है कि भारतीय शिक्षा क्षेत्र साइबर हमलों के लिए सबसे बड़ा टारगेट बना हुआ है। भारत के बाद संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, इंडोनेशिया और ब्राजील का स्थान है। रिपोर्ट में यह भी दावा किया गया है कि 2022 के पहले तीन महीनों में 2021 की इसी अवधि की तुलना में डाटा वैश्विक शिक्षा क्षेत्र के लिए साइबर खतरों में 20 प्रतिशत की वृद्धि दर्शाता है।

रिपोर्ट के अनुसार, भारत शैक्षणिक संस्थानों और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म के लिए साइबर खतरों का सबसे बड़ा लक्ष्य है। क्योंकि कोविड- 19 वैश्विक महामारी के दौरान दूरस्थ शिक्षा को अपनाना, शिक्षा का डिजिटलाइजेशन और ऑनलाइन लर्निंग प्लेटफार्मों का प्रचलन प्रमुख तौर बढ़ा है, जिससे साइबर हमले की घटनाएं भी बढ़ी हैं। प्लेटफॉर्म के द्वारा पिछले साल एशिया-प्रशांत क्षेत्र में देखे गए साइबर खतरों में से 58 फीसदी भारतीय या भारत आधारित शैक्षणिक संस्थानों और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म को टारगेट कर रहे थे। इसके बाद 10 फीसदी साइबर खतरों के टारगेट के साथ इंडोनेशिया दूसरे स्थान पर था। इसमें ऑनलाइन कोचिंग प्लेटफॉर्म बायजू, आईआईएम कोझीकोड और तमिलनाडु के तकनीकी शिक्षा निदेशालय आदि पर हुए साइबर हमले शामिल थे। वहीं, संयुक्त राज्य अमेरिका दुनिया भर में दूसरा सबसे अधिक प्रभावित देश था, जिसमें कुल 19 दर्ज घटनाएं थीं, जो उत्तरी अमेरिका में 86 प्रतिशत खतरों के लिए जिम्मेदार थीं। इनमें हॉवर्ड विश्वविद्यालय और कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय जैसे प्रतिष्ठित संस्थानों पर रैंसमवेयर हमले शामिल हैं (अमर उजाला Sun, 01 May 2022)। अतः आज शिक्षण संस्थानों में साइबर अपराधों के प्रति जागरूकता की सर्वाधिक आवश्यकता है जिसे निम्न बिन्दुओं में स्पष्ट किया जा सकता है।

विभिन्न एप्स के प्रति जागरूकता हेतु – आज प्ले स्टोर पर अनेक एप उपलब्ध हैं। इनमें अनेक अनधिकृत होते हैं, जो एक बार फोन में इनस्टॉल होने पर अनेक प्रकार के डाटा चुराते हैं। स्कूल विद्यार्थी, यहाँ तक की कॉलेज विद्यार्थी भी जानकारी के आभाव में बिना सोचे एप डाऊनलोड कर लेते हैं तथा सभी प्रकार की परमीसन देते जाते हैं, जिससे उनकी निजी जानकारी, फोटो, फाइल्स आदि चोरी हो रहे हैं। इनसे बचने हेतु विद्यार्थियों में साइबर जागरूकता आवश्यक है।

गेमिंग एप के प्रति सावधानी हेतु – बच्चों में मोबाइल गेमिंग की आदत निरंतर बढ़ रही है। अनेक ऐसे गेम हैं जिनकी लत बच्चों को लग जाती है, उनके द्वारा बच्चों से निजी जानकारियां तथा पैसों की मांग की जाती है , जिसे वे घरवालों से छुपकर पूरा करते रहते हैं और अनेक बार तो आत्म हत्या तक कर लेते हैं। ये एक गंभीर समस्या बनती जा रही है , जिसे साइबर जागरूकता के माध्यम से ही हल किया जा सकता है।

साइबर बुल्लिंग से बचाव हेतु – साइबर बुल्लिंग का अर्थ है लोगों को सोशल मिडिया या अन्य इंटरनेट प्लेटफार्म से परेसान करना। अपराधियों द्वारा ऐसा अनेक तरीके से किया जाता है, जैसे - सोशल मिडिया के माध्यम से दोस्ती कर व्यक्तियों से नजदीकी बढ़ाना तथा बाद में उनकी निजी जानकारियों को लेकर परेशान करना, साथ ही ऑनलाइन ब्लेकमेल करना। किशोर विद्यार्थियों के साथ ऐसा अक्सर हो रहा है जिससे वे शारीरिक एवं मानसिक

प्रताड़ना झेलते हैं। इनसे बचने हेतु विद्यार्थियों में साइबर जागरूकता आवश्यक है।

सेक्सटोर्सन से बचाव हेतु - सेक्सटोर्सन एक ऐसा साइबर अपराध है जिसका शिकार अनेक बच्चे तथा किशोर विद्यार्थी हो रहे हैं तथा आत्म हत्या तक कर रहे हैं। सोशिअल मीडिया पर दोस्ती तथा विडियो कालिंग का बढ़ता चलन आज आम बात है। शातिर साइबर ठग ईसी का लाभ उठाते हैं और उनके अश्लील विडियो या फोटो बनाकर फिर ब्लेकमेल करते हैं। बदनामी के डर से ये युवक – युवतियां उनके हाथ की कठपुतली बनकर अपराधियों के इशारों पर नाचते हैं तथा अनेक प्रकार का उत्पीडन सहते हैं। इनसे बचने हेतु विद्यार्थियों में साइबर जागरूकता आवश्यक है।

बैंकिंग फ्रॉड से बचाव हेतु – डिजिटलीकरण के इस दौर में मोबाइल बैंकिंग लेन-देन का सर्वाधिक प्रयुक्त होने वाला साधन है। निश्चित ही इससे लेन-देन, खरीददारी आदि बहुत सुलभ हो गया है हमें बैंकों में घंटों लाइन में लगने से मुक्ति मिल गयी है लेकिन थोड़ी सी लापरवाही या असावधानी से नुकसान भी बड़ा हो जाता है। रोजाना हैकर्स अनेक लोगों के अकाउंट से कितना ही पैसा चुरा रहे हैं। के.वाई.सी अपडेट के नाम पर या लौटरी का पैसा देने के नाम पर या अन्य कोई लालच देकर ओ टी पी पूछ लेते हैं और पूरा पैसा चुरा लेते हैं। अनेक विद्यार्थी भी इसका शिकार हो रहे हैं। इस प्रकार के फ्रौड्स से बचने हेतु भी विद्यार्थियों में साइबर जागरूकता आवश्यक है।

सोशिअल मीडिया फ्रौड्स से बचाव हेतु - सोशिअल मीडिया आज बच्चे , युवा तथा बुजुर्ग सभी को पूर्णतः अपनी गिरफ्त में ले चुका है। प्रत्येक मोबाइल में फेसबुक, इन्स्टाग्राम, ट्विटर, व्हाट्सएप आदि का पाया जाना सामान्य बात है। ज्यादातर समय लोग इन एप्स पर बिताते हैं। जानकारी के अभाव में अनेक बच्चे तथा युवा विद्यार्थी अपने निजी फोटोग्राफ, विडियो तथा अन्य निजी जानकारियां इन एप्स पर अपलोड कर रहे हैं तथा अनजान लोगों से मित्रता कर रहे हैं। साइबर अपराधी इन निजी जानकारियों का गलत तरीके से उपयोग कर लड़के – लड़कियों को ब्लेकमेल करते हैं तथा उनका शारीरिक , मानसिक एवं आर्थिक शोषण करते हैं। लड़कियां इस प्रकार के अपराधों का अधिक शिकार हो रही हैं। अतः सोशिअल मीडिया के सुरक्षित उपयोग हेतु भी साइबर जागरूकता आवश्यक है।

साइबर स्टोकिंग से बचाव हेतु – ऑनलाइन माध्यम से की गई छेड़खानी को साइबर स्टोकिंग कहा जाता है। इसमें अपराधी ईमेल या मेसेज भेजकर किसी को भी परेशान करते हैं। इस समस्या से पीड़ितों में महिलाओं एवं बच्चों का प्रतिशत तीन चौथाई है। भारत में साइबर स्टोकिंग का पहला मामला 2001 में दर्ज किया गया था स्कूल या कॉलेज जाने वाली लड़कियों को अनेक अपराधी तत्व अश्लील मेसेज , फोटो या ईमेल भेजकर मानसिक रूप से प्रताड़ित करते हैं तथा अपनी मांगें मनवाने के लिए बाध्य करते हैं। इससे बचाव हेतु भी साइबर सुरक्षा जागरूकता आवश्यक है।

साइबर ठगी होने पर क्या करें ? की जानकारी हेतु – साइबर अपराध का शिकार होने पर ज्यादातर लोग, मुख्यतः बच्चे व महिलाएं शारीरिक, मानशिक व् आर्थिक रूप से प्रताड़ित होते रहते हैं तथा किसी को न तो बताते हैं और न ही कहीं शिकायत करते हैं। साइबर अपराध बढ़ने का यह सबसे बड़ा कारण है। अतः आज आवश्यकता है साइबर अपराध के प्रति जागरूकता की। विद्यार्थियों को शिक्षण संस्थानों में यह बताना जरुरी है की किसी भी साइबर अपराध का शिकार होने पर डरने , घबराने या छुपाने की जरुरत नहीं है बल्कि इसकी शिकायत तुरंत की साइबर क्राइम पोर्टल cybercrime.gov.in या 1930 नम्बर पर फोन करके तुरंत ही करनी चाहिए। इस हेतु भी शिक्षण संस्थानों में साइबर जागरूकता कार्यक्रमों का आयोजन आवश्यक है।

शिक्षा क्षेत्र में साइबर जागरूकता हेतु किये जा रहे प्रयास

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) ने बढ़ते साइबर अपराध को देखते हुए सभी विश्वविद्यालय और उच्च शिक्षण संस्थानों को जरूरी तैयारी करने तथा संस्थानों में साइबर सुरक्षा से निपटने के लिए एक वातावरण तैयार करने को कहा है। इसके लिए इस क्षेत्र से जुड़े विशेषज्ञों की मदद लेने को भी कहा गया है। आयोग का मानना है कि आने वाले दिनों में इंटरनेट और डिजिटल कामकाज को और बढावा मिलेगा। ऐसे में साइबर सुरक्षा को लेकर जागरूकता जरूरी है।

यूजीसी सचिव रजनीश जैन ने उपकुलपतियों को लिखे पत्र में कहा है, ''सरकार राष्ट्रीय साइबर सुरक्षा रणनीति दस्तावेज तैयार करने की प्रक्रिया में है और इस बीच यह निर्णय किया गया है कि स्कूल स्तर पर साइबर सुरक्षा जागरूकता शुरू हो जानी चाहिए जहां पाठ्यक्रम साइबर सुरक्षा कदमों के साथ शुरू हो सकता है और इसमें आईआईटी तथा उच्च शिक्षा स्तर पर उत्तरोत्तर आक्रामक तथा रक्षात्मक पहलू शामिल हों।''(NBT, Dec.02,2020)

इसके साथ ही आयोग ने गृह मंत्रालय की ओर से साइबर अपराधों से बचाव को लेकर जारी किए गए दिशा-निर्देशों की भी सभी को जानकारी देने को कहा है। यूजीसी का यह कदम इसलिए भी अहम है, क्योंकि देश में मौजूदा समय में प्रतिदिन औसतन तीन हजार से ज्यादा साइबर अपराध की घटनाएं हो रही हैं। आने वाले दिनों में इनकी संख्या और बढ़ने की आशंका है। यही वजह है कि सरकार ने अपने स्तर पर इससे बचाव की मुहिम को तेज किया है।

1. साइबर सुरक्षा पर पाठ्यक्रम - विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) ने सभी विश्वविद्यालयों और उच्च शिक्षा संस्थानों को निर्देशित किया है कि वह साइबर सुरक्षा पर कार्य करें और इस विषय को पाठ्यक्रम में शामिल करें. साथ ही सभी संस्थानों से एकेडमिक फ्रैटर्निटी को सुविधाजनक बनाने के लिए प्रोत्साहित करें।

2. शिक्षण संस्थानों 'साईबर सिक्योरिटी अवेयरनैस' अभियान - सभी महाविद्यालयों व विश्वविद्यालयों में 'साईबर सिक्योरिटी अवेयरनैस' अभियान चलाने का निर्णय लिया है ताकि विद्यार्थियों, कर्मचारियों व समाज के अन्य लोगों को 'साईबर फ्रॉड' होने से बचाया जा सके। इसके तहत संस्थानों को नियमित रूप से इसे लेकर सेमिनार, क्विज़,पोस्टर पेंटिंग, हैकथान और प्रतियोगिताओं आदि के माध्यम से साइबर अपराधों के प्रति जागरूकता उत्पन्न करना है।

3. साइबर सुरक्षा जागरुकता हेतु कार्यशालाओं का आयोजन - शिक्षण संस्थानों में साइबर क्राइम के बढ़ते खतरों से आगाह करने के साथ सुरक्षा नियमों के बारे में बताया जाएगा। साइबर विशेषज्ञ की मदद से स्कूलों-कॉलेजों में नियमित तौर पर कार्यशालाएं आयोजित की जाएंगी। विद्यार्थियों को इंटरनेट पर आपराधिक गतिविधियों के बारे में जानकारी देकर बचाव के उपाय बताए जाएंगे।

4. CyberDost की शिक्षा - साइबर अपराध की रोकथाम और इसको लेकर लोगों को जागरुक करने के लिए गृह मंत्रालय ने साइबर दोस्त '@CyberDost' नाम से एक ट्विटर हैंडल लॉन्च किया है. इस हैंडल पर अभी तक वीडियो, तस्वीरों और लिखित कंटेंट के जरिए लोगों को एक हजार से ज्यादा साइबर सुरक्षा टिप्स दिए जा चुके हैं. साइबर अपराध के खिलाफ चलाए जा रहे अभियान से जुड़ने के लिए सरकार के सोशल मीडिया हैंडल से भी जुड़ा जा सकता - https://twitter.com/ Cberdost, Faebook- https://www.facebook.com/Cyberdost14c, Instagram- https://www,istagaram.com /Cyberdosti4c , Telegram - https://t.me/cyberdosti4c

5. 'साइबर जागरुकता दिवस का आयोजन - साइबर अपराध पर अंकुश लगाने के लिए शिक्षा विभाग ने हर सरकारी व निजी स्कूलों में महीने के पहले बुधवार को 'साइबर जागरूकता दिवस' मनाने का आदेश जारी किया है। इस दौरान विद्यार्थियों को साइबर अपराध से बचने के उपाय बताए जाएंगे।इसके तहत स्कूलों में लघु फिल्में दिखाई जाएंगी। साथ ही संगोष्ठी, वाद विवाद प्रतियोगिता, भाषण, प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता, नारा लेखन प्रतियोगिता, आदि का आयोजन होगा। स्किट के जरिए भी विद्यार्थियों को जागरूक किया जाएगा। इन कार्यक्रमों में छठी से 12वीं कक्षा तक के ही विद्यार्थी हिस्सा लेंगे।

6. पुस्तिका का प्रकाशन - गृह मंत्रालय ने कहा है कि साइबर अपराध से छात्रों को जागरुक करने के लिए सरकार ने उनके लिए पुस्तिका का प्रकाशन कराया है. इस पुस्तिका की सहायता से शिक्षक ऑनलाइन सुरक्षा के सत्र संचालित कर सकेंगे। इन सत्रों के जरिए विद्यार्थियों को ऑनलाइन सुरक्षा के विभिन्न पहलुओं जैसे उपकरणों की सुरक्षा, फोन व ऑनलाइन घोटालों से सावधानी, सोशल मिडिया शिष्टाचार के बारे में प्रशिक्षित किया जाएगा। जिम्मेदार नेटीजन बनाया जाएगा। इंटरनेट का उपयोग करने वाला व्यक्ति नेटीजन कहलाता है।

निष्कर्ष

आज हम सभी डिजिटल दुनियां का एक हिस्सा हैं , जहाँ हर क्षेत्र की तरह शिक्षा क्षेत्र भी निरंतर साइबर हमलों का शिकार हो रहा है। किसी संस्थान को साइबर हमलों से बचाने के सबसे महत्वपूर्ण पहलुओं में से एक जागरूकता है। अनेक विद्यार्थी फिशिंग , बुलिंग , सेक्सटोर्सन, रैंसमवेयर, स्पैम आदि साइबर हमलों के शिकार हो रहे हैं जो की चिंताजनक स्थिति है। अतः स्कूलों में साइबर सुरक्षा जागरूकता कार्यक्रम अनिवार्य होना चाहिए ताकि छात्रों और स्टाफ के सदस्यों, हर कोई ऑनलाइन सुरक्षित रहना सीख सके। छात्र सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए शिक्षण संस्थानों को सख्त नीतियां लागू करने की आवश्यकता है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) द्वारा साइबर सुरक्षा जागरूकता हेतु जारी निर्देशों को सभी शिक्षण संस्थानों को अनिवार्य रूप से पालन करना चाहिए ताकि हम अपने विद्यार्थियों तथा अन्य कर्मियों को साइबर अपराधों से सुरक्षित रख सकें।

REFERENCES

1. Amankwa, Eric (2021). "Relevance of Cybersecurity Education at Pedagogy Levels in Schools", Journal of Information Security, Vol. 12, No. 04, October 2021, (https://www.scirp.org/journal/paperinformation.aspx?paperid=111804)
2. Negi, S. and Sunita, M. (2019) Effectiveness of Cyber Bullying Sensitization Program (CBSP) to Reduce Cyber Bullying Behavior among Middle School Children. International Journal of Cyber Research and Education, 1, Article No. 5. (https://doi.org/10.4018/IJCRE.2019010105)
3. Pencheva, D., Joseph, H. and Awais, R. (2020) Bringing Cyber to School: Integrating Cybersecurity into Secondary School Education. IEEE Security & Privacy, 18, 68-74. (https://doi.org/10.1109/MSEC.2020.2969409)
4. https://www.amarujala.com/
5. https://www.aicte-india.org/cyber-securityhindi
6. https://www.egyankosh.ac.in/bitstream/123456789/76767/3/Unit-10.pdf
7. https://isea.gov.in/

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

A LITTERATURE REVIEW ON OCCUPITIONAL STRESS OF TEACHERS

Fayaz Ahmad Kumar[1] and Manish Bhatnagar[2]
[1]Research Scholar, Department of Education Jain Vishva Bharti Institute Ladnun
[2] Assistant Professor, Jain Vishva Bharti Institute Ladnun
kumarfayaz305@gmail.com

Alarming assertions regarding the increased incidence of teacher stress have been given repeatedly in the educational literature (Cox and Brocket, 1984, Holt, Fine, and Tollefson 1987, Jupp and Taylor 1994).It has also been observed that teacher stress affects the learning environment and interferes with the achievement of educational goals by causing alienation, detachment, apathy, absenteeism, and finally the decision to leave the field (Needle, Griffin, Suendsen, and Berney 1980, Harris and Associates 1985). Many studies have sought to identify the sources of stress and unhappiness that may eventually lead to burnout and the decision by school instructors to leave the industry (kyricicacons& Sutcliff 1978, Olson & Metuiskey 1982 Mazur &Lynchs 1989).Kerlinger presents two key reasons for discussing the problem's general study literature. The first is to clarify the theoretical reasoning of the problem, and the second is to inform the reader about research done on the problem.An overview of occupational stress studies Geetha and Lily (July 2009) revealed in a study titled "Home environment: Stress and Strain" that women were subjected to a greater stress as the demands of home & carrier at times caused conflicts, striving for multi role duties had resulted in conflict stress on home environment showed that they could not look after the children & family members due to their occupational stress. According to a study conducted by Rajeshwary and Anantharama (2005), I.T professionals have extended working hours with different time zones, whole team work, tasks that must be accomplished on time and with perfection as per client expectations, and this necessitates interpersonal technical skills. These traits contribute to workplace stress and exhaustion.

According to Kulkarni (2006), the rapid change of modern working life is associated with increased demands of learning new skills, the need to adapt new forms of work pressure of higher productivity and quality of work, time pressure & hectic jobs are creating stress among the work force.

The purpose of Stuart Long and Susanne Ingebory's study (Nov. 2008) was to find out if therewere a ny differences between male and female managers' experiences with work related stressors and coping mechanisms.The findings indicated that there is no statistically significa nt difference between males and females in terms of the sources of occupational stress, particularly when it comes to role strain at work, psychological strain brought on by job stress, and reuse of cohe rence.

Marimuthu and Manoharan's (2003) study on occupational stress and job satisfaction among manage rs of varying age designed to examine the impact of age on these two variables. The study's findings demonstrate a considerable drop in the average stress score, as can be observed from the impact of work stress on diagnosed depression and anxiety in young working individuals. A survey by Maria, Caspi, Barry Milne, and Danese titled "Workers stress precipitates depression & anxiety in young working women and men."Stress at work has additional costs, Stress leads to significant employment turnover, expensive office blunders, burnout, absenteeism, and family, drug, and alcohol-related issues

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

(Love and Lorthcost 1987, Dedrick and Rascehke 1990, Shea 1992, Rest 1996). Researchers also looked into how factors like age, sex, and teaching experience affected the degree of stress associated with one's job. While some authors (Kyreasou and Suteliffe 1978, Tellenback, Bernner and Lofgren 1983) contend that personality traits rather than biographical factors are the most significant predictors of individual variance in teacher stress, these investigations generally do not show much linked with these claims.

Teachers Emphasise:

School teachers' sources of stress were examined in a study published in January 2007 by Ravi Chandram and Rajindran titled "Perceived sources of stress among the teachers." 200 teachers were chosen at random to make up the sample. The outcome of a one-way Anova analysis revealed that the individual factors of sex, age, educational attainment, years of teaching experience, and kind of school have a substantial impact on how people see many factors of stress related to teaching profession. An exploratory study on occupational stress and coping strategies of special educators in south India was undertaken by Mathew in January 2005. The findings indicated that the following factors were the main sources of stress: (I) school structure and climate; (II) home work interface; (III) relationships with other people; and (IV) intrinsic job factors. Qualitative interviews revealed that low pay, job uncertainty, work overload, and a larger teacher-to-student ratio were the main causes of stress.

Pei, Wang, and Gouoli Zhang (2007) developed a questionnaire to investigate the detrimental impacts of occupational stress on 500 elementary school teachers. They discovered that teachers' work-related stress is significantly elevated and negatively impacts both their well-being and productivity. Compared to the consequences of work, occupation stress has a significantly worsening influence on teachers' health. It has been determined that teachers experience higher levels of occupational stress, which negatively impacts their productivity.

According to Gaziel (1993), teachers who are under stress frequently feel exhausted and sleep deprived, which shows itself as an increase in the number of teacher absences each year and early retirements. He looked into it further and discovered that teachers in Israel, both Arab and Jewish, experience work stress is directly related to cultural and environmental stimuli.

Teachers' workload, role conflict, and ambiguity are increased by inadequate support from parents, other educators, and administrators. As a result, many teachers feel as though they no longer have control over their abilities to be effective educators (Cockburn 1996).

A qualitative research by Blases (1960) discovered a connection between teacher-reported stress and sickness symptoms. Sen (1981) examined a number of background variables in relation to role stress including age, sex, education, income, family type, marital status, residence, distance from place of employment to place of residence, entrance, and prior work experience. Sen's findings included the following: role stress is adversely correlated with age and role stagnation decreases as people get older. Compared to men, women are more likely to feel role stress. The relationship between role stress and income is inverse, the higher the income, the lower the reported level of stress. People who are single feel more stress than those who are married. People from metropolitan backgrounds tend to be more stressed because of the fast-paced lifestyle and activities of city people.

According to Grissmer and Kriby (1987) and Gonzalez (1995), stress levels peaked in the early years of teaching, declined in the middle years of teaching, and then increased once again as teachers neared retirement.

Abel and Sewell's (1999) study on teachers found that urban teachers self-reported stress levels were significantly higher than those of rural teachers due to: (a) unfavorable working conditions, which included low pay and few opportunities for advancement; (b) a lack of recognition for excellent teaching; (c) inadequate resources and equipment for teaching among staff; and (d) a lack of support from colleagues. This study unequivocally demonstrates that teacher stress levels in urban and rural classrooms may differ.

Mental Health and Occupational Stress: - Manisha and Girish (2006) examined the psychosocial stress scale scores of fifteen middle-aged female teachers in Banaras. The results of the general health questionnaire revealed that 54% of the teachers had moderate to high levels of stress. 32% of individuals had moderate anxiety and 64% of cases had low anxiety. In 92% of cases, there was little depression. The comprehensive evaluation revealed that while most of the teachers were normal, a sizable fraction were at risk of developing. Problems brought on by psychosocial stress may have an impact on their mental health. One's general health might be impacted by stress. Numerous research on workplace stress centre on conflicts among educators, highlighting the detrimental consequences of unequal authority and control over working choices.

In January 2004, Susan Black conducted a survey on Midwestern teachers in Minnesota. The study found that almost 40% of the respondents had high levels of professional stress, which mostly affected their personal and family lives. The physical and mental well-being of the instructor was also impacted by job stress Socioeconomic status: A lower socioeconomic status is correlated with greater levels of occupational stress hormones, according to Aldridge (2006). The social sciences have consistently observed a negative correlation between socioeconomic level (SES) and stress. Stress is more common among those with lower socioeconomic status.

Three stress hormone levels were tested in 193 persons with varying income levels by Preidt (2006); higher levels of all three stress hormones were linked to a lower socioeconomic position. This correlation did not depend on fat, sex, age, or race.

According to Hudson (2005), "the poorer one's" socioeconomic circumstances increase their vulnerability to stress. Based on factors like job stress, education, and neighbourhood income, SES was a major focus. The study's findings indicated that socioeconomic status (SES) has a direct and indirect impact on the onset of mental illness since it is linked to unfavorable economic stressors among lower income groups.

Consequences of Occupational Stress

Burnout among teachers: A great deal of physical, emotional, and mental tiredness brought on by persistently high levels of stress—often as a result of the responsibilities of teaching—is known as teacher burnout. Feelings of exhaustion, cynicism, a sense of ineffective means and a lack of drive or excitement for work are its defining characteristics. Numerous things including excessive workloads, stressful work environments, a lack of resources or support, difficult-to-manage student behaviour, a large administrative load and a poor work-life balance might contribute to it. A teacher's well-being, work satisfaction and performance can all be adversely affected by burnout, which can also result in

absenteeism, a decline in effectiveness in the classroom, and even a decision to leave the profession entirely.

Impact on job performance: Occupational stress has a major negative impact on job performance. When it accumulates, it can create a difficult work environment that has an adverse effect on both individual performance and an educational institution's overall efficacy. Because of occupational stress, job performance affects a wide range of factors including:-

Quality of work:- Stress and strain can impede one's ability to make decisions which can ultimately lead to a decrease in the caliber of work that is performed. Error rates could rise and impact the final product.

Interpersonal relations: People's interactions with coworkers and students can be impacted by stress. It might result in strained bonds, problems with communication, and a decline in collaboration, which would impact team dynamics and productivity.

Impact on physical and mental health: Prolonged stress and strain can negatively impact a person's health, causing problems including exhaustion, headaches, insomnia, anxiety, and depression. In the end these health issues have an impact on how well teachers accomplish their jobs in the classroom.

Absenteeism: People who are under a lot of stress may take more sick days, which may ultimately impair their ability to function and contribute as teachers.indicates that there is a connection between lower student achievement and greater teacher stress level.

Stress among educators can result in uneven grading, a diminished passion for their work and an incapacity to offer the required assistance, all of which can have an impact on students acade mic achievement.Additionally,educators under stress may exhibit diminished instructional qualities, a loss of interest, and a decrease in motivation, all of which can result in poor communication, inade quate teaching strategies, and a negative impact on students ability to learn.

Student results: As is well known, teacher occupational stress has a significant negative influence on student outcomes. Small children require individualized attention which makes teachers' jobs more stressful when it comes to meeting learning objectives. Teachers are tense in this situation and are reported to be dissatisfied with their jobs.

References

1. Abel, M. H. & Sewell, J. (1999). Job stress and burnout in rural and urban secondary school teachers. Journal of Educational Research, 92(5), 23-35.
2. Ali, M. S. (2003). An analysis of relations among locus of control burnout and job satisfaction in Turkish school teachers. Australian Journal of Education, 47(1), 58-72.
3. Banoo, S., & Malik, S. D. (2014). Effect of occupational stress on life satisfaction among private and public school teachers.
4. Chandraiah, K., Agarwal, S. C., Marimurtha, P., & Manmohan, N. (2003). Occupational stress and job satisfaction among managers. Indian Journal of Occupational and Environmental Medicine, 7(2), 6-11.
5. Gouli, P. (2007). Negative effects of occupational stress on teachers. Chinese Education and Society,40(5), 32-39.

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

6. Kulkarni, G. K. (2006). Burnout. Indian Journal of Occupational and Environmental Medicine, 10, 3-4.
7. Ravichandran, R. &Ranjendran, R. (2007). Perceived sources of stress among teachers. Journal of the Indian Academy of Applied Psychology, 33(1),133-156.
8. Singh, M., & Singh, G. (2006). Assessment of mental health status of middle aged female teachers of Varanasi City. The International Journal of Health, 5(1).
9. Spector, L. S. (2002). Locus control and stress. International Journal of Stress Management, 7, 121-138.
10. Sussane, I. L. (2008). Occupational stress in men and women: A comparative study of coping resources. Digispace, University of Johnsberg.
11. Travers, C. J., & Coper, C. (1993). Mental health, job satisfaction and occupational stress among U. K. teachers. Work and Stress. International Journal, 7, 203-219.

AI TOOLS - FACILITATING ACADEMIC RESEARCH

Dr. Pragati Bhatnagar[1], Dr. Manish Bhatnagar[2]
[1]Assistant Professor, Acharya kalu Kanya Mahavidhyalaya, Jain Vishva Bharti Inastitute (Deemed University), LADNUN Rajasthan, pragatibhat@gmail.com
[2]Assistant Professor, Department of Education, Jain Vishva Bharti Inastitute (Deemed University), LADNUN Rajasthan, bhatnagarmanish9@gmail.com

Abstract

Today in the present era of digital technology every common man is familiar with the term artificial intelligence. AI means computers or machines which think and act like humans. Though the term originated in the period of 1950's but it was not used by common man. Now a days the term AI is very common and has its applications in every field .We all are using AI in our daily life in some way or another. Various applications of AI are in field of robotics, marketing, healthcare, finance, education, banking and many more. Revolution in field of AI came in the November 2022 with introduction of ChatGPT. It is being used by common man for various purposes. The area of academic research is no longer an exception. Academic researches are carried out in all higher education institutes by students and faculty at various levels. Research paper publications and participation in conferences/seminars are part of academic researches. An academic researcher has to do many additional tasks in addition to performing his research. He has to publish research articles, he may have to prepare teaching content, conduct student related activities, literature review, participate in conferences & seminars, prepare presentation etc. Writing research papers, making presentations, literature review are very time consuming jobs. His lot of time is consumed in these activities and he is not able devote the time required in conducting actual research activities. In this era of artificial intelligence we have many tools which help a researcher in literature review, in academic writing, checking grammar, checking plagiarism, generating graphics, generating citations and references, creating presentations etc. This paper aims to introduce various AI tools which may facilitate the work of a researcher so that he may devote and utilize his time efficiently on major aspects of research.

Key Words – Academic Research, Artificial Intelligence tools

Introduction-

Artificial intelligence (AI) – AI in its broadest sense, is intelligence exhibited by machines, particularly computer systems, as opposed to the natural intelligence of living beings. Work in the area of AI started in 1950's and is still progressive. The term AI was not used by common man previously but now this term is used by layman also. Now days there are many applications of AI. One of the most popular application of AI is ChatGpt which emerged in Nov. 2022 and is used extensively by common man. AI tools are now being used in almost all the fields in present scenario and the fields of academic research is not an exception.

Academic Research-The term academic research means researches carried out in higher education institutes and universities by student as a part of his academic training or by faculties as a part of his academic/research work. The outcomes of research work are published either in form of dissertation or Ph.D. thesis. There are some steps of conducting academic research. They are

- Define Research Problem
- Literature Review or Review of Sources
- Formulate Research Hypothesis /Questions
- Testing of Hypothesis by means of a valid Method

- Interpretation of Data and Drawing Conclusions
- Share or Present your work

The various tasks involved in carrying out academic research may include preparing teaching content, presentations, literature review, content writing, publishing etc. Now a days publishing paper in research journal, writing and presenting paper for seminars & conferences is integral part of academic research. These tasks demand large amount of time of a researcher and he finds himself short of time for conducting actual research work. AI tools in the field of academic research helps the researcher for various tasks such as literature review, organizing and checking manuscripts, checking grammar and plagiarism, generating citation ,graphics creation, writing content in precise manner, making presentations, and many more. These AI tools facilitates researcher to utilize their time to full potential in carrying out research work efficiently.

ChatGPT- It is a generative AI tool and it can be used for different purposes. It may be used for creating framework before writing a paper or creating any content, to rephrase certain section of paper, to check if all the aspects of paper has been covered .To get good results from Chat GPT or any other generative AI tools we should give them proper prompt or input. ChatGPT is a Large language model tool. These tool learn from content which already exist on internet .It collects the information and presents to us on the basis of input given to it. They learn from different sources across the world which is present on web. As the content on net is created by human beings it contains biases. So the data generated by ChatGPT may also contain biases and should be checked properly before use. ChatGPT is a new tool and there are already many tools in the field of academic research.

AI Tools for different aspects of Academic Research-In academic research we can organize AI tools in different categories according to their use

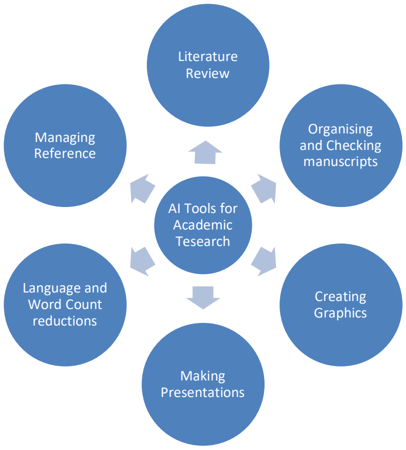

- **Literature Review-** It is the process of finding literature that is appropriate for or related to your research work, reading the literature and compiling them. Literature review is a very tedious task. If we are doing literature review for our Ph.D or another research work and we collect say 100 papers. These 100 papers may be linked to another 50 papers. So to search these papers becomes a very time consuming task. In this digital era this task is very much simplified by using different AI tools like
    - **Litmaps** are used make the search of your literature faster. It changes the traditional way of searching the paper by keyword and the searching the rest of papers by looking at is references. Litmap uses citation network to discover literature that is difficult with other search methods. It helps in making your literature review faster, it prompts you

with an alert when new paper related to your topic comes out, it helps you to discover key authors in your area, identify research gaps and share researchers findings with other researchers.

- **Notes making and assimilating the Literature**- After collecting the paper to understand the content we have to read the papers. Some papers may be relevant some may not be very relevant. Reading all the papers may consume our lot of time. After collecting the paper researcher have to read the papers and find out which paper are relevant for his/her research. Here the AI tools play an important role by providing the gist of research paper.
  - **Paper Digest**- This AI tool summarizes research articles for you. It returns summary of open access full text articles in bulleted form. Each paper can be read in about 3 minutes. So reading the summary researcher can filter out the paper relevant for his research.
- **Organising and Checking manuscripts**- There are AI tools which facilitates researcher in writing research paper, checking for language consistency and grammar.
  - **Paper pal** - It is an AI tool that helps in organising and checking academic writing. It checks entire manuscript on 40 different criterion. It checks whether the title is appropriate, authors information is correct, is abstract properly written and structured, are keywords written. It also checks if citations are proper, are references in accordance with requirement, it checks if figures and table are proper. After checking the paper thoroughly it tells the shortcoming of the paper and what are the modifications required. It acts as a cowriter. Researcher can input his written paper to paper pal. It will check paper from the point of view of language consistency and grammar which is essential if paper is to be published in a standard journal.
- **Creating Graphics-** This tool helps researcher to convert the idea in his mind to some graphical form. It helps you to create graphical abstract. Some journals requires to submit cover images for the journal while submitting the manuscript. This image should reflect the whole idea of paper graphically. The popular AI tools used for this purpose are
  - **Mid Journey and Big-** These tools require the input which researcher want to be reflected as image. Based on his inputs it gives some outputs in form of images. He can select the output which appears to be more appropriate.
- **Managing Reference-**To manage references in research paper various tools like Zotero, Refworks, RefDB, bibme, etc can be used which can help to add citation, quickly make changes in citations, references are automatically generated and their format can be changed. These are not AI tools but just reference management tools. The AI tool for organising reference is thrix.
  - **Thrix -** It is not reference manager. It cannot be integrated with word processors as in case of reference management tools. It is a browser application. If researcher has written his paper for one journal and formatted references in one style and now want to send it to some other journal whose referencing format is different. Researcher can input his references to this tool which will convert it into another set of format.
- **Language and Word Count Reductions**- These tools are helpful for those persons who are not friendly or are from non-English speaking countries and face many problems related to use of correct language, word contradiction, plagiarism checking etc. These tools help a lot in paraphrasing.
  - **Wordtune-** This AI tool helps a lot in writing thoughts in good language. Researcher has to give his ideas in the form of small input and word tune gives two three options

to express researchers' views. He can select the best option as per requirement of paper. Sometimes the same thing is to be expressed in many forms like writing a research paper then researcher may wish to present his work in a conference, it may be used as a part of his bigger research. Wordtune can be very helpful in expressing the same text in different forms. This AI tool has a word and chrome plugin.

- **Quillbot-** It is an AI tool with diverse functions. In addition to paraphrasing it helps in checking grammar and plagiarism, facilitates to write paper correctly, prompting to correct while writing. It also helps in summarizing, generating citation and doing translation. It has extensions for chrome as well as word. It is specifically built to help researchers.
- **Trinka-** It is a tool which covers all most all aspects of research writing like grammar check, paraphrasing, proofreading, consistency check, plagiarism check, act as a journal finder, citation checker and many more. It has browser plugin and Word-Add-in. It is very user friendly as it contains video demonstration for each and every feature available.

- **Making Presentations-** Presenting research work is also a challenging task for researcher. AI tools are also available for creating presentations
  - **Decktopus-** It is an online AI powered presentation tool which helps in creating aesthetic slides, customizable templates and dynamic slide shows in very short time. It gives a very good framework for presentation in which researcher can fit data or text and generate presentation.

Conclusion

Artificial intelligence has entered in every facet of our life. ChatGpt is new application of AI which has made this term more popular among common man. AI is being used in many fields such robotics, agriculture, healthcare, finance, education etc. It plays very important role in the field of academic research too. Academic researches are conducted by both students and faculties at various levels in higher education institutes and universities. It may be part of curriculum for students, in form of Ph.D, research project etc. All academic researches involve various tasks such as literature review, paper writing, creating some teaching content, generating citations and referencing, making presentations and many more. AI tools facilitates researcher for works like literature review, structuring the framework of research paper, checking grammar, plagiarism, generating graphics, citations , reference, creating presentations etc. Previously more than 50% of time of researcher was devoted for these purposes and he could not devote his proper time in actual research work. Now there are many open access, user friendly AI tools which can be utilized by researchers in academic field to utilize their time to full potential.

References-

Malik AR Pratiwi Y. et. al (2023), Exploring Artificial Intelligence in Academic Essay: Higher Education Student's Perspective , International Journal of Educational Research Open, Elsevier Ltd., 100296, vol 5, https://doi.org/10.1016/j.ijedro.2023.100296

https://www.sciencedirect.com/science/article/pii/S2666374023000717?via%3Dihub

Straková Z. (2016), How to Teach in Higher Education: selected chapters, Part of a grant project KEGA 065PU-4/2016 978-80-555-1655-4

https://www.academia.edu/37311990/Academic_Research

Venkatesh V. (2022), Adoption and use of AI tools: a research agenda grounded in UTAUT,

Annals of Operations Research 308(4), DOI:10.1007/s10479-020-03918-9
https://www.researchgate.net/publication/348617316_Adoption_and_use_of_AI_tools_a_research_agenda_grounded_in_UTAUT
https://en.wikipedia.org/wiki/Artificial_intelligence
https://paperpal.com/home?&utm_source=google&utm_medium=cpc&campaignid=20956808372&adgroupid=157485892466&creative=688273019929&keyword=paper%20pal&matchtype=p&device=c&gad_source=1&gclid=EAIaIQobChMI5ODphby3hQMVbheDAx09gQ5hEAAYASAAEgI45fD_BwE
https://www.litmaps.com/about/us
https://www.trinka.ai/
https://www.youtube.com/watch?v=WrvJUH0wWoM&t=1048s

Educational Administration: Theory and Practice
2024, 30(5), 556-562
ISSN:2148-2403
https://kuey.net/
Research Article

Role of Family in Educational Attainment and Upward Mobility

Shyam Krishna TP[1*], Dr Manish Bhatnagar[2]

[1*]Research Scholar, Department of Education, Jain Vishva Bharti Institute (Deemed to be University), Ladnun, Rajasthan- 341306, Email:shyamkrishnatp@gmail.com
[2]Assistant Professor, Department of Education, Jain Vishva Bharti Institute (Deemed University), Ladnun, Rajasthan-341306, Email:bhatnagarmanish9@gmail.com

Citation: Shyam Krishna TP, Dr Manish Bhatnagar, (2024), Role of Family in Educational Attainment and Upward Mobility, *Educational Administration: Theory and Practice, 3(5), 556-5562*
Doi: 10.53555/kuey.v30i5.2883

ARTICLE INFO | **ABSTRACT**

Given the substantial influence of family dynamics and socioeconomic position on academic achievement, studying the family's involvement in educational attainment and upward mobility is an essential field of study. With a particular emphasis on two primary goals, the study seeks to investigate the complex impact of family influences on educational attainment. The primary goal of the study is to dissect the relationship between parental income, education level, and employment, as well as other aspects of family socioeconomic position, and children's educational possibilities and resources. The second objective is to determine how family support systems, such as parental participation, encouragement, and access to educational resources and assistance, affect academic performance. In light of these goals, the study intends to provide light on the intricate relationship between home life and academic performance, which should guide efforts to ensure that all kids have equal opportunity to get a quality education.

Keywords: Parental Involvement, Family Background, Education Attainment, Upward Mobility

1. Introduction

A student's educational achievement and opportunities for advancement are greatly influenced by their family. Socioeconomic position and parental styles are some of the family traits that have a significant impact on educational possibilities and results. A child's family plays a dual role in shaping their upbringing, impacting their educational opportunities, goals, and mobility. To fully grasp the factors that promote or impede educational achievement and extending upward mobility, one must have a firm grasp of these above-mentioned dynamics.

1.1 Parenting Styles and Educational Attainment

When a kid grows up, he or she learns how to indulge with his or her family and community through formal and informal teachings, role models, and experience. This process is called socialization (Parke, et. al., 2004). The socialization process is bidirectional in which parents convey socialization messages to their children, but their children vary in their level of acceptance, receptivity, and internalization of these messages (Ladd and Kochenderfer-Ladd, 2019). For children to make academic strides, they need positive connections with their parents (Israel, et. al., 2001). Children whose parents are Calm and supportive are more likely to strive for and succeed in school (Dornbusch, et. al., 1987). Nevertheless, there is a lack of data about the precise social-psychological processes that link parenting approaches to academic performance.
Positive goal orientation and resilience in the face of scholastic adversity are two traits that high-quality parenting may help children internalize, which in turn might affect academic accomplishment (Davis-Kean, 2005). However, parent-child connections may influence academic performance in a roundabout way. For instance, a kid may experience emotional pain and even develop mental health issues as a result of parents, who are not actively interested in their lives, as seen via little communication, apathy, and neglect. A person's

Copyright © 2024 by Author/s and Licensed by Kuey. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution License which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

capacity to succeed academically may be negatively impacted by their level of psychological adjustment or mental health (Radziszewska, et. al., 1996).

1.2 Family and Upward Mobility

People frequently exemplify class and family issues when they achieve upward mobility. Many people believe that a person's talent and value are the only factors in determining their level of mobility, rather than the role that resources play. As they embark on a path to greater success, members of the moral economy often find themselves at odds with their former selves, families, and communities (Mallman, 2017). A person's connections and sense of self become more precarious as their level of freedom rises (upward mobility). These dynamics of class mobility may have the greatest negative impact on family ties (Schneider, et. al., 2014). A potential danger to relationship cohesiveness is when social divisions make their way into the home. For this reason, it is possible to characterize mobility as "a painful dislocation between an old and newly developing habitus, which are ranked hierarchically and carry connotations of inferiority and superiority". Finding one's adjustment in an environment where upward mobility often feels ignored is another challenge of moving across socioeconomic levels (Kupfer, 2012).

The impact on people's health and happiness of mobility is substantial. Having a strong social network, healthy habits, financial and human resources, and the ability to tap into social power all contribute to a lower risk of stress and an improved quality of life. Those at the very top of society are less likely to be vulnerable since they are already well-established and have many social and economic safety nets to fall back on if a crisis does arise (Legewie, 2021). Everyone is firmly ingrained with the notion of upward mobility, which is that with hard labor, obedience to the law, and saving money, one can get ahead. The Belief of an inspiring story of a young man or woman who rises from humble beginnings to become a successful entrepreneur, inventor, husband, and member of a social class many levels higher than their own. (Delgado, 2007). Despite this, children's mobility is more downward than upward, contrary to popular belief. The vast majority of children from low-income homes never rise above their initial socioeconomic status and even fewer manage to do so. Affluent dynasties last forever, but middle-class offspring rarely rise through the ranks (Spiegler, 2018).

1.3 Theoretical Foundations

1.3.1 Effects of Family on Education Attainment

Dizon-Ross, (2019) argued that parents' upbringing and their beliefs about what is necessary for success in life shape their children's educational performance. Schwartz, (2018) discussed parent-child dynamics via the lens of the role model hypothesis, which states that parents serve as role models for their offspring. Affluent parents provide a good example for their children by getting degrees and working full-time. According to Cobb-Clark, household production theory, household investments and resources are associated with children's educational achievement. Cobb-Clark, et. al., (2019).

On the contrary, Radl, et. al., (2017) founded that fewer resources mean worse educational attainment for those living in households headed by mothers or stepfathers and mothers. Härkönen, et. al., (2017) findings also show that children's experiences with family dynamics vary with developmental stages. Williams-Owens, (2017) argued that as a result of growing up in a home where conflict is constant, children living in situations of divorced parents tend to do worse academically than their counterparts. Doka, (2017) stated that children experience temporary heartache, emotional pain, and associated issues when their parents die or divorce. Studies show that it harms kids' health, self-esteem, and academic achievement.

1.3.2 Impact of Family on Upward Mobility

According to Card, et. al., (2018), children from lower-class backgrounds and minority groups are at a higher risk of experiencing downward integration due to the impact of their inner-city school peers, who, in response to prejudice, reject schooling and other standard routes to upward mobility. Browman, et.al., (2019) stated that Children can be influenced to upward mobility by their parents' human capital, family structure, and manner of reception. Similarly, youngsters may be better able to avoid harmful peer pressure in places where ethnic links are strong.

Gardner, et. al., (2017) focused on the next generation and brought attention to the role that parental human capital plays, family dynamics, and integration strategies, the impact of school peers, and the significance of community and neighborhood in children's opportunities for upward mobility. Crul, et. al., (2017) stressed the critical importance of family support systems in encouraging children to go up the social ladder. Roksa and Kinsley, (2019) defined key factors that facilitate access for low-income children to community and school resources. As a result of a lack of investment in public school curricula, college preparatory programs, and student-teacher connections, students' opportunities for upward mobility have diminished. Narayanan, et. al., (2018) examined that it's worth considering if the mobility of the disadvantaged can be completely captured in the peri-adult years then it could take them longer to attain than the advantage. Full growth potential can be initiated by age-appropriate, on-track transitions (such as getting a bachelor's degree in engineering by the time one is twenty-six), but only a portion of that growth can be realized by a delayed, off-track transition.

2. Research Objectives

This research aims to comprehensively examine the Role of Family in educational attainment and upward Mobility through two interconnected objectives. Firstly, the study endeavors to examine the Impact of Family Socioeconomic Status on Educational Attainment. Secondly, it aims to assess the Influence of Family Support Structures on Academic Success. Through these objectives, the research seeks to provide valuable insights into the dynamics of the role of family in educational attainment and upward mobility.

3. Methodology and Data

The study utilized both primary and secondary data collection methods to determine "Role of Family in educational attainment and upward Mobility" The primary data is collected via a structured questionnaire through random sampling that has been used for students. The questionnaire has been designed based on demographic factors and the variables of the study "(i.e. Family Socio-Economic Status (SES), Parental Educational Background, Family Structure, Parental Involvement in Education Parental Aspirations and Expectations, Access to Early Childhood Education)". These questionnaires were distributed to 385 respondents (students), out of which responses from 200 respondents were received. Finally, data from 140 respondents has been considered for the study who completely fulfilled the questionnaire. The secondary data for the study has been collected via various "Websites, Newspapers, Articles, various Internet Media and other reliable sources". The study employed a mixed-method research design. Excel and SPSS software have been used to examine the data. The statistical tools mean, standard deviation (SD), and correlation have been used to test the study's hypothesis.

4. Results

➢ **Demographics table**

Sr. no.	Demographic characteristics	Category	N	%
1.	Gender	Male	80	57.1%
		Female	60	42.9%
2.	Age	Below 10 years	62	44.3%
		10-14 years	31	22.1%
		15-19 years	31	22.1%
		Above 19 years	16	11.4%
3.	Location	Urban	93	66.4%
		Rural	47	33.6%
4.	Parental Educational level	Advanced degree	23	16.4%
		Bachelor's degree	70	50%
		High School Diploma	47	33.6%
5.	Household income	High Income	24	17.1%
		Middle Income	70	50%
		Low Income	46	32.9%
6.	Parental Involvement	Attendance at parent-teacher conferences	84	60%
		Involvement in school activities	56	40%
7.	Family Structure	Extended Family	23	16.4%
		Nuclear Family	70	50%
		Single Parents Family	47	33.6%

Table 1 shows the Demographic Characteristics of the respondents in the context of their Gender, Age group, Location, Parental education level, Parental involvement, Family structure, and Household income of respondents. According to the table, out of 140 respondents, 57.10% of the respondents are male and 42.90% of the respondents are females who belong to Rural and Urban areas and specify their age groups, parental education level, parental involvement, and household income.

Objective 1: Examine the Impact of Family Socioeconomic Status on Educational Attainment.

Objectives	Regression Weights	Beta Coefficient	R	R2	F	t-value	p-value	Hypotheses Result

Objective 1	Family Socioeconomic Status > Educational Attainment	0.170	0.170	0.029	4.103	2.025	.045	Supported

Table 2 shows the regression analysis for the hypothesis analyses if there is a significant impact of Family Socioeconomic Status on Educational Attainment. The "dependent variable" is educational attainment to test the hypothesis. $F = 4.103$, $p<0.05$, demonstrating the impact of Family Socioeconomic Status on Educational Attainment. ($b = 0.170$, and $p<.005$). Moreover, the R2 = 0.029 of the Educational Attainment, an alternative hypothesis is accepted.

Objective 2: Assess the Influence of Family Support Structures on Academic Success.

Objectives	Regression Weights	Beta Coefficient	R	R2	F	t-value	p-value	Hypotheses Result
Objective 2	Family Support Structures > Academic Success	0.409	0.409	0.168	27.775	5.270	0.00	Supported

Table 3 shows the regression analysis for the hypothesis analyses if there is an influence of Family Support Structures on Academic Success. The "dependent variable" is Academic Success to test the hypothesis. $F = 27.775$, $p<0.05$, demonstrating the Influence of Family Support Structures on Academic Success. ($b = 0.409$, and $p<.005$). Moreover, the R2 = 0.168 of the Academic Success, an alternate hypothesis is accepted.

5. Discussion and Findings

In the light of education mobility and the role of parents and family background, Yang and Zhao, (2020) noted it was more beneficial for children's academic achievement when parents used an authoritative style, but parents from better socioeconomic backgrounds are more likely to use a permissive approach. Although parenting styles had a bigger impact on children from low-income families, mother's styles had a far more significant impact on their children's academic achievement than fathers' styles. Although Assari, S. et. al., (2019) observed that while there is a correlation between high parental educational attainment and better outcomes for children overall, this correlation is statistically smaller for Black and Hispanic adolescents compared to non-Hispanic white youth. This puts Black and Hispanic adolescents from middle-class homes at a higher risk for health problems. Upstream social factors could be blamed for the declining returns of parental educational attainment in ethnic minority households' ability to convert their capital and human resources into health outcomes, given the systemic pattern for outcomes across domains. Zhang, F. et. al., (2020) also acknowledged that Parents' academic participation has a direct correlation to their children's academic success, and this correlation is largely reliant on the parents' subjective upward mobility. Espinosa, L. L., et. al., (2018) acknowledged that for students from minority groups and low-income households, where income mobility is often stagnant and educational achievement is disproportionately poor, minority-serving institutions (MSIs) are crucial to their education. On the other hand, Hirata and Kamakura, (2018) emphasized that the authoritarian parenting style had little to no effect on self-esteem and most subscales of personal growth initiative, it did have a substantial impact on the willingness for change subscale of personal growth initiative among female students. Similarly, Sanders and Turner, (2018) determined that the impact of parental quality in shaping a child's developmental competence and, by extension, their life course trajectories, is substantial throughout childhood and adolescence. Children's emotional and physical well-being, their ability to communicate and self-regulate, their connections with their siblings and classmates, their academic success, and the quality of their relationships with their parents are all profoundly influenced by the parent-child bond. This study expands on previous research by consolidating results from many studies to offer a full comprehension of the intricate correlation between parenting styles, parental educational achievement, and children's academic achievement. The present study provides a more comprehensive and detailed viewpoint by integrating information from multiple sources, such as research on different parenting styles, minority-serving institutions, and the influence of the parent-child interaction on various aspects of development. In

addition, this study aims to fill gaps in existing research by examining how characteristics such as socioeconomic class, ethnicity, and gender overlap and influence educational results. This statement recognizes the institutional obstacles that prevent ethnic minority families from effectively utilizing their resources to achieve positive health and academic results. It highlights the underlying disparities within the school system. Furthermore, this study expands the investigation by analyzing how parental subjective upward mobility and willingness for change impact children's academic success. It offers valuable insights into the psychological processes that drive parental engagement in education. In summary, this study combines information from various studies and fills in gaps in existing research. It provides a more complete understanding of the factors that affect children's academic performance. Additionally, it emphasizes the significance of considering various aspects of parental involvement and socio-economic background in educational research and policymaking.

6. Conclusion

Finally, the family has a pivotal role in influencing scholastic achievement and social advancement. Families exert a substantial effect on the academic and socio-economic path of their children through diverse parenting methods, educational achievements, and levels of participation in their children's schooling. Studies suggest that parenting styles, such as authoritarian and permissive approaches, can have varying effects on children's academic achievement, with parental participation typically playing a crucial role. Furthermore, there is a constant correlation between the educational attainment of parents and improved educational achievements in children. However, structural inequalities may impede the effective utilization of parental resources, especially for underprivileged populations. Moreover, the parent-child connection, which includes elements of communication, support, and encouragement, has a substantial influence on children's growth and scholastic achievement. Understanding the many ways in which families impact educational achievements highlights the need to implement comprehensive strategies to aid children's academic accomplishments and enhance social advancement across different socio-economic contexts. To resolve disparities in educational achievement and promote upward social mobility, it is crucial to establish robust collaborations across families, educational institutions, and communities.

7. Implication, Limitations, and Recommendations for further studies

The study's findings about the influence of family on educational achievement and social advancement have complex and varied implications. The findings highlight the substantial impact of family variables, such as parenting styles, parental participation, and socioeconomic position, on children's academic achievement and long-term socio-economic prospects. This underscores the significance of focused interventions and support structures for families, especially those from underprivileged origins, to augment scholastic prospects and enable social advancement.

Nevertheless, the study also uncovers certain constraints that require careful thought. An inherent constraint is the dependence on self-reported data, which might potentially induce response bias and restrict the precision of the conclusions. Furthermore, the study could not encompass the complete spectrum of elements that affect educational achievement and social advancement, such as the impact of peers, the school setting, and personal attributes. To overcome these constraints and gain a more thorough grasp of the intricate relationship between family dynamics and socio-economic outcomes, future research might utilize longitudinal designs and mixed-method techniques.

Given the consequences and limits discussed, various recommendations can be made for future investigations. A study is needed to examine how diverse family characteristics affect educational achievement and social mobility in various cultural and socio-economic settings. Furthermore, longitudinal studies, which monitor individuals over an extended period, might provide useful insights into the enduring impact of family dynamics on socioeconomic outcomes. Furthermore, there is a need for intervention research to assess the efficacy of family-based programs and policies in enhancing educational achievement and social advancement. In summary, ongoing investigation in this field is crucial for supporting evidence-driven strategies and regulations designed to advance educational fairness and socio-economic advancement for individuals, irrespective of their familial origins.

References

1. Abdul-Adil, J. K., & Farmer Jr, A. D. (2006). Inner-city African American parental involvement in elementary schools: Getting beyond urban legends of apathy. School Psychology Quarterly, 21(1), 1.
2. Amato, P. R., & Booth, A. (1997). A generation at risk: Growing up in an era of family upheaval. Harvard University Press.
3. Assari, S., Caldwell, C. H., & Bazargan, M. (2019). Association between parental educational attainment and youth outcomes and role of race/ethnicity. JAMA network open, 2(11), e1916018-e1916018.
4. Becker, G. S. (2009). Human capital: A theoretical and empirical analysis, with special reference to education. University of Chicago press.
5. Boethel, M. (2003). Diversity: School, Family, & Community Connections. Annual Synthesis, 2003.

6. Boggess, S. (1998). Family structure, economic status, and educational attainment. Journal of Population Economics, 11, 205-222.
7. Caño, K. J., Cape, M. G., Cardosa, J. M., Miot, C., Pitogo, G. R., Quinio, C. M., & Merin, J. (2016). Parental involvement on pupils' performance: Epstein's framework. The Online Journal of New Horizons in Education, 6(4), 143-150.
8. Cole, E. R., & Omari, S. R. (2003). Race, class and the dilemmas of upward mobility for African Americans. Journal of Social issues, 59(4), 785-802.
9. Cole, E. R., & Omari, S. R. (2003). Race, class and the dilemmas of upward mobility for African Americans. Journal of Social issues, 59(4), 785-802.
10. Davis-Kean, P. E. (2005). The influence of parent education and family income on child achievement: the indirect role of parental expectations and the home environment. Journal of family psychology, 19(2), 294.
11. Dawson, D. A. (1991). Family Structure and Children's Health and Well-Being: Data from the 1988 National Health Interview Survey on Child Health. Journal of Marriage and the Family, 53(3), 573. https://doi.org/10.2307/352734
12. De Graaf, P. M., & Ganzeboom, H. B. (1993). Family background and educational attainment in the Netherlands for the 1891-1960 birth cohorts. Persistent inequality: Changing educational attainment in thirteen countries, 75-99.
13. Delgado, R. (2007). The myth of upward mobility. University of Pittsburgh Law Review, 68(4), 879.
14. Desforges, C., & Abouchaar, A. (2003). The impact of parental involvement, parental support and family education on pupil achievement and adjustment: A literature review (Vol. 433). London: DfES.
15. Dornbusch, S. M., Ritter, P. L., Leiderman, P. H., Roberts, D. F., & Fraleigh, M. J. (2016). The relation of parenting style to adolescent school performance. In Cognitive and Moral Development, Academic Achievement in Adolescence (pp. 276-289). Routledge.
16. Driessen, G., Smit, F., & Sleegers, P. (2005). Parental involvement and educational achievement. British educational research journal, 31(4), 509-532.
17. Espinosa, L. L., Kelchen, R., & Taylor, M. (2018). Minority serving institutions as engines of upward mobility.
18. Fan, X., & Chen, M. (2001). Parental involvement and students' academic achievement: A meta-analysis. Educational psychology review, 13, 1-22.
19. Garasky, S. (1995). The effects of family structure on educational attainment: Do the effects vary by the age of the child?. American Journal of Economics and Sociology, 54(1), 89-105.
20. Graves Jr, S. L., & Brown Wright, L. (2011). Parent involvement at school entry: A national examination of group differences and achievement. School Psychology International, 32(1), 35-48.
21. Green, C. L., Walker, J. M., Hoover-Dempsey, K. V., & Sandler, H. M. (2007). Parents' motivations for involvement in children's education: An empirical test of a theoretical model of parental involvement. Journal of educational psychology, 99(3), 532.
22. Hao, L., & Pong, S. L. (2008). The role of school in the upward mobility of disadvantaged immigrants' children. The ANNALS of the American Academy of Political and Social Science, 620(1), 62-89.
23. Haveman, R., Wolfe, B., & Spaulding, J. (1991). Childhood events and circumstances influencing high school completion. Demography, 28, 133-157.
24. Hirata, H., & Kamakura, T. (2018). The effects of parenting styles on each personal growth initiative and self-esteem among Japanese university students. International Journal of Adolescence and Youth, 23(3), 325-333.
25. Israel, G. D., Beaulieu, L. J., & Hartless, G. (2001). The influence of family and community social capital on educational achievement. Rural sociology, 66(1), 43-68.
26. Kao, G., & Tienda, M. (1998). Educational aspirations of minority youth. American journal of education, 106(3), 349-384.
27. Kao, G., & Tienda, M. (1998). Educational aspirations of minority youth. American journal of education, 106(3), 349-384.
28. Keith, P. B., & Lichtman, M. V. (1994). Does parental involvement influence the academic achievement of Mexican-American eighth graders? Results from the National Education Longitudinal Study. School Psychology Quarterly, 9(4), 256.
29. Kohn, M. L. (1963). Social class and parent-child relationships: An interpretation. American journal of Sociology, 68(4), 471-480.
30. Kuhfield, M., & Tarasawa, B. (2020). The COVID-19 Slide: What Summer Learning Loss Can Tell Us about the Potential Impact of School Closures on Student Academic Achievement. Brief. NWEA.
31. Kupfer, A. (2012). A theoretical concept of educational upward mobility. International Studies in Sociology of Education, 22(1), 57-72.
32. Ladd, G. W., & Kochenderfer-Ladd, B. (2019). Parents and children's peer relationships. Handbook of parenting, 278-315.
33. Lauer, C. (2003). Family background, cohort and education: A French–German comparison based on a multivariate ordered probit model of educational attainment. Labour Economics, 10(2), 231-251.
34. Legewie, N. M. (2021). Upward Mobility in Education: The Role of Personal Networks Across the Life Course. Social Inclusion, 9(4), 81-91.

35. Luster, T., Rhoades, K., & Haas, B. (1989). The relation between parental values and parenting behavior: A test of the Kohn Hypothesis. Journal of Marriage and the Family, 51, 139 –147
36. Mallman, M. (2017). Not entirely at home: Upward social mobility and early family life. Journal of Sociology, 53(1), 18-31.
37. Parke, R. D., Coltrane, S., Duffy, S., Buriel, R., Dennis, J., Powers, J., ... & Widaman, K. F. (2004). Economic stress, parenting, and child adjustment in Mexican American and European American families. Child development, 75(6), 1632-1656.
38. Portes, A., & Fernández-Kelly, P. (2008). No margin for error: Educational and occupational achievement among disadvantaged children of immigrants. The annals of the American academy of political and social science, 620(1), 12-36.
39. Portes, A., & Zhou, M. (1993). The new second generation: Segmented assimilation and its variants. The annals of the American academy of political and social science, 530(1), 74-96.
40. Sanders, M. R., & Turner, K. M. (2018). The importance of parenting in influencing the lives of children. Handbook of parenting and child development across the lifespan, 3-26.
41. Schneider, J., Crul, M., & Van Praag, L. (2014). Upward mobility and questions of belonging in migrant families. New Diversities, 16(1), 1-6.
42. Shavit, Y., & Blossfeld, H. P. (1993). Persistent Inequality: Changing Educational Attainment in Thirteen Countries. Social Inequality Series. Westview Press, 5500 Central Avenue, Boulder, CO 80301-2847.
43. Spiegler, T. (2018). Resources and requirements of educational upward mobility. British Journal of Sociology of Education, 39(6), 860-875.
44. Trusty, J. (1998). Family influences on educational expectations of late adolescents. The Journal of educational research, 91(5), 260-271.
45. Yang, J., & Zhao, X. (2020). Parenting styles and children's academic performance: Evidence from middle schools in China. Children and Youth Services Review, 113, 105017.
46. Zhang, F., Jiang, Y., Ming, H., Ren, Y., Wang, L., & Huang, S. (2020). Family socio-economic status and children's academic achievement: The different roles of parental academic involvement and subjective social mobility. British Journal of Educational Psychology, 90(3), 561-579.

Madhya Pradesh Journal of Social Sciences
A biannually Journal of M. P. Institute of Social Science Research, Ujjain
ISSN: 0973-855X (Vol 29 No 1, January 2024)

NATURAL LANGUAGE PROCESSING – AN EMERGING FIELD

Dr. Pragati Bhatnagar[1], Dr. Manish Bhatnagar[2]
Assistant Professor, Acharya kalu Kanya Mahavidhyalaya, Jain VishvaBharti Institute Deemed University, LADNU
Assistant Professor, Department of Education,, Jain VishvaBharti Institute Deemed University, LADNU, Rajasthan

Abstract

Natural Language Processing (NLP) means to teach machines to understand and communicate in natural languages. Natural languages are those languages which are spoken commonly by group of persons for communication. Natural languages include Hindi, English, Marathi ,Punjabi etc. There are many application of NLP in our daily life like chatbot, search engines, email-spam filters, alexa etc. NLP is an emerging field of computer science and artificial intelligence and is expected to make revolutionary changes for the benefit of mankind. This paper discusses meaning of NLP, its goal, need and applications in various fields. Further it discusses common NLP tasks, approaches to NLP and the major challenges which are responsible for hindering NLP to grow to its full potential.

Introduction

Natural Language processing is an emerging area in the field of computer science which uses artificial intelligence and has many real life applications like chatbots, search engines, siri, alexa etc. NLP means to teach or train the machine to communicate with human beings in their common speaking language. The work in the field of NLP started near about 50 years back and is still progressive. Initially heuristic approach was used in the field of NLP but with the emergence of machine learning and deep learning this field has started blooming .Still there are many challenges in the field of NLP which are responsible for its slow growth Many NLP engineers and practitioners are working continuously to overcome these challenges and a time will come when NLP will bring revolutionary changes in human life.

Definition of NLP-

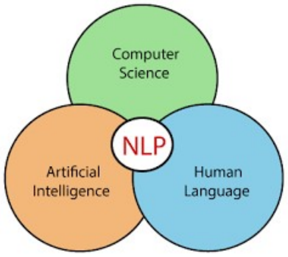

Natural language processing (NLP) is a subfield of linguistics, computer science and artificial intelligence concerned with interactions between computers and human language, in particular how to program computer to process and analyse large amounts of natural language data.

Goal of NLP- The goal of NLP is to teach machines to understand natural language. Natural language processing means machine should be able to communicate with us in natural language. It means

whatever instructions we give to machine will be in natural language and machine should also reply us in natural language.

Need of NLP- To understand the need of NLP we should know what is Natural Language? In neuropsychology, linguistics, and philosophy of language, a natural language or ordinary language is any language that occurs naturally in a human community by a process of use, repetition, and change without conscious planning or premeditation. Natural Language can take different forms such as speech or signing. Natural languages are distinguished from constructed and formal languages such as those used to program computers or to study logic. So natural languages are the languages in which we communicate. It may be Hindi, English or any other regional language.

If we compare the growth of human beings to other animals we find that human beings have progressed very much as compared to other species. If we see evolution of human being we find that our ancestor were similar to monkeys but slowly and slowly we progressed and now a days we are going on moon and making big technological developments. The first reason behind this progress is our communication. Using natural languages human beings share their ideas with others; they pass on knowledge to their next generation in the form of speeches, written text, books, literature etc. The second reason behind the progress of human being is industrial revolution. Man made many machines which made the life easy. Many transportation vehicles, electricity and many other inventions transformed the life of human being. Then came the era of computers and internet which made revolutionary changes in human life. Now there is need of one more revolution which will totally change the life of human beings and that is the era of Natural Language Processing where human beings and machine will communicate and respond to each other in a similar way as human beings do with one another.

Real life Applications of NLP- There are many real life applications of NLP. Common are Google Assistant, Siri, Cortona etc. Other major real life applications of NLP are

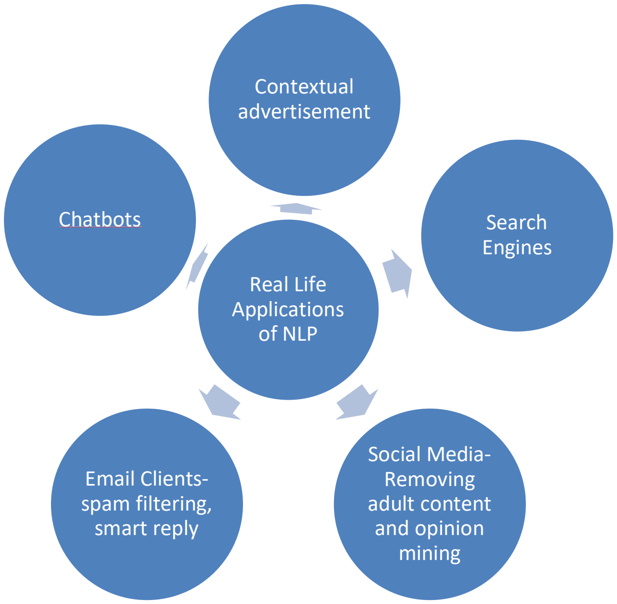

Contextual Advertisement- Previously 20-25 years back when we used to watch matches and other programmes on TV , all the viewers of the country were shown same advertisements. Company used to assume that show the same advertisement to all and those who want to buy the product will purchase it. Now we have NLP and we can process how persons behave, how is their personality, we can show

targeted advertisement to persons. You must have noticed that depending on your instagram profile or facebook profile you are shown different advertisement then your friend. Company used to analyse your profile, posts and comments and then decides whether you are interested in field of sports, education,cosmetics, etc. Depending on your field of your interest targeted advertisement are shown to you. If sometimes we chat on whatsapp with someone on a topic and the switch to some other application we are shown advertisement on the same topic on which we were chatting.

Common NLP Tasks- There are some common NLP tasks using which you can make NLP applications. They are

- **Text Document Classification**

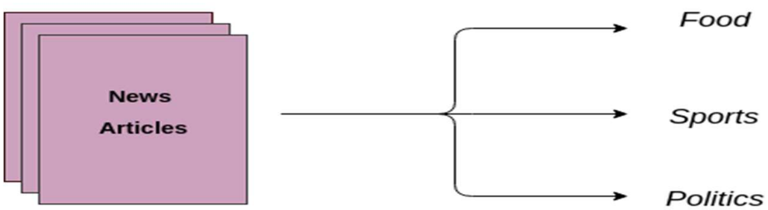

If there is a text and it needs to be assigned a category this can be done using text document classification. For example you have a full text of a news and you want to assign it a category like food, sports, entertainment, politics etc. You can easily do it using text document classification.

- **Sentiment Analysis**

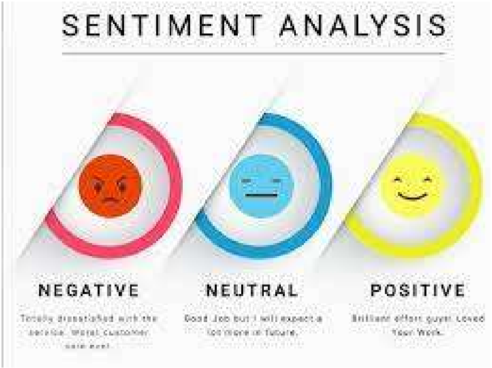

Using sentiment analysis in Social Media or E-commerce you read reviews of people and extract emotions of a people and analyze what they feel about a particular movie or product. Companies use this feature on very large scale. Suppose there is a product of a company and there are one crore reviews of that product. It becomes very difficult to read those review and analyse them. So this can be done by making a sentiment analysis app in NLP such that you can feed all the reviews in the app and it will tell you how much percent of people are talking positively about your product. It will save company's money and time

- **Information Retrieval**

Suppose we have a text and we want to extract entities from it like, time, date, person's name, event name, product name etc. We can do it using information retrieval. Search engine uses informational retrieval internally to search information on web. HP0

- **Parts of Speech tagging**

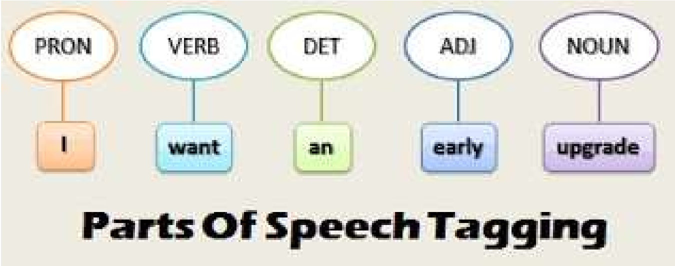

It is a very important text pre-processing step. Here you assign every word of the text a part of speech tag such as noun, pronoun, adjective, verb and determiners etc. It is used if you prepare a question answering system or chat bot where the meaning of a sentence should be clear word by word.

- **Language detection and machine translation-**

It is a very powerful application and is used in google translate where you can speak or type in any one language and it is translated into other language. Here first language is detected on the basis of input given by user and then it is translated on the basis of output language required by the user.

- **Conversational Agents**

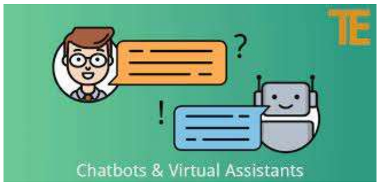

These are important applications of NLP used in chatbots. Basically two types of chatbots are there text based and speech based. Chat bots used in swiggy like applications are text based whereas alexa, siri are examples of speech based chatbots.

- **Knowledge graph and QA Systems-**

It is one of the most powerful application of NLP. If there is a very large database of thing then its entities can be connected logically and a big knowledge graph can be prepared and after that it can be translated into a question answering system. This application is used by google. The data base of google is very big probably one of the largest in the world. Google has extracted different entities and connected them logically to prepare a big knowledge graph. If any question is asked to google like who is the prime minister of china? It will quickly give the answer using its knowledge graph.

- **Text summarization-**

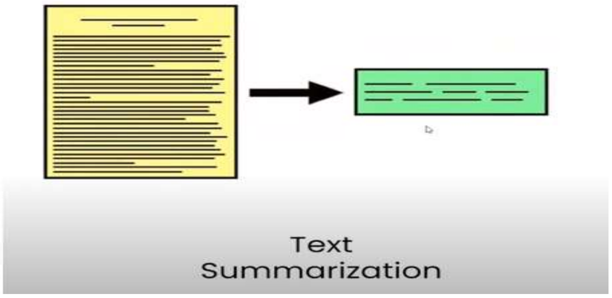

It is also an application of NLP where a summary of big text is presented few words or summarized form. There is a news application inshot which provides us summary of each news in 60 words using text summarization.

- **Topic Modeling –**

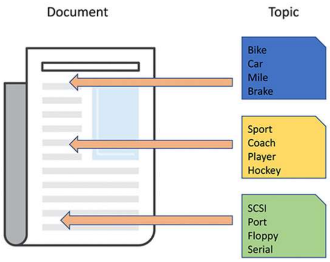

It is also an interesting application of NLP. If you have a very big text you can extract information regarding abstracts topic in the text. Suppose you have a big text about cricket. Now you need to find out it is about what topic on cricket. Is it about IPL, or is it about Sachin, or is it about World cup. This can be done by using topic modeling.

- **Text Generation-**

It is very useful feature used by all of us while typing. The keyboards, which are used by us especially when we are using mobiles, predicts on the basis of our previous typing behavior which word is to be typed next. It enhances our speed while working.

- **Spell checking and grammar correction-**

The tools like grammarly are useful tools which identifies our typo and grammatical errors in text, highlights them and give us suggestions to quickly correct our mistakes.

- **Text Parsing-**

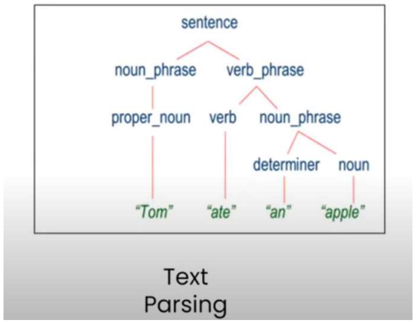

It helps us to grammatically break down our sentence so that we can make machine understand the meaning of the sentence. It is used in making applications like chatbots etc.

- **Speech to text-**

This feature is useful in making conversational agents like Siri and Alexa. Here you speak something which is converted into text and agents try to understand that. Then the reverse process is done and the output or the result is converted into speech. This is also a very important application when you try to talk to a machine and don't want to type.

Approaches to NLP- Different techniques are used to make NLP applications. Basically three methods are used in NLP. These are heuristic approach, machine learning and deep learning techniques.

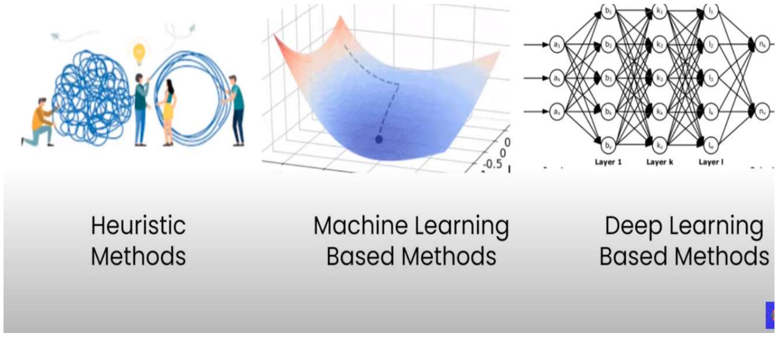

- **Heuristic Approach-**A heuristic technique is any approach to problem solving or self-discovery that employs a practical method that is not guaranteed to be optimal, perfect, or rational, but is nevertheless sufficient for reaching an immediate, short-term goal or approximation. It is rule-based approach. For example you want to make a sentiment analysis app. A simple rule based approach can be to count number of positive and negative words in the text to be analysed. Popular examples include- Regular Expression, Wordnet and Open Mind Common Sense. Its advantage is that it's very quick and accurate. In this method human beings are responsible for creating rules so heuristic approach provides accurate answers. These approaches came into existence in year 1950 and are used presently also.
- **Machine Learning Approach-** . From 1990's the era of machine learning based method changed the scenario. Machine learning method gave a big advantage over heuristic approach. In heuristic approach rule based method is used. As in many open ended problems we cannot create rules so the role of machine learning approaches came into existence. The rules in machine learning approaches are created by algorithms internally. Relationship between input and output is created on the basis of nature of data instead of creating a general rule. So machine learning approaches are used in wider variety of problems and are more powerful as compared to heuristic approach. Machine learning algorithms learn from experiences
- **Deep Learning Based Methods-** After machine learning came the era of deep learning. Deep learning utilizes artificial neural network. Machine learning methods depends on mathematical model whereas deep learning methods are designed to learn from vast amount of data as they are exposed to very large amount of data. These algorithm identify pattern and relationships in data and use these to produce more

accurate result. In NLP deep learning algorithms learn from relationships between word and phrases and produce highly accurate result.

Challenges in NLP- As natural language processing applications are based on natural languages and as we all know that there are many vague things in natural languages which are understood by human beings but are very difficult to be understood by machine. So there are many challenges to NLP. The main challenges are as below

Major Challenges to NLP

Ambiguity- Sometimes what we speak conveys more than one meaning which could be understood by us but it is difficult for machine to understand. For example a sentence like "I have never tasted a cake quite like that one before" The meaning of this sentence can be predicted by human being on the basis of tone of sentence being spoken by a person. Human being can easily understand whether it tastes good or bad. The same sentence if is to be understood by a machine will be difficult to be interpreted as machine understands the meaning of sentence by word to word translation.
Contextual Word- Sometimes the same word conveys different meaning in different context. For example "I ran to store because I ran out of milk" for human being it is very easy to understand the meaning. It means that as there was no milk in my home I went to store to buy the milk. Here the word ran is used at two different places and conveys different meanings which is difficult to be interpreted by machine.
Colloquialism & Slang-There is some common knowledge hidden in our daily routine talks which humans know. I may talk to a person something which means something different. The person communicating with me will understand the meaning but if it is to be understood by a machine it will not be interpreted correctly. For example "Piece of Cake" and "Pulling your Leg". If a person says "This task is a piece of Cake" it means this is a very simple task and "pulling your leg" mean making fun of somebody which could be well understood by a person but it is difficult for machine to understand as the literal meaning of sentences is different.
Synonym- It means different words conveying same meaning. We use these to express our text more effectively but it becomes difficult for machines to understand.
Irony, Sarcasm and Tonal Difference- Sometimes ironical and sarcastic sentences and our tone of speaking changes the whole meaning of a sentence. This is again understood by human beings but not by machines as they interpret meaning by word to word translation.
Spelling Errors- When we read a paragraph and there are some small spelling errors we are able to understand its meaning in context of paragraph but this is not possible for machine as wrong words do not convey any meaning

Creativity-In texts like poems, dialogues and script sometimes the literal meaning of sentences written is different and it wants to express some different feelings .There is lot of creativity involved in writing such text but for a machine interpretation of meaning based on expressions or feeling is challenging task.
Diversity-This is one of the major challenge for NLP. There are near about 5 to 7 thousand languages in world. To understand grammar of all these languages and to decode them is very difficult. NLP applications have been made for standard languages but if NLP application is to be made for a rare kind of language you will not get enough data to train the machine.

As there are number of challenges in front of NLP only 5% of its potential has been utilized.. NLP practitioners are trying best at their level to utilize potential of NLP to its maximum. In the coming scenario NLP applications will bring a revolution for mankind.

Conclusion

NLP is an emerging area in the field of computer science which uses artificial intelligence and has many real life applications. NLP will enable machines to talk to us i.e., human beings in our common language. Chatbots, search engines, robots are some major applications of NLP. The work in this field started about 50 years ago and is still continuing. Advance developments like machine learning and deep learning are further flourishing this field. Though there are some major challenges which are hindering the growth of NLP but NLP engineers and practitioners are working at large level for developing NLP applications, results of which will be beneficial for entire global world.

References :

Singh N (2021 November 25) Introduction to NLP NLP lecture 1 (Video file). Youtube.https://www.youtube.com/watch?v=zlUpTlaxAKI&list=PLKnIA16_RmvZo7fp5kkIth6nRTeQQsjfX

Pais S. et all (2022), NLP-based platform as a service: a brief review, Journal of Big Data, Springer Open 9:54 https://doi.org/10.1186/s40537-022-00603-5
https://journalofbigdata.springeropen.com/articles/10.1186/s40537-022-00603-5

https://en.m.wikipedia.org/wiki/Heuristic#:~:text=A%20heuristic%20(%2Fhj%CA%8A,for%20reaching%20an%20immediate%2C%20short%2D
https://en.m.wikipedia.org/wiki/Natural_language
https://en.m.wikipedia.org/wiki/Natural_language_processing

Madhya Pradesh Journal of Social Sciences
A biannually Journal of M. P. Institute of Social Science Research, Ujjain
ISSN: 0973-855X (Vol 29 No 1, January 2024)

NATURAL LANGUAGE PROCESSING – AN EMERGING FIELD

Dr. Pragati Bhatnagar[1], Dr. Manish Bhatnagar[2]
Assistant Professor, Acharya kalu Kanya Mahavidhyalaya, Jain VishvaBharti Institute Deemed University, LADNU
Assistant Professor, Department of Education,, Jain VishvaBharti Institute Deemed University, LADNU, Rajasthan

Abstract
Natural Language Processing (NLP) means to teach machines to understand and communicate in natural languages. Natural languages are those languages which are spoken commonly by group of persons for communication. Natural languages include Hindi, English, Marathi ,Punjabi etc. There are many application of NLP in our daily life like chatbot, search engines, email-spam filters, alexa etc. NLP is an emerging field of computer science and artificial intelligence and is expected to make revolutionary changes for the benefit of mankind. This paper discusses meaning of NLP, its goal, need and applications in various fields. Further it discusses common NLP tasks, approaches to NLP and the major challenges which are responsible for hindering NLP to grow to its full potential.

Introduction

Natural Language processing is an emerging area in the field of computer science which uses artificial intelligence and has many real life applications like chatbots, search engines, siri, alexa etc. NLP means to teach or train the machine to communicate with human beings in their common speaking language. The work in the field of NLP started near about 50 years back and is still progressive. Initially heuristic approach was used in the field of NLP but with the emergence of machine learning and deep learning this field has started blooming .Still there are many challenges in the field of NLP which are responsible for its slow growth Many NLP engineers and practitioners are working continuously to overcome these challenges and a time will come when NLP will bring revolutionary changes in human life.

Definition of NLP-

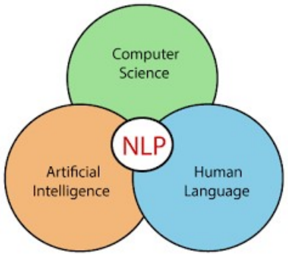

Natural language processing (NLP) is a subfield of linguistics, computer science and artificial intelligence concerned with interactions between computers and human language, in particular how to program computer to process and analyse large amounts of natural language data**.**

Goal of NLP- The goal of NLP is to teach machines to understand natural language. Natural language processing means machine should be able to communicate with us in natural language. It means

whatever instructions we give to machine will be in natural language and machine should also reply us in natural language.

Need of NLP- To understand the need of NLP we should know what is Natural Language? In neuropsychology, linguistics, and philosophy of language, a natural language or ordinary language is any language that occurs naturally in a human community by a process of use, repetition, and change without conscious planning or premeditation. Natural Language can take different forms such as speech or signing. Natural languages are distinguished from constructed and formal languages such as those used to program computers or to study logic. So natural languages are the languages in which we communicate. It may be Hindi, English or any other regional language.

If we compare the growth of human beings to other animals we find that human beings have progressed very much as compared to other species. If we see evolution of human being we find that our ancestor were similar to monkeys but slowly and slowly we progressed and now a days we are going on moon and making big technological developments. The first reason behind this progress is our communication. Using natural languages human beings share their ideas with others; they pass on knowledge to their next generation in the form of speeches, written text, books, literature etc. The second reason behind the progress of human being is industrial revolution. Man made many machines which made the life easy. Many transportation vehicles, electricity and many other inventions transformed the life of human being. Then came the era of computers and internet which made revolutionary changes in human life. Now there is need of one more revolution which will totally change the life of human beings and that is the era of Natural Language Processing where human beings and machine will communicate and respond to each other in a similar way as human beings do with one another.

Real life Applications of NLP- There are many real life applications of NLP. Common are Google Assistant, Siri, Cortona etc. Other major real life applications of NLP are

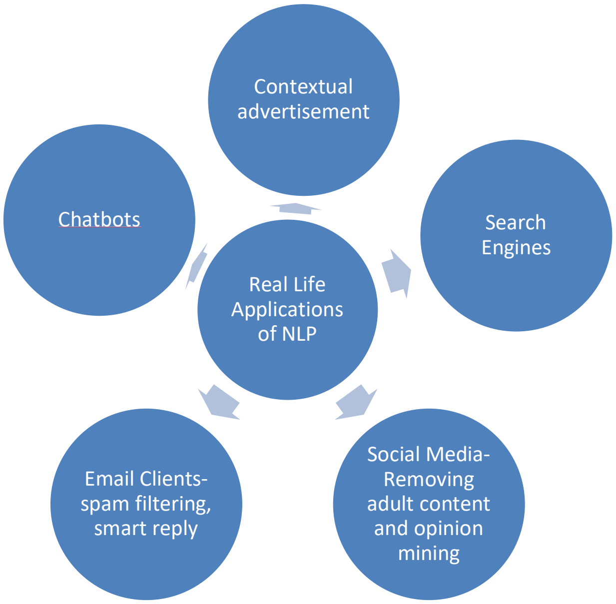

Contextual Advertisement- Previously 20-25 years back when we used to watch matches and other programmes on TV , all the viewers of the country were shown same advertisements. Company used to assume that show the same advertisement to all and those who want to buy the product will purchase it. Now we have NLP and we can process how persons behave, how is their personality, we can show

targeted advertisement to persons. You must have noticed that depending on your instagram profile or facebook profile you are shown different advertisement then your friend. Company used to analyse your profile, posts and comments and then decides whether you are interested in field of sports, education,cosmetics, etc. Depending on your field of your interest targeted advertisement are shown to you. If sometimes we chat on whatsapp with someone on a topic and the switch to some other application we are shown advertisement on the same topic on which we were chatting.

Common NLP Tasks- There are some common NLP tasks using which you can make NLP applications. They are

- **Text Document Classification**

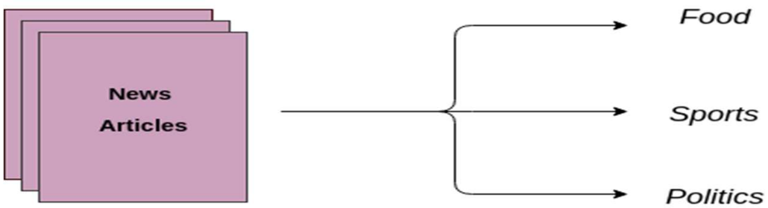

If there is a text and it needs to be assigned a category this can be done using text document classification. For example you have a full text of a news and you want to assign it a category like food, sports, entertainment, politics etc. You can easily do it using text document classification.

- **Sentiment Analysis**

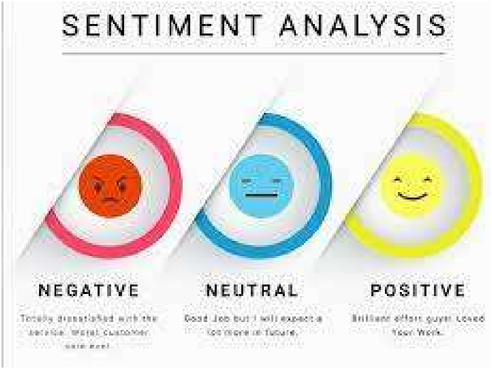

Using sentiment analysis in Social Media or E-commerce you read reviews of people and extract emotions of a people and analyze what they feel about a particular movie or product. Companies use this feature on very large scale. Suppose there is a product of a company and there are one crore reviews of that product. It becomes very difficult to read those review and analyse them. So this can be done by making a sentiment analysis app in NLP such that you can feed all the reviews in the app and it will tell you how much percent of people are talking positively about your product. It will save company's money and time

- **Information Retrieval**

Suppose we have a text and we want to extract entities from it like, time, date, person's name, event name, product name etc. We can do it using information retrieval. Search engine uses informational retrieval internally to search information on web. HP0

- **Parts of Speech tagging**

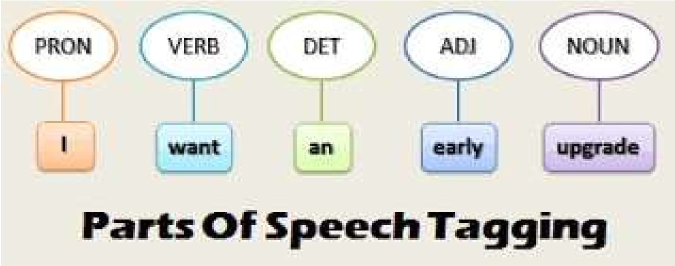

It is a very important text pre-processing step. Here you assign every word of the text a part of speech tag such as noun, pronoun, adjective, verb and determiners etc. It is used if you prepare a question answering system or chat bot where the meaning of a sentence should be clear word by word.

- **Language detection and machine translation-**

It is a very powerful application and is used in google translate where you can speak or type in any one language and it is translated into other language. Here first language is detected on the basis of input given by user and then it is translated on the basis of output language required by the user.

- **Conversational Agents**

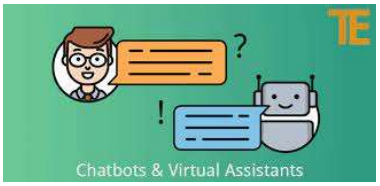

These are important applications of NLP used in chatbots. Basically two types of chatbots are there text based and speech based. Chat bots used in swiggy like applications are text based whereas alexa, siri are examples of speech based chatbots.

- **Knowledge graph and QA Systems-**

It is one of the most powerful application of NLP. If there is a very large database of thing then its entities can be connected logically and a big knowledge graph can be prepared and after that it can be translated into a question answering system. This application is used by google. The data base of google is very big probably one of the largest in the world. Google has extracted different entities and connected them logically to prepare a big knowledge graph. If any question is asked to google like who is the prime minister of china? It will quickly give the answer using its knowledge graph.

- **Text summarization-**

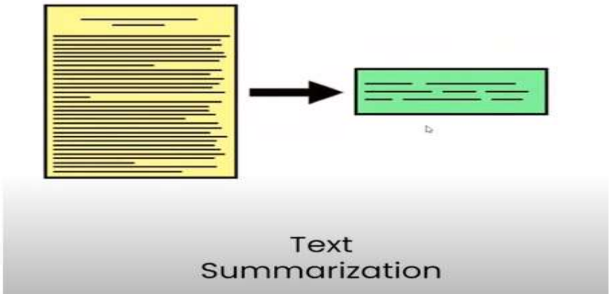

It is also an application of NLP where a summary of big text is presented few words or summarized form. There is a news application inshot which provides us summary of each news in 60 words using text summarization.

- **Topic Modeling –**

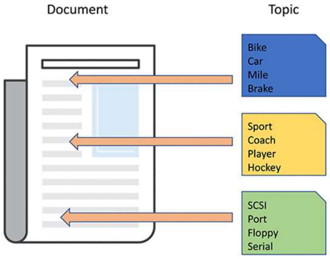

It is also an interesting application of NLP. If you have a very big text you can extract information regarding abstracts topic in the text. Suppose you have a big text about cricket. Now you need to find out it is about what topic on cricket. Is it about IPL, or is it about Sachin, or is it about World cup. This can be done by using topic modeling.

- **Text Generation-**

It is very useful feature used by all of us while typing. The keyboards, which are used by us especially when we are using mobiles, predicts on the basis of our previous typing behavior which word is to be typed next. It enhances our speed while working.

- **Spell checking and grammar correction-**

The tools like grammarly are useful tools which identifies our typo and grammatical errors in text, highlights them and give us suggestions to quickly correct our mistakes.

- **Text Parsing-**

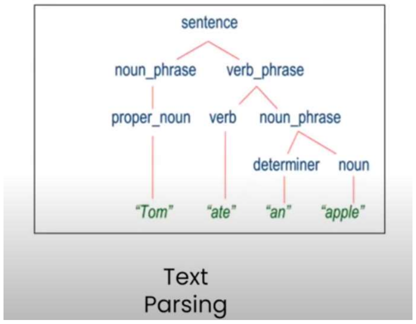

It helps us to grammatically break down our sentence so that we can make machine understand the meaning of the sentence. It is used in making applications like chatbots etc.

- **Speech to text-**

This feature is useful in making conversational agents like Siri and Alexa. Here you speak something which is converted into text and agents try to understand that. Then the reverse process is done and the output or the result is converted into speech. This is also a very important application when you try to talk to a machine and don't want to type.

Approaches to NLP- Different techniques are used to make NLP applications. Basically three methods are used in NLP. These are heuristic approach, machine learning and deep learning techniques.

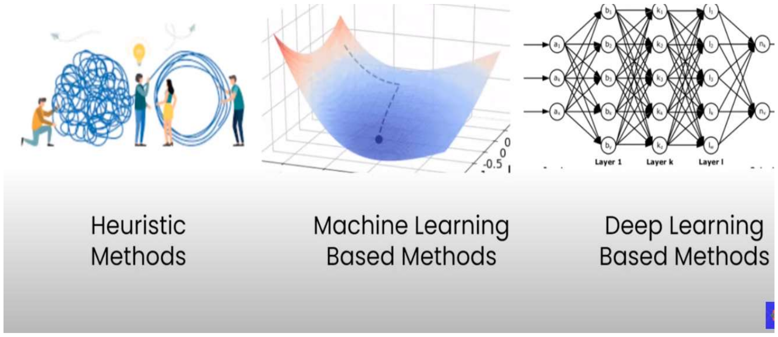

- **Heuristic Approach-**A heuristic technique is any approach to problem solving or self-discovery that employs a practical method that is not guaranteed to be optimal, perfect, or rational, but is nevertheless sufficient for reaching an immediate, short-term goal or approximation. It is rule-based approach. For example you want to make a sentiment analysis app. A simple rule based approach can be to count number of positive and negative words in the text to be analysed. Popular examples include- Regular Expression, Wordnet and Open Mind Common Sense. Its advantage is that it's very quick and accurate. In this method human beings are responsible for creating rules so heuristic approach provides accurate answers. These approaches came into existence in year 1950 and are used presently also.
- **Machine Learning Approach-** . From 1990's the era of machine learning based method changed the scenario. Machine learning method gave a big advantage over heuristic approach. In heuristic approach rule based method is used. As in many open ended problems we cannot create rules so the role of machine learning approaches came into existence. The rules in machine learning approaches are created by algorithms internally. Relationship between input and output is created on the basis of nature of data instead of creating a general rule. So machine learning approaches are used in wider variety of problems and are more powerful as compared to heuristic approach. Machine learning algorithms learn from experiences
- **Deep Learning Based Methods-** After machine learning came the era of deep learning. Deep learning utilizes artificial neural network. Machine learning methods depends on mathematical model whereas deep learning methods are designed to learn from vast amount of data as they are exposed to very large amount of data. These algorithm identify pattern and relationships in data and use these to produce more

accurate result. In NLP deep learning algorithms learn from relationships between word and phrases and produce highly accurate result.

Challenges in NLP- As natural language processing applications are based on natural languages and as we all know that there are many vague things in natural languages which are understood by human beings but are very difficult to be understood by machine. So there are many challenges to NLP. The main challenges are as below

Major Challenges to NLP

Ambiguity- Sometimes what we speak conveys more than one meaning which could be understood by us but it is difficult for machine to understand. For example a sentence like "I have never tasted a cake quite like that one before" The meaning of this sentence can be predicted by human being on the basis of tone of sentence being spoken by a person. Human being can easily understand whether it tastes good or bad. The same sentence if is to be understood by a machine will be difficult to be interpreted as machine understands the meaning of sentence by word to word translation.
Contextual Word- Sometimes the same word conveys different meaning in different context. For example "I ran to store because I ran out of milk" for human being it is very easy to understand the meaning. It means that as there was no milk in my home I went to store to buy the milk. Here the word ran is used at two different places and conveys different meanings which is difficult to be interpreted by machine.
Colloquialism & Slang-There is some common knowledge hidden in our daily routine talks which humans know. I may talk to a person something which means something different. The person communicating with me will understand the meaning but if it is to be understood by a machine it will not be interpreted correctly. For example "Piece of Cake" and "Pulling your Leg". If a person says "This task is a piece of Cake" it means this is a very simple task and "pulling your leg" mean making fun of somebody which could be well understood by a person but it is difficult for machine to understand as the literal meaning of sentences is different.
Synonym- It means different words conveying same meaning. We use these to express our text more effectively but it becomes difficult for machines to understand.
Irony, Sarcasm and Tonal Difference- Sometimes ironical and sarcastic sentences and our tone of speaking changes the whole meaning of a sentence. This is again understood by human beings but not by machines as they interpret meaning by word to word translation.
Spelling Errors- When we read a paragraph and there are some small spelling errors we are able to understand its meaning in context of paragraph but this is not possible for machine as wrong words do not convey any meaning

Creativity-In texts like poems, dialogues and script sometimes the literal meaning of sentences written is different and it wants to express some different feelings .There is lot of creativity involved in writing such text but for a machine interpretation of meaning based on expressions or feeling is challenging task.
Diversity-This is one of the major challenge for NLP. There are near about 5 to 7 thousand languages in world. To understand grammar of all these languages and to decode them is very difficult. NLP applications have been made for standard languages but if NLP application is to be made for a rare kind of language you will not get enough data to train the machine.

As there are number of challenges in front of NLP only 5% of its potential has been utilized.. NLP practitioners are trying best at their level to utilize potential of NLP to its maximum. In the coming scenario NLP applications will bring a revolution for mankind.

Conclusion

NLP is an emerging area in the field of computer science which uses artificial intelligence and has many real life applications. NLP will enable machines to talk to us i.e., human beings in our common language. Chatbots, search engines, robots are some major applications of NLP. The work in this field started about 50 years ago and is still continuing. Advance developments like machine learning and deep learning are further flourishing this field. Though there are some major challenges which are hindering the growth of NLP but NLP engineers and practitioners are working at large level for developing NLP applications, results of which will be beneficial for entire global world.

References :

Singh N (2021 November 25) Introduction to NLP NLP lecture 1 (Video file). Youtube.https://www.youtube.com/watch?v=zlUpTlaxAKI&list=PLKnIA16_RmvZo7fp5kkIth6nRTeQQsjfX

Pais S. et all (2022), NLP-based platform as a service: a brief review, Journal of Big Data, Springer Open 9:54 https://doi.org/10.1186/s40537-022-00603-5
https://journalofbigdata.springeropen.com/articles/10.1186/s40537-022-00603-5

https://en.m.wikipedia.org/wiki/Heuristic#:~:text=A%20heuristic%20(%2Fhj%CA%8A,for%20reaching%20an%20immediate%2C%20short%2D
https://en.m.wikipedia.org/wiki/Natural_language
https://en.m.wikipedia.org/wiki/Natural_language_processing

AI TOOLS - FACILITATING ACADEMIC RESEARCH

Dr. Pragati Bhatnagar[1], Dr. Manish Bhatnagar[2]
[1]Assistant Professor, Acharya kalu Kanya Mahavidhyalaya, Jain Vishva Bharti Inastitute (Deemed University), LADNUN Rajasthan, pragatibhat@gmail.com
[2]Assistant Professor, Department of Education, Jain Vishva Bharti Inastitute (Deemed University), LADNUN Rajasthan, bhatnagarmanish9@gmail.com

Abstract

Today in the present era of digital technology every common man is familiar with the term artificial intelligence. AI means computers or machines which think and act like humans. Though the term originated in the period of 1950's but it was not used by common man. Now a days the term AI is very common and has its applications in every field .We all are using AI in our daily life in some way or another. Various applications of AI are in field of robotics, marketing, healthcare, finance, education, banking and many more. Revolution in field of AI came in the November 2022 with introduction of ChatGPT. It is being used by common man for various purposes. The area of academic research is no longer an exception. Academic researches are carried out in all higher education institutes by students and faculty at various levels. Research paper publications and participation in conferences/seminars are part of academic researches. An academic researcher has to do many additional tasks in addition to performing his research. He has to publish research articles, he may have to prepare teaching content, conduct student related activities, literature review, participate in conferences & seminars, prepare presentation etc. Writing research papers, making presentations, literature review are very time consuming jobs. His lot of time is consumed in these activities and he is not able devote the time required in conducting actual research activities. In this era of artificial intelligence we have many tools which help a researcher in literature review, in academic writing, checking grammar, checking plagiarism, generating graphics, generating citations and references, creating presentations etc. This paper aims to introduce various AI tools which may facilitate the work of a researcher so that he may devote and utilize his time efficiently on major aspects of research.

Key Words – Academic Research, Artificial Intelligence tools

Introduction-

Artificial intelligence (AI) – AI in its broadest sense, is intelligence exhibited by machines, particularly computer systems, as opposed to the natural intelligence of living beings. Work in the area of AI started in 1950's and is still progressive. The term AI was not used by common man previously but now this term is used by layman also. Now days there are many applications of AI. One of the most popular application of AI is ChatGpt which emerged in Nov. 2022 and is used extensively by common man. AI tools are now being used in almost all the fields in present scenario and the fields of academic research is not an exception.

Academic Research-The term academic research means researches carried out in higher education institutes and universities by student as a part of his academic training or by faculties as a part of his academic/research work. The outcomes of research work are published either in form of dissertation or Ph.D. thesis. There are some steps of conducting academic research. They are

- Define Research Problem
- Literature Review or Review of Sources
- Formulate Research Hypothesis /Questions
- Testing of Hypothesis by means of a valid Method

- Interpretation of Data and Drawing Conclusions
- Share or Present your work

The various tasks involved in carrying out academic research may include preparing teaching content, presentations, literature review, content writing, publishing etc. Now a days publishing paper in research journal, writing and presenting paper for seminars & conferences is integral part of academic research. These tasks demand large amount of time of a researcher and he finds himself short of time for conducting actual research work. AI tools in the field of academic research helps the researcher for various tasks such as literature review, organizing and checking manuscripts, checking grammar and plagiarism, generating citation ,graphics creation, writing content in precise manner, making presentations, and many more. These AI tools facilitates researcher to utilize their time to full potential in carrying out research work efficiently.

ChatGPT- It is a generative AI tool and it can be used for different purposes. It may be used for creating framework before writing a paper or creating any content, to rephrase certain section of paper, to check if all the aspects of paper has been covered .To get good results from Chat GPT or any other generative AI tools we should give them proper prompt or input. ChatGPT is a Large language model tool. These tool learn from content which already exist on internet .It collects the information and presents to us on the basis of input given to it. They learn from different sources across the world which is present on web. As the content on net is created by human beings it contains biases. So the data generated by ChatGPT may also contain biases and should be checked properly before use. ChatGPT is a new tool and there are already many tools in the field of academic research.

AI Tools for different aspects of Academic Research-In academic research we can organize AI tools in different categories according to their use

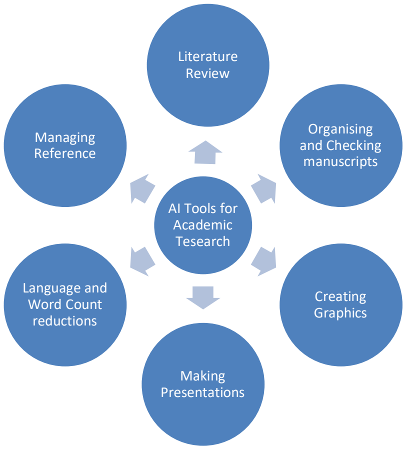

- **Literature Review-** It is the process of finding literature that is appropriate for or related to your research work, reading the literature and compiling them. Literature review is a very tedious task. If we are doing literature review for our Ph.D or another research work and we collect say 100 papers. These 100 papers may be linked to another 50 papers. So to search these papers becomes a very time consuming task. In this digital era this task is very much simplified by using different AI tools like
  - **Litmaps** are used make the search of your literature faster. It changes the traditional way of searching the paper by keyword and the searching the rest of papers by looking at is references. Litmap uses citation network to discover literature that is difficult with other search methods. It helps in making your literature review faster, it prompts you

with an alert when new paper related to your topic comes out, it helps you to discover key authors in your area, identify research gaps and share researchers findings with other researchers.

- **Notes making and assimilating the Literature**- After collecting the paper to understand the content we have to read the papers. Some papers may be relevant some may not be very relevant. Reading all the papers may consume our lot of time. After collecting the paper researcher have to read the papers and find out which paper are relevant for his/her research. Here the AI tools play an important role by providing the gist of research paper.
    - **Paper Digest**- This AI tool summarizes research articles for you. It returns summary of open access full text articles in bulleted form. Each paper can be read in about 3 minutes. So reading the summary researcher can filter out the paper relevant for his research.
- **Organising and Checking manuscripts**- There are AI tools which facilitates researcher in writing research paper, checking for language consistency and grammar.
    - **Paper pal** - It is an AI tool that helps in organising and checking academic writing. It checks entire manuscript on 40 different criterion. It checks whether the title is appropriate, authors information is correct, is abstract properly written and structured, are keywords written. It also checks if citations are proper, are references in accordance with requirement, it checks if figures and table are proper. After checking the paper thoroughly it tells the shortcoming of the paper and what are the modifications required. It acts as a cowriter. Researcher can input his written paper to paper pal. It will check paper from the point of view of language consistency and grammar which is essential if paper is to be published in a standard journal.
- **Creating Graphics-** This tool helps researcher to convert the idea in his mind to some graphical form. It helps you to create graphical abstract. Some journals requires to submit cover images for the journal while submitting the manuscript. This image should reflect the whole idea of paper graphically. The popular AI tools used for this purpose are
    - **Mid Journey and Big-** These tools require the input which researcher want to be reflected as image. Based on his inputs it gives some outputs in form of images. He can select the output which appears to be more appropriate.
- **Managing Reference-**To manage references in research paper various tools like Zotero, Refworks, RefDB, bibme, etc can be used which can help to add citation, quickly make changes in citations, references are automatically generated and their format can be changed. These are not AI tools but just reference management tools. The AI tool for organising reference is thrix.
    - **Thrix -** It is not reference manager. It cannot be integrated with word processors as in case of reference management tools. It is a browser application. If researcher has written his paper for one journal and formatted references in one style and now want to send it to some other journal whose referencing format is different. Researcher can input his references to this tool which will convert it into another set of format.
- **Language and Word Count Reductions**- These tools are helpful for those persons who are not friendly or are from non-English speaking countries and face many problems related to use of correct language, word contradiction, plagiarism checking etc. These tools help a lot in paraphrasing.
    - **Wordtune-** This AI tool helps a lot in writing thoughts in good language. Researcher has to give his ideas in the form of small input and word tune gives two three options

to express researchers' views. He can select the best option as per requirement of paper. Sometimes the same thing is to be expressed in many forms like writing a research paper then researcher may wish to present his work in a conference, it may be used as a part of his bigger research. Wordtune can be very helpful in expressing the same text in different forms. This AI tool has a word and chrome plugin.

- **Quillbot-** It is an AI tool with diverse functions. In addition to paraphrasing it helps in checking grammar and plagiarism, facilitates to write paper correctly, prompting to correct while writing. It also helps in summarizing, generating citation and doing translation. It has extensions for chrome as well as word. It is specifically built to help researchers.
- **Trinka-** It is a tool which covers all most all aspects of research writing like grammar check, paraphrasing, proofreading, consistency check, plagiarism check, act as a journal finder, citation checker and many more. It has browser plugin and Word-Add-in. It is very user friendly as it contains video demonstration for each and every feature available.

- **Making Presentations-** Presenting research work is also a challenging task for researcher. AI tools are also available for creating presentations
    - **Decktopus-** It is an online AI powered presentation tool which helps in creating aesthetic slides, customizable templates and dynamic slide shows in very short time. It gives a very good framework for presentation in which researcher can fit data or text and generate presentation.

Conclusion

Artificial intelligence has entered in every facet of our life. ChatGpt is new application of AI which has made this term more popular among common man. AI is being used in many fields such robotics, agriculture, healthcare, finance, education etc. It plays very important role in the field of academic research too. Academic researches are conducted by both students and faculties at various levels in higher education institutes and universities. It may be part of curriculum for students, in form of Ph.D, research project etc. All academic researches involve various tasks such as literature review, paper writing, creating some teaching content, generating citations and referencing, making presentations and many more. AI tools facilitates researcher for works like literature review, structuring the framework of research paper, checking grammar, plagiarism, generating graphics, citations , reference, creating presentations etc. Previously more than 50% of time of researcher was devoted for these purposes and he could not devote his proper time in actual research work. Now there are many open access, user friendly AI tools which can be utilized by researchers in academic field to utilize their time to full potential.

References-

Malik AR Pratiwi Y. et. al (2023), Exploring Artificial Intelligence in Academic Essay: Higher Education Student's Perspective , International Journal of Educational Research Open, Elsevier Ltd., 100296, vol 5, https://doi.org/10.1016/j.ijedro.2023.100296

https://www.sciencedirect.com/science/article/pii/S2666374023000717?via%3Dihub

Straková Z. (2016), How to Teach in Higher Education: selected chapters, Part of a grant project KEGA 065PU-4/2016 978-80-555-1655-4

https://www.academia.edu/37311990/Academic_Research

Venkatesh V. (2022), Adoption and use of AI tools: a research agenda grounded in UTAUT,

Annals of Operations Research 308(4), DOI:10.1007/s10479-020-03918-9
https://www.researchgate.net/publication/348617316_Adoption_and_use_of_AI_tools_a_research_agenda_grounded_in_UTAUT
https://en.wikipedia.org/wiki/Artificial_intelligence
https://paperpal.com/home?&utm_source=google&utm_medium=cpc&campaignid=20956808372&adgroupid=157485892466&creative=688273019929&keyword=paper%20pal&matchtype=p&device=c&gad_source=1&gclid=EAIaIQobChMI5ODphby3hQMVbheDAx09gQ5hEAAYASAAEgI45fD_BwE
https://www.litmaps.com/about/us
https://www.trinka.ai/
https://www.youtube.com/watch?v=WrvJUH0wWoM&t=1048s

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

वर्ष : 72 • अंक : 12 • मार्च 2023

RNI NO. ASSBIL/2009/31008 ISSN : 2321-4945

एक हृदय हो भारत जननी

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

(भाषा, साहित्य, समाज, कला व संस्कृति विषयक शोध-पत्रिका)

UGC CARE Listed Journal

वर्ष : 72 अंक : 12 मार्च, 2023

परामर्श मंडल

श्री भारतभूषण महंत
कार्याध्यक्ष, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
गुवाहाटी (असम)

प्रो. आर.एस. सर्राजु
सम कुलपति, हैदराबाद विश्वविद्यालय
तेलंगाना-500046

प्रो. प्रदीप के शर्मा
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
सिक्किम केंद्रीय विश्वविद्यालय
काजी रोड, गंगटोक, सिक्किम - 737101

डॉ. दीपक प्रकाश त्यागी
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय
गोरखपुर (उत्तर प्रदेश)

डॉ. दिलीप कुमार मेधि
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

डॉ. अमूल्य चंद्र बर्मन
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

डॉ. अच्युत शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी (असम)

प्रधान संपादक

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया
मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

संपादक

प्रो. मोहन
हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली-1

कार्यकारी संपादक

रामनाथ प्रसाद
प्रभारी साहित्य सचिव
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

एक हृदय हो भारत जननी
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

DWIBHASHI RASTRASEWAK : An UGC CARE Listed Bilingual (Hindi & Assamese) Journal, Focused on Language, Literature Society, Art and Culture, Partially funded by Central Hindi Directorate, Govt. of India and Published by Asom Rastrabhasha Prachar Samiti, Rupnagar, Guwahati-781032.

प्रकाशक :

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

गुवाहाटी-32

संपादकीय कार्यालय :

प्रधान संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

सेवा मंदिर पथ, रूपनगर, गुवाहाटी-32

फोन : 9101541395, 9101541380

ई-मेल : rastrasewak51@gmail.com

मूल्य : रु. 50/- (प्रति अंक)

शब्द संयोजन : रतिकांत कलिता

आवरण पृष्ठ : इंटरनेट से साभार

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की ओर से मंत्री डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया द्वारा सराइघाट फोटो टाइप्स प्रा.लि., इंडस्ट्रियल इस्टेट, गुवाहाटी-781021 में मुद्रित, प्रकाशित एवं प्रसारित।

सर्वाधिकार : असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी-32

'द्विभाषी राष्ट्रसेवक' में प्रकाशित रचनाओं के विचारों से असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति का सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रकाशित सामग्री के उपयोग हेतु प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। सभी कानूनी विवादों का निपटारा गुवाहाटी न्यायालय के अधीनस्थ होगा।

विषय सूची

हिंदी विभाग

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
	संपादकीय		4
1.	भारतीय दार्शनिक परंपरा में योग और शिक्षा	✍ डॉ. सरोज राय	5
2.	राजभाषा हिंदी एवं अनुवाद कार्य के प्रचार-प्रसार में 'शब्द भारती' (हिंदी संसाधन केंद्र), गुवाहाटी का योगदान	✍ डॉ. कुसुम कुंज मालाकार	11
3.	भारतेंदु की गजलों में राष्ट्रीयता	✍ डॉ. जियाउर रहमान जाफरी	19
4.	समकालीन हिंदी कविताओं में अभिव्यक्त विचारों का अंतर्विरोध	✍ डॉ. अखिल चंद्र कलिता	27
5.	रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में नारी की दोहरी भूमिका	✍ अनिता मीणा/डॉ. रेणु वर्मा	33
6.	मन्नू भंडारी की आत्मकथा 'एक कहानी यह भी' में चित्रित समाज का बदलता स्वरूप	✍ कसीरा जहाँ	39
7.	जयशंकर प्रसाद और शरतचंद्र चट्टोपाध्याय के कथा साहित्य में नारी दृष्टि	✍ संगीता पॉल	44
8.	इंदिरा गोस्वामी का उपन्यास 'अ-इतिहास' और राजधानी दिल्ली	✍ मिनहाज अली	49
9.	कृष्णा सोबती के उपन्यास 'समय सरगम' में नारी की संवेदनात्मक दृष्टि	✍ नितुश्री दास	53
10.	बिहार के लोक गीतों में अभिव्यक्त स्त्रियों की सामाजिक दशा	✍ आशुतोष नंदन	57
11.	हिंदू धर्म संस्कृति में नारी का स्थान	✍ आनंद कुमार/ ✍ डॉ. सुनिता सिरोही	64
12.	समिति समाचार		69

অসমীয়া বিভাগ

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
12.	কথনবিজ্ঞানৰ আধাৰত দমিতাৰ দস্তাবেজৰ কথন শৈলীৰ বিশ্লেষণ	✍ ড° গীতাঞ্জলি হাজৰিকা	70
13.	হোমেন বৰগোহাঞিৰ 'হালধীয়া চৰায়ে বাও ধান খায়' উপন্যাসত নিম্নবৰ্গ চেতনা ঃ এক আলোচনা	✍ দীপক দাস	76
14.	চাহ-জনগোষ্ঠীৰ সামাজিক লোকাচাৰ	✍ কস্তুৰী বৰা	81
15.	অসমত উদ্যোগীকৰণৰ বিকাশত সত্ৰৰ ভূমিকা	✍ শ্ৰীমতী উৰ্মিমালা মহন্ত/ ✍ ড° স্মৃতিশিখা চৌধুৰী	89
16.	নগেন শইকীয়াৰ 'ধূলিৰ ধেমালি' আত্মজীৱনীত তদানীন্তন সমাজ জীৱনৰ প্ৰতিচ্ছবি ঃ এক অধ্যয়ন	✍ হিৰণ্য কুমাৰ বৰা/ ✍ প্ৰণিতা কাকতি	97
17.	নৱবৰ্ষৰ অপেক্ষাত (কৱিতা)	✍ ড°ৰাজীৱ শইকীয়া	104

ISSN 2321-4945
UGC CARE Listed Journal
RNI NO. ASSBIL/2009/31008

आलेख

भारतीय दार्शनिक परंपरा में योग और शिक्षा

डॉ. सरोज राय

सहायक आचार्या-शिक्षा विभाग
जैन विश्वभारती संस्थान
(मान्य विश्वविद्यालय)
लाडनूं-नागौर (राजस्थान)-341306
मो. 9468839229
ई-मेल : saroja877@gmail.com

सारांश :

योग आज की आवश्यकता और आने वाले कल की संस्कृति है। समाज की वर्तमान आवश्यकता की पूर्ति हेतु योग के साथ शिक्षा, उच्च शिक्षण संस्थानों की भूमिका भी आवश्यक होने वाली है। आज इस दिशा में दृष्टि की आवश्यकता है कि भौतिकता और आध्यात्मिकता में समन्वय और संतुलन के दृष्टिकोण से मनुष्य का समग्र स्वास्थ्य, शारीरिक मानसिक व आध्यत्मिक स्वास्थ्य के लिए मूल्यवान है। क्योंकि जितनी पुरातन इस देश की संस्कृति और सभ्यता है, उतनी ही पुरातन योग का इतिहास भी है। योग और शिक्षा को यदि अध्यात्म विज्ञान की दृष्टिकोण से देखा जाए तो विभिन्न शारीरिक, मनोशारीरिक, मानसिक एवं भावात्मक पीड़ा पर काफी हद तक नियंत्रण किया जा सकता है। आंतरिक वेदनाओं को कम करने के लिए योगाभ्यास की आवश्यकता होती है।

भारतीय दार्शनिक परंपरा में योग शिक्षा समय के साथ लोगों को मानसिक तनाव से मुक्ति, साथ ही मन और मस्तिष्क को शांति पहुँचाने में लाभकारी है। योग विद्या हमेशा से हमारी धरोहर रही है। इसलिए योग के साथ चित्तवृत्तियों का निरोध करते हुए कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग, ध्यानयोग, अष्टांगयोग के माध्यम से अध्यात्म, विज्ञान का सुंदर समन्वय का विकास करते हुए, स्वाध्याय, सदाचार, अहिंसा, आत्मा के द्वारा आत्मा को देखने का प्रयास करके, ईश्वर की अवस्था को ज्ञान और ज्ञाता के रूप में समझने की सम्यक दृष्टि प्रदान करनी चाहिए।

मुख्य शब्द : भारतीय, दार्शनिक, परंपरा, योग और शिक्षा।

प्रस्तावना :

भारतीय दार्शनिक परंपरा में योग का अत्यधिक महत्व रहा है। भगवान शंकर के बाद वैदिक ऋषि-मुनियों से ही योग का प्रारंभ माना जाता है, इसके बाद महर्षि पतंजलि ने योग को व्यवस्थित रूप प्रदान किया। ''योग के बिना विद्वान का कोई भी यज्ञकर्म सिद्ध नहीं होता। वह योग क्या है ? वक्त संहिता

में कहा गया है-योग चित्तवृत्तियों का निरोध है, वह कर्तव्य कर्ममात्र में व्याप्त है। योगाभ्यास का प्रामाणिक चित्रण लगभग 3000 ई.पू. सिंधु घाटी की सभ्यता के समय की मोहरों और मूर्तियों में मिलता है। योग पर लिखा गया 'योग सूत्र-200 ई.पू.' सुव्यवस्थित प्रामाणिक ग्रंथ है। वैदिक काल में योग का बहुत महत्त्व था। ब्रह्मचर्य आश्रम में वेदों की शिक्षा के साथ ही शस्त्र और योग की शिक्षा भी दी जाती थी। प्रथम बार महर्षि पातंजलि ने वेद में बिखरी योग विद्या का सही-सही रूप में वर्गीकरण किया। योग भारतीय संस्कृति एवं चिंतन धारा की अमूल्य निधि है, जो सृष्टि के आदि काल से लेकर भारतीय परंपरा के सभी दर्शनों में विद्यमान है। योग का संबंध मनुष्य की अंतरात्मा से है। योग वह साधन है, जिसके द्वारा मनुष्य अपने जीवन में दिव्यता अर्थात पूर्णता को प्राप्त करता है। योग अमृत है, योग ब्रह्म विद्या है, जिससे जीव का रूपांतरण ब्रह्म के रूप में किया जा सकता है।

योग विद्या भारतीय संस्कृति के सुदृढ़ आधार स्तंभों में से एक है। योग के द्वारा भारतीय संस्कृति के दार्शनिक पक्षों की पुष्टि हुई है। योग की स्थिति समस्त ऐंद्रिय व्यापारों से विरक्ति में है। इंद्रियों के सारे द्वारों को बंद करके मन को हृदय में तथा प्राण वायु को सिर की चोटी पर स्थिर करके मनुष्य अपने योग में स्थापित होता है। मनुष्य को योग में सफलता या सिद्धि तभी मिलती है, जब वह योग के सिद्धांतों को व्यावहारिक रूप देकर, जीवन में आत्मसात करे। भारतीय ऋषि परंपरा ने जन-जन के लिए प्रेरणादायी मार्गदर्शक की भूमिका निभाई है। योग का प्रारंभ मानव संस्कृति के विकास के साथ आध्यात्मिक उत्थान हेतु हुआ था। भारतीय ऋषियों, संतों ने इस विद्या को विकसित किया तथा मानवीय समस्याओं के समाधान के साथ-साथ नैतिक, आध्यात्मिक, शैक्षिक, धार्मिक, सामाजिक उत्थान हेतु मार्ग दर्शन की भूमिका निभाई।

योग आज की आवश्यकता और आने वाले कल की संस्कृति है। समाज की वर्तमान आवश्यकता की पूर्ति हेतु योग के साथ शिक्षा, उच्च शिक्षण संस्थानों की भूमिका भी आवश्यक होने वाली है। आज इस दिशा में दृष्टि की आवश्यकता है कि भौतिकता और आध्यात्मिकता में समन्वय और संतुलन के दृष्टिकोण से मनुष्य का समग्र स्वास्थ्य, शारीरिक मानसिक और आध्यतिमक स्वास्थ्य के लिए मूल्यवान है। क्योंकि जितनी पुरातन इस देश की संस्कृति और सभ्यता है, उतनी ही पुरातन योग का इतिहास भी है। योग और शिक्षा को यदि अध्यात्म विज्ञान की दृष्टिकोण से देखा जाए तो विभिन्न शारीरकि, मनोशारीरिक, मानसिक एवं भावात्मक पीड़ा पर काफी हद तक नियंत्रण किया जा सकता है। आंतरिक वेदनाओं को कम करने के लिए योगाभ्यास की आवश्यकता होती है। योग की प्रक्रिया में नर्वस सिस्टम पर नियंत्रण पाने की मस्तिष्क की शिराओं एवं तंतुओं को सुव्यवस्थित करने का रहस्य सन्निहित है। भारतीय दार्शनिक परंपरा में योग को शाश्वत विज्ञान, साधना पद्धति की श्रेष्ठ विद्या की उपाधि दी गई है। इस विज्ञान के माध्यम से शरीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक, शैक्षिक, सामाजिक, भावनात्मक स्तर पर स्वास्थ्य शिक्षा, अध्यात्म के समन्वयात्मक स्वरूप को प्राप्त किया जा सकता है।

वैदिक योग परंपरा :

योग का ज्ञान मनुष्य की अंतरात्मा से संबंधित होने के कारण योग का इतिहास वर्तमान से कम-से-कम पाँच हजार वर्ष पुराना है। योग की महत्ता को सिद्ध करते हुए ऋग्वेद में कहा गया है कि योग भारतीय जीवन पद्धति का महत्वपूर्ण अंग है। योग एक शाश्वत नियम है, भारत की अमूल्य वैदिक संपत्ति है। दर्शनशास्त्र महर्षियों की योग विद्या का ही परिणाम हे। स्मृति, पुराण, चिकित्सा, ज्योतिष शास्त्र आदि अन्य समस्त विद्याएँ ऋषियों के योगाभ्यास का ही परिणाम हैं। अर्थात समस्त संस्कृत साहित्य में योग का गुणगान हुआ है। एकाग्रता, समाधि तथा योग तीनों शब्द एक ही अर्थ के प्रतिपादक हैं। संसार का समस्त व्यावहारिक परमार्थिक कार्य बिना योग के पूर्ण नहीं हो सकता तथा मनुष्य अपने लौकिक जीवन की किसी भी अभीष्ट को सिद्ध नहीं कर सकेगा।

वेदों में योग :

योग भारतीय जीवन पद्धति का एक अति विशिष्ट

अंग है, और वेद भारतीय संस्कृति का सबसे प्राचीन ग्रंथ है। सृष्टि के आरंभ में अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा चार ऋषियों को परमात्मा ने वेद ज्ञान प्रदान किया। योग शब्द सर्वप्रथम ऋग्वेद में देखने को मिलता है। योग की महत्ता को सिद्ध करते हुए ऋग्वेद में कहा गया है कि विद्वानों का कोई भी यज्ञ-कर्म बिना योग के सफल नहीं होता है। योग द्वारा ज्ञान प्राप्ति के लिए ऋग्वेद में ईश्वर से प्रार्थना की गई है। ऐसा कहा गया है-ईश्वर की कृपा से हमें योग सिद्धि होकर विवेक ख्याति तथा ऋतंभरा ज्ञान प्राप्त हो।

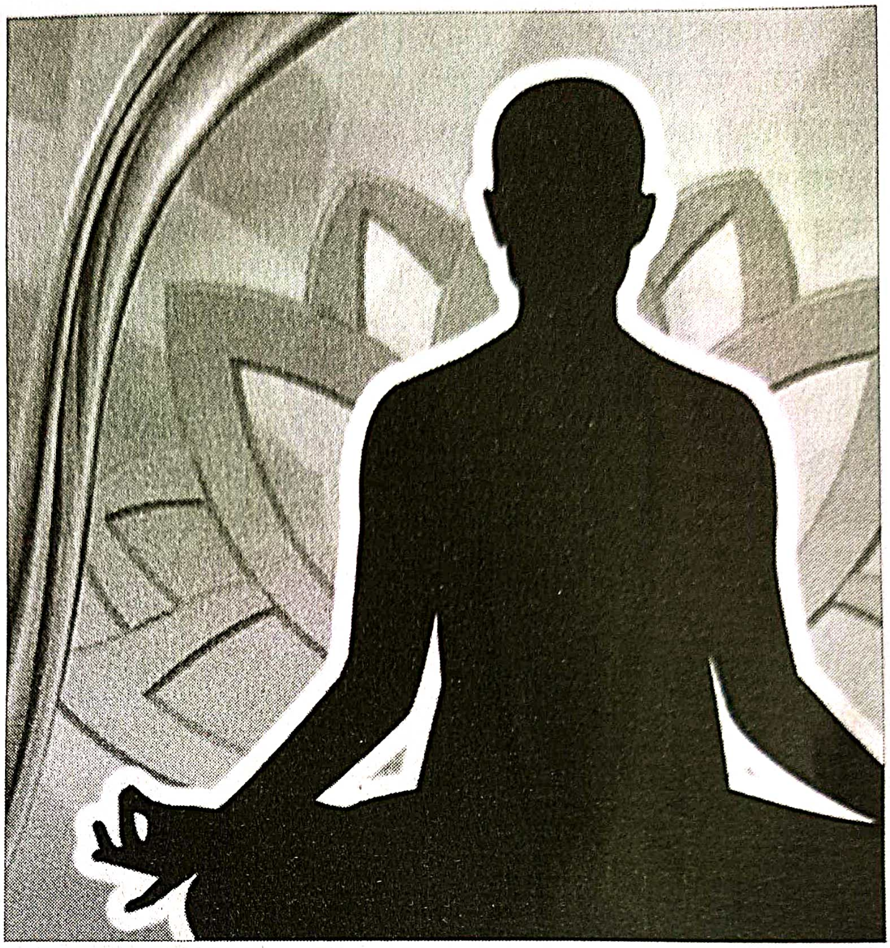

यजुर्वेद में योग :

यजुर्वेद में कहा गया है कि योग के प्रधान लक्ष्य को, वृत्तियों को, तत्व प्राप्ति के दिव्य स्वरूप में लगाएँ। यजुर्वेद में आगे कहा गया है कि योग के माध्यम से हमारी इंद्रियों का प्रकाश बाहर न जाकर बुद्धि और मन की स्थिरता में सहायक हो तथा बाह्य विषयों से लौटकर हमारी इंद्रियों में स्थिरतापूर्वक स्थापित हो जाए। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि योग का निरूपण भले ही पारिभाषिक शब्दों में न हुआ हो, किंतु वेदों में मंत्रों के द्वारा प्राकृतिक वस्तुओं तथा विभिन्न आधारों के माध्यम से स्तुति कर योग के स्वरूप को वर्णित किया गया है।

उपनिषदों में योग :

उपनिषद काल में योग का सर्वांगीण विकास एवं संवर्द्धन हुआ है। इस काल में कठ, मुण्डक, श्वतोश्वर, वृहदारण्यक तथा छन्दोग्योपनिषद आदि में योग की पर्याप्त चर्चा की गई है। उपनिषद में योग शब्द आध्यात्मिक अर्थ में प्रयुक्त हुआ है तथा योग के क्रियात्मक पक्ष के स्वरूप को भी स्पष्ट किया गया है। उपनिषदों की संख्या 108 के लगभग मानी गई है। इसमें कहीं-न-कहीं योग का वर्णन विशेष रूप से किया गया है। योग साधना से होने वाले परिणाम का वर्णन करते हुए कहा गया कि शरीर निरोग हो जाता है, आरोग्य रहता है, विषयों के प्रति लालसा मिट जाती है, नेत्रों को आकर्षित करने वाली कांति प्राप्त हो जाती है तथा आत्मा के शुद्ध स्वरूप का साक्षात्कार होता है। उपनिषदों में योग के विभिन्न रूपों की भी चर्चा की गई है। योग के चार भेद-मंत्र योग, लय योग, राज योग, हठयोग को विस्तारित करते हुए चारों योगों को महायोग की संज्ञा दी गई है। इस प्रकार उपनिषदों में योग-साधना की प्रत्येक विधा का वर्णन सरलता एवं बोधगम्यता से किया गया है। लेकिन मूल रूप से उपनिषदों में योग को आध्यात्मिक अर्थ में प्रयुक्त किया गया है।

महाभारत में योग :

पाँचवें वेद के रूप में स्वीकृत महाभारत भारतीय संस्कृति एवं धर्म का प्रतिनिधि ग्रंथ है। 18 पर्वों में विभक्त इस महाग्रंथ में योग संबंधी प्रक्रियाओं का विस्तृत वर्णन किया गया है। संयम और योगाभ्यास के द्वारा मन को एकाग्र कर योगी के लिए समता और शांति की

प्राप्ति आवश्यक है। महाभारत में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि योगी को समता की शरण में जाना चाहिए। इसके लिए अहिंसा, क्षमाभाव, अपने दोषों को ध्यान के द्वारा नष्ट करना तथा अजर, अमर, सनातन, परमात्मा का आत्मा से अनुभव का वर्णन किया गया है।

श्रीमद्भगवद्गीता :

गीता को आध्यात्मिक ग्रंथों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण ग्रंथ माना जाता है तथा गीता महाभारत का ही एक अंग है। गीता के प्रत्येक अध्याय के साथ 'योग' शब्द जोड़ा गया है। योग की विभिन्न पद्धतियों का गीता में वर्णन किया गया है, क्योंकि गीता का योग विलक्षण है। गीता विशुद्ध रूप से योग शास्त्र है। पातंजल योग दर्शन में चित्तवृत्तियों के निरोध को योग कहा गया है, अर्थात योग के परिणामस्वरूप चित्तवृत्तियों का निरोध हो जाता है। पातंजल योग दर्शन में जो परिणाम बताया गया है, उसी को गीता में योग कहा गया है। गीता में इस योग की प्राप्ति के लिए कर्मयोग, ज्ञान योग, भक्तियोग, ध्यानयोग, अष्टांगयोग आदि साधनों का वर्णन किया गया है। गीता में श्रीकृष्ण ने योग की प्राप्ति के लिए दो साधन बताए हैं–कर्मयोग और सांख्योग। साधक की बुद्धि जब परमात्मा में अचल और स्थिर हो जाती है, उस स्थति में योग की प्राप्ति हो जाती है। गीता को भक्ति, ज्ञान और कर्म की त्रिवेणी माना जाता है तथा इन तीनों योगों का समन्वय ही सबसे बड़ी विशेषता है। इस प्रकार गीता में योग, योगी, और योगाभ्यास का विस्तार से सूत्रात्मक उल्लेख किया गया है।

स्मृति ग्रंथों में योग :

भारतीय दार्शनिक परंपरा में स्मृति ग्रंथ का भी विशेष महत्व है। इसमें योग साधना के परम लक्ष्य की प्राप्ति की बात की गई है। अर्थात योगी को यज्ञ, दान स्वाध्याय सदाचार अहिंसा का पालन करते हुए, योग का आश्रय लेकर योग की क्रिया विधि करनी चाहिए तथा योग से आत्मा के द्वारा आत्मा को देखने का प्रयास करना चाहिए। क्योंकि केवल योग की एक मात्र साधन है, जिससे मनुष्यों को अपनी इंद्रियों को वश में करने की क्षमता उत्पन्न होती है। इस प्रकार स्मृति ग्रंथ में योग का वैज्ञानिक स्वरूप तथा व्यावहारिक स्वरूप प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

पुराणों में योग :

पुराणों में योग का अत्यधिक वर्णन मिलता है, क्योंकि पुराणों का उद्गम प्राचीन काल से ही माना जाता है। यौगिक क्रियाओं का वर्णन विभिन्न पुराणों में देखने को मिलता है, जिनमें भागवत पुराण का स्थान सर्वोपरि है। भागवत पुराण में ध्यान योग यम-नियम तथा अष्टांगयोग आदि अट्ठारह सिद्धियों का उल्लेख प्राप्त है। इसके अतिरिक्त इसमें प्राणायाम के महत्व को दर्शाते हुए कहा गया है कि अगर्भ प्राणायाम से सगर्भ प्राणायाम सौ गुणा अधिक प्रभावशाली होता है तथा योगाख्यान वर्णन में योग का विषद वर्णन किया गया है।

योगवाशिष्ठ में योग :

योगवाशिष्ठ ग्रंथ का उच्च स्थान है। इसमें गुरु वशिष्ठ द्वारा दिए गए उपदेशों के माध्यम से योग का वर्णन किया गया है। योग से मनुष्य अपने वास्तविक स्वरूप को जानकर एकत्व की दृढ़ भावना से शांत होकर आत्मतत्व में विलीन हो जाता है। द्रष्टा के रूप में स्वयं को असत् मानकर आत्म स्वरूप में स्थित होने का तथा योग का अभ्यास करना श्रेयस्कर है। मन की महत्ता को दर्शाते हुए कहा गया है कि मन की पूर्ण शांति के लिए कर्तत्व भाग का त्याग, समाधि का अभ्यास, ज्ञानयुक्ति, अहंभाव का नाश तथा प्राणनिरोध के माध्यम से मन को शांत करना अथवा तत्व का दृढ़ अभ्यास करने तथा ज्ञान की प्राप्ति के लिए सदाचार और सद्विचार के परिपालन को महत्व दिया गया है।

पातंजल योग :

वैदिक योग परंपरा में महर्षि पतंजलि का योग दर्शन और क्रिया विधि अनुपम है। उन्होंने वैदिक संहिताओं और ब्राह्मण ग्रंथों तथा उपनिषदों में वर्णित योग सिद्धांतों एवं यौगिक-प्रक्रियाओं को संकलित एवं परिमार्जित कर नया स्वरूप प्रदान किया है। महर्षि पतंजलि के अनुसार चित्त की वृत्तियों का निरोध अर्थात रोकना ही योग है। पातंजल योग सूत्र का आधार सांख्यदर्शन है।

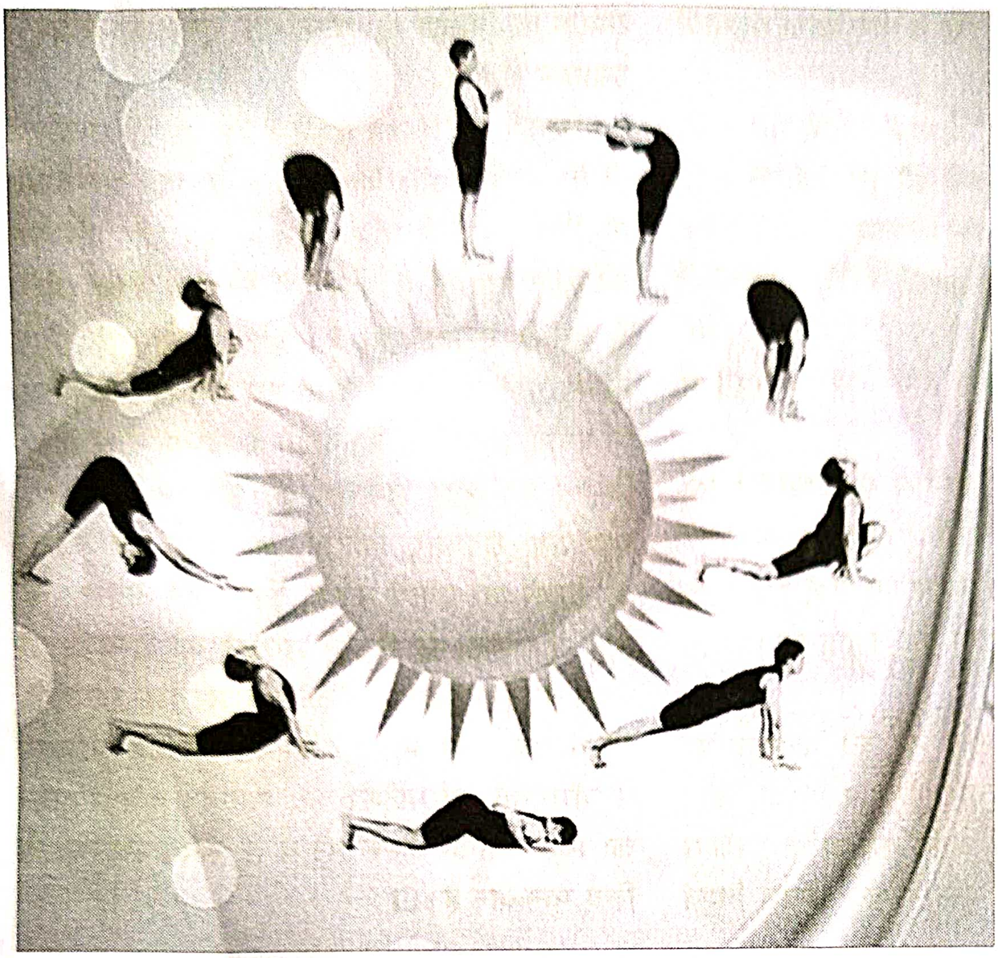

ज्ञान योग-साधना से होने वाले मनुष्य की चेतना विषयों से मुक्त होकर अंतःकरण में प्रवृत्त होती है।

दार्शनिक परम्परा में योग और शिक्षा का निष्कर्ष:

● विद्यार्थियों के मानसिक विकास में योग साधना के माध्यम से चित्तवृत्तियों का निरोध करके ईश्वर अर्थात गुरु को सर्वज्ञता के बीज रूप को समझने योग्य तथा चेतन विषयों के योग-साधना से मुक्त करके अंतःकरण का अनुभव ज्ञान, वैराग्य और समाधि के माध्यम से किया जा सकता है। वर्तमान समय में सापेक्ष ज्ञान की आवश्यकता है। इसके लिए यौगिक क्रियाओं यम-नियम अष्टांग सर्वोपरि है। क्योंकि इसके माध्यम से विद्यार्थियों का मानसिक विकास साथ शारीरिक विकास में सहयोगी भूमिका निभाता है।

● योग वह साधन है, जिसका नियमित अभ्यास करने से शारीरिक एवं मानसिक दोनों ही दृष्टियों से लाभप्रद है। क्योंकि यौगिक क्रियाओं और यौगिक अभ्यास से शरीर और मन दोनों का पूर्णता, सरलता, बोधगम्यता का विकास होता है।

● योगासन तथा अन्य यौगिक क्रियाएँ औषधि और चिकित्सा के रूप में कार्य करते हैं। शरीर का तापक्रम सामान्य बनाए रखने, श्वसन क्रिया को नियंत्रित करने से शारीरिक क्षमता तथा कार्यकुशलता में वृद्धि होती है।

● पाचन संस्थान, रक्त परिभ्रमण, नाड़ी संस्थान, अस्थि संस्थान, उत्पादक-विसर्जक संस्थान, शरीर के उचित विकास तथा आंतरिक स्वच्छता के माध्यम से विजातीय तथा हानिकारक पदार्थों को शरीर से निकाल

पातंजल योग के अनुसार चित्त की वृत्तियाँ पाँच प्रकार की होती हैं- प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा, स्मृति। जिस वृत्ति से बोध अर्थात प्रभा उत्पन्न हुआ हो, उसका नाम प्रमाण है। विपर्यय मिथ्याज्ञान है, जो वास्तविक रूप को नहीं दर्शाता। जो ज्ञान शब्द से उत्पन्न हुआ हो, जो वस्तु की सत्ता की अपेक्षा न रखता हो, उसे विकल्प ज्ञान कहते हैं। जाग्रत तथा स्वप्नावस्था के अभाव को निद्रा कहते हैं। किसी विषय अनुभव तथा अनुभव किए हुए विषय का खो जाना स्मृति कहलाता है। चित्त की वृत्तियों के दो उपाय बताए गए हैं-अभ्यास और वैराग्य, जिनका अनुभव या ज्ञान वेद और शास्त्रों को सुनने से होता है वह समाधि की प्राप्ति में सहायक होता है। चित्त की एकाग्रता और स्थिरता पातंजल योग में ईश्वर प्राणिधान से शीघ्रतम समाधि लाभ होता है।

ईश्वर को सर्वज्ञता के बीज के रूप में कहा गया है तथा ईश्वर की अवस्था को विशेष रूप से समझाने का प्रयास किया गया है। योगी का ज्ञान सातिशय अवस्था अर्थात सापेक्ष होता है। पातंजल योग में प्रत्येक चेतन का

कर रोगमुक्त बनाने में योग विद्या व योग क्रिया सहयोगी होती हैं।

● मनुष्य जीवन के चार उद्देश्य हैं- अर्थ, धर्म, काम मोक्ष। शिक्षा के द्वारा इन उद्देश्यों की पूर्ति सहायक होती है। सजग मस्तिष्क संवेगात्मक विकास में सकारात्मक संवेगों की उपस्थिति में योग साधना आंतरिक वेदनाओं को कम करके भावात्मक पीड़ा पर इंद्रिय निग्रह द्वारा, एकाग्रता समाधि और साधना द्वारा नियंत्रण करने में महत्वपूर्ण है।

● योग क्रिया, यौगिक अभ्यास से विद्यार्थियों की दिनचर्या नियमित, संयमित होती है। इसलिए नैतिकता के सभी शत्रुओं पर विजय प्राप्त करके प्रेम, दया, सहानुभूति तथा इंद्रियों पर प्रशिक्षण, प्राणों की शुद्धता का विकास किया जा सकता है।

● योग इंद्रिय निग्रह तथा मन की चंचलता पर नियंत्रण करने के लिए भाईचारे, प्रेम, सहिष्णुता, शांति सहयोग आत्म संयम, धैर्य आदि का उचित विकास करके, सामाजिक गुणों से युक्त करके, आदर्श विश्व समाज के निर्माण में, सामाजिक गुणों के अर्जन में सहायक होता है।

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि भारतीय दार्शनिक परंपरा में योग और शिक्षा समय के साथ लोगों को मानसिक तनाव से मुक्ति, साथ ही मन और मस्तिष्क को शांति पहुँचाने में लाभकारी है। योग विद्या हमेशा से हमारी धरोहर रही है। इसलिए योग के साथ चित्तवृत्तियों का निरोध करते हुए कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग, ध्यानयोग, अष्टांगयोग के माध्यम से अध्यात्म, विज्ञान का सुंदर समन्वय का विकास करते हुए, स्वाध्याय, सदाचार, अहिंसा, आत्मा के द्वारा आत्मा को देखने का प्रयास करके, ईश्वर की अवस्था को ज्ञान और ज्ञाता के रूप में समझने की सम्यक दृष्टि प्रदान करनी चाहिए। क्योंकि योग ही ऐसा साधन है, जो भौतिकता के अस्तित्व को आध्यात्मिक अस्तित्व में परिवर्तित, परिमार्जित कर, समन्वय और संतुलन का सूत्र स्थापित करके मनुष्य के समग्र स्वास्थ्य के लिए मूल्यवान है। ❑

संदर्भ सूची :

1. आचार्य, अर्जुन (2016) 'योग शिक्षा एवं प्रशिक्षण' आम्रपाली सर्किल, वैशाली नगर, जयपुर, राजस्थान
2. राम, आचार्य शील के (2014) 'सनातन भारतीय योग-साधना एवं उसकी विविध ध्यान विधियां', कल्पना प्रकाशन जहांगीर पुरी, दिल्ली
3. तिवारी, अनिता, तिवारी, एन.के. (2011) ''भारतीय धर्म एवं दर्शन में योग'' यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन प्रकाश दीप बिल्डिंग, अंसारी रोड, दरिया गंज, नई दिल्ली
4. सिंह, राम हर्ष (2011) ''योग एवं यौगिक चिकित्सा'', चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, जवाहर नगर, बंगलो रोड, दिल्ली
5. कुमार, कामख्या, जोशी, भसु प्रकाश (2009) 'योग रहस्य', स्टेण्डर्ड पब्लिकेशंस, राजौरी गार्डन, नई दिल्ली
6. मिश्रा, जे.पी.एन (2008) योग वैशिष्ट्य, जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय, लाडनू, नागौर, राजस्थान
7. कुमार, कामाख्या, चिदानंद मूर्ति, बी.टी. (2007) ''योग महाविज्ञान'', स्टेण्डर्ड प्रकाशक, राजपुरी, उत्तम नगर, नई दिल्ली
8. दशोरा, नंदलाल (1994) ''ध्यान योग चिकित्सा'', रणधीर, प्रकाशन हरिद्वार, उ.प्र.
9. सरस्वती, स्वामी कर्मानन्द (1998) ''रोग और योग'', योग पब्लिकेशंस ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 02, Issue 02, February 2023

डिजिटल साक्षरता और नवाचार शिक्षक

[1]डॉ. सरोज राय
[1]सहायक आचार्या–शिक्षा विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान, (मान्य विश्वविद्यालय) लाडनूं–नागौर

Abstract

वर्तमान और भविष्य की बढ़ती अर्थव्यवस्था और प्रतिदिन की दिनचर्या में सबसे बड़ी भूमिका डिजिटल साक्षरता की है। जहां पूरी दुनिया डिजिटल पर आश्रित हो जायेगी और जिसके लिए सबसे बड़ी चुनौती होगी डिजिटल साक्षरता। जिस प्रकार से मानव को दुनिया देखने के लिए आंखों की आवश्यकता होती है और आंखे ना हुई तो उसे पूरी दुनिया अन्धकारमय लगती है ठीक इसी प्रकार आने वाले समय में मनुष्य को पूरी दुनिया का अवलोकन करना हो तो डिजिटल साक्षरता ही उसे पूरी दुनिया का अवलोकन करने में महती भूमिका निभायेगा। डिजिटल साक्षरता ही डिजिटल कौशल को बढ़ावा देती है, क्योंकि जिस गति से देश में डिजिटलीकरण हो रहा है, हमें भी अपने आप को उस गति के अनुसार दक्ष बनना होगा। जो व्यक्ति डिजिटल रूप से साक्षर नहीं है उनके लिए डिजिटली साक्षरता के महत्त्व को समझना होगा क्योंकि डिजिटलीकरण पारंपरिक और पुराने तरीकों की जगह लेते जा रहा है।

अन्त में यही कहा जा सकता है कि डिजिटल साक्षरता और शिक्षक नवाचार के माध्यम से अर्थात् डिजिटल साक्षरता के अस्तित्व में आने से असीमित संख्या में विद्यार्थी देश–विदेश के शीर्ष शिक्षकों द्वारा ली गयी एक ही कक्षा में उपस्थित हो सकेंगे। सार्वजनिक क्षेत्र के खुले विश्वविद्यालयों में दूरस्थ शिक्षा की वर्तमान लागत को देखते हुए शिक्षा के डिजिटलकरण के माध्यम से सरकारी नीतियों को ठीक प्रकार से शैक्षिक प्रणाली में क्रियान्विति हो सकेगी। वर्चुअल क्लासेज, वेबिनार, ई–मैटेरियल्स, ई–परीक्षा, ई–मूल्यांकन, ई–दीक्षान्त समारोह भी हो रहे हैं। सरकारी नीतियां शिक्षा के डिजिटलीकरण पर जोर देकर शिक्षकों को डिजिटल साक्षरता के लिए बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध करवा कर राष्ट्र को प्रत्येक तकनीकी मोर्चे पर सफल बनाने में सक्षम होगा।

मुख्य बिन्दु– डिजिटल साक्षरता, तकनीकी, नवाचार शिक्षक, सरकारी नीतियां एवं डिजिटलीकरण।

Introduction

वर्तमान और भविष्य की बढ़ती अर्थव्यवस्था और प्रतिदिन की दिनचर्या में सबसे बड़ी भूमिका डिजिटल साक्षरता की है। जहां पूरी दुनिया डिजिटल पर आश्रित हो जायेगी और जिसके लिए सबसे बड़ी चुनौती होगी डिजिटल साक्षरता। जिस प्रकार से मानव को दुनिया देखने के लिए आंखों की आवश्यकता होती है और आंखे ना हुई तो उसे पूरी दुनिया अन्धकारमय लगती है ठीक इसी प्रकार आने वाले समय में मनुष्य को पूरी दुनिया का अवलोकन करना हो तो डिजिटल साक्षरता ही उसे पूरी दुनिया का अवलोकन करने में महती भूमिका निभायेगा। डिजिटल साक्षरता ही डिजिटल कौशल को बढ़ावा देती है, क्योंकि जिस गति से देश में डिजिटलीकरण हो रहा है, हमें भी अपने आप को उस गति के अनुसार दक्ष बनना होगा। जो व्यक्ति डिजिटल रूप से साक्षर नहीं है उनके लिए डिजिटली

साक्षरता के महत्त्व को समझना होगा क्योंकि डिजिटलीकरण पारंपरिक और पुराने तरीकों की जगह लेते जा रहा है। डिजिटल साक्षरता का तात्पर्य यह है कि जब किसी व्यक्ति को समाज में हो रहे तकनीकी विकास और कौशल के बारे में जानकारी होना, जिससे वह इंटरनेट प्लेटफार्म, सोशल मीडिया, मोबाइल फोन का उपयोग अच्छी तरह से करने में सक्षम हो, जिससे वह समाज के साथ अपने आवश्यकता को भी डिजिटल उपकरणों के माध्यम से सामर्थ्यवान हो। भारत सरकार द्वारा डिजिटल इंडिया नाम से अभियान शुरू किया। यह अभियान इंटरनेट के माध्यम से देश में क्रांति लाना तथा साथ ही इंटरनेट को सशक्त करके भारत के तकनीकी पक्ष को मजबूत करना है। यह अभियान भारत सरकार द्वारा ''डिजिटल इंडिया अभियान'' (1 जुलाई, 2015) से शुरू किया गया है। देश को डिजिटल रूप से विकसित करने और देश के आई.टी. संस्थान में सुधार करने के लिए डिजिटल इंडिया महत्त्वपूर्ण कदम है। इसकी विभिन्न योजना जैसे–लॉकर, राष्ट्रीय छात्रवृत्ति पोर्टल, ई–स्वास्थ्य, ई–शिक्षा, ई–साइन का प्रारम्भ करके इस कार्यक्रम का अनावरण किया गया है। 2015 में भारत सरकार द्वारा आयोजित एक विशाल संकलन जिसको डिजिटल उद्देश्य देश को डिजिटल साक्षरता समाज में परिवर्तन करना तथा भविष्य में डिजिटल इंडिया से डाटा का डिजिटलाइजेशन आसानी से होगा, जिससे कागजी कार्य, समय, मानवीय परिश्रम की बचत होगी।

डिजिटल भारत के मुख्य तीन घटक–

- पहला घटक–डिजिटल इन्फ्रास्टक्चर का है, यानि भारत के प्रत्येक क्षेत्र में डिजिटल सेवाएं पहुंचाने के लिए एक मजबूत और बुनियादी ढांचा तैयार करना। इसमें विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों पर अधिक बल दिया गया है, क्योंकि आज भी भारत के कई क्षेत्रों में बिजली और नेटवर्क की पहुंच की क्षमता कम है।
- दूसरा मुख्य घटक–डिजिटल सेवा का वितरण करना है। अर्थात् भारत सरकार द्वारा दी जाने वाली सहायता या सेवा का डिजिटल रूप से सही प्रकार से वितरण करना, जिससे भ्रष्टाचार को काफी हद तक रोका जा सकता है अर्थात् डिजिटली लेन–देन से हमेशा सरकार की पैनी दृष्टि रहेगी।
- तीसरा मुख्य घटक–डिजिटल साक्षरता है। डिजिटल साक्षरता यानि डेस्कटॉप पीसी लैपटॉप, स्मार्टफोन और टैबलेट, जैसे इलेक्ट्रॉनिक्स उपकरणों का ज्ञान होना तथा इनका ठीक से उपयोग होना। भारत के 6 करोड़ ग्रामीण परिवारों को शामिल करने का लक्ष्य रखा गया है तथा इसके अलावा भारत की राष्ट्रीय आप्टिकल फाइबर नेटवर्क परियोजना का संचालन करने वाली ''कंपनी भारत ब्राडबैड नेटवर्क लिमिटेड'' इस अभियामन की संरक्षक है। डिजिटल इंडिया अभियान के स्तंभ–
  - ब्राडबैंड हारवेज सुविधा
  - हर घर में मोबाइल सुविधा
  - लोकहित पहुंच कार्यक्रम
  - ई–सेवाओं की इलेक्ट्रानिक डिलिवरी
  - सभी के लिए सूचना

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 02, Issue 02, February 2023

- आई टी. नौकरियां
- इलेक्ट्रॉनिक उत्पादन
- अर्ली हावेस्टि कार्यक्रम (पूर्व फसल कार्यक्रम)
- सार्वजनिक इंटरनेट एक्सेस प्रोग्राम
- डिजिटल इंडिया के लाभ और हानि।

डिजिटल इंडिया के लाभ–

- भ्रष्टाचार में कमी
- ग्रामीण विद्यार्थियों के लिए तकनीकी शिक्षा
- काला बाजारी और टैक्स चोरी कम होगी।

डिजिटल साक्षरता के माध्यम से शिक्षा के महत्त्व को बढ़ावा देने के लिए सरकार ''स्टेम शिक्षा'' गणित पर केन्द्रित कर रही है और ऐसा माना जा रहा है कि भविष्य में इन चारों क्षेत्रों से शिक्षा प्राप्त किये हुए युवक ही अच्छी नौकरी के हकदार होंगे।

- समाज के प्रत्येक हुनर को अहमियत देगा तथा डिजिटल कार्यों के माध्यम से एक व्यक्ति की निर्भरता दूसरों पर कम करेगा।
- डिजिटलीकरण के प्रति लोगों में जागरूकता पैदा करेगा तथा आधुनिक युग के समाज में भागीदारी को सुदृढ़ बनाएगा।
- इंटरनेट सुविधाओं से किस प्रकार लाभ उठाना है उसकी ट्रेनिंग दी जायेगी।
- इंटरनेट साथी कार्यक्रम के माध्यम से गूगल इंडिया और टाटा ट्रस्ट के द्वारा ग्रामीण भारतीय महिलाओं को डिजिटल साक्षरता की सुविधा प्रदान करना।
- उन्नति परियोजना के द्वारा ग्रामीण क्षेत्र के गरीब छात्राओं को कम्प्यूटर की शिक्षा प्रदान करना।
- डिजिटल साक्षरता कार्यक्रमों का प्रभावी ढंग से क्रियान्वयन शिक्षक वर्ग सुनिश्चित करें तथा ग्रामीण समाज के बीच इसके प्रति जागरूकता पैदा करें।
- प्रत्येक ग्राम पंचायत में शिक्षकों की नियुक्ति करें जिसका कार्य वास्तव में लोगों को डिजिटल साक्षर और सशक्त बनाना हो।
- डिजिटल साक्षरता का अर्थ यह नहीं है कि शिक्षकों द्वारा ब्लैकबोर्ड पर लिखना या ऑनलाईन व्याख्यान बल्कि उसका अर्थ है–प्रौद्योगिकी उपकरण अन्तर क्रियाशीलता अवधि, अध्ययन सामग्री और उपयुक्त शैक्षिक प्लेटफार्मों के माध्यम से कक्षा शिक्षण को संवादात्मक बनाना।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Vol. 02, Issue 02, February 2023

- राष्ट्रीय आप्टिकल फाइबर नेटवर्क के माध्यम से प्रत्येक ग्राम पंचायत में न्यूनतम बैडविथ प्रदान करने की कल्पना प्रदान करती है जिसको शिक्षक वर्ग ई–गवर्नेस, ई–बैंकिग, ई–कार्मस, ई–स्वास्थ्य सेवाओं के माध्यम से उनकी भूमिका नवाचार और प्रौद्योगिकी विकास की दिखा में गेम चेंजर साबित होगी।

- राष्ट्रीय ज्ञान नेटवर्क भारतीय मल्टी–गिगाबिट नेटवर्क है जो विकास और अनुसंधान को बढ़ावा देता है। यह विभिन्न शैक्षणिक नेटवर्कों के माध्यम से जेसे–गरूण, और इंटरसैट के सहयोग से शिक्षक नवाचार के प्रयोग से शोधकर्ताओं और विद्यार्थियों के बीच सहयोग को सक्षम करने तथा डेटाबेस को साझा करने की योजना को संभव बना सकता है। इसका मुख्य उद्देश्य तकनीकी दृष्टि से निरक्षर वयस्कों की मदद करना ताकि वे तेजी से डिजिटल होती दुनिया में अपना स्थान बना सके।

- डिजिटल साक्षरता के उपयोग करने के लिए विद्यार्थियों के ज्ञान प्रदर्शन के स्तर को बढ़ाना तथा आवश्यक कौशल का निर्धारण करना जिससे डिजिटल साक्षरता की जागरूकता के लिए ज्ञान की पहुंच को आसान बनाने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसके अलावा दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए डिजिटल साक्षरता की पहुंच को आसान बनाने की भी आवश्यकता है।

- वर्तमान सदी में डिजिटल साक्षरता में दक्ष/कुशल होना बहुत ही आवश्यकत है, क्योंकि डिजिटल साक्षरता से विद्यार्थियों को परिचित होना आवश्यकत है। शिक्षक वर्ग को शिक्षण उपकरण के रूप में डिजिटल तकनीक का प्रयोग करने से प्रतिबद्धता बढेगी तथा डिजिटल साक्षरता को प्राथमिकता भी मिलेगी। क्योंकि यह शिक्षकों और विद्यार्थियों के लिए सर्फिंग, सोशल मीडिया, ज्ञान, अभ्यास और संचार के मामलों में अच्छी ताकत का निर्माण कर सकते हैं।

- डिजिटल साक्षरता सभी विद्यार्थियों के लिए 21वीं सदी का कौशल है। क्योंकि प्रौद्योगिकी की सर्वव्यापकता के बावजूद कई शिक्षक कठिनाई का अनुभव करते हैं। जबकि डिजिटल साक्षरता सीखने के अवसरों तक पहुंचने के लिए प्रौद्योगिकी के उपयोग को सक्षम बनाती है तथा शिक्षकों को न केवल स्कूली शिक्षा बल्कि भाषा साक्षरता और तकनीकी ज्ञान के माध्यम से भी प्राप्त किया जा सकता है।

- डिजिटल समाज के विकास के साथ–साथ शिक्षकों और छात्रों को कम्प्यूटर साक्षरता का एक निश्चित स्तर हासिल करना होगा। कयोंकि डिजिटल साक्षरता एक प्रकार की साक्षरता है, जहां पर डिजिटल कारक प्रभावी होते हैं। शिक्षकों को डिजिटल उपकरणों के बारे में जानने की आवश्यकता है क्योंकि तकनीकी युग में डिजिटल साक्षरता एक अस्तित्व कौशल है। नई साक्षरता के साथ रणनीतिक ज्ञान के नये रूपों की आवश्यकता है, जिससे शिक्षक की भूमिका बदल गयी है तथा डिजिटल साक्षरता के विकास से शिक्षक का चरित्र परिवर्तनशील बन गया है, जो राष्ट्रों की एकीकृत साक्षरता और इंटरनेट उपकरणों के योगदान का सूचना और संचार में नई सूचना और संचार माध्यमों का भावात्मक कौशल तथा गतिविधियां है।

निष्कर्ष–

अन्त में यही कहा जा सकता है कि डिजिटल साक्षरता और शिक्षक नवाचार के माध्यम से अर्थात् डिजिटल साक्षरता के अस्तित्व में आने से असीमित संख्या में विद्यार्थी देश–विदेश के शीर्ष शिक्षकों द्वारा ली गयी एक ही कक्षा में उपस्थित हो सकेंगे। सार्वजनिक क्षेत्र के खुले विश्वविद्यालयों में दूरस्थ शिक्षा की वर्तमान लागत को देखते हुए शिक्षा के डिजिटलकरण के माध्यम से सरकारी नीतियों को ठीक प्रकार से शैक्षिक प्रणाली में क्रियान्विति हो सकेगी। वर्चुअल क्लासेज, वेबिनार, ई–मैटेरियल्स, ई–परीक्षा, ई–मूल्यांकन, ई–दीक्षान्त समारोह भी हो रहे हैं। सरकारी नीतियां शिक्षा के डिजिटलीकरण पर जोर देकर शिक्षकों को डिजिटल साक्षरता के लिए बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध करवा कर राष्ट्र को प्रत्येक तकनीकी मोर्चे पर सफल बनाने में सक्षम होगा।

संदर्भ–ग्रन्थ सूची–

1. बहरूद्दीन, एम.एफ. इजहार टी.ए.टी. मोहम्मद, ए.एन. और डब्ल्यू. एम. (2016) अफ्रेमवर्ग बेस्ड नॉलेज मैनेजमेन्ट सिस्टम फॉर डायनामिक।
2. मल्होत्रा, महेन्द्र (2012) ''मीडिया सामाजिक राजनीतिक एवं आर्थिक सरोकार, रावत प्रकाशन अंसारी रोड़ दरिया गंज, नई दिल्ली
3. पंकज, विष्णु (2008), जन संचार की विधा, माया प्रकाशन मन्दिर त्रिपोलिया बाजार, राजस्थान
4. गुप्ता, सेन, शैलेष, माथुर, क्षिप्रा (2012) जन सम्पर्क एवं संचार प्रबन्धन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
5. htttps://anvpublication.org/journals/html Paper.aspx?

6- htttps://www.researchgate.net/publication/309506225_Digital_literacy_Awareness_among_st.

Madhya Pradesh Journal of Social Sciences
A biannually Journal of M. P. Institute of Social Science Research, Ujjain
ISSN: 0973-855X (Vol 28 No 10, 2023)

ई–लर्निंग और जन शिक्षा

डॉ. सरोज राय
सहायक आचार्या–शिक्षा विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान, (मान्य विश्वविद्यालय)
लाडनूं–नागौर (राजस्थान)–341306

सारांश

मास मीडिया का अर्थ एक ऐसी तकनीक जिसका उद्देश्य बड़े पैमाने पर दर्शकों तक पहुचना या पहुंचाना। यह जनमानस, संस्कृति, साहित्य, राजनीतिक मुद्दों, सामाजिक मुद्दों, मनोरंजन शैक्षिक मुद्दों आदि के बारें में जानकारी प्राप्त करता है। यह एक प्रकार का संचार है जो दो लोगों के बीच विभिन्न क्षेत्रों के संवाद को मास मीडिया एक साथ व्यापक लोगों के सूचना का प्रसारण करता है। जन संचार माध्यमों का हमारे व्यक्ति और सामाजिक जीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ता है।

मास मीडिया या जन शिक्षा एक महत्वपूर्ण शक्ति है, जिसे एक मध्यस्थ शक्ति के रूप में संदर्भित किया जाता है तथा यह हमारी संस्कृति को दर्शाता है। इसके इलेक्ट्रानिक सिस्टम के माध्यम से शिक्षा व्यवस्था में सूचनाओं का संचार आसानी से किया जा सकता है तथा किया भी जा रहा है लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि सूचनाओं का संचार सकारात्मक रूप में हो। सरकारी नीतियों और शिक्षा सम्बन्धी विज्ञापनों की सूचनाओं को डिजिटल उपग्रहणों और इंटरनेट के माध्यम करते हुए एक श्रृंखला के रूप में किया जाना चाहिए। क्योंकि जन संचार एक संवादात्मक व्यवस्था है तथा सूचना शिक्षा से भिन्न है लेकिन जन संचार भी शैक्षणिक व्यवस्थाओं के लिए कार्य करती है। इलेक्ट्रानिक अधिगम के सभी प्रत्ययों का उपयाग बड़ी तीव्रता से किया जा रहा है।

विद्यालयी शिक्षा और अनुदेशन में ई–लर्निंग का प्रयोग करने कठिनाई तो है, परन्तु जब भी नया परिवर्तन होता है या नयी व्यवस्था होती है तो बाधाएं कठिनाइया तथा विरोध भी होता है। किन्तु शिक्षा के क्षेत्र में प्रगतिशील तकनीकियों या नवाचारों का प्रयोग उसकी उपयोगिता से बढ़ती है। शिक्षा के सार्वभौमिकरण के द्वारा ई–अधिगम जैसा सशक्त माध्यम महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

मुख्य बिन्दु : ई–लर्निंग, जन शिक्षा, मास मीडिया, संचार, विजुवल

प्रस्तावना :

संचार का अर्थ होता है किसी वस्तु, विचार को अन्य लोगों तक पहुंचाना या किसी वस्तु, विचार के बारे में एक व्यक्ति से लेकर जन समूह तक विस्तारित करना। जिस माध्यम के द्वारा यह कार्य किया जाता है, उस माध्यम को मीडिया या संचार के साधन कहते हैं और जब हम संचार के साधनों के द्वारा बातें या विचार लोगों तक पहुंचाया जाता है तो उसे जनसंचार या Mass Media कहते हैं। टेलीविजन, रेडियों, अखबार संचार माध्यमों का एक ऐसा रूप जिसकी पहुंच देश–विदेश के जनसमूह तक है। इसीलिए इसे संचार के माध्यम या मास मीडिया कहते हैं। मास मीडिया कोई भी

रूप जिसका उपयोग बड़े दर्शकों के लिए संचार में किया जाता है, जनसंचार माध्यम सूचना प्रसारित करने के लिए आवश्यक है, इसमें बड़ी संख्या में श्रोता वर्ग शामिल होते हैं।

मास मीडिया का अर्थ एक ऐसी तकनीक जिसका उद्देश्य बड़े पैमाने पर दर्शकों तक पहुचना या पहुंचाना। यह जनमानस, संस्कृति, साहित्य, राजनीतिक मुद्दों, सामाजिक मुद्दों, मनोरंजन शैक्षिक मुद्दों आदि के बारें में जानकारी प्राप्त करता है। यह एक प्रकार का संचार है जो दो लोगों के बीच विभिन्न क्षेत्रों के संवाद को मास मीडिया एक साथ व्यापक लोगों के सूचना का प्रसारण करता है। जन संचार माध्यमों का हमारे व्यक्ति और सामाजिक जीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ता है।

मास मीडिया एक महत्वपूर्ण शक्ति है समाजशास्त्री इसे एक मध्यस्थ संस्कृति के रूप में संदर्भित करते हैं, क्योंकि मास मीडिया संस्कृति को दर्शाता और बनाता है। मास मीडिया के प्रमुख छः प्रकार है, पहला पारंपरिक मीडिया जो सूचना स्थानांतरण के स्वदेशी तरीकों पर आधारित है, जैसे–नाटक, पेंटिग, गाने। दूसरा प्रकार प्रिंट मीडिया है, जिसमें आडियों, विजुअल या आडियों विजुवल इलेक्ट्रिकल सिस्टम के माध्यम से संचार शामिल है। इसमें टी.वी. रेडियों और चल चित शामिल है। चौथा प्रकार बाहरी मीडिया का है, जिसमें बाहरी चैलनों के माध्यम से संचार शामिल है–इसमें होर्डिंग, पोस्टर वालस्केप, और काम्पर्क विज्ञापन शामिल है। पांचवा प्रकार ट्राजिंट मीडिया है, जिसमें आवाजाही के दौरान सूचनाओं का संचार होता है। जैसे–रेलवे स्टेशनों में ट्राजिंट विज्ञापन और बस विज्ञापन शामिल है। छठवां प्रकार डिजिटल मीडिया विज्ञापन जो इंटरनेट के माध्यम से संचार प्रदान करता है। डिजिटल मीडिया में सोशल मीडिया और एस.सन.एस साइट, ईमेल, वेबसाइट और इंटरनेट प्रोटोकाल टेलीविजन शामिल है।

समाचार पत्र एक ऐसा प्रकाशन है जो कम लागत वाले कागजों पर छपा होता है। समाचार पत्र मूल समाचार मंच है, जो सरकारी नीतियों और लक्षित विज्ञापन जैसी सार्वजनिक सूचनाओं को पारित करने में सहायक है। रेडियों चुंबकीय तरंगों के माध्यम से संचार को शामिल करता है। वर्तमान में इसका प्रसारण डिजिटल उपग्रहों और इंटरनेट के माध्यम से होता है। टेलीविजन चलती वस्तुओं और ध्वनियों के माध्यम से छवियों को वितरित करता है। यह एक जनसंचार माध्यमों में से एक आवश्यक अंग बन गया है। इंटरनेट जन संचार का एक महत्वपूर्ण उपकरण है। यह जनसंचार की अधिक संवादात्मक व्यवस्था है जो नेटवर्क की एक श्रृंखला के रूप में कार्य करता है। यह कई प्रकार के नोड्स, सर्वर और कम्प्यूटर के बीच इंटरकनेक्शन के कारण विश्व स्तर पर आसानी से उपलब्ध है। इंटरनेट ने सूचना के प्रसार को बढ़ावा दिया है। इसका प्रयोग वैश्विक स्तर पर दर्शकों के साथ संवाद करने की क्षमता को बढ़ाता है तथा जनसंचार के इमेजरी और आडियों दोनों मोड को बढ़ाता है।

जनसंचार माध्यम सूचना शिक्षा से भिन्न है। शिक्षा पूर्व निर्धारित उद्देश्यों के साथ व्यवस्थित रूप से संगठित सूचना है। जनसंचार भी शैक्षिणिक संस्थानों के लिए कार्य करते हैं। इलेक्ट्रानिक लर्निंग को संक्षिप्त रूप में लर्निंग कहते हैं। इसका शाब्दिक अर्थ है ऐसे अधिगम या सीखना जिसमें इलेक्ट्रानिक उपकरणों के माध्यम या साधनों की सहायता से सीखना। विद्यार्थियों को उत्तम सुविधाएं एवं गुणवत्तापरक शिक्षा उपलब्ध कराने के उद्देश्य से विभिन्न शैक्षिक संस्थाओं विशिष्ट रूप से

विश्वविद्यालयों में ईलर्निंग केन्द्रों की स्थापना पर बल दिया जा रहा है, जिससे एक साथ हजारों लाखों विद्यार्थियों को एक साथ सामग्री तथा अन्य सुविधाएं प्रदान की जा सकती है। कोरोना महामारी में ई–लर्निंग का प्रयोग करके देश के करोड़ों विद्यार्थियों को शिक्षा प्रदान की गयी। वैसे तो उच्च शिक्षा संस्थानों में सन् 2006 से ही हजारों विद्यार्थियों ने ऑनलाइन अधिगम में भाग लिया। कई शोध अध्ययनों के निष्कर्षों से यह पता चलता है कि विद्यार्थी ई लर्निंग से सतुष्ट है। परम्परागत अधिगम प्रणाली की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली है। व्यक्तिगत संस्थाओं में इस अधिगम प्रणाली का अधिकतम उपयोग किया जाने लगा है। क्योंकि यह प्रणाली अपेक्षाकृत अपव्ययी है। ई–अधिगम शिक्षा का एक नवीन प्रत्यय है। इसके अन्तर्गत इन्टरनेट तकनीकी का उपयोग पाठ्यवस्तु के प्रस्तुतीकरण एवं संचार में किया जाता है। इसके अन्तर्गत नवीन प्रत्ययों का भी विकास हुआ है जैसे कम्प्यूटर इंटरनेट, ई लर्निंग प्रणाली आभासी कक्षा (virtual classroom) इट्रानेट एक्सट्रानेट, नेटवर्किंग प्रणाली, वेबसाइट, ई–स्कूल प्रणाली आदि। वर्तमान समय में इन सभी प्रत्ययों का उपयोग बड़ी तीव्रता से हो रहा है।

इलेक्ट्रानिक अधिगम को ई–अधिगम भी कहते हैं। इसे कम्प्यूटर प्रोत्साहित अधिगम भी कहते हैं। ई–अधिगम को कई अर्थों में प्रयुक्त किया जाता है।

ई–अधिगम एक व्यापक प्रत्यय है इसका प्रयोग संचार नेटवर्क के माध्यम सभी स्थानों के लिए किया जाता है। यह शिक्षा की वैकल्पिक प्रणाली नहीं है, बल्कि एक नवीन शिक्षा की प्रणाली है जिसके अर्न्गत निम्न बिन्दुओं को समाहित किया जाता है–

1. आनलाइन अधिगम, 2. आनलाइन शिक्षा, 3. दूरवर्ती शिक्षा 4. तकनीकी आधारित प्रशिक्षण, 5. वेब आधारित प्रशिक्षण, 6. दूरवर्ती अधिगम, 7. कम्प्यूटर आधारित प्रशिक्षण, 8. अवलम्ब अधिगम, 9. मिश्रित अधिगम, 10. पूर्ण ई–लर्निंग। इसमें नेटवर्क होता है। सूचनाओं में सहभागिता होती है और अभिसूचनाओं का भण्डारण होता है तथा संचार हेतु इंटरनेट की प्रामाणिक तकनीकियों का उपयोग किया जाता है। यह परंपरागत प्रणाली से अधिक सार्थक और प्रभावी होता है।

विशेषताएं :

- विद्यार्थी अपनी गति से सीखता है। इसे स्वाध्याय भी कहा जाता है।
- यह स्वतः निर्देशित होता है तथा बहुमाध्यमों का प्रयोग किया जाता है।
- विद्यार्थी केन्द्रित होता है, जिसमें भौगोलिक बाधाओं का समाधान होता है।
- अधिक संख्या में विद्यार्थियों को सम्मिलित किया जा सकता है।
- ई–लर्निंग शिक्षक–शिक्षार्थियों विशेषज्ञों में शिक्षण कौशल विकसित करके, विभिन्न प्रकार के ऑनलाइन प्लेटफार्मों के माध्यम से ज्ञान साझा करने की एक परम्परा है।

- डिजिटल और स्व आरंभित शिक्षा प्राप्त की जा सकती है। इसमें ऑनलाईन और मिश्रित शिक्षा के माध्यम से भी शिक्षण कार्य संचालित किया जाता है।

- वेब पेज पर रिकार्ड होती है, विद्यार्थी अपनी सुविधा के अनुसार उसका प्रयोग कर सकता है तथा दिये गये कार्य को पूरा करके वेब पेज या मेल के माध्यम से शिक्षक को प्रेषित कर सकता है।

- ई–शिक्षा प्र्यावरण की दृष्टि से भी लाभदायक होते हैं क्योंकि यहां पर जानकारी किताबों बजाय वेब पेज अधारित पोर्टल पर स्टोर किया जाता है।

- इंटरनेट और कम्प्यूटर कौशल का ज्ञान विकसित करता है जो विद्यार्थियों के लिए उपयोगी होती है।

- विद्यार्थी किसी भी समय कही भी अपनी सुविधा के आधार पर शैक्षिक कार्य कर सकता है।

- बहु माध्यमों का उपयोग

- विद्यार्थियों को अपनी गति से सीखने का अवसर

- अधिगम स्वनिर्देशित होता है विद्यार्थी अपनी आवश्यकता के अनुसार चयन करता है।

- कक्षा अधिगम में मितव्ययी तथा तीव्र होता है।

- अधिगम विद्यार्थी केन्द्रित होता है तथा कम्प्यूटर एवं इंटरनेट कौशलों का विकास तथा भौगोलिक बाधाओं का समाधान होता है।

- संचार माध्यमों तथा विधियों, अन्तःक्रिया का अवसर तथा अपनी आवश्यकतानुसार ऑनलाईन किया जाता है।

ई–लर्निंग के उद्देश्य

- वृहद तकनीकी अधिगम का विकास

- उच्च शिक्षा को मितव्ययी बनाना

- शोध अध्ययनों में वृद्धि

- शिक्षा प्रक्रिया की व्यवस्था

- मिश्रित माध्यमों को प्रोत्साहन

- सभी को समान अवसर
- अधिगम मुक्त सीखने को प्रोत्साहन
- पाठ्यवस्तु का संचार तथा सम्प्रेषण

ई–अधिगम के प्रारूप व शैलियां

1. अवलंब अधिगम (Support Learning)
2. मिश्रित अधिगम (Mixed Learning)
3. पूर्णरूपेण ई–अधिगम (Complete Learning)

शिक्षा में ई–लर्निंग के विकास के कारण : संयुक्त राज्य अमेरिका में उच्च शिक्षा के 30 प्रतिशत से अधिक विद्यार्थी कम से कम एक पाठ्यक्रम ऑनलाईन ले रहे हैं। एक अध्ययन के रिपोर्ट के अनुसार 2023 तक शिक्षा के क्षेत्र में 15 मिलियन उपयोग कर्ता बढ़ जायेंगे।

निष्कर्ष :

मास मीडिया या जन शिक्षा एक महत्वपूर्ण शक्ति है, जिसे एक मध्यस्थ शक्ति के रू^प में संदर्भित किया जाता है तथा यह हमारी संस्कृति को दर्शाता है। इसके इलेक्ट्रानिक सिस्टम के माध्यम से शिक्षा व्यवस्था में सूचनाओं का संचार आसानी से किया जा सकता है तथा किया भी जा रहा है लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि सूचनाओं का संचार सकारात्मक रूप में हो। सरकारी नीतियों और शिक्षा सम्बन्धी विज्ञापनों की सूचनाओं को डिजिटल उपग्रहणों और इंटरनेट के माध्यम करते हुए एक श्रृंखला के रू^प में किया जाना चाहिए। क्योंकि जन संचार एक संवादात्मक व्यवस्था है तथा सूचना शिक्षा से भिन्न है लेकिन जन संचार भी शैक्षणिक व्यवस्थाओं के लिए कार्य करती है। इलेक्ट्रानिक अधिगम के सभी प्रत्ययों का उपयाग बड़ी तीव्रता से किया जा रहा है।

विद्यालयी शिक्षा और अनुदेशन में ई–लर्निंग का प्रयोग करने कठिनाई तो है, परन्तु जब भी नया परिवर्तन होता है या नयी व्यवस्था होती है तो बाधाएं कठिनाइया तथा विरोध भी होता है। किन्तु शिक्षा के क्षेत्र में प्रगतिशील तकनीकियों या नवाचारों का प्रयोग उसकी उपयोगिता से बढ़ती है। शिक्षा के सार्वभौमिकरण के द्वारा ई–अधिगम जैसा सशक्त माध्यम महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ–सूची

1. मल्होत्रा, महेन्द्र (2012), मीडिया सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक सरोकार, रावत प्रकाशन, अंसारी रोड दरिया गंज नई दिल्ली।
2. मल्होत्रा, महेन्द्र (2012), मीडिया सामाजिक एवं राजनीतिक, रावत प्रकाशन, अंसारी रोड दरिया गंज नई दिल्ली।

3. पंकज, विष्णु (2008), जन संचार की विधा, माया प्रकाशन मन्दिर त्रिपोलिया बाजार
4. पंकज, विष्णु (2010) भाषायी पत्रकारिता और जन संचार
5. सेन गुप्ता, सैलेश, माथुर, क्षिप्रा, (2012), जनसम्पर्क एवं संचार प्रबन्धन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी राजस्थान, जयपुर
6. पारख, जवरीमल्ल (2000) जन संचार माध्यमों का वैचारिक परिप्रेक्ष्य, श्याम बिहारी राय ग्रन्थ शिल्पी प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली
7. सिंह, धर्मेन्द्र (2010) सूचना समाज और संचार, नेहा पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटस नई, दिल्ली
8. भार्गव संतोष (2023), पत्रकारिता एवं जन सम्पर्क के.के. पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

कोरोना काल के दौरान ऑनलाइन कक्षा का बच्चों की विभिन्न आदतों एवं स्वास्थ्य पर प्रभाव

किशोर शेखावत

शोधार्थी, जैन विश्वभारती संस्थान, मान्य विश्वविद्यालय, लाडनूँ, नागौर

ई–मेल kishorshekhawat1629@gmail.com

डॉ. सरोज राय

सहायक आचार्य, शिक्षा विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान, मान्य विश्वविद्यालय, लाडनूं, नागौर (राज.)

ई–मेल saroja877@gmail.com

सारांश :–

आदिकाल से ही शिक्षा सभ्यता का आधार मानी जाती है। भारत में शिक्षा का महत्व आदिकाल से ही रहा है। शिक्षा मानव की अन्तर्निहित क्षमताओं तथा उसके व्यक्तित्व का विकास करने वाली एक प्रक्रिया है। शिक्षा एक बालक का सर्वांगीण विकास करती है। शिक्षा मूल रूप में समाज तथा व्यक्तित्व निर्माण करने की एक प्रक्रिया है। समाज का स्वरूप बदलने के साथ–साथ शिक्षा के स्वरूप में भी समय–समय पर परिवर्तन हुआ है। विश्व में कोरोना जैसी वैश्विक महामारी का एक ऐसा दौर आया जिसने सम्पूर्ण शिक्षा जगत का कायापलट कर दिया। कोरोना जैसी महामारी ने विकास के सभी क्षेत्र प्रभावित किये परन्तु शिक्षा जगत को गम्भीर रूप से प्रभावित किया। कोरोना जैसी वैश्विक महामारी ने स्कूलों में ताले लगवा दिये और किताबें

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

बस्तों में बन्द हो गई। मानव इतिहास में पहली बार वैश्विक स्तर पर बच्चों की एक पूरी पीढ़ी की शिक्षा बाधित हुई। ऐसे में छात्रों के भविष्य व शिक्षा के महत्व को ध्यान में रखते हुए ऑनलाईन शिक्षा का प्रारम्भ एक विकल्प के रूप में किया गया। ऑनलाईन शिक्षण कोरोना संकट के निराशा भरे माहौल में आशा की एक नवीन किरण लेकर आया और बच्चे लैपटॉप, सैलफॉन, टैब आदि के माध्यम से शिक्षा ग्रहण करने लगे। इस प्रकार इस वैश्विक महामारी में ऑनलाईन शिक्षा शिक्षण का माध्यम तो अच्छा था परन्तु बच्चों की विभिन्न आदतों को गम्भीर रूप से प्रभावित किया। यह पेपर ऑनलाइन शिक्षा ने बच्चों की आदतों पर क्या प्रभाव डाला का विश्लेषण करता है।

मुख्य शब्द – कोरोना काल, प्रभाव, ऑनलाइन, शिक्षा–शिक्षण, विभिन्न आदत, स्वास्थ्य

प्रस्तावना :–

कोरोना एक ऐसी वैश्विक महामारी जिसने मानव जीवन के विकास के सभी क्षेत्रों को प्रभावित किया। मानव विकास का मूल साधन शिक्षा जिसको कोरोना जैसी महामारी ने हिलाकर रख दिया। कोरोना महामारी से अचानक हुए इस परिवर्तन ने सभी राज्यों, वर्गों, जाति, लिंग और सभी क्षेत्रों के बच्चों की एक बड़ी संख्या को प्रभावित किया। बच्चे एक प्रकार से कैदखानों में बन्द हो गये। महामारी के कारण स्कूलों के अचानक बन्द हो जाने के कारण पारम्परिक कक्षा आधारित भारतीय स्कूली शिक्षा प्रणाली अब एक अनियोजित ऑनलाइन आधारित शिक्षा प्रणाली के रूप में स्थानान्तरित हो गई। अनियोजित इसलिए कि हम ऑनलाइन शिक्षा के प्रति ना ही मानसिक रूप से तैयार थे ना ही तकनीकी रूप से। भारत की 66 प्रतिशत आबादी गांवों में रहती है जहां सब जगह नेटवर्क की पहुंच ही नहीं है। बहुत सारे गांव ऐसे हैं जहां आज भी बिजली की समस्या लगातार बनी रहती है। एन.सी.ई.आर.टी. के एक सर्वे से पता चला कि भारत के 27 प्रतिशत छात्रों के पास सेलफोन और लैपटॉप नहीं

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

है। 28 प्रतिशत छात्र छात्राऐं बार–बार बिजली जाने से परेशान है। 33 प्रतिशत छात्र मानते हैं कि ऑनलाइन कक्षा में ध्यान केन्द्रित करने में कठिनाई होती है। इस प्रकार कोरोना का देश की शिक्षा पर बड़ा असर पड़ा। यूनेस्को की एक रिपोर्ट के अनुसार कोरोना से भारत में लगभग 32 करोड़ छात्रो की शिक्षा प्रभावित हुई और वैश्विक स्तर पर इस महामारी ने दुनिया के 193 देशों के 157 करोड़ छात्रों की शिक्षा को प्रभावित किया।

ऑनलाइन शिक्षा से बच्चों की मनोस्थिति पर भी गहरा प्रभाव पड़ा। मोबाइल पर बढ़ते स्क्रीन टाइम के कारण छात्रों में कुंठा, व्यग्रता, असहजता, तनाव, अरूचि, चिड़चिड़ापन, क्रोध, भय, अनिश्चितता, दोस्तों से दूरी का गम पैदा हुआ हैं, इस वजह से छात्र–छात्राओं को शारीरिक, भावनात्मक व मानसिक स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। ऑनलाइन पढ़ाई की आड़ में ऑनलाइन गेम या अन्य प्रकार के सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर सामग्री देखने की आदत बच्चों को लग गई हैं। मनोवैज्ञानिकों के पास हर रोज 5 से 7 शिकायतें आ रही हैं कि बच्चे घण्टो मोबाइल पर लगे रहते हैं। जब माता–पिता फोन मांगते हैं तो घर में तोड़ फोड शुरू कर देते हैं। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक डॉ. रविन्द्र पुरी ने बताया कि विद्यार्थियों की समस्या इस कदर बढ़ गई है कि माता–पिता उनसे सलाह मांगने आते हैं। इसी प्रकार जयपुर के वरिष्ठ मनोरोग विशेषज्ञ डॉ. शिव गौतम ने बताया की मोबाइल और इंटरनेट की लत आज समाज में जहर की तरह घुल गई है। इसलिए बच्चों को मोबाइल से दूर रखें। युवाओं और बड़ों को भी प्रोफेशनल काम के अलावा दो घण्टे से ज्यादा मोबाइल या स्क्रीन यूज नहीं करना चाहिए। इससे ज्यादा यूज करने पर मोबाइल पर इंटरनेट एडिक्शन का खतरा पैदा हो जाता हैं, जो कि ड्रग्स के एडिक्शन की तरह हैं और वो मानसिक रोगी बना सकता हैं।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

डॉ. ज्योति पाण्डेय बताती हैं कि बच्चों के बढ़ते स्क्रीन टाइम से आंखों में खुजली, लालिमा, रूखापन और सिरदर्द जैसी समस्याएं बढ़ती जा रही हैं। लम्बे समय तक ऐसी स्थिति रही तो इससे मायोपिया हो सकता है।

बच्चों में मोबाइल, लेपटॉप, टीवी के बढ़ते इस्तेमाल से यह बीमारी तेजी से फैल रही हैं। मोबाइल के अधिक प्रयोग होने से बिहेवियर कंडक्ट डिस ऑर्डर ज्यादा देखने को मिल रहा है। पिछले दो–तीन सालों में साइबर एडिक्शन बहुत ज्यादा बढ़ रहा है। मोबाइल के अधिक उपयोग से बच्चों में गेमिंग एडिक्शन, सोशल मीडिया एडिक्शन, साइबर बुलिंग जैसे मामले बढ़ते जा रहे हैं। इस प्रकार कोरोना जैसी महामारी में ऑनलाइन शिक्षा भले ही एक विकल्प के रूप में उभरी हैं। परन्तु इसने बच्चों की अध्ययन आदतों, मानसिक स्वास्थ्य, शारीरिक स्वास्थ्य पर व्यापक प्रभाव डाला हैं।

ऑनलाइन कक्षा का बच्चों की आदतों एवं स्वास्थ्य पर प्रभाव

कोविड महामारी के दौर में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में परिवर्तन करने के लिए छात्रों, अभिभावकों, शिक्षकों तथा शैक्षिक प्रबन्धन तंत्र द्वारा ऑनलाइन शिक्षा के रूप में अनेक प्रयास किये गये। विद्यालयों ने न केवल पढ़ाने और सीखने के तरीके को फिर से तैयार किया बल्कि घर से स्कूली शिक्षा के लिए एक बेहतर समन्वयन के माध्यम से गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने की एक उपयुक्त विधि पेश की। लॉकडाउन के दौरान छात्रों के लिए ऑनलाइन प्लेटफॉर्म का उपयोग कर घर से ही शिक्षा ग्रहण करने की व्यवस्था की गई एवं राष्ट्रीय स्तर पर भी विभिन्न प्रयास किये गये जो कि एक सराहनीय पहल थी। कॉविड 19 में ऑनलाइन शिक्षा का माध्यम बहुत कारगर साबित हुआ और समाज का प्रत्येक व्यक्ति ऑनलाइन शिक्षा से परिचित भी हुआ। इस प्रकार इस ऑनलाइन शिक्षा का प्रारम्भ तो आकर्षक था परन्तु इसने बच्चों की विभिन्न आदतों, जीवन शैली, स्वास्थ्य आदि पर व्यापक प्रभाव डाला।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

ऑनलाइन कक्षा का बच्चों की विभिन्न आदतों एवं स्वास्थ्य पर प्रभाव को निम्न प्रकार से देखा जा सकता है –

1. ऑनलाइन कक्षा के कारण बच्चों में अनुशासन की कमी आई है क्योंकि विद्यालय में जो अनुशासन का वातावरण होता है वह घर पर संभव नहीं जिसके कारण बच्चों में आत्मानुशासन में कमी आई और नैतिक मूल्यों मे भी गिरावट आई।

2. ऑनलाइन कक्षा के दौरान बच्चों को अकेले रहने की आदत हो गई है। बच्चे अकेले रहकर मोबाइल पर समय व्यतीत करना अधिक पसंद करने लगे हैं ऐसे में बच्चे समाज व परिवार से कटते जा रहे हैं जो समाज व परिवार दोनों के लिए ही सही नहीं है ना ही बच्चों के लिए सही है।

3. मोबाइल, लेपटॉप, टैब आदि के अधिक उपयोग के कारण बच्चों को अनेक वेबसाइट्स पर जाने की आदत हो गई है जिन पर कुछ बच्चे अश्लील वीडियो, न्यूड फोटो, अनेक किस्म की वेब सीरिज आदि देखते हैं जिससे उनका पढ़ाई में मन नहीं लगता और वे गन्दी प्रवृत्तियों की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

4. कोरोना महामारी की शुरूआत से ही बच्चे बाहर नहीं जा पा रहे थे, उन्हें कक्षाओं से लेकर गृहकार्य तक सब कुछ ऑनलाइन करना पड़ रहा था। जिसका प्रभाव उनके मानसिक स्वास्थ्य पर पढ़ा।

5. मोबाइल के अधिक उपयोग ने बच्चों की एकाग्रता को प्रभावित किया है।

6. ऑनलाइन गेम खेलने से बच्चों का स्वभाव आक्रामक हो गया है ऐसे बच्चे हिंसा को सामान्य मानने लगे हैं। इस प्रकार ऑनलाइन गेम बच्चों के लिए घातक सिद्ध हो रहे हैं और बच्चे अपना मानसिक संतुलन दिन–प्रतिदिन खोते जा रहे हैं।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

7. ऑनलाइन कक्षा के बाद बच्चों को स्क्रीन पर अधिक समय बिताने की आदत हो गई जिसके कारण आंखों की अनेक समस्याएं हो रही है जैसे – आंखे सूखना, दृष्टि कमजोर होना, आंखे लाल होना आदि है।

8. देर रात तक मोबाइल उपयोग करने से अनेक बच्चे नींद की समस्या से जूझ रहे हैं। जिसके कारण बच्चों का बौद्धिक विकास प्रभावित हो रहा है।

9. कई सारे अभिभावकों का कहना है कि ऑनलाइन कक्षा के दौरान बच्चों की आदतों में काफी बदलाव आया है, बच्चों के ध्यान की कमी, मोबाइल की लत, अनुशासन की कमी, पढ़ाई–लिखाई में मन न लगना, मानसिक तनाव, खाने की आदतों में बदलाव, अकेलापन जैसी समस्याएं देखी जा रही है।

10. मोबाइल बच्चों की रचनात्मकता को खत्म कर रहा है। बच्चे रील्स बनाने में अपना समय बर्बाद कर रहे हैं।

11. मोबाइल कुछ बच्चो के लिए नशे की तरह हो गया हैं जिस प्रकार शराब लीवर खराब करती है उसी प्रकार मोबाइल बच्चों का मस्तिष्क खराब कर रहा है। मोबाइल के अधिक उपयोग से बच्चों को हाईपरटेंशन, डिप्रेशन, चिडचिड़ापन, अनिद्रा जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।

एक सर्वे में आया कि 10 में से 7 माता–पिता ने यह माना कि दिन में 4–5 घण्टे उनका मोबाइल बच्चों के पास रहता है। कई बच्चे ऐसे है माता पिता के द्वारा मोबाइल के लिए मना करने पर वे माता–पिता पर गुस्सा होते है, उनसे झगड़ा करते है और कोई कोई तो घर में तोड़–फोड़ भी करने लग जाते हैं। अजीम प्रेमजी विश्वविद्यालय ने एक फील्ड स्टडी में पांच राज्यों (छत्तीसगढ़, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तराखण्ड) को चुना। इन राज्यों

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

के 44 जिलों के 16067 छात्रों को सर्वे में शामिल किया और सर्वे में पाया कि 54 प्रतिशत छात्रों की मौखिक अभिव्यक्ति प्रभावित हुई, 42 प्रतिशत की पढ़ने की क्षमता प्रभावित हुई, 40 प्रतिशत की भाषा लेखन क्षमता प्रभावित हुई और 82 प्रतिशत छात्र पिछली कक्षाओं में पढ़ा हुआ भूल गये।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि ऑनलाइन कक्षा के फायदे कम नुकसान ज्यादा रहे हैं। ऑनलाइन कक्षा ने बच्चों को मोबाइल की लत लगा दी है। मोबाइल बच्चों के दिमाग को दीमक की तरह खोखला कर रहा है मोबाइल के अधिक उपयोग के कारण बच्चे वर्चुअल ऑटिज्म का शिकार बन रहे है। मोबाइल से निकलने वाले हानिकारक तत्व रेडिएशन से बच्चों के तंत्रिका तंत्र पर काफी बुरा प्रभाव पड़ा है। तंत्रिका तंत्र पर पड़ने वाले प्रभाव के कारण कई बच्चों को चलने में, बोलने में, देखने में, सांस लेने में, सीखने में एवं विकास में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है और इससे बच्चों का मानसिक विकास बाधित हो रहा हैं। वर्तमान दौर में बहुत सारे बच्चे मोबाइल को मनोरंजन के लिए उपयोग कर रहे हैं। मोबाइल का अधिक उपयोग बच्चों में ब्लैकमेल, अश्लील साहित्य देखने और साइबर अपराध जैसी बुरी आदते पैदा कर रहा है।

मोबाइल के अधिक प्रयोग के कारण बच्चों का मनोजगत एक रोबोट की भांति होता जा रहा है। इंटरनेट और वर्चुअल वर्ल्ड के दौर में पहले ही समाज से कटते जा रहे बच्चों, युवाओं में सोशल स्किल और संतुलित सम्यक व्यक्तित्व के विकास में ऑनलाइन शिक्षा साधक के बजाय बाधक साबित हो रही है। अगर ऐसा ही रहा तो शिक्षा का प्रथम लक्ष्य चरित्र निर्माण का कार्य अपूर्ण ही रहेगा।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

इसके लिए अभिभावकों को चाहए कि वे बच्चों से उनकी दिनचर्या के बारे में बातचीत करें। अभिभावक बच्चों से पूछे कि वे मोबाइल पर क्या कर रहे हैं, सोशल मीडिया को लेकर बच्चों को जागरूक करें तथा उसके दुष्परिणामों से अवगत करवाये। मोबाइल के अत्यधिक उपयोग के दुष्परिणामों से भी अवगत करवाये। बच्चों का स्क्रीन टाईम निश्चित करें। बच्चों को प्रेरक चीजें देखने के लिए प्रेरित करें एवं इसके साथ–साथ अभिभावक स्वयं भी मोबाइल का उपयोग कम करें क्योंकि घर के वातावरण का बच्चों पर गहरा प्रभाव पड़ता हैं। अभिभावक बच्चों की खेल के मैदानों से हो रही दूरी को कम करें। विभिन्न सोशल साइट्स बच्चों की रूचि एवं मनोभावों में जो बदलाव कर रही हैं उनके खतरों से उनको आगाह करें। अधिक मोबाइल देखने से बच्चों का मन विचलित होता हैं इसे रोकने के लिए अपने बच्चों के साथ माता–पिता समय व्यतीत करें।

संदर्भ सूची

1. विलास राम (2020) "ऑनलाइन शिक्षा भविष्य की जरूरत और चुनौतियाँ", इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इनोवेटिव सोशल साईंस एण्ड ह्यूमेनिटीज रिसर्च, डी.एस.एन. महाविद्यालय उन्नाव, वॉल्यूम 7, आईएसएसएन 2349–1876, इश्यू 2, पृ.सं. 29–34
2. कुमार राकेश और सिंह प्रीति (2020) "कोविड–19 के दौरान छात्रों के ई–लर्निंग दृष्टिकोण के स्तर पर एक अध्ययन" जर्नल ऑफ एडवांसेज एण्ड स्कॉलरली रिसर्चेज इन एलाइड एजुकेशन, वॉल्यूम 17, आईएसएसएन 2230–7540, पृ.सं. 963–969
3. शर्मा माला और गुप्ता मनमोहन (2018) "ए स्टडी ऑन एटीट्यूड ऑफ सीनियर सैकेण्डरी स्कूल स्टूडेन्ट्स टुवर्ड्स ई–लर्निंग इनरिलेशन टू दियर जेण्डर, रेजिडेन्शिअल बेकवर्ड एण्ड नेचर ऑफ स्कूल" इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंजीनियरिंग साइंस एण्ड मैथेमेटिक्स, देवबंद कॉलेज ऑफ

हायर एजुकेशन देवबंद सहारनपुर, वॉल्यूम 7, इश्यू 1, आईएसएसएन नं. 2320–0294, पृ.सं. 418–432

4. मंगल एस.के. (2015) "शिक्षा मनोविज्ञान", PHI Learning Private Limited, Delhi पृ.सं. 428–429
5. पाठक पीडी (200–08) "शिक्षा मनोविज्ञान", अग्रवाल प्रकाशन, आगरा उ. प्र., पृ.सं. 244–245
6. अस्थाना विपिन एवं अस्थाना श्वेता (2007–08) "मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन", अग्रवाल प्रकाशन आगरा उ.प्र. पृ.सं. 305–315
7. https://www.momjunction.com/hindi/bacho-ke-liye-online-classes-ke-fayde-aur-nuksan-in-hindi/
8. https://www.herzindagi.com/hindi/society-culture/advantages-and-disadvantages-of-online-classes-for-children-article-158672
9. https://www.tv9hindi.com/technology/what-is-the-impact-of-online-classes-on-children-this-can-cause-them-to-depression-422292.html
10. https://www.apnimaati.com/2021/12/blog-post_81.html
11. https://graduatepanda.in/online-shiksha-par-nibandh
12. https://www.gnttv.com/health/story/harmful-effects-of-smartphones-on-your-children-556555-2023-05-11
13. https://www.hrw.org/hi/news/2021/05/17/378673
14. https://www.agniban.com/online-class-and-its-impact-on-children/
15. https://www.apnimaati.com/2021/12/blog-post_81.html

विशिष्ट बच्चों के विकास में कार्यरत शैक्षिक संस्थाओं की भूमिका : एक अध्ययन

डॉ. सरोज राय
सहायक आचार्य, शिक्षा विभाग, जैन विश्व भारती संस्थान, मान्य विश्वविद्यालय, लाडनूं नागौर

वनिता गोदारा
शोधार्थी, शिक्षा विभाग, जैन विश्व भारती संस्थान, मान्य विश्वविद्यालय, लाडनूं नागौर

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र विशिष्ट बालकों के विकास हेतु शैक्षिक संस्थानों की भूमिका के अध्ययन पर आधारित है। अध्ययन के उद्देश्य यथा – विशिष्ट बालकों के विकास में कार्यरत शैक्षिक संस्थानों की शिक्षक केन्द्रित गतिविधियों के क्रियान्वयन का अध्ययन करना। विशिष्ट बालकों के विकास में कार्यरत शैक्षिक संस्थान 'आशा का झरना' की कार्य प्रणाली का विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव और शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव ज्ञात करना था। शोध में न्यादर्श हेतु कार्यरत शैक्षिक संस्थान 'आशा का झरना' के संचालकों, शिक्षकों और विद्यार्थियों का चयन किया। इनसे साक्षात्कार अनुसूची तथा अवलोकन द्वारा प्रदतों का एकत्रीकरण किया गया। शोध में निष्कर्षतः पाया गया कि संस्था की कार्यप्रणाली का विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव और शैक्षिक उपलब्धि पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

मुख्य शब्द – विशिष्ट बालक, शैक्षिक संस्थान, शैक्षिक उपलब्धि, नामांकन–ठहराव।

प्रस्तावना

सामान्य रूप से बच्चे औसत शारीरिक एवं मानसिक स्तर आईक्यू 90–100 वाले होते है, उन्हें सामान्य बच्चे के रूप में जानते हैं। विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे सामान्य बच्चों से विशिष्ट होते है। जैसा कि हम जानते है सामान्य बच्चे सामान्य शारीरिक एवं मानसिक श्रम वाले कार्यों को करने में किसी बाधा का अनुभव नहीं करते है। कक्षा में अधिकांश बच्चों की भांति वे शैक्षिक उपलब्धि में भी औसत होते है। इनके सीखने की गति भी औसत होती है। इसके विपरीत विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे इस प्रकार के कार्यों को करने में अपने को असहज एवं असमर्थ पाते है।

हीबर्ड के अनुसार विशिष्ट बच्चों की श्रेणी में वे बच्चे आते है जिन्हें सीखने में कठिनाई का अनुभव होता है या जिनमें मानसिक या शैक्षिक निष्पादन या सृजन अत्यंत उच्चकोटि का होता है या जिनको व्यावहारिक, सांवेगिक एवं सामाजिक समस्याऐं घेर लेती हैं या वे विभिन्न शारीरिक अपंगताओं या निर्बलताओं से पीड़ित रहते है, जिनके कारण ही उनके लिए अलग से विशिष्ट शिक्षा की व्यवस्था करनी पड़ती है।

साहित्य समीक्षा

जैन अनीता (2019) ''रोल ऑफ वाफ्ड इन दि एज्यूकेशनल डवलपमैन्ट ऑफ वूमन : ए केस स्टडी'', शिक्षा संकाय, वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान, शोध में महिलाओं के शैक्षिक विकास में वाफ्ड की भूमिका का अध्ययन किया अध्ययन का उद्देश्य WAFD द्वारा पारित क्रियाओं का अध्ययन करना तथा WAFD द्वारा महिलाओं शैक्षिक विकास के प्रति लाभार्थियों के प्रत्यक्षीकरण का अध्ययन करना था। न्यादर्श हेतु राजस्थान राज्य के भरतपुर जिले के चार ब्लॉकों को चयनित किया। निष्कर्ष में पाया गया कि महिलाओं का WAFD के प्रति सकारात्मक प्रत्यक्षीकरण पाया गया।

पुरोहित अणिमा (2018) ''गैर सरकारी संगठनों द्वारा संचालित अनाथालयों द्वारा बालकों के शैक्षिक विकास के प्रयास : एक अध्ययन'', शिक्षा संकाय, वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान, पर शोध किया। अध्ययन का उद्देश्य अनाथालयों में रह रहे बालकों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, नैतिक तथा आत्मनिर्भरता के विकास हेतु गैर सरकारी संगठनों के प्रयास का अध्ययन करना था। न्यादर्श हेतु राजस्थान राज्य के 7 संभागों में से प्रत्येक संभाग से एक–एक अनाथालय से कुल 335 बालकों को चयनित किया गया। शोध सर्वेक्षण विधि द्वारा किया गया। निष्कर्षतः पाया गया कि अनाथालयों में शारीरिक विकास हेतु उपयुक्त प्रयास ही रहे है। सामाजिक विकास सम्पूर्ण रूप से नही हो पा रहा है। प्रायः अनाथ बच्चें असंवेदशील रह जाते है। तथा मानसिक, नैतिक व व्यवसायिक विकास हेतु प्रयास जारी है। किन्तु उनका समुचित विकास नही हो पा रहा है।

ऋचा (2018) ''गैर सरकारी संगठन 'प्रयास' द्वारा वंचित बालकों के शैक्षिक प्रयासों का एक अध्ययन'', शिक्षा संकाय, जयपुर नेशनल यूनिवर्सिटी, राजस्थान, पर शोध किया, अध्ययन के उद्देश्य में गैर सरकारी संगठन 'प्रयास' के शैक्षिक प्रयासों पर निम्न संदर्भ में अध्ययन करना था। अध्ययन के न्यादर्श के रूप में दिल्ली स्थित जहाँगीरपुर में कार्यरत गैर सरकारी संस्थान प्रयास की चयनित किया गया। शोध में पाया गया कि प्रयास गैर सरकारी संगठन निर्देशन एवं स्वयं सेवी कार्यकर्त्ता प्रत्येक वंचित बालकों को बहुसंचार माध्यम व खेल विधि के पढ़ाते हैं तथा आत्मनिर्भर होने के किए प्रेरित करते हैं। वंचित बालकों के पुर्नवास हेतु निःशुल्क आवासीय सुविधा उपलब्ध करवाई जाती है। गैर सरकारी संगठन द्वारा व्यवसायिक शिक्षा हेतु कार्यक्रम संचालित किए जाते हैं जैसे मोमबत्ती बनाना, गुड़िया बनाना, कम्प्यूटर कोर्स, ब्यूटीशियन कोर्स, इस प्रकार प्रयास द्वारा पुर्नवास शिक्षा व व्यवसायिक शिक्षा के सन्दर्भों मे विविध व सार्थक प्रयास किए जा रहे है।

संदीप बेरवाल, रेनू बाला (2018) ने शोध कार्य के उद्देश्यों में माध्यमिक विद्यार्थियों के विकलांग एवं सम्मिलित शिक्षा के बारे में जागरूकता के स्तर का अध्ययन तथा माध्यमिक विद्यार्थियों का विकलांग एवं सम्मिलित शिक्षा के बारे में जागरूकता के स्तर पर हस्तक्षेप व्यूहरचनाओं के प्रभाव का अध्ययन करना सम्मिलित था। न्यादर्श के रूप में हिमालय प्रदेश के हमीरपुर जिले को चुना गया। जिसमें से कक्षा 9वीं में अध्ययनरत् 200 विद्यार्थियों को यादृच्छिक न्यादर्श द्वारा चयनित

किया गया। प्रदत्त संकलन हेतु स्वनिर्मित ूमतदमेंइवनज क्पेंइपसपसजल उपकरण का प्रयोग किया गया। निष्कर्ष में पाया गया कि न्यादर्श की जागरूकता हस्तक्षेप व्यूहरचनाओं द्वारा बढ़ती प्रदर्शित की गई।

जयश्री शर्मा, रवि सिद्ध (2017) अध्ययन का उद्देश्य मानसिक विकलांग बच्चों के घरेलू वित्त कौशल एवं शैक्षिक कौशल प्रदर्शन को सुधारने हेतु कार्य विश्लेषण पद्धति के प्रयोग का अध्ययन करना था। न्यादर्श 40–54 प्फ स्तर के 20 सामान्य मानसिक विकलांग बच्चों को लिया गया। शोधकर्त्ता द्वारा मानसिक विकलांग बच्चों को 10–10 के दो समूहों में बाँटा गया क्रमशः प्रयोगात्मक एवं नियंत्रण समूह, प्रयोगात्मक समूह को कार्य विश्लेषण पद्धति द्वारा पढ़ाया गया तथा नियंत्रित समूह को नियमित विधि से पढ़ाया गया। अध्ययन के निष्कर्ष में पाया गया कि मानसिक विकलांग बच्चों के घरेलू वित्त कौशल एवं शैक्षिक कौशल को कार्य विश्लेषण पद्धति द्वारा सुधारा जा सकता है। कार्य विश्लेषण पद्धति उचित शिक्षण विधि है।

आर. चौधरी (2017) शोध में विकलांग बच्चों के पूर्व पठन लेखन कौशलों को अर्जित करने हेतु अध्ययन किया। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य साधारण मानसिक विकलांग बालकों को पूर्व पठन लेखन कौशल अर्जित करने में समर्थ बनाना था। प्रस्तुत शोध झारखण्ड के धनबाद जिले के बोकारों स्टील सिटी में सीापित ज्ञान प्रकाश डवलपमेंट सेन्टर फॉर मेंटली रिटारटेड चिल्ड्रन में अध्ययनरत 12 से 18 वर्ष के 15 सामान्य मानसिक विकलांग बच्चों (9 बालक व 6 बालिकाओं) को सोद्देश्यीय न्यादर्शन विधि द्वारा चयनित किया गया। प्रदत्त संकलन हेतु शोधकर्ता द्वारा स्वनिर्मित तथा भट्टाचार्य द्वारा निर्मित सामाजिक आर्थिक Functional ability assessment scale तथा भट्टाचार्य व राव द्वारा निर्मित सूची का प्रयोग किया गया। शोध में पाया गया कि उपयुक्त अधिगम परिस्थिति एवं शिक्षण विधियों का प्रयोग करके साधारण मानसिक विकलांग बच्चों को उनकी क्षमता के अनुंसार पढ़ाया जा सकता है और साधारण मानसिक विकलांग बच्चों का पढ़ाने हेतु अभ्यास के अवसर एवं विभिन्न संवेदी अनुभव आवश्यक हैं तथा इन्हें पढ़ाने हेतु अत्यधिक धैर्य की आवश्यकता है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. 'आशा का झरना' विद्यालय की कार्यप्रणाली, शिक्षण व्यवस्था और वित्तीय प्रणाली का अध्ययन करना।
2. 'आशा का झरना' विद्यालय में विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव ज्ञात करना।
3. 'आशा का झरना' विद्यालय के तकनीकी नवाचारों और सुविधाओं के प्रभाव का अध्ययन करना।
4. 'आशा का झरना' विद्यालय की शैक्षिक सुविधाओं के प्रभाव का अध्ययन करना।
5. 'आशा का झरना' विद्यालय की गतिविधियों के प्रभाव का अध्ययन करना।

6. 'आशा का झरना' विद्यालय के शैक्षिक कार्यक्रमों का व्यावसायिक विकास पर प्रभाव का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाऐं –

1. 'आशा का झरना' विद्यालय की कार्यप्रणाली, शिक्षण व्यवस्था और वित्तीय प्रणाली का विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।
2. 'आशा का झरना' विद्यालय के तकनीकी नवाचारों और सुविधाओं विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।
3. 'आशा का झरना' विद्यालय की शैक्षिक सुविधाओं का विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।
4. 'आशा का झरना' विद्यालय की गतिविधियों का विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।
5. 'आशा का झरना' विद्यालय के शैक्षिक कार्यक्रमों का व्यावसायिक विकास पर का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

शोध विधि – प्रस्तुत शोध में प्राथमिक प्रदत्तों का संकलन सर्वेक्षण विधि द्वारा किया गया है।

न्यादर्श

प्रस्तुत शोध में आशा का झरना संस्थान के 5 विद्यालयों, शिक्षकों और विद्यार्थियों का चयन किया गया।

प्रदत्तों के संकलन हेतु उपकरण

साक्षात्कार अनुसूची – स्वनिर्मित

सूचना प्रपत्र

अवलोकन प्रपत्र

विश्लेषण

1. 'आशा का झरना' विद्यालय की कार्यप्रणाली, शिक्षण व्यवस्था और वित्तीय प्रणाली का विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

<table>
<tr><th>समूह (Group)</th><th>संख्या (N)</th><th>मध्यमान (M)</th><th>मानक विचलन (S.D)</th><th>टी का मान (t value)</th><th>सार्थकता स्तर</th><th>स्वीकृत/अस्वीकृत</th></tr>
<tr><td>विद्यालय की कार्यप्रणाली</td><td>15</td><td>174.93</td><td>22.16</td><td rowspan="2">0.76</td><td>.05 स्तर – 1.98
.01 स्तर – 2.63</td><td>स्वीकृत
स्वीकृत</td></tr>
<tr><td>विद्यार्थियों पर प्रभाव</td><td>15</td><td>168.8</td><td>21.58</td><td colspan="2">सार्थक अंतर नहीं है।</td></tr>
</table>

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि विद्यालय की कार्य प्रणाली और विद्यार्थियों पर प्रभाव का मध्यमान क्रमशः 174.93 और 168.8 है और दोनों का टी का मान 0.76 है। प्राप्त टी का मान सार्थकता स्तर .05 तथा .01 के मान से कम है अतः यह कहा जा सकता है कि 'आशा का झरना' विद्यालय की कार्यप्रणाली, शिक्षण व्यवस्था और वित्तीय प्रणाली का विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

2. 'आशा का झरना' विद्यालय के तकनीकी नवाचारों और सुविधाओं विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

समूह (Group)	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (S.D)	टी का मान (t value)	सार्थकता स्तर	स्वीकृत/अस्वीकृत
तकनीकी नवाचार और सुविधाऐं	15	161.2	23.70	0.91	.05 स्तर – 1.98 .01 स्तर – 2.63	स्वीकृत स्वीकृत
विद्यार्थियों पर प्रभाव	15	168.8	21.58		सार्थक अंतर नहीं है।	

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि विद्यालय के तकनीकी नवाचार और सुविधाओं और विद्यार्थियों पर प्रभाव का मध्यमान क्रमशः 161.2 और 168.8 है और दोनों का टी का मान 0.91 है। प्राप्त टी का मान सार्थकता स्तर .05 तथा .01 के मान से कम है अतः यह कहा जा सकता है कि 'आशा का झरना' विद्यालय के तकनीकी नवाचारों और सुविधाओं विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

3. 'आशा का झरना' विद्यालय की शैक्षिक सुविधाओं का विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

समूह (Group)	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (S.D)	टी का मान (t value)	सार्थकता स्तर	स्वीकृत/अस्वीकृत
शैक्षिक सुविधाऐं	15	174.93	22.16	1.85	.05 स्तर – 1.98 .01 स्तर – 2.63	स्वीकृत स्वीकृत

विद्यार्थियों पर प्रभाव	15	168.8	21.58		सार्थक अंतर नहीं है।

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि विद्यालय की शैक्षिक सुविधाओं और विद्यार्थियों पर प्रभाव का मध्यमान क्रमशः 174.93 और 168.8 है और दोनों का टी का मान 1.85 है। प्राप्त टी का मान सार्थकता स्तर .05 तथा .01 के मान से कम है अतः यह कहा जा सकता है कि 'आशा का झरना' विद्यालय की शैक्षिक सुविधाओं का विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

4. 'आशा का झरना' विद्यालय की गतिविधियों का विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

समूह (Group)	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन S.D	टी का मान (t value)	सार्थकता स्तर	स्वीकृत/अस्वीकृत
विद्यालय की गतिविधियां	15	159.2	24.14	0.22	.05 स्तर – 1.98 .01 स्तर – 2.63	स्वीकृत स्वीकृत
विद्यार्थियों पर प्रभाव	15	168.8	21.58		सार्थक अंतर नहीं है।	

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि विद्यालय की गतिविधियों और विद्यार्थियों पर प्रभाव का मध्यमान क्रमशः 159.2 और 168.8 है और दोनों का टी का मान 0.22 है। प्राप्त टी का मान सार्थकता स्तर .05 तथा .01 के मान से कम है अतः यह कहा जा सकता है कि 'आशा का झरना' विद्यालय की गतिविधियों का विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

5. 'आशा का झरना' विद्यालय के शैक्षिक कार्यक्रमों का व्यावसायिक विकास पर का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

समूह (Group)	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (S.D)	टी का मान (t value)	सार्थकता स्तर	स्वीकृत/अस्वीकृत
शैक्षिक कार्यक्रम	15	154.5	18.36	5.97	.05 स्तर – 1.98 .01 स्तर – 2.63	अस्वीकृत अस्वीकृत

व्यावसायिक विकास	15	192.2	10.64		सार्थक अंतर है।

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि विद्यालय के शैक्षिक कार्यक्रमों और विद्यार्थियों के व्यावसायिक विकास प्रभाव का मध्यमान क्रमशः 154.5 और 192.2 है और दोनों का टी का मान 0.22 है। प्राप्त टी का मान सार्थकता स्तर .05 तथा .01 के मान से अधिक है अतः यह कहा जा सकता है कि 'आशा का झरना' विद्यालय के शैक्षिक कार्यक्रमों का व्यावसायिक विकास पर का कोई सार्थक प्रभाव पड़ता है।

निष्कर्ष

यह निष्कर्ष निकलता है कि विशिष्ट विद्यार्थियों के लिए कार्य करने वाली संस्था आशा का झरना की कार्यप्रणाली, शिक्षण व्यवस्था और वित्तीय प्रणाली का विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

'आशा का झरना' विद्यालय के तकनीकी नवाचारों और सुविधाओं विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

'आशा का झरना' विद्यालय की शैक्षिक सुविधाओं का विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

'आशा का झरना' विद्यालय की गतिविधियों का विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव, शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

मध्यमानों से यह तो स्पष्ट है कि आशा का झरना की कार्यप्रणाली, सुविधाऐं और तकनीकी नवाचार औसत से अधिक है परंतु उसका प्रभाव विद्यार्थियों के नामांकन, ठहराव और शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक स्तर का नहीं है।

'आशा का झरना' विद्यालय के शैक्षिक कार्यक्रमों का व्यावसायिक विकास पर का कोई सार्थक प्रभाव पड़ता है।

इस सार्थक अंतर का कारण यह है कि 'आशा का झरना' विद्यालय के शैक्षिक कार्यक्रम उच्च स्तर के है परंतु विशिष्ट विद्यार्थी उसका व्यावसायिक विकास में अधिक उपयोग नहीं कर पा रहे है।

संदर्भ सूची

1. जैन अनीता (2019) ''रोल ऑफ वाफ्ड इन दि एज्यूकेशनल डवलपमैन्ट ऑफ वूमन : ए केस स्टडी''. शिक्षा संकाय, वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान
2. पुरोहित अणिमा (2018) ''गैर सरकारी संगठनों द्वारा संचालित अनाथालयों द्वारा बालकों के शैक्षिक विकास के प्रयास : एक अध्ययन''. शिक्षा संकाय, वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान

3. ऋचा (2018) ''गैर सरकारी संगठन 'प्रयास' द्वारा वंचित बालकों के शैक्षिक प्रयासों का एक अध्ययन''. शिक्षा संकाय, जयपुर नेशनल यूनिवर्सिटी, जयपुर
4. संदीप बेरवाल, रेनू बाला (2018) माध्यमिक विद्यार्थियों के विकलांग एवं सम्मिलित शिक्षा के बारे में जागरूकता के स्तर को बढ़ाने हेतु हस्तक्षेप व्यूह रचनाओं के कार्यान्वयन का अध्ययन, इण्डियन एज्यूकेशनल एबस्ट्रेक्ट्स. वॉल्यूम 4. नं. 2. जुलाई 2018. पृ. 44–45.
5. जयश्री शर्मा, रवि सिद्ध (2017) मानसिक विकलांग बच्चों के घरेलू वित्तीय कौशल एवं शैक्षिक कौशल प्रदर्शन के सुधारने हेतु विश्लेषण पद्धति के प्रयोग का अध्ययन, इण्डियन एज्यूकेशनल एबस्ट्रेक्ट्स. वॉल्यूम 4. नं. 1. जुलाई 2004. पृ. 66–67.
6. आर. चौधरी (2017) ''टीचिंग प्रि–रीडिंग राइटिंग स्किल्स टु मोडरेटली मैनटली रिटार्डेड लर्नर्स'' डिसएबिलीटी एण्ड इम्पैयरमैन्टवॉल्यूम 11 (1). पृ. 112–118.
7. एस. सैंगवन एवं एस. सैगवन (2017) ''द इफैक्ट ऑफ स्टीमुलेशन प्रोग्राम ऑन मैनटल ऐबिलिटी ऑफ स्लो लर्नरस्''. डिसएबिलीटी एण्ड इम्पैयरमैन्टवॉल्यूम 17 (2). पृ. 132–138.
8. एस.पी के. जीना एन सारस्वत (2016) ''इफैक्ट ऑफ अर्लि इन्टरवैन्सल ऑन कागनिटिव स्किल्स ऑफ डिसएडवान्टेज्ड चिल्ड्रैन''. इण्डियन एज्यूकेशनल एबस्ट्रेक्ट्स. वॉल्यूम 3. नं. 2. मई, पृ. 45.
9. संगीता यादव (2016) ''इफैक्ट ऑफ इन इन्टरवैन्सन प्रोग्राम ऑन दि अवैरनेज एण्ड ओपनिंग ऑफ स्टूडैन्ट्स एण्ड टीचर्स अबाउटडिसेबिलीटी''. इण्डियन एज्यूकेशनल एबस्ट्रेक्ट्स. वॉल्यूम 7. नं. 1 और 2, जनवरी एवं जुलाई, पृ. 49–50.
10. पी साहू (2016) ''डवलपमेन्ट ऑफ इन्टरवैनसन प्रोग्राम टू इम्प्रूव रिडिंग एबिलिटी ऑफ हियरिंग इम्पैयर्ड एण्ड नार्मल हियरिंग चिल्ड्रन एट एलीमैन्टी स्टेज''. इन्डीकेटर्स ऑफ क्वालिटी एज्यूकेशन, अंक 4, अंक 1, जनवरी, पृ. 167–180.

International Double Blind Peer Reviewed, Refereed , Indexed , Multilingual-Multidisciplinary-High Impact Factor-Monthly-Research Journal Related to Higher Education For all Subject

ISSN 0974-2832 (Print), E-ISSN- 2320-5474,RNI RAJBIL 2009/29954

SHODH, SAMIKSHA AUR MULYANKAN

January , 2024

Vol-1, ISSUE-I

IMPACT FACTOR- 6.115 (SJIF)

SHODH SAMIKSHA AUR MULYANKAN

Editor in Chief

Dr. Krishan Bir Singh

www.ugcjournal.com

Editor's Office
A- 215, Moti Nagar,
Street No.7
Queens Road
Jaipur- 302021, Rajasthan,
India

94 139 70 222

E-Mail:
www.ugcjournal@gmail.com

professor.kbsingh@gmail.com

मुख्य सम्पादक – डॉ. कृष्णबीर सिंह का मानद पद कार्य पूर्णतः अवैतनिक है।
इस शोध पत्रिका के प्रकाशन, सम्पादन मुद्रण में पूर्णतः सावधानी बरती गई है। किसी भी प्रकार की त्रुटि महज मानवीय भूल मानी जाये।
शोध पत्र की समस्त जिम्मेदारी शोधपत्र लेखक की होगी।उक्त जर्नल में प्रकाशन हेतु भेजे गए पेपर सामग्री का सम्पूर्ण नैतिक दायित्व पेपर लेखक का होगा। मुख्य संपादक ,प्रकाशक ,मुद्रक , पिअर रिविव्यु मंडल जिम्मेदार नहीं होगा। लेखकों से अनुरोध है किसी भी प्रकार की साहित्यिक चोरी न करें।
समस्त विवादों का न्याय क्षेत्र जयपुर शहर ही होगा।

1. Editing of the research journal is processed without any remittance. **The selection and publication is done after recommendation of Peer Reviewed Team, Refereed and subject expert Team.**
2. Thoughts, language vision and example in published research paper are entirely of author of research paper. It is not necessary that both editor and editorial board are satisfied by the research paper. **The responsibility of the matter of research paper is entirely of author.**
3. Along with research paper it is compulsory to sent Membership form and copyright form. Both form can be downloaded from website i.e. **www.ugcjournal.com**
4. In any Condition if any National/International university denies to accept the research paper published in the journal then it is not the responsibility of Editor, Publisher and Manangement.
5. Before re-use of published research paper in any manner, it is compulsory to take written acceptance from Chief Editor unless it will be assumed as disobedience of copyright rules.
   In case of plagiarism, the entire moral responsibility of the paper material will rest with the author only.
6. **The entire moral responsibility of the paper material sent for publication in the said journal will be that of the paper author. Chief Editor, Publisher, Printer, Peer Review and Refereed Board will not be responsible.**

Authors are requested not to do any kind of plagiarism

7. All the legal undertaking related to this research journal are subjected to be hearable at jaipur jurisdiction only.

SHODH SAMIKSHA AUR MULYANKAN

EDITORIAL BOARD

Patron

Prof. Kala Nath Shastri

(Rashtrapati Puraskar" For His Contribution To Sanskrit)

Prof. Dr. Alireza Heidari

Full Professor And Academic Tenure, USA

Chief Editor

Dr. Krishan Bir Singh

International Advisory Board

Aaeid M. S. Ayoub

Geotechnical Environmental Engineering

Uqbah bin Muhammad Iqbal

Postgraduate Researcher

Badreldin Mohamed Ahmed Abdulrahman

Associate Professor

Dr. Alexander N. LUKIN

Principal Research Scientist & Executive Director

Dr. U. C. Shukla

Chief Librarian and Assistant Professor

Dr. Abd El-Aleem Saad Soliman Desoky

Professor Assistant

Prof. Ubaldo Comite

Lecturer

Moustafa Mohamed Sabry Bakry

Dr Sajid Mahmood

Shameemul Haque

Associate Chief Editor

Ravindrajeet Kaur Arora

S. Bal Murgan

Dr. Sandeep Nadkarni

Dr. A Karnan

Dr. S.R. Boselin Prabhu

Deepika Vodnala

Dr. Kshitij Shinghal

Christo Ananth

Gopinath Palai

Dr. Neeta Gupta

Dr. Vinita Shukla

Harold Jan R. Terano

Dr Sajid Mahmood

Dr Pavan Mishra

Editor

Dr.H.B.Rathod

Dr. Dharamender Singh Chauhan,UOR,Jaipur

Dr.Govind Nath Chaudhary-Sanskrit- Bhagalpur

Dr.Naveen Gautam

Dr. Mohini Mehrotra

Dr. Arvind Vikram Singh

Dr. Suresh Singh Rathore

Dr.Kishori Bhagat

Dr.Murari Lal Dayma

Kamalnayan. B. Parmar

Dr.Deepak Sharma

Dr.Sanjay B Gore

Dr. A.karnan

Dr.Amita Verma

Dr . Ity Patni

Dr. Somya Choubey

Dr.Surinder Singh

Dr. Manoj S. Shekhawat,

Dr. Anshul Sharma

Dr. Ramesh Kumar Tandan

S N Joshi

Dr. Sant Ram Vaish

Bindu Chauhan

Dr. Vinod Sen

Dr. Sushila Kumari

Dr Indrani Singh Rai

Dr Abhishek Tiwari

Prof.S.K.Meena

Prof.Praveen Goswami

G Raghavendra Prasad

SHODH SAMIKSHA AUR MULYANKAN

Dr. Dnyaneshwar Jadhav
Akshey Bhargava
Dr. A. Dinesh Kumar
Dr. Pintu Kumar Maji
Dr Hanan Elzeblawy Hassan
Sandeep Kumar Kar
Dr.R.devi Priya
Dr.P.Thirunavukarasu
Dr. Srijit Biswas
Parul Agarwal
Dr. Preeti Patel
Archana More
Dr. Harish N
Dr. Seema Singh
Dr. Ram Singh Bhati
Dr. Pankaj Gupta
Dr Arvind Sharma
Dr. Ramesh Chandra Pathak
Dr. Ankush Gautam
Dr Markandey Dixit
Dr. Manoj Kumar
Ratko Pavlovi, Phd
Dr.S.Mohan
Dr Ramachandra C G
Dr.Sivakumar Somasundaram
Dr. Sanjeev Kumar
Dr. Padma S Rao
Dr Munish Singh Rana
Dr. Piyush Mani Maurya

Associate Editor

Dr. Yudhvir Redhu
Dr.Kiran B.R
Dr Richard Remedios
Dr. R Arul
Anand Nayyar
Dr . Ekhlaque Ahmad
Dr. Snehangsu Sinha
Dr Niraj Kumar Singh
Sandeep Kataria
Dr Abhishek Shukla

Somesh Kumar Dewangan
Amarendra Kumar Srivastav
Dr K Jayalakshmi
Dilip Kumar Jha

Assistant Editor

Jasvir Singh
Dr.pintu Kumar Maji
Dr. Soumya Mukherjee
Prof Ajay Gadicha
Ashutosh Tiwari
Gyanendra Pratap Singh
Jitendra Singh Goyal
Ashish Jaiswal
Hiten Barman
Dr. Priti Bala Sharma

Subject Expert

Dr. Jitendra Arolia
Dr. Suresh Singh Rathore
Dr.kishori Bhagat
Dr Mrs Vini Sharma
Ranjan Sarkar
Chiranji Lal Parihar
Dr. Lalit Kumar Sharma
Dr Amit Kumar
Santosh Kumar Jha
Dr . Ekhlaque Ahmad
Naveen Kumar Kakumanu
Dr. Chitra Tanwar
Jyotir Moy Chatterjee
Somesh Kumar Dewangan
Raffi Mohammed
Dr. Sunita Arya
Dr. Ram Singh Bhati
Dr. Janak Singh Meena
Dr. Neha Kalyani

SHODH SAMIKSHA AUR MULYANKAN

Dr. Rajeev Nayan Singh
Dr. Pankaj Rathore
Dr. Mahendra Parihar
Pradip Kumar Mukhopadhyay
Dr Vijay Gaikwad

Research Paper Reviewer

Dr. B H Kirdak
Amit Tiwari
Dr Dheeraj Negi
Dr. Meeta Shukla

Dr. Ranjana Rawat
Sonia Rathi
Dr.Anand Kumar
Dr.Pardeep Sharma
Anil Kumar
Dr. Deepa Dattatray Kuchekar
Dr Ade Santosh Ramchandra

Guest Editor

Dr. Lalit Kumar Sharma
Dr. Falguni S. Vansia

Chief Advisory Board

Ashok Kumar Nagarajan

Advisory Board

Dr. Naveen Kumar
Manoj Singh Shekhawat
Pranit Maruti Patil
Vishnu Narayan Mishra

SHODH SAMIKSHA AUR MULYANKAN

Research Paper - Education

पर्यावरण संरक्षण के लिए शाश्वत विकास की संकल्पना आवश्यक

* डॉ. विष्णु कुमार   * * डॉ. जय प्रकाश सिंह

** सहायक प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं*
** * सहायक प्रोफेसर, दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केन्द्र, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं*

सारांश

प्राचीन काल में अपने महर्षियों ने पर्यावरण की महत्ता को ध्यान में रखकर इसे अपनी सांस्कृतिक मूल्यों के रूप में अपनाकर पल्लवित एवं पोषित किया था परन्तु विकास के अंधाधुंध दौड़ में अपनी ही सांस्कृतिक मूल्यों को हम लोग भूलते जा रहे हैं। मनुष्य के लालच एवं आधुनिकता एवं औद्योगिकीकरण की गलत नीतियों के कारण पर्यावरण में असंतुलन हुआ है। ठीक ही कहा गया है ''अति सर्वत्र वर्जयते।'' मानव अपनी सुख–सुविधा एवं भोग–विलास के साधन जुटाने के लिए पर्यावरणीय संसाधनों का अत्यधिक दोहन करता जा रहा है जिससे प्रदूषण का जन्म हुआ। आधुनिकता एवं विकास के नाम के साथ–साथ प्रदूषित खाद्य, प्रदूषित जल, प्रदूषित हवा सेवन करना पड़ रहा है। वर्तमान में दिल्ली शहर में हवा में प्रदूषण की मात्रा अत्यधिक होने के कारण सास लेने में परेशानी एवं आंखों में जलन की शिकायत आम बात हो गई है। अर्थात् पर्यावरण प्रदूषण दिनों–दिन अत्यधिक खतरनाक होता जा रहा है। इसके संरक्षण के लिए शाश्वत विकास की संकल्पना आवश्यक है ताकि आवश्यकता और विकास के साथ–साथ संतुलन बनाते हुए समुचित उपयोग पर बल देकर संरक्षण किया जा सकता है।

की–वर्ड– पर्यावरण संरक्षण, शाश्वत विकास की संकल्पना, सतत विकास।

प्रस्तावना–

प्रकृति का निर्माण मूलतः पंच तत्वों से मिलकर हुआ है। ये तत्व है जल, वायु, आकाश, अग्नि, एवं प्रकृति। यह समस्त तत्व ही हमारे पर्यावरण के प्रमुख घटक और जीवन के आधार भूत स्तम्भ है। पर्यावरण भौतिक तत्वों. शक्तियों और परिस्थितियों का एक ऐसा समुच्चय है जिसका प्रभाव जैव–जगत के विकास चक्र पर पड़ता है। पर्यावरण की प्रमुख विशेषता इसकी साधन सम्पन्नता है और ये प्राकृतिक संसाधन ही मानव के भौतिक विकास के आधार है। प्राथमिक संसाधनों की उपलब्धता एवं जैव विविधता के अनुसार ही प्रगति का मार्ग प्रशस्त होता है। जो सामाजिक कल्याण का आधार है। पर्यावरण प्रकृति की सहज गति है और तकनीकी विकास के इस युग में मनुष्य प्रकृति का विजेता बनकर सभ्यता के शिखर पर खड़ा होने का दावा करता है, परन्तु मानव की उच्च महत्वाकांक्षाओं उसकी निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या पारिवारिक जरूरतों औद्योगीकरण, नगरीकरण एवं प्राकृतिक संसाधनों के अन्धाधुन्ध दोहन ने प्रकृति एवं उसके घटकों के मध्य स्थापित सामंजस्य में हस्तक्षेप किया और प्रदूषण को जन्म दिया है। वर्तमान में मनुष्य की वैभवयुक्त एवं विलासतापूर्ण जीवनशैली ने इन परिस्थितियों को और भी

SHODH SAMIKSHA AUR MULYANKAN

गम्भीर बना दिया है जिसके परिणाम स्वरूप पर्यावरणीय प्रदूषण की विभीषिका और अधिक खतरनाक होती जा रही है।

पर्यावरण मानव जीवन पद्धति के लिए यदि अनिवार्य अंग है तो इसका संरक्षण और बचाव भी मानव का परम कर्त्तव्य बन जाता है। पर्यावरण संरक्षण मानवीय जीवन के लिए अति आवश्यक विषयवस्तु बन गया है। इस दिशा में वैश्विक एवं भारत दोनों ही स्तरों पर अनेक प्रयास एवं आन्दोलन अनवरत जारी है। पर्यावरण संरक्षण की दिशा वर्ल्ड वॉच ग्रीन पीस, वर्ल्ड लाइफ फोरम जैसी संस्थाएं की भूमिका महत्वपूर्ण है। पर्यावरण को बचाने के लिए स्त्रियों ने अग्रणी होकर योगदान दिया है। महिलायें वैदिक काल से ही पर्यावरण संरक्षण के पक्ष में रही है। उदाहरणस्वरूप तुलसी पूजा, पीपल पूजा एवं वट वृक्ष पूजा आदि हैं। भारतीय महिलायें सदैव इस दिशा में कार्यशील रही है। हमारी भारतीय संस्कृति को देखने पर रीति–रिवाजों, परम्पराओं में पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरुकता दिखाई देती रही है। भारतीय महिलायें सदैव से ही पर्यावरण संरक्षण में पुरुषों से आगे रही हैं इसका पता हमें विभिन्न पर्यावरण संरक्षण के आन्दोलनों का अध्ययन करने पर चलता है। जैसे– **खेजड़ली आन्दोलन**– राजस्थान में 'अमृतादेवी', **चिपको आन्दोलन**– उत्तरप्रदेश में 'गौरादेवी', **नवधान्या आन्दोलन**– वन्दना शिवा, **नर्मदा बचाओ आन्दोलन**–मेधा पाटकर।

शाश्वत विकास (सतत विकास) की संकल्पना

आज का मानव वैज्ञानिक युग में तीव्र आर्थिक विकास के स्थान पर एक ऐसी विकास प्रणाली विकसित करने पर विवश हुआ, जिससे मानव की वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति तो होगी, साथ ही भावी पीढ़ियों के हितों (श्रेष्ठ जीवनस्तर) की भी सुरक्षा हो सके। यहीं पर शाश्वत विकास की संकल्पना/अवधारणा सार्थक रूप से काम कर सकती है। जैसे– यदि हमें पेड़ काटने की जरूरत है तो उसकी जगह आप नये पेड़ भी लगाने की भी आवश्यकता है ताकि भविष्य में पेड़ उपलब्ध हो सके। जिससे सतत विकास के साथ–साथ पर्यावरण का भी संरक्षण/संतुलन बनता जाय तभी मानव सही विकास की ओर अग्रसर हो सकेगा। सारांश में हम कह सकते हैं कि शाश्वत विकास (सतत विकास) की अवधारणा संसाधनों के समुचित विदोहन द्वारा जनसंख्या के वर्तमान प्राथमिक आवश्यकताओं को संतृप्त करने पर बल देती है न कि विलासितापूर्ण जीवन की आवश्यकताओं पर।

पर्यावरण संरक्षण हेतु शाश्वत विकास (सतत विकास) की संकल्पना–

इसके लिए निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देने की आवश्यकता होगी–

1. जनसंख्या नियंत्रण– किसी भी देश के लिए बहुत ज्यादा जनसंख्या वृद्धि होना एक समस्या बनी रहती है तो सतत विकास के लिए जरूरी है कि एक संतुलित/उपयुक्त जनसंख्या नीति हो जिससे जनसंख्या को ऐसे स्तर पर लाया जा सके जिसका भरण–पोषण प्राकृतिक संसाधनों एवं पर्यावरण पर बिना विपरीत प्रभाव डाले किया जा सके।

2. कृषि– आजादी के बाद हरित क्रांति एवं पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से कृषि में आत्मनिर्भर होने की दिशा में अग्रसर हुए हैं। इसके अंतर्गत नई तकनीकी के साथ–साथ शाश्वत खेती की ऐसी प्रणाली अपनानी होगी जो जल, वायु और भूमि को क्षति पहुंचाये बिना खेती की उत्पादकता भी बनाये रखा जा सके। इसके लिए बहुफसलीय खेती, फसल चक्र, दलहनी फसलों को प्राथमिकता, गोबर खाद का उपयोग एवं वर्टिकल खेती को बढ़ावा देना होगा।

3. उद्योग– पिछले तीस वर्षों में औद्योगिक व्यवस्था में काफी सुधार हुआ है फिर भी इसके लिए सतत/शाश्वत विकास में प्रदूषण रहित औद्योगिक प्रणाली की स्थापना सम्बन्धी नीति पर विचार किये जाते हैं। यह कैसे होगा? किस सीमा तक होगा, उन बिन्दुओं पर विचार किया जाता है ताकि औद्योगिकीकरण से निकलने वाले कचरे का निपटारा पहले से सुनिश्चित होता है जिससे पर्यावरण कम से कम प्रदूषित हो।

4. ऊर्जा– वर्तमान में जीवनशैली काफी विलासितापूर्ण हो चुकी है। सुबह उठने से लेकर रात सोने तक हम किसी न किसी रूप से ऊर्जा का उपयोग कर रहे होते हैं। इसके उत्पादन में साधारणतः लकड़ी, कोयला, पन–बिजली एवं पशु अपशिष्ट का उपयोग किया जाता है। इन साधनों की भी एक सीमा है। सतत विकास (शाश्वत विकास) के अंतर्गत ऐसी ऊर्जा नीति एवं ऊर्जा उपयोग पर विचार किया जाता है जिससे पुनः उपयोगी ऊर्जा संसाधनों के वैकल्पिक स्रोत जैसे– सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, बायोगैस संयंत्र आदि के प्रयोग पर बल दिया जाता है ताकि पर्यावरण का कम से कम नुकसान हो सके। सरकार की तरफ से वैकल्पिक स्रोतों के लिए सब्सिडी भी देनी चाहिए।

5. परिवहन प्रणाली– वर्तमान समय में प्रचलित परिवहन चाहे दो पहिया हो या चार पहिया वाला वाहन या हो वायुयान या जलपोत। सभी से निकलने वाले धूंआ या अवशिष्ट पदार्थ/गैस से पर्यावरण की काफी क्षति हो रही है। इसमें जो जितना विकसित देश है, उतना ज्यादा क्षति वर्षों से पहुंचा रहा है। सतत विकास (शाश्वत विकास) के अंतर्गत हमें ऐसी परिवहन नीति पर विचार करना होगा कि व्यापक रूप से हो रहे प्रदूषण को किस प्रकार प्रदूषण रहित परिवहन प्रणाली का विकास किया जा सके। इसके लिए पेट्रोल, डीजल की जगह एल.पी.जी., सी.एन.जी. गैस आदि के उपयोग पर बल दिया जा सकता है। जहां तक हो प्रदूषण रहित वाहन जैसे– ई–वाहन को बढ़ावा दिया जाये। इसके लिए सरकार की तरफ से भी बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

6. प्राकृतिक संसाधनों का प्रबन्धन– प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग इस प्रकार किया जाये कि वर्तमान में विकास न रूके और भविष्य के लिए आर्थिक विकास की संभावना भी बंद न हो। ऐसी संतुलित रणनीति के उपयोग पर बल देना होगा। इसके लिए जरूरी है कि नित नये अनुसंधान पर बल दिया जाये जिसमें अपने पर्यावरण की कम से कम क्षति हो।

7. उत्सर्जित कचरे का प्रबन्धन– सभी देशों के पास प्राकृतिक संसाधन सीमित मात्रा में होते हैं इसलिए विकास के साथ–साथ उत्सर्जित कचरे (घरेलू/औद्योगिक) की मात्रा दिनों–दिन पर्यावरण प्रदूषण को भयावत रूप प्रदान कर रही है। ज्ञान के अभाव में कचरा प्रबन्धन के हमारे तौर–तरीके पारम्परिक और अवैज्ञानिक हैं जिससे उत्सर्जित कचरे का पूरा निस्तारण नहीं हो पाता है जोकि एक चुनौती है। जबकि विकसित देशों में बेकार कचरे से अनेक उपयोगी उत्पाद बनाकर कचरे का प्रबन्धन का कार्य किया जा रहा है। जैसे– बिजली बनाना, विभिन्न प्रकार की उपयोगी गैस, खाद बनाना आदि। शाश्वत विकास (सतत विकास) के अंतर्गत हमें ऐसी नीति पर विचार प्रदान करना है कि व्यापक रूप से उत्सर्जित कचरे का प्रबन्धन कैसे, किस सीमा में और किस स्तर पर किया जा सके कि सभी लोगों के लिए लाभदायक तो बनी रहे और पर्यावरण का प्रदूषण भी कम हो सके।

8. रिसाइकिलिंग प्रबन्ध– वर्तमान समय में नित नये विकास के साधन हो गये हैं जिससे अद्यतन हमेशा बना रहता है जिससे पुरानी वस्तुओं को दुबारा उपयोग लेने लायक बनाने हेतु रिसाइकिलिंग तकनीक को बढ़ावा देना होगा। जैसे– कागज के उपयोग तो कम करें ही, जहां तक हो सके डिजिटल का उपयोग करें, साथ ही साथ कागज के दोबारा उपयोग में लेने लायक रिसाइकिलिंग प्रबन्धन की भी व्यवस्था की जानी चाहिए। यहां शाश्वत विकास के अंतर्गत हमें ऐसी तकनीकी विकास पर जोर देता है जिसके माध्यम से किसी वस्तु का दोबारा या ज्यादा से ज्यादा उपयोग में ले सकें और जिसके माध्यम से पर्यावरण प्रदूषण भी कम हो सके।

9. यूज एण्ड थ्रो की प्रवृत्ति से बचें– एक बार इस्तेमाल कर फेंकने वाली वस्तुओं की जगह जहां तक हो सके कम से कम उपयोग में लेवें। जैसे– बाजार से कोई वस्तु खरीदते हैं तो उस वस्तु को लेने के लिए भी प्लास्टिक की थैली में उसे लेकर आते है फिर बाद में उस प्लास्टिक की थैली को कचरे में फैंक देते है। इसकी जगह आप कपड़े की थैली का इस्तेमाल पर बल दे सकते हैं। ठीक उसी प्रकार टिशू पेपर की जगह छोटे कपड़े के तौलिये का उपयोग लिया जा सकता है जिसे दोबारा साफ कर उपयोग में लिया जा सकता है। यहां शाश्वत विकास हमें इस बात की ओर ध्यान केन्द्रित करता है कि यूज एण्ड थ्रो की प्रवृत्ति से पर्यावरण पर गहरा विपरीत प्रभाव पड़ता है। जहां तक हो सके इससे बचें ताकि पर्यावरण को कम से कम क्षति हो।

10. स्वस्थ जीवन शैली का विकास– वर्तमान समय में मानव विलासितापूर्ण जीवनशैली पर बल देता है जिससे ज्यादा से ज्यादा उपयोग या अधिक आवश्यकता पूर्ति की दौड़ में शामिल है जिससे प्राकृतिक संसाधनों का दुरूपयोग व्यापक रूप से हो रहा है। सतत विकास (शाश्वत विकास) में विलासितापूर्ण जीवन के स्थान पर नियोजित एवं संयोजित उपभोग पर बल देता है। यहां जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं जैसे– रोटी, कपड़ा और मकान की पूर्ति किस सीमा तक कैसे भविष्य में भी होती रहे, ऐसी रणनीति पर बल देता है।

उपरोक्त बिन्दुओं के माध्यम से हमें स्पष्ट हो जाता है कि शाश्वत विकास की संकल्पना द्वारा पर्यावरण को कम से कम क्षति पहुंचाते हुए विकास की सीढ़ियां चढ़ा जा सकता है। इसके लिए नित नये अनुसंधान के मार्ग को अपनाना होगा जिससे पर्यावरण संरक्षण हो सके।

वर्तमान समय में आधुनिकता के नाम पर नये कल कारखाने, फैक्टरियों एवं औद्योगिक संस्थानों का अंधाधूंध स्थापित किये जाने से पर्यावरण काफी प्रभावित होता जा रहा है। आमजन का सहयोग पर्यावरण संरक्षण के लिए हमारी संस्कृति एक अभिन्न अंग के रूप में रहा है, परंतु मानव में अपने स्वार्थ के लिए प्राकृतिक संसाधनों के दोहन की प्रवृत्ति ने पर्यावरण संकट की नई चुनौती को जन्म दिया है। कोविड–19 महामारी ने हमें साफ हवा (ऑक्सीजन) की कीमत समझा दी है। पर्यावरण संरक्षण के निमित्त आमजन का सहयोग अनिवार्य हो गया है। आज मानव को सकारात्मक सोच की मानसिकता विकसित करने की आवश्यकता है। दैनिक कार्यों में प्लास्टिक का कम से कम प्रयोग किया जाए, ताकि पर्यावरण को सुरक्षित रखा जा सके। घरों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थों को अलग–अलग वर्गों में विभाजित किया जाना चाहिए। किसान जैविक खेती करें। कम से कम उर्वरक व कीटनाशकों का प्रयोग किया जाए। प्रत्येक व्यक्ति अपने आसपास गमलों में छोटे–छोटे पौधे लगाएं। कम बिजली, कम शोरगूल, कम पानी, कम गैस का प्रयोग कर कोई भी व्यक्ति पर्यावरण संरक्षण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। प्रदूषण रोकने के लिए जलाऊ लकड़ी का उपयोग कम करना जरूरी है, जिसके लिए विद्युत शवदाह गृहों का उपयोग करना चाहिए। पराली न जलाई जाये प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए कम दूरी तय करने के लिए साइकिल एवं अधिक दूरी तय करने के लिए सार्वजनिक वाहनों का उपयोग करें। इस तरह व्यक्तिगत एवं सामाजिक रूप से छोटे–छोटे प्रयास करके भी पर्यावरण को ठीक रखा जा सकता है जिससे मानव तथा पर्यावरण एक–दूसरे के पूरक बन सकें।

निष्कर्ष–पर्यावरण के उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि पर्यावरण के अन्तर्गत विविध आयाम हैं। इसके अन्तर्गत वे सभी वस्तुएँ और दशाएँ सम्मिलित है जिनका हम अपने चारो ओर अनुभव करते है। इस जटिल समग्रता को समझने के लिए आवश्यक है कि हम पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ–साथ प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाये। इसमें सरकार की तरफ से प्रशासनिक के साथ–साथ इसको शिक्षा के निचले स्तर से उच्च स्तर तक पर्यावरण संरक्षण का व्यावहारिक पाठ्यक्रम में पर्यावरण नैतिकता को समाहित किया जाना चाहिए। जिससे के व्यक्ति के अंदर शाश्वत विकास (सतत विकास) की समझ हो सके। इससे पर्यावरण के प्रति ज्ञान, समझ, कौशल तथा जागरूकता द्वारा अपेक्षित अभिव्यक्ति विकसित हो सकेगी तब कह सकेंगे कि ''पर्यावरण सुरक्षित है तो हमारा कल सुरक्षित है।''

SHODH SAMIKSHA AUR MULYANKAN

सन्दर्भ स्रोत सूची

1 बोहरा, वंदना ''पर्यावरण अध्ययन'', ओमेगा पब्लिकेषन, नई दिल्ली–02, 2014, पृ. 284

2 सिंह, अरूण कुमार, ''पर्यावरणीय अर्थशास्त्र : विविध आयाम'', रीगल पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली–27, पृ. 171

3 मेहता, ओम प्रकाश, भारतीय पर्यावरणीय आचरण शास्त्र : सनातन परम्परा का रचनात्मक सर्वेक्षण, न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन, नई दिल्ली, 2015

4 पर्यावरण विमर्श ''इलेक्ट्रॉनिक वाहनों से बचायें पर्यावरण'' वर्ष–23, वोल्यूम–2, अप्रैल–जून, 2018, पृ. 24

5 रघुवंशी, अरूण एवं रघुवंशी, चन्द्रलेखा, पर्यावरण तथा प्रदूषण, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल–4, संस्करण 1990, पृ. 322

6 सिंह, भोपाल, पर्यावरण शिक्षा, आर्य बुक डिपो, करोलबाग, नई दिल्ली, संस्करण 1999, पृ. 288

7 शर्मा, मंजू एवं चौहान, राकेष कुमार ''पर्यावरण षिक्षा'', षिक्षा प्रकाषन, जयपुर–03, 2007, पृ. 196

8 शर्मा, राकेश कुमार, पर्यावरण प्रशासन एवं मानव पारिस्थितिकी, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2012, पृ. 363

9 सक्सैना, के.के. अनिल गुप्ता, डॉ. चांदनी कृपलानी, पर्यावरणीय अध्ययन, यूनिवर्सिटी बुक हाउस (प्रा.) लि, जयपुर, 2013

10 शर्मा, बी.डी., पर्यावरण शिक्षा, ओमेगा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2014, पृ. 288

11 शर्मा, लोकेश, पर्यावरण शिक्षा (विज्ञान) एवं उसका शिक्षण, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा–2, 2014

ISSN 2278 - 0327

शैक्षिक व्यवस्था में समावेशन : विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के संदर्भ में

निधि राठौड़
शोधार्थी, शिक्षा विभाग
जैन विश्व भारती संस्थान लाडनूं नागौर , राजस्थान

डॉ. विष्णु कुमार
सहायक प्रोफेसर, शिक्षा विभाग
जैन विश्व भारती संस्थान लाडनूं नागौर , राजस्थान

अंधकार को दूर कर जो प्रकाश फैला दे
बुझी हुई आश में विश्वाश जो जगा दे
जब लगे नामुकिन कोई भी चीज
उसे मुमकिन बनाने की राह जो दिखा दे वो है
शिक्षा।

शोध सारांश

'शिक्षा के भीतर सर्वाधिक ढंग से निष्पक्षता' के होने का अर्थ है की एक विधार्थी का अलग से ध्यान रखा जाये उसे शिक्षण के ऐसे तरीके, विषय वस्तु और पद्धतियाँ मुहैया कराई जाए जो उसकी विशेष जरूरतों, सशक्त, पहलुओं और रुचियों के अनुकूल हो।

पावेल

संकेताक्षर- समावेशन, समावेशन का माध्यम, समावेशी शिक्षा की आवश्यकता, नजरिया।

सभी बच्चे विशेष होते है और यह भी सत्य है कि प्रत्येक बच्चा अनूठा होता है प्रत्येक बच्चे का व्यवहार करने का व अंतक्रिया करने का अलग तरीका होता है, उसकी अपनी विशिष्ट रुचियाँ, पसंद व नापसंद होती है लेकिन कुछ बच्चे दूसरों की तुलना में ज्यादा विशेष होते है।

समावेशी शिक्षा एक ऐसा ज्वलंत विषय है जिस पर किसी भी विमर्श में दिव्यांग बच्चों या ऐसे कहे किसी भी क्षेत्र में चाहे वो शिक्षा हो, उम्र हो या अन्य क्षेत्र जिससे वो बालक सामान्य बालक के समान शिक्षा लेने से अगर वंचित रह गया है तो उसको समावेशी शिक्षा में शामिल किया जा सकता है प्रत्येक बालक का अधिकार होता है की वो शिक्षा ग्रहण करे, फिर भी किसी कारणवश यदि वह शिक्षा लेने से वंचित रह गया है तो उसे समावेशी शिक्षा में विशेष रूप से शामिल किया जाना चाहिए।

भारत की जनगणना 2011 में यह उल्लेख किया गया है कि भारत में 6-17 आयु वर्ग के 4.9 मिलियन दिव्यांगों का समूह निवास करता है, किन्तु उनमें से केवल 67 प्रतिशत ही किसी शैक्षणिक संस्थानों से शिक्षा ग्रहण कर रहे है। शेष रहे बालक शिक्षा से वंचित रह रहे हैं उन तक शिक्षा की पहुँच सुनिश्चित नहीं हो सकी है, यद्यपि सभी विद्यालयों में चाहे वो सरकारी हो, या गैर सरकारी हो उन में समावेशी शिक्षा की व्यवस्था है उन बालकों को अपने घर से दूर या किसी भी विशेष विद्यालय में जाकर शिक्षा ग्रहण करने की आवश्यकता नहीं है।

सामान्य परिचय-

समावेशन की नीति को हर स्कूल और सारी शिक्षा व्यवस्था में व्यापक रूप से लागू किये जाने की आवश्यकता है बच्चे के जीवन के हर क्षेत्र में वह चाहे स्कूल में हो या परिवार में या बाहर सभी जगह बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित किये जाने की जरूरत है। विद्यालय को एक केंद्र में विकसित किये जाने की आवश्यकता है। जहाँ बच्चों को सिर्फ शिक्षा ही नहीं मिले अपितु वह जीवन जीने की कला में भी महारत हासिल करे। जहाँ बच्चों को जीवन की तैयारी कराई जाये और यह सुनिश्चित किया जाये की सभी बच्चों खासकर शारीरिक या मानसिक रूप से असमर्थ बच्चों, समाज में हाशिये पर जीने वाले बच्चों और कठिन परिस्थितियों में जीवनयापन करने वाले बच्चों को सबसे ज्यादा फायदा मिले। उन्हें अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करने के मौके और प्रोत्साहन-सहपाठियों के साथ पढ़ने का अवसर देना बच्चों में प्रोत्साहन और जुड़ाव को पोषण देने का शक्तिशाली तरीका होता है इसमें विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को भी शामिल किया गया, जिन्हें अपने कार्य को पुरा करने के किये अधिक समय व सहायता की आवश्यकता होती है, अगर शिक्षक ऐसी गतिविधियों की योजना बनाते समय कक्षा में बच्चों से चर्चा कर ले एवं बच्चों की सुविधा के अनुसार समूह में कार्यों का विभाजन को प्राथमिकता देवे।

N.C.F.-2005

- समावेशी शिक्षा का मतलब सबको समाविष्ट करने में है।
- सभी विशेष शैक्षिक आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के विद्यालय में प्रवेश को रोकने की कोई प्रक्रिया नहीं होनी चाहिए।
- समावेशन केवल दिव्यांग बच्चों तक ही सीमित नहीं है बल्कि इसका अर्थ है किसी भी बच्चे का बहिष्कार न होना।
- साथ मिलकर पढना प्रत्येक बच्चे के किये लाभदायी है इसमें अच्छा व्यवहार भी समावेशित है।

शैक्षिक व्यवस्था में समावेशन -

(Inclustion in education system)

स्कूली शिक्षा से जुड़े कुछ ऐसे क्षेत्र है जिनमें सीखने-सिखाने के क्रियाकलापों और अधिगम अनुभवों को सुदृढ़ करने के लिए सुधार की आवश्यकता है ताकि सभी बच्चों के लिए सीखने के समान अवसर सुलभ कराये जा सके अत: इन क्षेत्रों में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की आवश्यकताओं को जानना और उनको पूरा किया जाना आवश्यक है।

श्री एम्. एन. जी मीणा ने अपनी पुस्तक 'Inclusive Education in India Context' में विशेष शाला व्यवस्था; समेकित शिक्षा एवं समावेशी शिक्षा में अंतर को चित्रांकित किया जाता है।

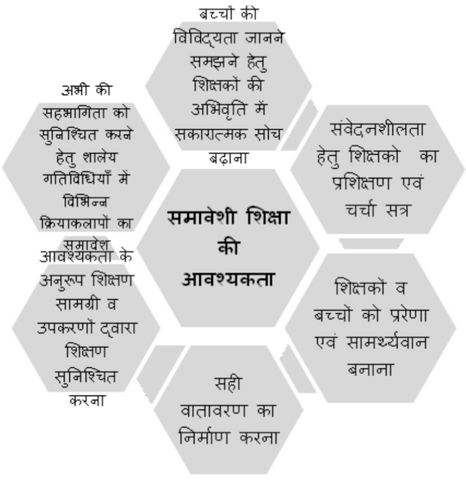

समावेशन प्रोत्साहन के तरीके /माध्यम -

Ways of encouraging inclusion:

विद्यालय का वातावरण समावेशित हो -

बच्चों की शिक्षा कैसी भी हो उसमें विद्यालय के वातावरण का महत्वपूर्ण योगदान होता है यदि विद्यालय का वातावरण खुशनुमा, पर्यावरण प्रिय हो तो वो बालकों के मानसिक और शारीरिक विकास में सहायक होते है विद्यालय का वातावरण ही कुछ चीजों की शिक्षा बालकों को स्वयं भी दे देता है समावेशित शिक्षा के लिए यह आवश्यक है की विद्यालय का वातावरण का सुखद और स्वीकार्य होना चाहिए। समावेशित विद्यालय में विशेष बालकों की शिक्षा के आवश्यक उपकरणों तथा विद्यालय की infrastrucher का वैसा ही होना चाहिए अन्यथा विशेष बालकों को असुविधा का सामना करना पड़ सकता है

सबके लिए विद्यालय -

समावेशी शिक्षा की मूल भावना है एक ऐसा विद्यालय जहाँ सभी बालक एक साथ शिक्षा प्राप्त करते है, परन्तु सामान्यत: इस तरह की बाते देखने और सुनने में आती रहती है की किसी बच्चे को उसकी विशिष्ट शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने में अपनी असमर्थता दर्शाते हुए विद्यालय में प्रवेश देने से मना कर दिया या विशेष विद्यालय में उसके दाखिले के लिए कहा गया।

बालकों के अनुरूप पाठयक्रम -

बालकों को शिक्षित करने का सबसे असरदार तरीका है खेल-खेल में बच्चों को सीखना, अनेक ऐसी गतिविधियां है जिनके माध्यम से बच्चों को आसानी से सिखाया जा सकता है समावेशी शिक्षा व्यवस्था के किये आवश्यक है की विद्यालय पाठ्यक्रम, बालकों की अभिवृतियों मनोवृतियों, आकांक्षाओं तथा क्षमताओं को ध्यान में रखते हुए निर्धारित करना चाहिए।

समावेशित शिक्षा व्यवस्था के अंतर्गत घर से विद्यालय जाते समय बालकों को आरम्भ में नए परिवेश में अपने आपकों समायोजित करने में कुछ असुविधा हो सकती है लेकिन उचित मार्गदर्शन एवं निर्देशन से बालक और उसके माता-पिता दोनों को ही अच्छे परिणाम प्राप्त हो सकते है, जिसके बालक आत्मनिर्भर बनकर अपना जीवन व्यापन सरलता से कर सकता है।

समुदाय की सक्रिय भागीदारी-

विशेष शैक्षिक आवश्यकता वाले बालकों की शिक्षा की पूरी बुनियाद दल के लिए प्रतिभागिता के अवसर निर्मित करने पर टिकी हुई है एक अकेले व्यक्ति के प्रयासों से उन्हें शिक्षा की मुख्यधारा में सम्मिलित नहीं किया जा सकता है समावेशित शिक्षा हेतु आवश्यक है की विद्यालय को सामुदायिक जीवन की भावना को बन मिल सके 7

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के प्रति नजरियाँ -

Opinions for children urim special need:

समावेशी वातावरण का मतलब ही यही होता है सबके प्रति समान नजरिया समान सोच किसी के मन किसी भी प्रकार की कोई शंका नही कोई डर नहीं। बालक किसी भी वर्ग से हो, समुदाय से, लड़का हो, लड़की से सबको समझने के लिए उन्हें एक ही तराजू पर होना चाहिए किसी में कोई फर्क नहीं करना चाहिए जिससे प्रत्येक बालक खुले मन से अपनी हर बात बिना किसी झिझक के कह सके।

निष्कर्ष -

- प्रत्येक बच्चा अनूठा होता है, उसकी लोगो के साथ अंत:क्रियाएँ करने, व्यवहार करने का अपना तरीका होता है उसकी अपनी विशिष्ट रुचियों, पसंद व नापंसद होती है फिर भी कुछ बच्चे दूसरे बच्चे की तुलना में विशेष होते है।
- समावेशी शिक्षा का अर्थ सबका समाविष्ट करना है। जागरूकता एवं सवेदनशील व दिव्यांग लोगों के प्रति समुदाय के नजरिय

में सकारात्मक परिवर्तन लाया जा सकता है।

- विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को शैक्षिक व्यवस्था में समावेशन उनकी आवश्यकताओं को जानने एवं पुरा करने सीखने–सिखाने के क्रियाकलाप और अधिगम अनुभवों को सुदृढ़ करने तथा उन्हें पर्याप्त अवसर प्रदान करने से ही संभव है

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

- एम. एच.आर.डी. 2018 ऑफ इण्डिया सर्वे ऑन हायर एजुकेशन 2017–18 डिपार्टमेंट ऑफ हायर एजुकेशन, मिनिस्ट्री ऑफ ह्यूमन रिसोर्स डेवलपमेंट, गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया नयी दिल्ली
- कुमार ए 2016 एक्सप्लोरिग द टीचर्स एटीट्युड टूवर्ड्स इंक्लूसिव एजुकेशन सिस्टम– ए स्टडी ऑफ इन्डियन टीचर्स जर्नल ऑफ एजुकेशन एंड प्रैक्टिस 7(34) पृष्ट 1–4
- https://files.eric.ecl.gov/fulltext/EJ1126676.pdf पर देखा गया है 7
- दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम 2016 http://disableby affairs- gov. in /upload/ files/ RPWD प्रतिशत 20 ACT 2016 PDF
- भार्गव आर 2016 समावेशी शिक्षा राजश्री प्रकाशन आगरा
- झा मदन मोहन– समावेशी शिक्षा
- सिंह एम. – समावेशी शिक्षा
- सिंह आर. आर. एवं नामदेय एच (2014)भारत में संवेशी शिक्षा की दशा व दिशा परिक्षेप्य संस्करण 21, अंक 3
- द सलामांका स्टेट मेंट (1994)सालामान्का वर्ल्ड कान्फ्रेंस ऑन स्पेशल नीड्स एजुकेशन सालामान्का देखा गया
- http://www.ibe unesco.org/file admin/user-upload/ policy dialogue/48thICE/Generalpresentation-48CIEEnglishPDF
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति– 2020 शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार, नयी दिल्ली
- डिसएबल्ड पर्सन्स इन इण्डिया–अ स्टेटिकल प्रोफाइल –2016
- http://mospin.nic.in पर देखा गया।

Madhya Pradesh Journal of Social Sciences
A biannually Journal of M. P. Institute of Social Science Research, Ujjain
ISSN: 0973-855X (Vol 28 No 10, 2023)

यौगिक क्रियाओं का विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक पक्ष की उपलब्धि पर प्रभाव

जितेन्द्र पाठक[1] व डॉ. विष्णु कुमार[2]
1. शोधार्थी, जैन विश्वभारती, लाडनूं 2. सहायक आचार्य, जैन विश्वभारती, लाडनूं

सार

यह शोध अध्ययन औसत संज्ञानात्मक पक्ष की उपलब्धि वाले विद्यार्थियों पर यौगिक क्रियाओं का उनके संज्ञानात्मक पक्ष की उपलब्धि पर प्रभाव को जानने हेतु किया गया है। शोध अध्ययन में जयपुर शहर के राजकीय माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत 40–40 विद्यार्थियों के दो समूहों का चयन किया गया जिसमें से प्रत्येक समूह में 20–20 विद्यार्थी औसत शैक्षिक उपलब्धि वाले वाले थे;जिनको प्रयोगात्मक व नियंत्रित दो समूहों में विभाजित किया गया। इस अध्ययन में अर्द्ध–प्रयोगात्मक शोध प्रारूप का प्रयोग किया गया है। प्रयोगपूर्व व प्रयोगपश्चात दोनों समूहों के विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक पक्ष की उपलब्धि का मापन शोधार्थी द्वारा निर्मित 'उपलब्धि परीक्षण' द्वारा किया गया। शोध उद्देश्यों के लिए माध्य व मानक विचलन की गणना की गई व शोध परिकल्पनाओं के लिए टी अनुपात का .01 एवं .05 स्तर की सार्थकता पर अनुमानिक विश्लेषण किया गया। शोध अध्ययन के परिणामों में पाया कि यौगिक क्रियाओं केपश्चात औसत शैक्षिक उपलब्धि वाले विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक पक्ष की उपलब्धि योग ना करने वाले औसत शैक्षिक उपलब्धि योग करने वाले विद्यार्थियों कीउपलब्धि से सार्थक रूप से अधिक थी और औसत शैक्षिक उपलब्धि वाले विद्यार्थियों को योग शिक्षण के पश्चात उनके संज्ञानात्मक पक्ष की उपलब्धि शिक्षण से पूर्व की उपलब्धि से बेहतर पायी गई।

मुख्य शब्दावली –औसत शैक्षिक उपलब्धि बालक, समावेशी कक्षा, योग, उपलब्धि परीक्षण।

प्रस्तावना

योग की उत्पति संस्कृत शब्द 'युज' से हुई है। जिसका अर्थ है जोड़ना है। योग शब्द योग की क्रियाओं से स्पष्ट होता है। योग में यौगिक क्रियाओं द्वारा शरीर, मन और आत्मा के बीच संयोग स्थापित होता है, जिससे आत्मिकता की प्राप्ति होती है। प्राचीन मान्यता है कि स्वस्थ शरीर में ही ईश्वर बसता है शरीर बीमार होगा तो आप अपने बारे में ही सोचेंगे, अपने स्वास्थ्य के ऊपर केन्द्रित रहेंगे। ऋषियों ने शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य को ध्यान में रखकर ही योग को जन्म दिया है। आज तेज रफ्तार जिन्दगी में खुद को स्वस्थ और ऊर्जावान बनाएं रखना बेहद आवश्यक है, योग हर किसी की जरूरत है।

पुरातत्ववेताओं ने जो साक्ष्य प्राप्त किये हैं उनसे पता चलता है कि योग की उत्पति 5000 ई. पू. में हुई होगी, गुरू शिष्य परम्परा के द्वारा योग का ज्ञान परम्परागत तौर पर एवं पीढ़ी से दूसरी पीढी को मिलता रहा है। लगभग 200 ई.पू. में महर्षि पतंजलि ने योग लिखित रूप में संग्रहित किया और योगसूत्र की रचना की। योग सूत्र की रचना के कारण पतंजलि को योग का पिता कहा जाता है।

साहित्य समीक्षा

रहमान, यू., शहनवाज, एम.जी. और अन्य (2020) ''लॉकडाउन में भारतीयों में अवसाद, चिंता और तनाव पर योग का प्रभाव'', कम्यूनिटी मेंटल हैल्थ जर्नल, नई दिल्ली

उद्देश्य

1. कोविड के दौरान लगने वाले लॉकडाउन से बढ़ने वाले तनाव, चिंता और अवसाद पर योग के प्रभाव को ज्ञात करना।

निष्कर्ष

1. लॉकडाउन में अवसाद को कम करने में योग का सकारात्मक प्रभाव पाया गया।
2. कोविड से ठीक होने के बाद लोगों के तनाव को कम करने में भी योग का संबंध पाया गया।

नागेन्द्र, एच.आर. (2020) ''कोविड 19 के लिए योग', इंटरनेशनल जर्नल ऑफ योग, 13(2), 87–88

उद्देश्य

1. कोविड 19 में रोग प्रतिरोधक क्षमता मजबूत करने में योग का प्रभाव ज्ञात करना।
2. कोविड 19 से उभरने में योग की भूमिका ज्ञात करना।

निष्कर्ष

1. जिन लोगों को कोविड 19 नहीं हुआ, उन लोगों को योग करवाने से उनमें कोविड होने की प्रतिशतता 50 प्रतिशत तक कम पायी गई।
2. कोरोना होने के बाद जिन लोगों को योग करवाया गया उन्हें कोरोना के बाद होने वाली समस्याओं का सामना कम करना पडा और उनके ठीक होने की दर 40 प्रतिशत अधिक पायी गई।

ग्रोवर, एस. (2021) ''कोविड 19 लॉकडाउन का मनोवैज्ञानिक प्रभाव और योग की भूमिका', इंडियन जर्नल ऑफ साइकाइट्रिस्ट, दिल्ली

उद्देश्य

1. कोविड 19 लॉकडाउन के दौरान लोगों की मनोवैज्ञानिक स्थिति का पता लगाना।
2. कोविड 19 लॉकडाउन में मानसिक स्थिरता और शांति में योग की भूमिका का पता लगाना।

निष्कर्ष

1. लॉकडाउन में लोगों में तनाव, अवसाद और चिंता का स्तर उच्च पाया गया।
2. जिन लोगों ने लॉकडाउन में योग किया उनमें तुलनात्मक रूप से तनाव, अवसाद और चिंता का स्तर कम पाया गया।

समस्या कथन – वर्तमान शोध औसत शैक्षिक उपलब्धि वाले विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक पक्ष की उपलब्धि पर योग के प्रभाव का अध्ययन इस शोध समस्या में किया गया है।

शोध उद्देश्य –

1. औसत शैक्षिक उपलब्धि वाले विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक पक्ष की उपलब्धि पर योग करने के प्रभाव का आंकलन करना।

शोध परिकल्पना

1. औसत शैक्षिक उपलब्धि विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक पक्ष की उपलब्धि पर योग का कोई सार्थक प्रभाव नहीं है।

अनुसंधान प्रारूप

अध्ययन में प्रयोजन यादृच्छिक विधि का उपयोग करते हुए 20 विद्यार्थियों पर योग करवाने से पूर्व और पश्चात् प्रयोगात्मक विधि का उपयोग किया गया।

दत्त एवं जनसंख्या

राजस्थान के जयपुर शहर के माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर के राजकीय विद्यालयों में से यादृच्छिक विधि द्वारा दो राजकीय विद्यालयों का चयन कर अनुसंधान के प्रयोजन के अनुरूप चयन किया गया।20 औसत शैक्षिक उपलब्धि वाले विद्यार्थियों का चयन किया गया।

प्रयोग विधि

इस अध्ययन हेतु प्रयोगात्मक उपागम और दत्त संकलन प्रक्रिया तीन अवस्थाओं में 12 सप्ताह में पूर्ण हुई। प्रयोग पूर्व की अवस्था जिसमें पूर्व परीक्षण का प्रशासन चयनित समूहों पर किया गया। उसी समूह पर प्रयोग कर पुनः उपकरण का प्रशासन करते हुए तथ्यों का संकलन किया गया।

प्रयुक्त उपकरण

संवेगात्मक पक्ष उपलब्धि हेतु स्वनिर्मित परीक्षण का निर्माण किया गया। इसमें पूर्व एवं पश्च परीक्षण भिन्न–भिन्न बनाए गए।

दत्त विश्लेषण विधि

अध्ययन में शोध उद्देश्यों के लिए माध्य व मानक विचलन तथा परिकल्पना परीक्षण हेतु टी मूल्य की गणना की गई। आंकड़ों का विश्लेषण स्टेटिकल पैकेज फॉर सोशल साइंसेज (एसपीएसएस) द्वारा किया गया।

परिणाम

अध्ययन शोध से प्राप्त परिणाम निम्नलिखित सारणियों द्वारा दर्शाए गए है –

सारणी 1

औसत शैक्षिक उपलब्धि वाले विद्यार्थियों को यौगिक क्रियाऐं करवाने के बाद उनके संज्ञानात्मक पक्ष कीउपलब्धि तथा उसके घटकों का माध्य, मानक विचलन और क्रांतिक अनुपात

क्रम	उपलब्धि घटक (पक्ष)	परीक्षण	संख्या	स्वतंत्रता कोटि	प्रयोगात्मक समूह (सहपाठी अनुशिक्षण)			
					माध्य	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता स्तर
1	ज्ञान	पूर्व	20	18	5.85	2.681	-10.43	.001
		पश्च	20	18	8.50	2.164		
2	अवबोध	पूर्व	20	18	6.80	2.191	-5.62	.001
		पश्च	20	18	9.15	2.033		
3	ज्ञानोप्रयोग	पूर्व	20	18	6.45	1.538	-5.17	.001
		पश्च	20	18	8.80	2.526		
4	रचनात्मकता	पूर्व	20	18	1.65	0.745	-4.27	.001

		पश्च	20	18	2.35	0.671		
5	कुल	पूर्व	20	18	20.75	5.990	-10.80	.001
		पश्च	20	18	28.80	6.296		

सारणी के तथ्यों से स्पष्ट है कि यौगिक क्रियाऐं से पूर्व एवं पश्चात संज्ञानात्मक पक्ष के ज्ञान, अवबोध, ज्ञानोप्रयोग, रचनात्मकता एवं कुल उपलब्धि परिणामों में माध्यों का अंतर बहुत अधिक है। संज्ञानात्मक पक्ष की उपलब्धि के स्तरों का क्रान्तिक अनुपात –10.43, –5.62, –5.17, –4.27 तथा –10.80 है जोकि .01 स्तर पर सार्थक है। सहपाठी अनुशिक्षण से पढ़ाने के पश्चात विशिष्ट आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक पक्ष की उपलब्धि सभी स्तरो में सार्थक रूप से बढ़ गयी।अतः शून्य परिकल्पना ''समावेशी कक्षा के विशिष्ट आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक पक्ष की उपलब्धि पर सहपाठी अनुशिक्षण विधि का कोई सार्थक प्रभाव नहीं है'' को स्वीकृत नहीं किया जा सकता है।

परिचर्चा

परिकल्पना के परिणाम भी औसत शैक्षिक उपलब्धि वाले विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक पक्ष पर योग के पश्चात सार्थक अंतर की पुष्टि करते है। योग के पूर्व जहाँ विद्यार्थियों कीशैक्षिक उपलब्धि का स्तर लगभग औसत रहा वहीं योग के उपरांत विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का स्तर सार्थक रूप से बढ़ गया था जो योग के प्रभाव को दर्शाता है।

निष्कर्ष

शैक्षिक उपलब्धि के लिए योग भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है जिसमें औसत विद्यार्थीयोग के उपरांत अधिक समझ, ज्ञानोप्रयोग और रचनात्मकता के साथ सीखते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अग्रवाल, मीनू (2001) ''राजस्थान में विभिन्न प्रकार के विद्यालयों के छात्रों के व्यक्तित्व, व्यायाम, अनुशासन, आचरण व नैतिक मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन'', राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर।
2. सिंह, अविनाश (2002) इलाहाबाद के ''किशोर विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों व उनके मानसिक स्वास्थ्य पर योग के प्रभाव का अध्ययन'', इलाहबाद विश्वविद्यालय
3. ए.एन. प्रसाद (2003) ''लिंग भेद के आधार पर विद्यालय शिक्षकों के समायोजन एवं दुश्चिन्ता (तनाव) पर योगाभ्यास का प्रभाव'' देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार
4. बार आर. (2000) ''इमोशनल एण्ड सोशल इंटेलीजेंस इन्साइट फ्राम द इमोशनल क्वरेन्ट इवेन्ट्री।''International Journal of Yoga and Allied Sciences, Delhi
5. बन्डा एवं कुर्कड़ (2012) ''स्वास्थ्य पर शारीरिक व्यायाम के प्रभाव का अध्ययन'', कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय
6. बारबरा स्टोलेर मिलर, (1996), योगः डिसिप्लिन टू फ्रीडम योग सूत्र, कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी
7. कास्टा (2001) ''दुश्चिन्ता निदान'', ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
8. चिन्ताहरण बेताल (1999) ने ''Effect of Preksha Meditation on Drug Abuses's Personality'' International Journal of Yoga and Allied Sciences, Delhi
9. डेविड शिपरों एवं इयान ए. कुक, (2003) ''निराशा पर योग का प्रभाव'', कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय

10. डी.एन. (2003) ''शैक्षिक दबाव एवं दुश्चिन्ता के साथ व्यापन'',राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

आलोचना
त्रैमासिक

Certificate of Publication

This is to certify that

डॉ. विष्णु कुमार

For the paper entitled

यौगिक क्रियाओं का विद्यार्थियों के सांवेगिक और मानसिक पक्ष पर प्रभाव

Volume No. 64 No. 2, November 2023

in

ALOCHANA

Impact Factor: 4.7

UGC-CARE Listed Group-I

राजकमल प्रकाशन समूह

ALOCHANA EDITOR IN CHIEF

UGC - CARE LISTED

ISSN: 0974-8946

अनुसन्धान-प्रकाशन-विभागीया त्रैमासिकी शोध-पत्रिका

शोध-प्रभा

(A Refereed & Peer-Reviewed Quarterly Research Journal)

प्रधानसम्पादकः
प्रो.रमेशकुमारपाण्डेयः
कुलपतिः

सम्पादकः
प्रो.शिवशङ्करमिश्रः

सहसम्पादकः
डॉ.ज्ञानधरपाठकः

श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालयः

केन्द्रीयविश्वविद्यालयः

नवदेहली-16

S. No.	Content	Author's	Page No.
1	हनुमानगढ़ जिलें के आर्थिक विकास पर मानव संसाधन विकास के प्रभावों का विश्लेषणात्मक विवेचन	डॉ महेश कुमार	1-7
2	MUTUAL INTELLIGIBILITY IN THE POPULAR MEDIA OF HINDI AND URDU	Shweta Chandra	8-14
3	INDIA PERSPECTIVE OF SCHOOL DROPOUT RATE AMONG ADOLESCENTS	Dr. Harendra Kumar Singh Shikhar Kumar Preety Sharma Dr. Subhash Kumar	15-38
4	समकालीन समय में भाषा साहित्य व बदलता भारतीय आदिवासी इतिहास लेखन	डॉ0 अनुराधा सिंह	39-44
5	A STUDY ON CREATION OF STATE AND INSURGENCY IN THE MIZO HILL	Sheikh Firdous Ahmed	45-49
6	EFFECT OF COMBINED TRAINING PROGRAMME (HIGH INTENSITY INTERVAL TRAINING AND YOGA) ON BODY MASS INDEX AMONG VOLLEYBALL PLAYERS OF UTTARAKHAND STATE	Dr Ajay Malik Kanik	50-56
7	UNFOLDING THE TREASURES OF THE LECTURES FROM COLOMBO TO ALMORA FOR THE YOUTH OF INDIA	Sheetal Devi Dr. Santosh Kumar Tripathi	57-63
8	UNVEILING THE POWER OF EMOTIONAL INTELLIGENCE: ITS INFLUENCE ON JOB SATISFACTION IN THE BANKING SECTOR	Dr. Falguni Satsangi Dr. Bhumika Punjabi Dr. Ankita Jain	64-76
9	आधुनिकयुगे संस्कृतशिक्षा प्रसारार्थ विद्यासागरस्यावदानम्	डः तानिया-सिकदारः	77-79
10	FEMICIDE: A GENDER-BASED DISCRIMINATION AGAINST WOMEN	Jennifer Akhtara Hussain	80-85

11	कुण्डलिनी का स्वरूप	सायर बोथरा डॉ. हेमलता जोशी	86-90
12	जल संसाधन की उपयोगिता एवं महत्व का अध्ययन : छत्तीसगढ़ के रायगढ़ जिले के विशेष संदर्भ में	डॉ. भावना माहुले	91-96
13	AN EVALUATION OF PRIME MINISTER'S EMPLOYMENT GENERATION PROGRAMME ON ENTREPRENEURIAL DEVELOPMENT THROUGH MSMES IN ASSAM	Priyadarshani Baruah Dr.Nupam Kumar Palit	97-104
14	दलित अस्मिता में शिक्षा की भूमिकाः एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण	ओम प्रकाश	105-113
15	जनजातियों के लिए भारत में किये गये संवैधानिक और सरकारी उपबंधों का मूल्यांकनात्मक अध्ययन	मीरा देवी	114-121
16	SOCIAL CHANGE DYNAMICS: A JOURNEY OF HUMANS FROM PRIMEVAL TO THE PRESENT ERA.	Dr. Anup Jyoti Bharali	122-129
17	कबीरधाम जिले के बैगा जनजाति में प्रजननता का निर्धारण	राजू चन्द्राकर डॉ बालेन्दु मणि त्रिपाठी	130-135
18	विशेष शिक्षकों द्वारा अनुभव की गई चुनौतियाँ रायपुर जिलाछत्तीसगढ़ में बौद्धिक रूप से दिव्यांग बच्चे: गुणात्मक अध्ययन।	हरीश कुमार साहू डॉ. रविंद्र जी भेंडे	136-141

शोध-प्रभा (ISSN : 0974-8946)
(A REFERRED & PEER- REVIEWED QUARTERLY RESEARCH JOURNAL)

कुण्डलिनी का स्वरूप

सायर बोथरा
शोधार्थी, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं, (राज.)

डॉ. हेमलता जोशी
जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं, (राज.)

प्राणी के अस्तित्व के लिए दो तत्त्वों का होना आवश्यक है ज्ञान और क्रिया। ज्ञान का माध्यम चेतना है तो क्रिया का माध्यम प्राण है। इन दोनों का ही अपना विशेष महत्त्व है। ये दोनों तत्त्व जितने ही विकसित होते हैं, जीवन का विकास भी उसी के अनुरूप होता है। मानव जीवन में इन दोनों का प्रभाव सबसे अधिक दिखाई देता है। इसीलिए मानव प्राणी ने इनकी शक्ति को पहचाना, अपनी साधना के द्वारा इनके रहस्यों का उद्घाटन किया और नई संभावनाओं के द्वार खोले। कुंडलिनी का जागरण इसी का परिणाम है। कुंडलिनी शक्ति का मूल स्थान मूलाधार चक्र माना गया है जहां ये सुप्तावस्था में रहती है। इसे जगाकर सहस्रार चक्र तक ले जाना योगी की साधना का महत्त्वपूर्ण अंग है। इसके जागरण से अनेक प्रकार की समस्याओं का समाधान तो होता ही है साथ ही योगी साधना की उच्च अवस्था को प्राप्त कर लेता है और उसे अतीव आनंद की अनुभूति होती है।

कुण्डलिनी का अर्थ

कुण्डलिनी शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के दो मूल शब्दों से हुई है– कुंडल और कुंड। कुंडल अर्थात् वलय, पाश, गोल या फंदा और कुंड अर्थात् गड्डा, गर्त। इसीलिए कुंडलिनी का आकार गोल है और यह मूलाधार चक्र में स्थित है।

हठ प्रदीपिका में कुंडलिनी के अनेक नामों का उल्लेख है–

"कुटिलांगी कुण्डलिनी, भुजंगी शक्तिरीश्वरी।
कुंडल्यरुंधती चैते, शब्दाः पर्यायवाचकाः।। 3/100 ह. प्र.

कुटिलांगी, कुंडलिनी, भुजंगी, शक्ति, ईश्वरी, कुंडली, अरुंधती, इसके पर्याय हैं। इसके अतिरिक्त भी कलावती, बहुरूपिणी, योगिनी, महापथ आदि नामों का उल्लेख मिलता है। जैन साहित्य में भी महापथ नाम मिलता है।

कुंडलिनी का स्वरूप

कुंडलिनी एक शक्ति है, प्राण शक्ति का प्रतीक है। एक ऊर्जा शक्ति है जो जीवन में अपना विशेष स्थान रखती है।

हठयोग प्रदीपिका में कहा है–

सशैल वनधात्रीणां यथाधरोऽहिनायकः।

सर्वेषां योगतंत्राणा तथा धारो हि कुण्डली।।

संपूर्ण पृथ्वी का आधार है शेष नाग। वैसे ही समस्त योग तंत्र शास्त्रों का आधार है– कुण्डली। मूलाधार चक्र में सन्निहित मानवीय दिव्य शक्ति के अर्वाचीन तंत्र ग्रंथों में कुण्डलिनी शक्ति और वैदिक साहित्य में ब्रह्ममवर्चस कहा है।

इसे 'Surpentfire भी कहा जाता है। तंत्रिक ग्रंथों में 'आदिशक्ति, ज्ञानणर्व में विश्वजननी, सृष्टि संचालिनी शक्ति जैसे नामों से प्रख्यात है तथा शैव दर्शन में शिवलिंग के माध्यम से इस शक्ति को अभिव्यक्त किया है।

थियोसोफिकल सोसायटी की संस्थापिका मैडम बलेवेट्रूकी के शब्दों में यह कॉस्मिक इलेक्ट्रिसिटी यानि विश्व विद्युत है। विज्ञान में इसे जीवन शक्ति अर्थात् चुम्बकीय विद्युत कहा है। यही है वह चुम्बकीय क्रिस्टल जो काया के ट्रांजिस्टर हेतु आधार खड़ा करती है। जैन साधना पद्धति में तेजोलब्धि से इसकी तुलना की है।

अनेक योगियों ने कहा है कि मेरुदण्ड की हड्डी से जुड़े अतीन्द्रिय पथ सुषुम्ना में होने वाला प्राणों का प्रवाह कुण्डलिनी है। कई साधकों का कहना है कि कुण्डलिनी केवल नाड़ी–तन्तुओं के माध्यम से प्रवाहित होने वाला संदेश है। शरीर का आधार है मेरुदण्ड जिस पर हमारा शरीर टिका हुआ है। शरीर विज्ञान के अनुसार 33 अस्थियों से बना हुआ यह मेरुदण्ड अन्दर से पोला एवं नीचे का भाग छोटा और तीखा होता है, उसके आसपास की जगह को 'कंद' कहते हैं। अर्थात् कुंड़लिनी जैसी महाशक्ति इसी कंद क्षेत्र में निवास करती है। कुंड़लिनी की तुलना सांप से की गई है।

अनेक जन्मों के कर्म संस्कारों को, अपनी पूंछ को मुख में रखकर गहरी निद्रा में सुप्त कुंडलिनी कर्म संस्कारों के भोगने हेतु सभी जीवों में सूक्ष्म स्वरूप में विद्यमान रहती है। योगमार्त्तण्ड़ में बताया गया है कि कामाख्या योनि के मध्य में ही पश्चिमाभिमुखी स्वयंभू लिंग स्थित है–

योनि मध्ये महालिंग पश्चिमाभिमुखं स्थितम्।

पेड़ से ऊपर एवं नाभि के नीचे खगाण्डवत् कन्दयोनि जो 72000 नाड़ियों के समूह में अवस्थित है। उसके ऊर्ध्व भाग में कुण्डलिनी का अस्तित्व है, ऐसा योगमार्त्तण्ड में कहा है–

कन्दोर्ध्व कुण्डली शक्तिरष्टधा कुण्डलीकृता।

अद्भुत ऊर्जा का भंडार युक्त कुंडलिनी ब्रह्माण्ड और मनुष्य की समस्त शक्तियों का स्रोत है। शक्ति चाहे मानसिक हो या भावनात्मक, काम जन्य हो या आध्यात्मिक, एक ही ऊर्जा से संचालित है। विशेषता यह है कि जिस चक्र के माध्यम से व्यक्त होती है उसी चक्र के गुणों व लक्षणों को धारण कर लेती है। शरीर में विद्यमान 72 हजार नाड़ियां सामान्य रूपेण आंखों से दृश्य नहीं लेकिन अतीन्द्रिय ज्ञानियों में ये नाड़ियां प्रकाश की तरंगों के रूप में दृश्य हो जाती हैं।

नाड़ियां वे सूक्ष्म वाहिकाएं हैं जिनसे प्राण शक्ति का प्रवाह होता है। 14 नाड़ियों का प्रमुख स्थान होने पर भी तीन नाड़ियों का अत्यधिक महत्व है जो इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना नाम से प्रख्यात है। इड़ा नाड़ी मेरुदण्ड के बांई और तथा पिंगला मेरुदण्ड के दाहिनी ओर लिपटी हुई है। सुषुम्ना

मूलाधार से सहस्रार तक फैली हुई है। मेरुदण्ड के अन्दर स्थित है। सुषुम्ना ज्ञान प्राप्ति का सर्व शक्तिमान स्रोत है। इड़ा और पिंगला के मध्य में स्थित सुषुम्ना के भीतर क्रमशः वज्रनी, चित्रणी, तथा ब्रह्म नाड़ी जो क्रमशः रजस, सत्व व चेतना की द्योतक है। मूलाधार चक्र के अन्तिम छोर तक विद्यमान सुषुम्ना जिसे ब्रह्म द्वार कहा जाता है, योग साधना और क्रियाओं द्वारा इसे जागृत कर ऊर्ध्वमुखी विकास सम्भव है।

कुण्डलिनी का स्थान

मेरुदण्ड के भीतर सबसे निचले छोर, गुदा और लिंग की जड़ के नीचे स्थित सुषम्ना नाड़ी में मूलाधार चक्र है जिसे मुक्त त्रिवेणी भी कहते हैं। यह अण्डाकार, चार दल वाला त्रिकोण है जिसका तत्व पृथ्वी, रंग पीत, बीज लं, देवता गणेश, शक्ति डाकिनी और अधिष्ठाता देव ब्रह्मा है। इस के निचले भाग में बन्द कली के समान एक लिंग जिसमें अत्यन्त सूक्ष्म एक छिद्र है जो सुषुम्ना नाड़ी का मुख है। बंद कली के समान इसको स्वयं भू लिंग भी कहते हैं जिसके चारों और साढ़े तीन घेरे मे कसकर लिपटी, अत्यन्त तेजस्वी सुनहरे रंग की चमचमाती, सर्प के समान स्वरूप वाली, अपनी पूंछ को मुख में डाले सुषुम्ना नाड़ी को रोकती हुई जीवन शक्ति सप्त कुण्डलिनी है।।

कुंडलिनी की अवस्थाएं

कुंडलिनी की दो अवस्थाएं मानी गई हैं– जागृत और स्वप्न। सुप्त अवस्था युक्त कुंडलिनी से विचारों का प्रवाह नकारात्मक रहता है। भोग–विलास, सांसारिक विषयों में आसक्ति, लालच, छल, कपट, प्रपंच, मोह, माया जैसे भाव मुखर रहते हैं। आवृत चेतना में इन्हीं कार्यों में सुख की कामना रहती है। कुंड़लिनी जागृत अवस्था में रहने से उसे इन भावों का स्वरूप सकारात्मक रहता है। मोह, माया, भोग–विलास रूपी संसार असार प्रतीत होता है। सर जानबुडराफ ने 'दी सर्पेन्ट पावर'' नामक अपने ग्रंथ में लिखा है कि सोई कुंडलिनी मनुष्य में आसक्ति पैदा करती है, जागृत कुंडलिनी विरक्ति पैदा करती है। गीता में भी कहा गया है कि दूसरों के लिए रात्रि है, वह योगी के लिए दिन और जो दूसरों के लिए दिन, वह योगी के लिए रात्रि है। सुप्तावस्था में कुंडलिनी को चक्र एवं जागृतावस्था में कमल की संज्ञा दी जाती है।

कुण्डलिनी जागरण का उद्देश्य

शक्ति का स्रोत कुंडलिनी प्रस्फुटित करने के बाह्य साधन, मार्ग एवं स्वरूप भिन्न–भिन्न हो सकते हैं परन्तु आन्तरिक उद्देश्य समस्त साधनों का आत्मा का साक्षात्कार करना है जो कुंडलिनी जागरण से ही संभव है। तंत्र शास्त्र में भी इसे पुष्ट किया है। उनके अनुसार सब प्रकार की विद्या, शक्तियां व मुक्ति प्राप्त करने का साधन है। कुंडलिनी सभी योगों का आधार और मोक्ष के द्वार को खोलने की चाबी भी है।

कुंडलिनी जागरण

सुप्तावस्था से कुंडलिनी को साधना द्वारा जगाकर उसका ऊर्ध्वारोहएर करना ही कुंडलिनी जागरण है। योग के साधक साधना के द्वारा अपने वास्तविक स्वरूपमय शक्ति को प्राप्त क़र लेते हैं। ये आलौकिक शक्तियां महापुरुष, सिद्ध पुरुष या अवतार रूप में प्रतिष्ठित होती हैं। इस शक्ति का

नाम है कुण्डलिनी जागरण। नाभि चक्र पर सूर्य रश्मियों का ध्यान जब पूरे शरीर में व्याप्त होता है तब कुंडलिनी का चैतन्यमय होना ही उसका जागरण है। कर्म, ज्ञान और भक्ति ये जागरण की प्रारम्भिक अवस्था मात्र है। कुंडलिनी का पूर्ण जागरण साधक को अद्वैत सिद्धि की प्राप्ति कराता है। तंत्र शास्त्र में इसे पूर्णाहंता कहा है। यह जागरण दो रूपों में प्रकट है। प्रोणात्थान और प्रकाशमय रूप। प्राणोत्थान मेरुदण्ड से होता हुआ जब ब्रह्मरंध्र में प्रवेश करता है, तब छः चक्रों में मन एवं प्राण की क्रियाओं का स्पर्श जन्य अनुभव होता हुआ प्राण सुषुम्ना में प्रवेश करके सभी चक्रों को प्रकाशित कर देता है। कुंडलिनी का पूर्ण रूप से जागरण प्राणशक्ति के रूप में माना गया है। यही इसकी वैज्ञानिकता है।

कुंडलिनी जागरण

वैज्ञानिक परीक्षणों के अनुसार कुंडलिनी का एक विशिष्ट स्थान है जहां प्रवाह रूप प्राणशक्ति विद्यमान रहती है, इसी के विकास से कुंडलिनी का जागरण किया जा सकता है। वैसे तो हर प्राणीमात्र की कुछ अंशों में कुंडलिनी जागृत रहती है। वनस्पति से लेकर मनुष्यों तक सभी संसार के प्राणियों में वह विद्यमान है क्योंकि यही वह शक्ति है जो चेतन व अचेतन प्राणी की पहचान का कारण है।

जैन आगम ग्रन्थों के अनुसार चैतन्य रूप कुण्डलिनी का अनन्तवा भाग सदा जागृत हरता है यदि यह भाग आवृत हो जाये तो जीव अजीव में भेद नहीं किया जा सकता। तात्पर्याथ तैजस शक्ति हर प्राणी में विद्यमान रहती है लेकिन सबमें समान रूप से विकास संभव नहीं होता।

1. साधना–साधना शक्ति विकास का सशक्त माध्यम है। अतः तैजस शक्ति या कुंडलिनी को अपनी विशेष साधना के द्वारा विकसित किया जा सकता है।

2. गुरुकृपा– कई बार गुरु कृपा से या कोई ऐसे व्यक्ति के पास जिसका तैजस शरीर जागृत हो, उसके परिपार्श्व (सान्निध्य) में बैठने से भी अर्द्धजागृत कुंडलिनी पूर्ण जागृत हो जाती है।

3. पूर्व संचित सस्कार– पूर्व संचित संस्कारों की प्रबलता से भी कुंडलिनी जागृत हो जाती है। कई बार साधना या भक्ति के प्रयास के बिना ऐसा लगता है कि शक्ति का सूत्रपात हुआ है यानि प्राणशक्ति जाग गई है।

4. औषधियां–औषधियों के द्वारा भी प्राणशक्ति (कुंडलिनी) को जागृत किया जा सकता है। कुछ विशेष वनस्पतियों का प्रयोग भी सहयोगी बन सकता है। तिब्बत में तीसरे नेत्र के उद्घाटन में वनस्पतियों का प्रयोग किया जाता था। शल्य चिकित्सा एवं वनौषधियों के प्रयोग भी इसके कारण हो सकते हैं।

5. मंत्र साधना –कुंडलिनी को मंत्रों के प्रयोग द्वारा भी जगाया जा सकता है। इसके अलावा रत्नों व मणियों के विकिरण भी चेतना को जागृत करने में फलीभूत हो सकते हैं।

6. प्रेक्षाध्यान –प्रेक्षाध्यान में तैजस शक्ति को जगाने के लिए पांच प्रकार भी माध्यम बनते हैं–

1. अन्तर्यात्रा– ज्ञान केन्द्र से श्वास भरते हुए शक्ति केन्द्र अर्थात् मूलाधार तक पहुंचना और पुनः शक्ति को संग्रहित कर श्वास को बाहर निकालना व मूलबन्ध लगाते हुये ज्ञान केन्द्र तक जाना, इस प्रयोग की अनेकों आवृत्तियां नियमित करने से जागरण के क्षण नजदीक बन सकते हैं। अन्तर्यात्रा का यह प्रयोग तैजस शक्ति को बढ़ाता है, आवश्यक है भाव क्रिया के साथ एकाग्रता बनी रहे।

2. श्वास प्रेक्षा– 1 घंटे तक प्रतिदिन लम्बा और गहरा श्वास लेना व छोड़ना, दीर्घ श्वास प्रेक्षा का यह अभ्यास शक्ति जागरण का शक्तिशाली माध्यम बन सकता है।

3. शरीर प्रेक्षा– शरीर को स्थिर एवं शिथिल करके बंद आंखों से शरीर के प्रत्येक अंग को केवल देखना है। इस प्रकार प्रत्येक अंग को देखते–देखते शरीर दर्शन का अभ्यास पुष्ट होता है तब तैजस शक्ति का जागरण होता है।

4. चैतन्य केन्द्र प्रेक्षा– प्रेक्षाध्यान में 13 चैतन्य केन्द्रों पर जब चित्त की यात्रा होती है यानि जब चैतन्य केन्द्रों की प्रेक्षा होती है तो कुण्डलिनी के सारे मार्ग साफ हो जाते हैं।

5. लेश्याध्यान– लेश्याध्यान यानि रंगों का ध्यान। रंग हमारे जीवन को हमारे भावों को बुहत ज्यादा प्रभावित करते हैं व कुंडलिनी जगाने का सशक्त माध्यम है। जब हम चैतन्य केन्द्रों से संबन्धित रंगों का ध्यान करते हैं तो उस केन्द्र की शक्ति का जागरण होना शुरू हो जाता है।

कुंडलिनी जागरण का परिणाम

साधक आधि, व्याधि और उपाधियों से भी मुक्त हो जाता है। तैजस शक्ति का विकास होने पर बीमारियों के परमाणु समाप्त हो जाते हैं, भस्म हो जाते हैं। साधक अपनी साधना निर्विघ्न कर सकता है। कुंडलिनी जागरण से ध्यान केन्द्रित होता है साथ ही निर्विकल्प समाधि की स्थिति प्राप्त की जा सकती है।

निष्कर्षतः सिद्ध होता है कि शक्ति का शरीर में अपना विशेष महत्त्व है। जब तक यह शक्ति मूलाधार में सुप्तावस्था में रहती है तब तक जीवन की दिशा और दशा को ऊध्वारोही नहीं किया जा सकता है। इसके विपरीत शक्ति के जागरण से ही, उसके ऊर्ध्वारोहण से अंतःनिहित संभावनाओं के द्वार खुलने लगते हैं। तब साधक अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हो जाता है। अतः आवश्यकता है साधक का अपने लक्ष्य के प्रति प्रामाणिकता और सतत् ध्यान साधना का अभ्यास। यदि वह इसमें तत्पर रहता है तो सफलता का द्वार युल जाता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. तंत्र विद्या एवं साधना ....?
2. हठप्रदीपिका, कैवल्यध्याम, श्रीमन्माधव योग मंदिर समिति, लोनावला, पुणे, 2011
3. घेरंड सहिता, स्वामी निरजंनानंद सरस्वती, योग पब्लिकेशन ट्रस्ट बिहार, 2011
4. जीवन विज्ञान प्रेक्षाध्यान एवं योग, पंचम पत्र, डॉ. समणी स्थित प्रज्ञा, जैन विश्वभारती संस्थान लाडनूं, (राजस्थान)
5. प्रेक्षाध्यान पत्रिका, तुलसी अध्यात्म नीड़म्, लाडनूं, (राज.), जनवरी, 2014
7. मैं हूं अपने भाग्य का निर्माता, आचार्य महाप्रज्ञ, जैन विश्वभारती लाडनूं, राज.।

आलोचना

त्रैमासिक

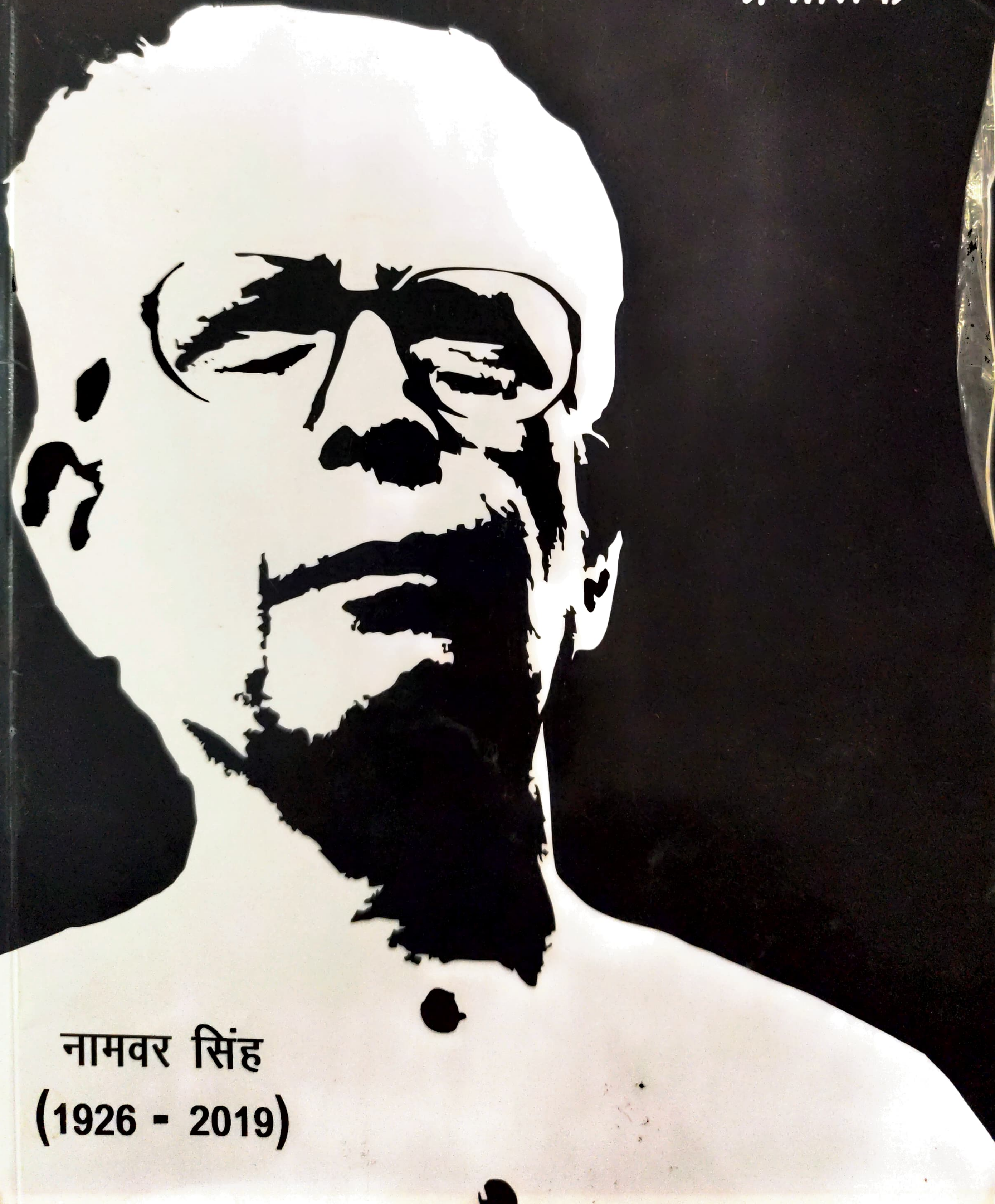

नामवर सिंह

(1926 - 2019)

आलोचना

त्रैमासिक

अंक 64, भाग –2, 2023

प्रधान सम्पादक
नामवर सिंह

सम्पादक
आशुतोश कुमार
संजीव कुमार

सहसम्पादक
आर. चेतनक्रान्ति

कला सम्पादक
हरीश आनन्द

प्रबन्ध सम्पादक
अशोक महेश्वरी

Sl.No.	Name of Topic	Name of Author	Page No.
1	उच्च शिक्षा की गुणवत्ता मे संवर्दन एवम समकालीन चुनोतियाँ	नीटू सिंह डॉ. सुनील कुमार	1-3
2	पंचायत राज में महिला जनप्रतिनिधियों की भूमि (राजस्थान के जयपुर जिले विशेष सन्दर्भ में)	डॉ. श्वेता राई सीताराम माली	4-16
3	डॉ. भीमराव अम्बेड़कर का सामाजिक दर्शन: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (वर्तमान परिस्थितियों के सन्दर्भ में)	डॉ. अर्चना सैनी	17-26
4	प्राचीन भारत के प्रमुख व्यापारिक मार्गो पर स्थित नगरों का ऐतिहासिक अध्ययन	कविता शर्मा	27-34
5	मध्यकालीन मालवा में मुग़लकालीन जल प्रदाय व्यवस्था कुंडी भण्डारा या खूनी भण्डारा : एक ऐतिहासिक अध्ययन	आलोक यादव	35-39
6	भारत स्काउट्स एवं गाइड्स आन्दोलन की जानकारी	Dr. Digree Lal Patel	40-44
7	कार्य स्थ्ल पर स्वच्छता कर्मियों के मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभाव का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन	डॉ. उर्वशी पाण्डे कु. पुजा	45-50
8	"हाईस्कूल स्तर के शिक्षार्थियों का सामाजिक विज्ञान विषय के प्रति अभिवृत्ति एवं मूल्यों का अध्ययन"	अखिलेश यादव	51-57
9	खुमड़ी प्रणाली जौनसार बावर की न्याय व्यवस्था का एक आधारभूत स्तम्भ	दिशिका तोमर	58-63
10	शिक्षकों की कार्य उपलब्धि पर अभिप्रेरकों का प्रभाव	डॉ वेद प्रकाश शर्मा मोनिका भारद्वाज	64-67
11	मध्य प्रदेश के चयनित राजकीय विश्वविद्यालयों के पुस्तकालयों में लाइब्रेरी ऑटोमेशन और नेटवर्किंग के परिप्रेक्ष्य पर एक तुलनात्मक अध्ययन।	संध्या गुप्ता डॉ अरुण मोदक	68-79
12	स्नातकोत्तर छात्रों द्वारा इलेक्ट्रॉनिक संसाधनों का उपयोग मध्य प्रदेश राज्य के विभिन्न विश्वविद्यालयों का अध्ययन	प्रियंका श्रीवास्तव डॉ अरुण मोदक	80-91

13	भारत एवम् मध्य प्रदेश में पुस्तकालय नेटवर्क और कंसोर्टिया का प्रभाव	प्रतिज्ञा तोमर डॉ अरुण मोदक	92-101
14	हिन्दी साहित्य की कहानियों में विकलांग विमर्श के माध्यम से उत्थान की दिशा में किये गये प्रयासों का विवेचनात्मक अध्ययन	धनवन्ती सोनगरा डॉ चित्रा त्रिपाठी	102-107
15	वर्तमान में लोकपाल की प्रभावशीलताः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन	अंकित पाण्डेय डॉ0 सुनीता त्रिपाठी	108-117
16	गाँधीवादी मूल्यों पर आधारित विद्यालयी शिक्षा	डॉ. सुनिता सारस्वत	118-125
17	सकारात्मक उपचार से अवसाद का प्रबंधन।	मदन लाल टेम्भरें डॉ. योगेन्द्र नाथ चौबे	126-137
18	रायगढ़ छत्तीसगढ़ जल संसाधनों का वैज्ञानिक अनुसंधान।	डॉ भावना माहुले	138-144
19	तनाव प्रबंधन में भ्रामरी प्राणायाम एवं ॐ मंत्र जाप का प्रभाव एक वैचारिक अध्ययन	अश्वनी कुमार साहू डॉ. रंजना मिश्रा	145-149
20	छत्तीसगढ़ की जनजाति महिलाओं में गोदना कला विशेष संदर्भ में बैगा जनजाति के	राजू चन्द्राकर डॉ बालेन्दु मणि त्रिपाठी	150-154
21	पारम्परिक तालाबों का अध्ययन (धमधा के विशेष संदर्भ में	श्रीमती अर्चना दमाहे डॉ. बालेंन्दुमणि त्रिपाठी	155-159
22	उच्च प्राथमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् सामान्य एवं विशेष विद्यार्थियों की अध्ययन प्रवृत्ति का अध्ययन	धर्मेन्द्र वंश डा० मनवीर सिंह	160-166
23	जयपुर जिले के उच्च प्राथमिक शिक्षकों की विद्यार्थियों एवं विद्यालयों के प्रति व्यावसायिक प्रतिबद्धता का विश्लेषणात्मक अध्ययन	रेखा जाँगिड डॉ अनीता उपाध्याय	167-174
24	रायपुर छत्तीसगढ़ में विशेष शिक्षकों के बीच कार्यसंतुष्टि।	हरीश कुमार साहू डॉ. रविंद्र जी भेंडे	175-182
25	सहकारी समिति/प्राथमिक कृषि सहकारी समिति (PACS) का दुर्ग जिले में ग्रामीण विकास पर प्रभाव।	श्रीमती मृणाली पात्रेकर डॉ. दीप्ति अग्रवाल	183-192
26	विश्वविद्यालय के छात्रों की प्रसन्नता और सृजनशीलता पर शवासन के प्रभाव का अध्ययन।	डोंगेश्वर प्रसाद साहू डॉ. रंजना मिश्रा	193-198

27	जनजाति महिला मजदूरों की सामाजिक व आर्थिक स्थिति -एक अध्ययन,(कोरबा के पाली नगर पंचायत के विशेष संदर्भ में)।	कुलदीप कपूर सिंह डॉ. प्रविण्यलता गायकवाड	199-206
28	महिला श्रमिक की आर्थिक स्थिति: एक अध्ययन (कोरिया जिले के मनेन्द्रगढ़ के विशेष संदर्भ में)।	अरुण कुमार नेताम डॉ. प्रविण्यलता गायकवाड	207-213
29	माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की वैज्ञानिक सृजनशीलता एवं विद्यालय वातावरण में सहसम्बन्ध का विश्लेषणात्मक अध्ययन	ममता शर्मा	214-220
30	जीवन बीमा निगम का भारतीय महिलाओं के विशेष सन्दर्भ मेंकिए गये कार्यो का अध्ययन	Rupali Yadav	221-226
31	वर्तमान काल में विद्यालय वातावरण की गुणवत्ता के अन्तर्गत पाठ्य सहगामी क्रियाओं की महत्ता	ममता शर्मा	227-231
32	उपनिषदों में ब्रह्म की अवधारणा	डॉ. हेमलता जोशी	232-239
33	शारीरिक एवं भावनात्मकस्वास्थ्य पर योग तथा प्रेक्षाध्यान का प्रभाव	प्रवीणा कंवर निशा सोनी डॉ. प्रद्युम्न सिंह शेखावत	240-249
34	प्राचीन भारत में वैवाहिक पद्धति: एक ऐतिहासिक अध्ययन	संजीव कुमार सिंह डॉ चंदन कुमार	250-259

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

उपनिषदों में ब्रह्म की अवधारणा

डॉ. हेमलता जोशी
सहायक आचार्य, जैन विश्वभारती संस्थान लाडनूं (राज.)
hemlatajvbu@gmail.com

भारतीय परंपरा में ब्रह्म का स्थान सर्वोपरि है। नाम भले ही भिन्न–भिन्न हों, मान्यताएं भले ही भिन्न–भिन्न हों, आचार–क्रियाचार भले ही भिन्न–भिन्न हों पर एक सर्वोच्च सत्ता को सभी ने मान्यता दी है। वैदिक परंपरा में इसे ब्रह्म, परमात्मा, परमेश्वर, परम चैतन्य आदि नामों से जाना जाता है। इसे ही सृष्टि का मूल भी माना गया है। उपनिषदों मे कहा गया है कि पूर्णमिदः पूर्णमिदम्.... पूर्णमेवावशिष्यते अर्थात् वह ब्रह्म सब प्रकार से पूर्ण है। यह जगत भी पूर्ण है। पूर्ण से ही यह जगत उत्पन्न हुआ है। पूर्ण को पूर्ण में से निकाल देने पर भी पूर्ण ही बचता है। इससे स्पष्ट होता है कि औपनिषदिक चिंतन ब्रह्म को सर्वोपरि, सर्वश्रेष्ठ, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक और शाश्वत मानता है। मानव देह में इसका स्थान हृदय माना गया है। विभिन्न उपनिषदों में ब्रह्म की अवधारणा कुछ समानता और कुछ भिन्नता से देखने को मिलती है पर सबका आशय एक ही है। एक ही ब्रह्म अनेक रूपों से, अनेक अवस्थाओं से, अनेक विशेषताओं से ओतप्रोत है। उसे प्राप्त करने, उसका साक्षात्कार करने के अनेक उपाय तथा उसके परिणामों पर भी विस्तृत जानकारी भी उपनिषदों में वर्णित है। उसे प्राप्त करने वाला पूर्णता प्राप्त कर लेता है। प्रस्तुत लेख में उपनिषदों में निर्दिष्ट ब्रह्म के असीम स्वरूप को, उपनिषदों में ब्रह्म की अवधारणा को संक्षेप में जानने का लघु प्रयास किया गया है जो सुधी पाठकों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकेगा, ऐसा विश्वास है।

1.0 ब्रह्म का स्वरूप

ब्रह्म एक सर्वोच्च सत्ता है जो अनेक अर्थों में प्रयुक्त होता है। ब्रह्म शब्द बृहि धातु से बना है जिसका अर्थ है वृद्धि होना, विस्तार होना, बढ़ना आदि। वेदांत दर्शन के अनुसार ब्रह्म का अर्थ है एकमात्र चेतन, नित्य और मूल सत्ता जो अखंड, अनंत, अनादि, निर्गुण, सत् चित् आनंदयुक्त कही गई है।[1] हिन्दी शब्द सागर के अनुसार ब्रह्म के लिए ईश्वर, परमात्मा, आत्मा, चेतन शब्दों का उल्लेख मिलता है। एक मात्र नित्य चेतन सत्ता जो जगत् का कारण है। सत् चित् आनंद स्वरूप तत्व जिसके अतिरिक्त और कुछ भी प्रतीत होता है, सब असत्य और मिथ्या है।[2] आदर्श हिन्दी संस्कृत कोश के अनुसार ब्रह्म को परमात्मन्, परमेश्वर, सच्चिदानंद, जगत्कर्ता, आत्मन, देहिन शब्दों से जाना जाता है।[3] नालंदा विशाल शब्द सागर के अनुसार ब्रह्म वह सबसे बड़ी, परम तथा नित्य चेतन सत्ता है जिसे जगत् का मूल कारण और सत् चित् आनंदस्वरूप मानी गई है।[4] इससे स्पष्ट होता है कि ब्रह्म सर्वोपरि, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक है। अर्थात् वह हर प्रकार से असीम है।

2.0 उपनिषदों में ब्रह्म की अवधारणा

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

चूंकि उपनिषद् ब्रह्म की सर्वोच्च सत्ता को स्वीकार करते हैं। इसलिए विभिन्न उपनिषद् उसके स्वरूप का वर्णन भिन्न–भिन्न प्रकार से करते हैं। एक ही ब्रह्म अणु से विभु, साकार और निराकार आदि अनेक रूपों में दृष्टिगत होता है। ब्रह्म के स्परूप को जानना इतना सहज और सरल नहीं है। अध्यात्मवेत्ताओं ने, योगियों ने जो सत्य प्राप्त किया, उसे अपनी वाणी से, अपनी लेखनी से जन सामान्य तक पहुंचाया। स्पष्ट है कि ब्रह्म असीम है। उसको जानना, समझना, प्राप्त करना सरल नहीं, सहज नहीं अपितु श्रमसाध्य है। अर्थात् पुरुषार्थ आवश्यक है। उपनिषदों में इन सभी विषयों पर चर्चा की गई है। अतः ब्रह्म के स्वरूप, उसकी अवधारणा को कुछ उपनिषदों के आधार पर संक्षेप में वर्णन किया है जो निम्न प्रकार है–

2.1 ईशावास्योपनिषद् में ब्रह्म

ईशावास्योपनिषद् में कहा गया है कि ब्रह्म अथवा परमात्मा अखिल ब्रह्मांड में सर्वज्ञ है, सर्व शक्तिमान है, सर्वव्यापी है। सर्वोपरि है। अखिल ब्रह्मांड में जड़–चेतन स्वरूप सभी उसी से व्याप्त है। उसके साथ रहते हुए त्यागपूर्वक भोगते रहो, आसक्त मत हो। सभी पदार्थ किसी के भी नहीं हैं।[5] इससे स्पष्ट होता है कि ब्रह्म ही सर्वोपरि है। दृश्य और सूक्ष्म जगत्, दृश्य और अदृश्य सब उसी का विस्तार है। अतः किसी वस्तु पदार्थ आदि पर किसी का आधिपत्य है। इसलिए मेरा, मेरेपन का, अहंकार का, आसिक्ति का कोई स्थान नहीं है। अनासक्त होकर उसे भोगने का निर्देश भी दिया गया है। अज्ञान के कारण मानव भ्रम में रहता है। इसीलिए बंधन में रहता है। मुक्त होने के लिए उसे अनासक्त होना होगा, तभी परम सत्य को भी जान सकेगा। ब्रह्म के स्वरूप को और स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि परमेश्वर अचल हैं, मन से भी अधिक वेग वाले हैं, वे आदि हैं, ज्ञान स्वरूप हैं। देवता भी नही जान सके। स्थित होकर भी दौड़ने वाले को अतिक्रमण कर जाते हैं। उनके कारण ही वायु आदि जल वर्षा करते हैं। संपादन करते हैं। वे चलयामान भी हैं और न चलने वाले भी हैं, दूर भी हैं, पास भी हैं, जगत् के बाहर–भीतर दोनों ही हैं।[6] स्पष्ट होता है कि ब्रह्म दो विरोधी तत्वों का समुच्चय हैं। यह स्वरूप उसी का होगा जो सबसे भिन्न होगा। वह एक ब्रह्म ही हो सकता है।

2.2 केनोपनिषद् में ब्रह्म

केनोपनिषद् में ब्रह्म के लिए तद्वन शब्द प्रयुक्त किया गया है। अतः कहा है कि वह तद्वन नाम से प्रसिद्ध है।[7] ब्रह्म के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कहा है कि ब्रह्म वह है जो श्रोतेन्द्रिय का श्रोत है, मन का मन है, प्राण का प्राण है, चक्षु का चक्षु है। वह एक ही है, उसे जानने पर मुक्त हो जाते हैं। वह इंद्रियातीत है, मन से परे है, बुद्धि से परे है, दूसरों के द्वारा भी अवर्णणीय है।[8] वह वाणी नहीं है अपितु बोलना उसी के कारण संभव है। वह मन नही है, मन जिसके द्वारा जानता है, वही ब्रह्म है। जिसे चक्षु के द्वारा नहीं देखा जा सकता है किंतु चक्षु जिसके कारण देखते हैं, कानों द्वारा जिसे नहीं सुना जा सकता, कान जिसके कारण सुनते हैं, प्राण के द्वारा प्राणित नहीं होता बल्कि प्राण जिससे प्राणित होता है, वही ब्रह्म है।[9] अतः स्पष्ट है कि ब्रह्म इंद्रिय, मन, बुद्धि, प्राण

को चलाने वाली शक्ति है। ये सभी उसी के अधीन हैं। अतः इन्हें शक्ति संपन्न मानना भ्रम है। इनका अस्तित्व अवश्य है पर ये क्रियाशील तभी हैं जब इन्हें चलाने वाली सत्ता ब्रह्म है।

2.3 तैत्तिरीय उपनिषद् में ब्रह्म

इस उपनिषद् में ब्रह्म को सुकृत कहा गया है। सुकृत का अर्थ है सुन्दर कार्य। सृष्टि से पूर्व यह जगत् असत् अर्थात् अव्यक्त था। उससे ही यह दृश्यमान जगत् उत्पन्न हुआ है। वह ब्रह्म स्वयं जगत् रूप में प्रकट हुआ है। अतः उसे सुकृत कहा जाता है। जो सुकृत हैं, वही रस रूप है। इस रस को पाकर जीव आनंदित होता है।[10] वह ब्रह्म आकाश के समान व्यापक है। वह सत्यरूप आत्म तत्त्व है। वह प्राणों को विश्राम देने वाला, मन को आनंद देने वाला, शांत और अतृतम स्वरूप है। वही सर्वथा पुरातन पुरुष उपासना के योग्य है।[11] ऊं ही ब्रह्म है। ऊं ही यह प्रत्यक्ष जगत् है। ऊं ही इस जगत् की अनुकृति है।[12] इससे स्पष्ट होता है कि ब्रह्म द्वारा की गई रचना को सुकृत कहा है जिसक द्वारा वह स्वयं प्रकट हुआ है। इस जगत् की रचना उसके अतिरिक्त कर पाना असंभव है।

2.4 अथर्वाशिरोपनिषद् में ब्रह्म

इस उपनिषद् में कहा गया है कि हृदय में विराजते हुए आप तीनों मात्राओं से परे हैं। हृदय के उत्तर में सिर है, दक्षिण में पाद है। जो उत्तर में विराजमान है वही ऊंकार है। यही प्रत्यक्ष है, वही सर्वव्यापी है, अनंत है, तारक स्वरूप है, वही सूक्ष्म है, वही शुक्ल है। जो शुक्ल है वही विद्युत है, जो विद्युत है वही परब्रह्म है। जो परब्रह्म है वही एक रूप है, जो एक रूप है वही रुद्र है। जो रुद्र है वही ईशान है। जो ईशान है, वही महेश्वर है। ब्रह्म के इसी स्वरूप को विस्तार से बताया गया है। अतः कहा गया है कि ऊंकार के उच्चारण में प्राण को ऊपर की ओर खींचना होता है। इसीलिए यह इसे ओंकार कहा है। प्रणव कहने का तात्पर्य है कि प्रणव के उच्चारण ऋक्, यजु, साम, अथर्वांगरस ब्राह्मणों को प्रणाम करने के लिए किया जाता है। तिल में में तेल के समान समस्त सृष्टि में अव्यक्त रूप से विद्यमान होने के कारण ब्रह्म को सर्वव्यापी कहा गया है। जिसका कोई अंत न हो वह अनंत है। ब्रह्म अंतहीन है। इसीलिए उसे अंनत कहा गया है। जो तारण करता है उसे तारक कहा जाता है। ब्रह्म जीवन को गर्भ, जन्म आदि संसार से भयमुक्त करता है, उसे तारता है। इसीलिए उसे तारक कहा गया है। शुक्ल का अर्थ है श्वेत, शुद्ध, प्रकाशवान। ब्रह्म शुद्ध है, प्रकाशवान है, स्व प्रकाशित है, प्रकाशक है। इसलिए वह शुक्ल है। सूक्ष्म–सूक्ष्म का अर्थ है छोटा। ब्रह्म सूक्ष्म स्वरूप होकर स्थावर आदि शरीरों में अधिष्ठित होता है। इसलिए यह सूक्ष्म है। विद्युत का अर्थ है बिजली, चमक, प्रकाश आदि। ब्रह्म का उच्चारण करने पर घोर अंधकार की स्थिति में समस्त काया विशेष रूप से द्युतिमान होती है। इसलिए उसे विद्युत कहा गया है। यह पर, अपर, परायण को व्यापक बनाता है। इसलिए परब्रह्म कहा गया है। समस्त प्राणों का भक्षण करके अज स्वरूप होकर उत्पत्ति और संहार करता है। सभी प्राणियों में एक रूप से निवास करने पर एक तत्व कहते हैं। इसके ज्ञान का स्वरूप ऋषि मुनियों को सहज ही हो जाता है। इसलिए यह रुद्र है। समस्त देवों और शक्तियों में अपना ईशत्व रखने कारण ही ईशान है। भजन करने वालों पर कृपा बरसाते हैं।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

वाक् शक्ति का प्रादुर्भूत करते हैं। समस्त भावों का परित्याग करके आत्मज्ञान और योग के ऐश्वर्य में अपनी महिमा में स्थित रहते हैं। इसीलिए महेश्वर हैं।[13] इससे स्पष्ट होता है कि इस उपनिषद् में ब्रह्म के अनेक स्वरूपों का वर्णन किया गया है।

2.5 मुंडकोपनिषद् में ब्रह्म

मुंडकोपनिषद् के अनुसार ब्रह्म निराकार एवं साकार दोनों ही माना गया है। ब्रह्म के स्वरूप को बताते हुए कहा है कि वह जानने में न आने वाला, पकड़ने में न आने वाला, गोत्र आदि से रहित, रंग और आकृति से रहित, चक्षु, कान आदि ज्ञानेद्रियों से रहित, कर्मेन्द्रियों से रहित, नित्य सर्वव्यापी, सब ओर फैला हुआ अत्यंत सूक्ष्म अविनाशी ब्रह्म है। समस्त प्राणियों के कारण ज्ञानीजन सर्वत्र परिपूर्ण देखते हैं।[14] वह प्रकाशमान, अमूर्तरूप ब्रह्म अंदर–बाहर सर्वत्र विद्यमान है वह अजन्मा, प्राण रहित, मन रहित एवं उज्जवल है और अविनाशी आत्मा से भी उत्कृष्ट है।[15] इससे स्पष्ट होता है कि वह ब्रह्म निराकार है क्योंकि वह अवयवों रहित है। दूसरी ओर कहा गया है कि वह आगे–पीछे, दांए–बांए, नीचे–ऊपर फैला हुआ है। यह संपूर्ण जगत ब्रह्म ही है। यह जो संपूर्ण जगत है, यह सर्वश्रेष्ठ ब्रह्म ही है।[16] जिस प्रकार मकड़ी जाले बनाती है, पृथ्वी नाना प्रकार के औषधियों को उत्पन्न करती है, जिस प्रकार मनुष्य के केश और रोएं उत्पन्न होते हैं उसी प्रकार अविनाशी ब्रह्म से इस सृष्टि में सब कुछ उत्पन्न हुआ है।[17] इस परमेश्वर का अग्नि मस्तक है, चंद्र सूर्य नेत्र हैं, दिशाएं कान, प्रकट वेद वाणी है, वायु प्राण है, जगत् हृदय है, दोनों पैर पृथ्वी हैं। यही सभी प्राणियों का अंतर्यामी है।[18] इससे स्पष्ट होता है कि वह ब्रह्म साकार भी है। अतः यह उपनिषद् ब्रह्म को साकार एवं निराकार दोनों में रूपों में मानकर व्याख्या करता है और इसे ही सबका मूल कारण भी मानता है।

2.6 कठोपनिषद् में ब्रह्म

कठोपनिषद् के अनुसार ब्रह्म विशुद्ध परम ध्यान में रहने वाला स्वयं प्रकाश पुरुषोत्तम है। अंतरिक्ष में निवास करने वाला वह वसु, घरों में उपस्थित होने वाला अतिथि है, यज्ञ की वेदी पर स्थापित अग्नि स्वरूप तथा आहुति डालने वाला होता है। मनुष्यों, देवताओं में रहने वाला सम्य, आकाश, जल, पृथ्वी में रहने वाला, सत्कर्मों में प्रकट होने वाला, पर्वतों में नाना रूपों में प्रकट होने वाला सबसे बड़ा परम सत्य है।[19] अंगुष्ठमात्र पुरुष अथवा परमात्मा शरीर के मध्यभाग हृदयाकाश में स्थित है। वह धूमरहित ज्योति की भांति है जो भूत और भविष्य का शासन करने वाला वह नित्य है।[20] ऊपर की ओर मूल वाला, नीचे की ओर शाखा वाला यह जगत सनातन पीपल वृक्ष है। इसीलिए मूलभूत वह परमेश्वर ही विशुद्ध तत्त्व है। वही ब्रह्म है, वही अमृत है, सब लोक उसी के आश्रित हैं। कोई उसे लांघ नहीं सकता है।[21] यह उपनिषद् भी ब्रह्म को ही मूलभूत सत्ता मानता है।

2.7 श्वेताश्वतर उपनिषद् में ब्रह्म

श्वेताश्वतर उपनिषद् के अनुसार वह ब्रह्म ज्ञानरूप परमात्मा सर्वस्रष्टा, सर्वज्ञ, स्वयं अपने प्राकट्य का हेतु, काल का भी महाकाल, संपूर्ण दिव्य गुणों से संपन्न, सबको जानने वाला, प्रकृति और जीवात्मा का समी, समस्त गुणों का शासक, संसार में बंधने, स्थित रखने और मुक्त करने वाला

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

है।[22] ब्रह्म ही अग्नि, वायु, चंद्रमा, प्रकाशमय नक्षत्र, जल, प्रजाति है। वही स्त्री, पुरुष, कुमार, कुमारी, बूढ़ा, विराट रूप में प्रकट होकर सब ओर मुंह करने वाला हो जाता है।[23] वही वह परम पुरुष हाथ–पैरों से रहित होकर भी वेगपूर्वक गमन करने वाला है। आंख, कान से रहित होकर होकर भी देखने, सुनने वाला है। वह जानने वाली चीजों को जानता है। इसे जानने वाला अन्य कोई नहीं है। उसे ज्ञानी जन महान, श्रेष्ठ आदि कहते हैं। वह अति सूक्ष्म अणु से भी सूक्ष्म है, अतिशय महान से भी महान है। आत्मा रूप वह पुरुष जीव की हृदय गुहा है में छिपा हुआ है।[24] ज्ञान वह नील वर्ण पतंग, हरे रंग का पतंग, लाल आंखों वाला पक्षी है। मेघ, ऋतु, समुद्र रूप है। उसी से लोक उत्पन्न हुआ है। वही सब में विद्यमान है।[25] स्पष्ट होता है कि यह उपनिषद् ब्रह्म को मूल कारण मानता है साथ ही साकार और निराकार दोनों में रूपों में व्याख्या होता है।

2.8 मैत्रेय्युपनिषद् में ब्रह्म की अवधारणा

इस उपनिषद् में कहा गया है कि अविनाशी परमात्मा मन एवं वाणी से नहीं जाना जा सकता। यह आदि अंत है, वह सत् रूपी प्रकाश से सतत प्रकाशित होता है। यह कल्पनातीत, शांत स्थिर एवं गंभीर है। वह न प्रकाश युक्त है और न ही प्रकाश मुक्त। वह संकल्प रहित, आभास रहित मुक्त चैतन्य रूप है। नित्य शुद्ध, ज्ञान स्वरूप, मुक्त स्वभाव, सत्य रूप, सूक्ष्म, सर्वत्र व्यापक एवं अद्वितीय है। इस सबका धारण करने वाला है, इसमें संशय नहीं है।[26] इससे स्पष्ट होता है कि यह उपनिषद् ब्रह्म को शुद्ध चैतन्य रूप है जो सर्वत्र व्याप्त है।

2.9 मुद्गलोपनिषद् में ब्रह्म

इस उपनिषद् के अनुसार ब्रह्म त्रिताप शून्य, छह कोशों से परे, षड्ऊर्मियों से रहित, पंचकोशों से रहित, षड्भावविकारों से अतीत है। वह सबसे विलक्षण है। त्रिताप हैं–आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक। छह कोश हैं–चर्म, मांस, अस्थि, स्नायु, रक्त एवं मज्जा। षड्रिपु हैं–काम, क्रोध, मोह, मद और मात्सर्य। पंचकोश हैं– अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनंदमय। छह भाव विकार हैं–प्रिय होना, प्रादुर्भूत होना, वर्द्धित होना, परिवर्तित होना, क्षय होना और विनाश होना। छह ऊर्मियां हैं–क्षुधा, पिपासा, शोक, मोह, वृद्धावस्था और मृत्यु। षड्भ्रम हैं–कुल, गोत्र, जाति, वर्ण, आश्रम एवं रूप। इन सभी के योग से वह परम पुरुष ही जीव रूप में परिणत होता है। अन्य कोई दूसरा इसमें समर्थ नहीं है।[27] अतः यह उपनिषद् भी ब्रह्म को सर्वोपरि, सर्व समर्थ मानता है।

3.0 ब्रह्म प्राप्ति के साधन और परिणाम

ब्रह्म को जानने, अनुभव करने, उसका साक्षात्कार करने के लिए भी उपाय निर्दिष्ट किए गए हैं और उनका परिणाम भी स्पष्ट किया गया है। आत्मा रूप उस ब्रह्म की प्राप्ति सत्यभाषण, तपश्चर्या, सम्यग्ज्ञान, ब्रह्मचर्य आदि निश्चित व्रतों से होती है। वह शरीर के भीतर अधिष्ठित है जिसे दोषरहित योगी ही देख सकते हैं।[28] इसके अतिरिक्त तत्त्वज्ञान, भक्तिभावना, ऊंकार जप, ध्यान–योग आदि को ब्रह्म प्राप्ति के साधनों के रूप में बताया गया है। कठोपनिषद् में कहा गया है कि ब्रह्म अवश्य है–इसका निश्चय कर उसके अस्तित्व का दृढ़ निश्चय करना चाहिए तदंतर तत्त्वभाव से भी उसे जानना चाहिए। इन दोनों प्रकारों से वह अवश्य है–ऐसा निश्चय कर ब्रह्म की सत्ता को स्वीकार

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

करने वाले के लिए वह प्रत्यक्ष हो जाता है। उसे जान लेने पर अमर हो जाते हैं।[29] कठोपनिषद् में कहा गया है कि योगाभ्यास करते–करते जब मन सहित पांचों इंद्रियां भली भांति स्थिर हो जाती है और बुद्धि भी परमात्मा के के स्वरूप में इस प्रकार स्थिर हो जाती है जिससे उसे परमात्मा के अतिरिक्त किसी का ज्ञान नहीं होता है, इसी स्थिति को योगीगण परम गति बतलाते हैं।[30] श्वेताश्वतर उपनिषद् के अनुसार उस परम देव का ध्यान करने से, उस प्रकाशमय परमात्मा को जान लेने पर समस्त बंधनों का नाश हो जाता है। क्लेशों का नाश हो जाने से जन्म–मृत्यु का अभाव हो जाता है। शरीर का नाश होने पर स्वर्ग के समस्त ऐश्वर्य त्याग करके सर्वथा विशुद्ध पूर्णकाम हो जाता है।[31] मुंडकोपनिषद् में कहा गया है कि जिसमें स्वर्ग, पृथ्वी, अंतरिक्ष और उनके बीच का आकाश समस्त प्राणों सहित मन गुंथा हुआ है, उसी सबके आत्म रूप परमेश्वर को जानो, दूसरी बातों को सर्वथा छोड़ दो। यही अमृत का सेतु है। सर्वात्मा परमात्मा का ओम् नाम से ध्यान करो। परमात्मा को तत्व ज्ञान से जान लेने पर हृदय ग्रंथि खुल जाती है, सारे संशय, शुभाशुभ कर्म नष्ट हो जाते हैं।[3] अध्यात्मोपनिषद् में कहा गया है कि जो सर्वत्र सभी में एक ही ब्रह्म को देखता है और जिसकी सद्भावना दृढ़ हो गई है, उसकी वासना का लय हो जाता है।[33] महावाक्योपनिषद् में कहा है कि स्वयं को परमात्मा का अंश मानकर प्राण अपान, श्वास–प्रश्वास का का ज्ञान प्राप्त करके चिरकाल तक साधना करने से इस विद्या द्वारा समष्टि, व्यष्टि तथा तदैक्य आत्म तत्त्व पर रत रहने पर ही सत् चित् आनंद स्परूप पर ब्रह्म का प्रार्दुभाव होता है।[34] जो परमात्मा का भक्त है वह योग मार्ग के द्वारा स्वस्थ होकर सब प्रकार की लौकिक आसक्तियों को त्याग कर शरीर में आत्माभिमान को त्याग दे। तब वह उसका संसार बंधन कट जाता है, वह परमात्म स्वरूप हो जाता है और उसी ब्रह्मभाव से परमानंद को प्राप्त करता है, परमानंद का उपभोग करता है।[35] इससे स्पष्ट होता है कि ब्रह्म को जानने के, उसे प्राप्त करने के अनेक साधन, अनेक उपाय निर्दिष्ट किए गए हैं। साथ ही उसके परिणामों की भी विस्तृत व्याख्या की है।

4.0 निष्कर्ष

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि उपनिषदों में ब्रह्म के स्वरूप को विस्तार से बताया गया है। उसी को सृष्टि का मूल कारण भी माना गया है। यह जगत उसी का विस्तार है। उसे साकार एवं निराकार दोनों ही रूपों में व्याख्यायित किया गया है। वही एक शाश्वत सत्य है। वह सूक्ष्म से भी सूक्ष्म और स्थूल से भी स्थूल है। मानव देह में उसका स्थान हृदय माना गया है। वह अनेक विशेषताओं का पुंज है। उसे जानने वाला सर्व दुःखों से मुक्त हो जाता है। उस ब्रह्म को जानने हेतु, उसके साक्षात्कार हेतु, उसे प्राप्त करने हेतु उपनिषदों में अनेक उपाय भी निर्दिष्ट किए गए हैं। अतः ब्रह्म के स्वरूप को जानकर सत्य का साक्षात्कार करने, ब्रह्म को प्राप्त करने वाले जिज्ञासु साधक इन उपायों का सहारा लेकर अपने जीवन को सार्थक कर सकते हैं। यही वास्तविक प्राप्ति है, यही जीवन की सार्थकता है।।

1. मानक हिन्दीकोश, पृ. 179
2. हिन्दी शब्द सागर भाग 7 पृ. 358

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

3. आदर्श हिन्दी संस्कृत कोश पृ. 429
4. नालंदा विशाल शब्द सागर, पृ. 1001
5. ईशावास्योपनिषद् (उपनिषद् अंक) 1, पृ. 163
6. ईशावास्यापनिषद् (उपनिषद् अंक) 4–5, पृ. 165
7. केनोपनिषद् (उपनिषद् अंक) 4/6, पृ. 189
8. केनोपनिषद् (उपनिषद् अंक) 1/2–3, पृ. 175
9. केनोपनिषद् (उपनिषद् अंक) 1/4–8, पृ. 176–177
10. तैत्तिरीयोपनिषद् 7/1/ पृ. 201
11. तैत्तिरीयोपनिषद् 6/2, पृ. 201
12. तैत्तिरीयोपनिषद् 8/1 पृ. 201
13. अथर्वशिरोपनिषद् 3–4, पृ. 11–12
14. मुंडकोपनिषद् 1/1/6, पृ. 365
15. मुंडकोपनिषद् 2/1/2, पृ. 368
16. मुंडकोपनिषद् 2/2//11, पृ. 370
17. मुंडकोपनिषद् 1/1/6–7, पृ. 365
18. मुंडकोपनिषद् 2/1/4, पृ. 368
19. कठोपनिषद् (उपनिषद् अंक) 2/2/2, पृ. 228
20. कठोपनिषद् (उपनिषद् अंक) 2/1/12–13, पृ. 226–227
21. कठोपनिषद् (उपनिषद् अंक) 2/3/1, पृ. 233
22. श्वेताश्वतरोपनिषद् (उपनिषद् अंक) 6/16, पृ. 410
23. श्वेताश्वतरोपनिषद् (उपनिषद् अंक) 4/3, पृ. 390
24. श्वेताताश्वरोपनिषद् (उपनिषद् अंक) 3/19–20, पृ. 415
25. श्वेताश्वरोपनिषद् (उपनिषद् अंक) 4/4, पृ. 391
26. मैत्रेय्युपनिषद् 13–15, पृ. 247
27. मुद्गलोपनिषद् 4/1–9, पृ. 379
28. मुंडकोपनिषद्, 3/1/5, पृ. 371
29. श्वेताश्वतरोपनिषद् (उपनिषद् अंक) 3/13, पृ. 387
30. कठोपनिषद्, (उपनिषद् अंक) 2/3/10, पृ. 237
31. श्वेताश्वतरोपनिषद् 1/11 पृ. 375
32. मुंडकोपनिषद् 2/2/5–8 पृ. 283–84
33. अध्यात्मोपनिषद् 13 पृ. 19
34. महावाक्योपनिषद् 6, पृ. 243
35. नादबिंदूपनिषद् (उपनिषद् अंक) 1/3/1–4 पृ. 694

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. मानक हिन्दीकोश, चतुर्थ खंड, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग प्रथम सं. 1965

2. हिन्दी शब्द सागर, भाग 7, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, नई दिल्ली सं. 2057।

3. आदर्श हिन्दी संस्कृत कोश, चौखंबा प्रकाशन, वाराणसी 2004

4. नालंदा विशाल शब्द सागर, आदर्श बुक डिपो, 38 यू.ए. जवाहर नगर बंग्ला, दिल्ली –7 वि. सं. 2007।

5. उपनिषद्, कल्याण अंक, तेईसवें वर्ष का विशेषांक।

6. 108 उपनिषद् ब्रह्मविद्याखंड, पं. श्रीरामशर्मा आचार्य, युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा उ. प्र. 2005।

7. 108 उपनिषद् ज्ञानखंड, पं. श्रीरामशर्मा आचार्य, युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा, उ. प्र. 2005।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

अहिंसा योग साधना के परिप्रेक्ष्य में

डॉ सुनीता इन्दोरिया
सहायक आचार्य, जैनविद्या एवं तुलनात्मक धर्म तथा दर्शन विभाग
जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं

सार संक्षेप

भारतीय संस्कृति का उद्घोश है–अहिंसा परमो धर्मः। लौकिक एवं पारलौकिक जीवन को सुखमय बनाने के लिए एवं सांसारिक दुःखों से मुक्ति के लिए अहिंसा धर्म की साधना महत्त्वपूर्ण मानी गई है। प्रस्तुत लेख में भारतीय योग साधना के साधकों के लिए अहिंसा की कितनी महत्ता या उपादेयता है, इसका सप्रमाण निरूपण किया गया है।

पातंजल योग द र्न में योग साधना के आठ सोपान (अंग) बताये गये हैं, जिनमें यम को प्रथम स्थान प्राप्त है। यमों के पांच भेद हैं, उनमें भी अंहिसा को प्रथम स्थान प्राप्त है। अर्थात् अहिंसा की साधना के बिना, योग साधना में प्रारंभिक प्रगति भी नहीं की जा सकती है। अहिंसा के अतिरिक्त, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह–ये चार यम भी अहिंसा के ही अन्तर्गत आते हैं, क्योंकि बिना अहिंसा के सत्यादि यमों का अनुश्ठान संभव नहीं है।

इन यम आदि योगांगों के अनुश्ठान से अनेक चमत्कारी फलों की प्राप्ति होना योग ास्त्र में प्रतिपादित किया गया है। अहिंसा की पुश्टि हेतु मैत्री, करुणादि भावनाओं की उपादेयता भी वहां प्रतिपादित की गई है।

योग सूत्र के अनुसार मैत्री आदि प्र ास्त भावनाओं में संयम करने से भी प्र ास्त लाभ मिलते हैं–ऐसा योग भाास्त्र में प्रतिपादित किया गया है। हिंसक विचारों के दुश्परिणामों के विशय में भी आचार्यों ने विचार प्रकट किये हैं।

मुख्य शब्द– अहिंसा, योगासाधना, यम योगाङ्ग, भावना

प्रस्तावना

भारतीय सांस्कृतिक विचारधारा में अहिंसा को परम धर्म (अहिंसा परमो धर्मः) कहा गया है। प्रत्येक भारतीय आस्तिक द र्न में अहिंसा की महत्ता व उपादेयता स्वीकृत है। आस्तिक धर्मों की आचार संहिता में कहीं न कहीं अहिंसा अन्तर्निहित ही है। पारिवारिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक व आर्थिक किसी भी प्रकार की समस्या हो, उसका समाधान अहिंसा से ही संभव होता है। आध्यात्मिकता व नैतिकता दोनों को अनुप्राणित रखने वाली अहिंसा ही है। निर्मल चेतना से अनु ाासित, विधायक और व्यवहार्य जीवन–विधान अहिंसा ही है। वह मानव समाज की सबसे बड़ी आध्यात्मिक पूंजी है। यह मानवता की सहज स्वाभाविक भाा वत ज्योति है। यह मानव का अविना ाी

CamScanner

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

अविकारी स्वभाव है। यह सहृदयता का असीम विस्तार है। प्रका ा की अन्धकार पर, प्रेम की घृणा पर तथा अच्छाई की बुराई पर विजय का सर्वोच्च उद्घोश है—अहिंसा।

संक्षेप में लौकिक व लोकोत्तर जीवन को सुखमय बनाने के लिए एवं सांसारिक दुःख से निवृत्ति हेतु 'अध्यात्म योग साधना' में अहिंसा एवं अहिंसक विचारों का सर्वाधिक महत्त्व है। प्रस्तुत लेख में भारतीय योग साधना के साधकों के लिए अहिंसा की कितनी महत्ता या उपादेयता है, इसका सप्रमाण निरूपण किया जा रहा है।

भारतीय योग साधना को एक दा ानिक पृश्ठभूमि में प्रस्तुत करने का श्रेय पतंजलि—कृत योग द ान (सूत्र) को है। इसमें प्रतिपादित योग साधना का समीक्षण किया जाए तो यह स्पश्ट प्रतिपादित होता है कि अहिंसा की साधना के बिना योग साधना का प्रारंभ ही नहीं हो सकता।

योग के आठ अंग/सोपानों में अहिंसा

'पातंजल योग द ान' में योग के आठ सोपान (अंग) बताये गये हैं—वे इस प्रकार हैं—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि[प] अर्थात् योग साधना का प्रथम सोपान 'यम' है। यम के पांच भेद इस प्रकार हैं—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह।[पप] उपर्युक्त यमों में प्राथमिक स्थान अहिंसा को दिया गया है। तात्पर्य यह है कि अहिंसा की दृढ़ता एवं परिपक्वता होने पर ही, कोई व्यक्ति योग—साधना का अधिकारी बन सकता है। इन यमों को जाति, दे ा, काल व वि ोश नियमों की सीमा में नहीं बांधते हुए सार्वभौम व सार्वकालिक अनुश्ठान किया जाता है, तो वे महाव्रत बन जाते हैं।

यहां यह ज्ञातव्य है कि सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य व अपरिग्रह—ये यम भी अहिंसा के ही रूप हैं। अर्थात् मात्र अहिंसा ही यम को प्रतिनिधित्व करती है। इसका कारण यह है कि असत्य भाषण—चोरी, अब्रह्मसेवन, परिग्रह—ये सब हिंसामूलक ही हैं और अहिंसक विचारों के बिना सत्यादि की साधना सम्भव ही नहीं है।

उक्त चिन्तन के समर्थन में शास्त्रकारों का कथन प्रस्तुत किया जा रहा है। एक आचार्य के मत में चूंकि असत्य बोलने से, बिना दी हुई वस्तु के ग्रहण से, मैथुन से और परिग्रह से दूसरों को दुःख होता है, इसलिए उन सब का त्याग किया जाता है। अतः सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह—ये सभी अहिंसा के ही गुण (अंगभूत धर्म) हैं।[पपप]

'उपासकाध्ययन' में कहा गया है— हिंसा करना, कुशील सेवन करना, चोरी करना आदि इन्हें काय—सम्बन्धी अशुभ कर्म जानमा चाहिए। झूठ बोलना, असत्य वचन बोलना और कठोर वचन बोलना आदि वचन—सम्बन्धी अशुभ कर्म हैं। ऐसा जानना चाहिए।[पअ]

घमण्ड करना, ईर्ष्या करना, दूसरों की निन्दा करना आदि मनोव्यापार सम्बन्धी अशुभ कर्म हैं। इसके विपरीत कार्य को, काय, वचन और मन सम्बन्ची शुभ कर्म जानना चाहिए। तात्पर्य यह है कि हिंसा न करना, चोरी न करना, ब्रह्मचर्य का पालन करना आदि कायिक शुभ कर्म हैं। सत्य, हित व मित वचन बोलना आदि वचन—सम्बन्धी शुभ कर्म हैं। अर्हन्त आदि की भक्ति करना, तप में रुचि होना, ज्ञान और ज्ञानियों की विनय करना आदि मानसिक शुभ कर्म है।[अ]

CS CamScanner

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

आचार्य अमृतचन्द्र के अनुसार आत्मा के शुद्धोपयोग रूप परिणाम के घात होने के कारण, ये सब (असत्य, चोरी, अब्रह्मचर्य व परिग्रह, हिंसा ही है। असत्य वचन आदि के भेद तो केवल शिष्यों को समझाने के लिये ही कहे गये हैं।[अप]

इस प्रकार यह सिद्ध हो जाता है कि सत्यादि यमों की साधना अहिंसा की साधना में ही अन्तर्भूत हैं, अथवा एक अहिंसा की साधना से ही सत्यादि यमों की साधना स्वतः सिद्ध हो जाती है। इसी यम साधना के बल पर अविद्या आदि दोषों का नाश होता है, चित्तशुद्धि होती है तथा परमार्थ ज्ञान का उदय होता है। योगसूत्र में कहा भी गया है–"योगाङ्गानुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्याते:" ।[अपप]

यमादि अहिंसा साधना के अलौकिक फल

यमादि अहिंसा साधना से होने वाले अलौकिक फल की प्राप्ति को महर्शि पतंजलि ने योगसूत्र में इस प्रकार निरूपित किया है–''अहिंसाप्रतिश्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्यागः।[अपपप] अर्थात् अहिंसा का आचरण परिपक्व हो जाने पर, उस योगी पुरुश के समीप आने पर सर्वप्राणियों के वैरभाव का त्याग हो जाता है। जैसे कि नकुल और सर्प में स्वाभाविक वैर है, वे भी किसी योगी को सान्निधि में आकर अपने जन्मजात वैरभाव को भूल जाते हैं।

अहिंसा–प्रतिश्ठा की इस उत्कृश्ट अवस्था का सजीव चित्रण जैन परंपरा के आचार्य भ्ाुभचन्द्र ने 'ज्ञानार्णव' ग्रन्थ (22/26) में इस प्रकार किया है–

सारङ्गी सिंहशावं स्पृशति सुतधिया नन्दिनी, व्याघ्रपोतं मार्जारी हंसबालं प्रणयपरवशा केकिकान्ता भुजङ्गम्। वैराण्याजन्मजातान्यपि गलितमदा जन्तवोऽन्ये त्यजन्ति, श्रित्वा साम्यैकरूढ़ं प्रशमितकलुषं योगिनं क्षीणमोहम्।।

अर्थात् जिस योगी का मोह एवं रागादि कालुष्य नष्ट हो गए हैं और जिसमें पूर्ण समता–भाव प्राप्त कर लिया है, उसके आश्रय में आने वाले जन्म–जात वैरी प्राणी भी, उस योगी के प्रभाव से अपने वैर भाव को छोड़ देते हैं, उदाहरणार्थ– हरिणी सिंह के बच्चे को पुत्रवत् प्यार करती है, गाय व्याघ्र के बच्चे को, बछड़े की तरह स्नेह करती है, बिल्ली हंस–शावक को और मयूरी सर्प के बच्चे को पुत्रवत् स्नेह प्रदान करती है।

यह चमत्कारपूर्ण अवस्था उस परम वीतराग व्यक्तित्व की होती है, जिसने साधना के बल पर, उत्कृष्ट समता भाव को स्वयं में प्रतिश्ठापित कर लिया है, कर्म से ही नहीं, वाणी से और मन में भी उसके हिंसक विचार उद्भूत नहीं होते और हिंसा करने का ही नहीं, अपितु करवाने व करते हुए के अनुमोदन के भी भाव उसमें नहीं आते। ऐसा साधक मान–अपमान एवं सुख–दुःख में सर्वदा अविचल रहता है। अहिंसा–प्रतिश्ठा या दृढ़ता से उक्त स्थिति को ही निर्दिश्ट किया गया है।

सत्य का अभ्यास करने वाले योगी के विशय में कहा गया है–''सत्यप्रतिश्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम्''[पग] अर्थात् सत्य के अभ्यास करने वाले योगी अथवा साधक को सत्य की दृढ़ स्थिति होने पर उसकी वाणी द्वारा जो क्रिया होती है, उसमें फल का आश्रय होता है। अर्थात् वह जो भी कहता है, वह सत्य रूप में घटित हो जाता है, अर्थात् उसकी वाणी अमोघ हो जाती हे।

CamScanner

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

"अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम्"[ग] अर्थात् चोरी के त्याग से अचौर्य या अस्तेय की दृढ़ता को प्राप्त साधक को सर्वरत्नों की प्राप्ति होती है। चोरी के त्याग का जब योगी अभ्यास करता है तो इस अभ्यास के बढ़ने से, वासनारहित हुए साधक को सर्वत्र दिव्य रत्न प्राप्त हो जाते हैं, अर्थात् सर्ववस्तु उसके लिए सुलभ हो जाती हैं।

चतुर्थ यम ब्रह्मचर्य के साधक की स्थिति का वर्णन करते हुए कहा गया है–''ब्रह्मचर्य–प्रतिश्ठायां वीर्यलाभः''[गप] अर्थात् ब्रह्मचर्य के अभ्यास से दृढ़ साधक को अति ाय बल की प्राप्ति होती है। इस प्रकार, अति ाय बल प्राप्त योगी के इन्द्रिय और मन अधिक बल को प्राप्त हो जाते हैं तथा साथ ही साथ विचार–भाक्ति भी बढ़ जाती है। इसी प्रकार 'अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथंतासंबोधः'' ।[गपप] अपरिग्रह यम की दृढ़ स्थिति होने पर, पूर्व जन्म किस प्रकार का है, यह ज्ञान उस साधक को प्राप्त हो जाता है। तात्पर्य यह है कि योगी को बोध हो जाता है, मैं कौन हूं? किस प्रकार मैं हूं? यह जन्म क्या है? किस प्रकार यह हुआ है? यह सब उसे भली प्रकार ज्ञान हो जाता है।

उक्त यमादि–अहिंसा अनुष्ठानों का अलौकिक चमत्कारी प्रभाव भी होना माना गया है।

अहिंसा की पुष्टि हेतु प्रशस्त भावनाएं

अहिंसा का प्रतिरोधी भाव हिंसा है। हिंसा सम्बन्धी विचारों को योग शास्त्र में 'वितर्क' नाम से कहा गया है,[गपपप] क्योंकि ये चित्त को भटकाते हैं तथा साधना से च्युत करा देते हैं। हिंसा–सम्बन्धी विचारों पर अंकुश या नियन्त्रण लगाने के लिये एवं अहिंसा को पुष्ट करने के लिए योग शास्त्र में लौकिक कल्याणकारी मैत्री आदि भावनाओं का निरूपण किया गया है–"मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणां सुखदुःख–पुण्यापुण्यविषयाणां भावनातश्चित्तप्रसादनम् ।[गपअ]

अर्थात् सुखी, दुःखी, पुण्यात्मा और पापात्मा ये चारों जिनके क्रम से विषय हैं, ऐसी मित्रता, दया, प्रसन्नता और उपेक्षा की भावना से चित्त स्वच्छ हो जाता है। मैत्री, मुदिता आदि भावनाओं का स्वरूप इस प्रकार है–

मैत्री सुहृदय भाव को कहते हैं, बिना उपकार के मित्रता को सुहृदय भाव कहते हैं। करुणा का अर्थ है कृपा। मुदिता हर्ष को कहते हैं तथा उपेक्षा उदासीनता को कहते हैं। तात्पर्य यह है कि सुखी मनुष्यों में मित्रता की भावना करने से, दुःखी मनुष्यों में दया की भावना करने से, पुण्यात्मा पुरुषों में प्रसन्नता की भावना करने से और पापियों में उपेक्षा की भावना करने से चित्त के राग, द्वेष, घृणा, ईर्ष्या और क्रोध आदि मलों का नाश होकर चित्त शुद्ध–निर्मल हो जाता है। अतः साधक को इन भावनाओं का अभ्यास करना चाहिए।

मैत्री आदि प्रशस्त भावनाओं में संयम का प्रशस्त लाभ

मैत्री, करुणा, मुदिता, उपेक्षा–इन चार प्रशस्त भावनाओं में संयम करने से होने वाले लाभ का भी योगदर्शनकार ने निरूपण किया है–''मैत्र्यादिषु बलानि''[गअ] अर्थात् मैत्री आदि में संयम करने से मैत्री आदि बल की प्राप्ति होती है। तात्पर्य यह है कि जो सुखी मनुष्यों में मित्रता की भावना है, उसमें संयम करने से योगी को मित्रता की सामर्थ्य प्राप्त हो जाती है। दूसरी, जो दुःखी मनुष्यों में

CamScanner

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

करुणा की भावना है, उसमें संयम करने से योगी को करुणा बल प्राप्त हो जाता है। उसका स्वभाव परम दयालु हो जाता है तथा हर प्राणी के दुःख दूर करने की सामर्थ्य उसमें आ जाती है।

तीसरी, पुण्यात्मा मनुष्यों में मुदिता की भावना है, उसमें संयम करने से मुदिता का बल प्राप्त हो जाता है। अर्थात् वह ईर्ष्यादि दोष से सर्वथा शून्य हो जाता है। वह सदैव प्रसन्न भाव से रहता है। चौथी, उपेक्षा भावना का अर्थ है– पापात्मा के प्रति किसी भी तरह अच्छी या बुरी भावना का त्याग करते रहना अर्थात् उसके प्रति निरपेक्ष (मध्यस्थ) रहना।

इस प्रकार, योग साधना में हमारे अहिंसक विचारों की दृढ़ता ज्यों–ज्यों बढ़ती जाती है, त्यों–त्यों साधना का मार्ग अधिक सुगम व प्रशस्त होता जाता है। चित्त की अ ुद्धि का क्षय होकर उसमें निर्मलता बढ़ती जाती है और समाधि रूपी लक्ष्य अत्यधिक निकट होता जाता है।

जैनाचार्यों ने भी सामान्य श्रावक लिये (पूर्वोक्त) इन चार भावनाओं की उपादेयता स्वीकार की है। सामान्य श्रावक अपने दैनिक प्रार्थना में इन्हीं भावनाओं को चारितार्थ करने की शक्ति भगवान से इस प्रकार मांगता है–

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्।
माध्यस्थ–भावं विपरीतवृत्तौ, सदा ममात्मा विदधातु देव।।[गअप]

अर्थात् है भगवन्! मुझे ऐसी शक्ति दो कि मैं सामान्य प्राणियों के प्रति मैत्री भाव रखूं, गुणीजनों के प्रति प्रमोदभाव रखूं, जो क्लिष्ट जीव (अर्थात पापात्मा) हैं, इन के प्रति कृपाभाव रखूं तथा जो मुझसे विपरीत या प्रतिकूल हों, उनके प्रति मध्यस्थ भाव या समता भाव रखूं।

हिंसक विचारों के दुष्परिणाम

'योग साधना' के प्रसंग में जहां अहिंसा की महत्ता व उपादेयता प्रतिपादित की गई है, वहीं हिंसा सम्बन्धी आचारविचार के दुष्परिणामों पर भी प्रकाश डाला गया है, ताकि साधक हिंसक विचारों से सर्वथा दूर रहे और मैत्री आदि भावनाओं से अहिंसा भावना को पुष्ट करे। मैत्री आदि भावनाओं से जहां चित्त–प्रसन्नता का मार्ग प्रशस्त होता है, वहां हिंसक विचार आत्मा को कलुषित करते हैं और पाप कर्मों का बन्ध होता है।

हिंसा के मूल में रागादि कषायों का प्रमुख स्थान माना गया है। अनगार धर्मामृत आदि ग्रन्थों में कहा गया है कि रागादि परिणामों का प्रादुर्भाव ही हिंसा है[गअपप] काम, क्रोध आदि मनोविकार हिंसा की ही पर्यायें हैं।[गअपपप]

योगशास्त्र में ब्रह्महत्या आदि को कृष्ण कर्म (पापकर्म) के रूप में माना गया है[गपग] योगसूत्र के अनुसार, हिंसा के मूल कारण लोभ, क्रोध आदि हैं, जो दुःख रूप में प्रतिफलित होते हैं।[गग] राग–द्वेश आदि सभी मनोविकार क्ले ा रूप माने गये हैं।[गगप] इन क्ले ों (पापों) का परिणाम परिताप व दुःख ही है।[गगपप] कर्मयोग के प्रसंग में भगवद्गीता में भी यह प्रतिपादित किया गया है कि काम, क्रोध आदि हिंसक विचारों का दुष्परिणाम नरक गति या आसुरी योनि की प्राप्ति[गगपपप] है। इसके विपरीत अहिंसा, दया, क्षमा आदि को दैवीसम्पत् के रूप में परिगणित किया गया है।[गगपअ]

उपसंहार

CamScanner

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

'योग साधना' का परम लक्ष्य चित्तवृत्ति–निरोध है।[गगअ] योग का परम लक्ष्य शुद्ध स्वरूप में प्रतिष्ठित होना या शुद्ध निर्विकार चेतन स्वरूप की प्राप्ति होना, मोक्ष या कैवल्य माना गया है। अतः अन्तिम लक्ष्य तो, हिंसक हो या अहिंसक, दोनों प्रकार की चित्तवृत्तियों का निरोध ही है। किन्तु अहिंसक विचारों से ऊपर उठकर अहिंसा सम्बन्धी विचारों की पुष्टि करते हुए योग साधना में बढ़ना होता है, अन्त में साधक हिंसक व अहिंसक दोनों प्रकार की विचारधाराओं से मुक्त हो जाता है।

इस प्रकार, अहिंसा योग–साधना के मार्ग का एक उपयोगी पाथेय है, जिसके सहारे वह काम, क्रोधादि विकारों से रहित होकर अन्त में भुद्ध चैतन्य स्वरूप को प्राप्त कर लेता है।

सन्दर्भ स्थल

[प] योगसूत्र, 2/29
[पप] योगसूत्र, 2/30
[पपप] भगवती आराधना, 790
[पअ] उपासकाध्ययन, 26/354
[अ] उपासकाध्ययन, 26/355
[अप] पुरुशार्थसिद्दयुपाय, 4/6/42
[अपप] योगसूत्र, 2/28
[अपपप] वही, 2/35
[पग] वही, 2/36
[ग] वही, 2/37
[गप] वही, 2/38
[गपप] वही, 2/39
[गपपप] योगसूत्र भोजवृत्ति, 2/23
[गपअ] योगसूत्र, 1/33
[गअ] वही, 2/23
[गअप] अमितगति कृत द्वात्रिं िका, भलोक 1
[गअपप] अनगार धर्मामृत, 4/26, सर्वार्थसिद्धि, 7/22
[गअपपप] पुरुशार्थसिद्दयुपाय, 64
[गपग] योगसूत्र, भोजवृत्ति, 4/7
[गग] योगसूत्र, 2/34
[गगप] वही, 2/3
[गगपप] वही, 2/14
[गगपपप] भगवद्गीता, 16/9–22
[गगपअ] वही, 16/2–3
[गगअ] योगसूत्र, 1/2

संदर्भ ग्रंथ सूची

1.अनगार धर्मामृत, पं आ ाधर, तत्त्वदीपिका संस्कृत पंजिका सहित संपा. व अनु. : सिद्धान्ताचार्य पं. कैला ाचन्द्र भाास्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, सन् 1977
2.उपासकाध्ययन (आचार्य सोमदेव सूरि), संपा. अनु. : सिद्धान्ताचार्य पं. कैला ाचन्द्र भाास्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, सन् 1964

CS CamScanner

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

3.पुरुशार्थसिद्धयुपाय, आचार्य अमृतचन्द, हिन्दी भाशा सहित, श्रीपरमश्रुत प्रभावक मण्डल, श्रीमद् रामचन्द्र आश्रम, अगास (गुजरात) सन् 1977
4.सर्वार्थ सिद्धि, संपा. पं फूलचन्द भाास्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, सन 1999
5.योग द ॉन (महर्शि पतजंलिकृत), टीकाकार, हरिकृशणदास गोयन्दका, गीताप्रेस गोरखपुर, सं.2079
6.योगद ॉन, संपा. श्रीराम भार्मा, संस्कृत संस्थान, बरेली, तीसरा संस्करण, सन् 1969
7.श्रीमद्भगवद्गीता, गीताप्रेस गोरखपुर, सं. 2070

CamScanner

प्राकृत साहित्य में दोहद-निरूपण

—डॉ. सुनीता इन्दौरिया*

साहित्य समाज का दर्पण होता है। साहित्य के आलोक में तत्कालीन समाज व संस्कृति का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। भारत की प्राचीन भाषा (लोकभाषा) प्राकृत का साहित्य बहुत विशाल है। भगवान् महावीर के धर्मोपदेश की भाषा के रूप में यह जनसाधारण में विशेष समादृत हुई। इसी भाषा में जैन आगमों और कुछ व्याख्या या टीका-ग्रन्थों (चूर्णि, निर्युक्ति आदि) की रचना हुई। कवियों व साहित्यकारों ने इस भाषा को माध्यम बनाकर स्वतन्त्र ग्रन्थ रचे और फलस्वरूप धर्म, अध्यात्म, साधना आदि के अलावा, काव्य, नाटक, मुक्तक व कथा साहित्य के रूप में प्राकृत भाषा का भण्डार विशाल होता गया, जो जन-साधारण के लिए पठनीय-मननीय भी हुआ।

इस प्रकार, ई. 5वीं शती पूर्व से लेकर ई. 18वीं शती तक प्राकृत भाषा का साहित्य बड़े वेग से आगे बढ़ता गया। इसके आगे भी, वर्तमान काल तक, छिटपुट रूप से रचनाएँ होती रही हैं। इस विशाल प्राकृत साहित्य में प्राचीन भारत की पारिवारिक व सामाजिक सभ्यता व संस्कृति से सम्बद्ध महत्त्वपूर्ण निरूपण प्राप्त होता है। इस दृष्टि से आगमिक व्याख्या ग्रन्थ एवं स्वतन्त्र रचित कथा-साहित्य विशेष रूप से पठनीय है। यहाँ यह भी ज्ञातव्य है कि संस्कृत साहित्य का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है, किन्तु प्राकृत भाषा व साहित्य ने अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है। प्रायः संस्कृत साहित्य में राजा, योद्धा, धनी-मानी एवं उच्चवर्गीय व्यक्तियों व उनके समाज का चित्रण हुआ है, वहाँ प्राकृत साहित्य में जनसामान्य, निम्नवर्गीय व ग्रामीण परिवेश के तथा वैवाहिक जीवन के विविध पक्षों के चित्रण को अधिक स्थान प्राप्त हुआ है। किन्तु दूसरी तरफ, जैन आगमों व उनके व्याख्या ग्रन्थों में राजकीय परिवेश से सम्बद्ध कथाएँ भी उपलब्ध होती हैं। इस प्रकार प्राकृत साहित्य

*सहायक आचार्या, जैनविद्या एवं तुलनात्मक धर्म तथा दर्शन विभाग, जैन विश्व भारती संस्थान, लाडनूं-341306 राजस्थान

भी संस्कृत साहित्य के समानान्तर रूप में प्राचीन सभ्यता व संस्कृति के सर्वांगीण परिज्ञान हेतु महत्त्वपूर्ण सिद्ध होता है।

पुत्र-जन्म : पारिवारिक आनन्द का क्षण

समग्र भारतीय संस्कृति में वैवाहिक जीवन की सार्थकता सन्तान-उत्पत्ति से मानी गई है। जैन संस्कृति में भी इसकी महत्ता नकारी नहीं गई है। जैन श्राविका का मनोरथ होता था कि उसके भी सन्तान उत्पन्न हो। पिता यह मानता था कि मेरा पुत्र कुल की पताका, कुल का तिलक, कुल-परम्परा को बढ़ाने वाला होगा।[1]

जैनागमों में वर्णित है कि गृहिणियाँ उन माताओं को धन्य मानती थीं और उन्हीं का जीवन सफल मानती थी, जो अपनी गोद में अपनी सन्तान को बिठाती हैं, दूध पिलाती हैं और लोरियाँ सुनाती हैं।[2]

सन्तानोत्पत्ति के लिए गृहिणियाँ मनौती मानती थीं और इष्ट देवता की आराधना करती थीं।[3] राजकीय परिवार में पुत्रोत्पत्ति पर संगीत-मंगलवाद्य-नृत्य आदि के आयोजनों के साथ दस दिनों तक उत्सव मनाया जाता था। उस अवसर पर, दास-दासियों को दासता से मुक्त किया जाता था, कैदियों को छोड़ दिया जाता था, लोगों का ऋण माफ कर दिया जाता था, यथेच्छ दान दिया जाता था, आदि।[4]

गर्भिणी की सार-संभाल

सन्तान की पारिवारिक-सामाजिक महत्ता को ध्यान में रख कर गर्भिणी माता की सार संभाल करना, उसकी इच्छाओं की पूर्ति करना पारिवारिक जनों का दायित्व होता था। कुशल गृहिणी भी अपने गर्भ की सुख-सुविधा की दृष्टि से खान-पान-विहार आदि क्रियाओं में विशेष रूप से संयम का पालन करती थीं।[5] पारिवारिक जनों का भी यह दायित्व होता था कि वे गर्भिणी की खानपान आदि की इच्छा को महत्त्व दें और उसकी पूर्ति करने का यथासम्भव प्रयास करें।

'दोहद' और उसकी पूर्ति का महत्त्व

प्रायः गर्भ-धारण के चौथे माह में, गृहिणी की कुछ विशेष इच्छाएँ या तीव्र अभिलाषा जागृत होती हैं, उन्हें 'दोहद' नाम से अभिहित किया जाता है।[6] इसका दूसरा नाम 'जातुज' भी प्राप्त होता है।[7] महर्षि सुश्रुत ने सुश्रुत संहिता (शरीरस्थान) में इसका मूल शब्द 'दौर्हृद' बताया है।[8] चूँकि गर्भिणी का हृदय स्व में तथा गर्भस्थ बालक में बंट जाता है—द्विधा हो जाता है, इसलिए इसे 'दौर्हृद' कहा जाता है।[9] अग्निवेश-रचित 'चरक संहिता' में इसका 'द्वैहृदय' नाम प्राप्त होता है।[10] आचार्य वाग्भट के अनुसार, माता के बीज भाग से गर्भ का हृदय उत्पन्न होता है। यह

हृदय-रस लाने वाली धमनियों द्वारा माता के हृदय के साथ जुड़ा होता है, इसलिए गर्भ और माता, दोनों में इन धमनियों द्वारा (एक ही प्रकार की) रुचि उत्पन्न होती है। इसलिए 'दो हृदय' होने से गर्भिणी को (तीसरे मास से) 'दौर्हृदिनी' कहा जाता है–

मातृजं ह्यस्य हृदयं तद्रसहारिणीभिर्धमनीभिः मातृहृदयेन अभिसम्बद्धं भवति, तस्मात्तयोः ताभिः श्रद्धा समुत्पद्यते, तथा च द्विहृदयां नारीं 'दौर्हृदिनी' इत्याचक्षते।[11]

गर्भ के व्यक्त होने पर (तीसरे मास से) गर्भिणी के विशेष लक्षणों में 'विविध श्रद्धा' (आहार-विहार आदि की तीव्र इच्छा) का होना भी एक लक्षण माना गया है–

श्रद्धा च विविधात्मिकाः।[12]

यह 'श्रद्धा' ही 'दोहद' है। दोहद को पूर्वकृत कर्मों का फल भी बताया गया है। उसका तात्पर्य यह है कि गर्भस्थ बालक के भवितव्य के अनुरूप, गर्भिणी में 'दोहद' की अभिव्यक्ति होती है।[13]

गर्भ ठहरने के तीसरे मास से 'दोहद' (रूपी इच्छा) अल्प रूप में प्रकट होकर क्रमशः दीर्घ-दीर्घतम होती जाती है और 5वें मास में पूर्ण प्रभावक हो जाती है। अष्टांगसंग्रह में एक मतान्तर भी उपस्थित किया गया है कि गर्भधारण होने के तीन पक्षों (डेढ मास) से ही चार मास की समाप्ति तक दोहद-काल होता है–

अन्ये तु पक्षत्रयात् प्रभृति आपञ्चमान् मासान् दौर्हृदकालमाहुः।[14]

पूर्व जन्मों के कर्मों के आधार पर सात्त्विक, राजस व तामस– इन तीनों में से किसी एक गुण की प्रधानता वाला गर्भ, अपने स्वरूपानुरूप इच्छा करता है। वह इच्छा माता के हृदय से होती है। मन व हृदय के परस्पर-सम्बद्ध होने से, गर्भ की इच्छा ही माता की इच्छा के रूप में प्रकट होती है।

अष्टांगसंग्रह के मत में गर्भवती का योगक्षेम गर्भ के समान ही होता है, इसलिए गर्भिणी को ऐसे कारणों या साधनों से बचाना चाहिए, जो गर्भ के लिए घातक हों।[15]

वैदिक स्मृतिकारों के मत में गर्भिणी की तीव्र अभिलाषा 'दोहद' की पूर्ति अवश्य करनी चाहिए।[16] इससे स्वस्थ बालक का जन्म सम्भव होता है। भगवान् राम ने भी सीता के 'दोहद' (तपोवन देखने की अभिलाषा) की पूर्ति की थी।[17] ऐसी मान्यता भी थी कि 'दोहद' से भावी संतान के गुणों आदि की पहचान भी होती है।[18]

चरक संहिता (अग्निवेश-रचित) में बताया गया है कि गर्भिणी के 'दोहद' की पूर्ति न हो तो गर्भिणी की इच्छा को रोकने से वायु का प्रकोप होता है

और वह शरीर में भीतर ही भीतर विचरण करता हुआ गर्भ के नाश या गर्भ में विकार का कारण बनता है। याज्ञवल्क्य स्मृति[19] में इसी तरह का मत अभिव्यक्त किया गया है। अतः गर्भिणी जो कुछ भी आहार-विहार-सम्बन्धी इच्छा व्यक्त करे, उसकी पूर्ति करनी चाहिए, किन्तु गर्भ को हानि पहुँचाने वाले पदार्थ नहीं दिये जाएँ–

सा यद् यद् इच्छेत्, तत्तदस्यै दद्याद्, अन्यत्र गर्भोपघातकेभ्यो भावेभ्यः।[20]

आचार्य वाग्भट के मत में भी गर्भिणी की 'श्रद्धा' या 'दोहद' को रोकना हितकर (इष्ट) नहीं है और गर्भिणी की इच्छा के अनुरूप ही उसे वस्तु का सेवन कराना चाहिए। यदि वह वस्तु अपथ्य भी हो, तो भी उसे अल्प मात्रा में हितकर बनाकर, अर्थात् हितकारी वस्तु उसमें मिलाकर देना चाहिए–

नेष्टं श्रद्धाविमननम्।
देयमप्याहितं तस्यै, हितोपहितमल्पकम्।[21]
प्रार्थनायां च तीव्रायां काममहितमपि अस्यै हितोपसंहितं दद्यात्।[22]

महर्षि सुश्रुत के अनुसार, दोहदपूर्ति न होने पर विकलांग (अन्धा, लूला, लंगड़ा) पुत्र होता है और इच्छा-पूर्ति होने पर पराक्रमी व दीर्घायु पुत्र पैदा होता है।[23]

आचार्य वाग्भट का भी परामर्श है कि 'दोहद' की पूर्ति न होने पर गर्भ की विकृति, गर्भस्राव (गर्भ का सूखना, मृत्यु) आदि की संभावना हो सकती है–

श्रद्धाविघाताद् गर्भस्य विकृतिश्च्युतिरेव वा।[24]

दोहद की इच्छा पूरी न होने के कारण, प्रकुपित वायु शरीर के अन्दर गति करता हुआ गर्भ का घातक हो जाता है या गर्भ में विकृति या विरूपता पैदा करता है– **दौर्हृद-विमाननाद् हि वायुः प्रकुपितः अन्तःशरीरम् अनुचरन् गर्भस्य विनाशं वैरूप्यं वा कुर्यात्।**[25]

वाग्भट के मत में भी दोहद की पूर्ति होने पर संतान वीर्यशाली व दीर्घायु होती है–

लब्धदौर्हृदा तु वीर्यवन्तं चिरायुशं पुत्रं प्रसूते।[26]

वृक्ष-दोहद– प्राकृत मुक्तक काव्य 'गाथा सप्तशती' (एवं व्याख्या) के अनुसार, वनस्पति जगत् में भी 'दोहद' होता है। वनस्पति, लता, वृक्ष आदि में जिन द्रव्यों व क्रियाओं से अकाल में ही पुष्पोद्गम कराया जाता है, उसे 'कविसमय' (कविप्रसिद्धि) के रूप में 'वृक्षदोहद' नाम से अभिहित किया गया है।[27] संस्कृत साहित्य में अनेक स्थलों पर 'वृक्षदोहद'–सम्बन्धी निरूपण प्राप्त होते हैं।[28]

प्राकृत साहित्य में 'दोहद'

गर्भिणी स्त्री प्रायः लज्जावश अपनी तीव्र अभिलाषा 'दोहद' को खुलकर अभिव्यक्त नहीं करती, अतः सखीजन या पारिवारिक जन उससे पूछते हैं। गाथासप्तशती की एक गाथा है–

किं किं दे पडिहासइ सहीहिं, इअ पुच्छिआई मुद्धाई।
पढमुल्लुअदोहलिणीए णवरि दइअं गआ दिट्ठी।।[29]

अर्थात् गर्भधारण के पश्चात्, दोहद वाली किसी मुग्धा (भोली) नायिका से जब सखियों ने पूछा कि तुझे क्या चीज अच्छी लगती है? तब वह कुछ न बोल कर, इशारे से अपने पति को देखने लगती है (अर्थात् वह बताती है कि उसे अपना पति ही अच्छा लग रहा है)।

तीर्थंकरों की माताओं के उल्लेखनीय दोहद

तीर्थंकर विशिष्ट पुरुष होते हैं, उनकी गणना शलाकापुरुषों में की जाती है। जैन आगमों के व्याख्या साहित्य में उनकी माताओं के दोहद भी वर्णित हैं–

भगवान् पद्मप्रभ गर्भ में आये तब उनकी माता को कमल की शय्या पर सोने का दोहद उत्पन्न हुआ। हितैषी देव ने कमल की शय्या का निर्माण कर उसका दोहद पूर्ण किया।[30] भगवान् चन्द्रप्रभ गर्भ में आये तब उनकी माता को चन्द्रपान का दोहद उत्पन्न हुआ। तथा चन्द्रप्रभ का वर्ण भी चन्द्रमा के जैसा था, अतः उनका नाम चन्द्रप्रभ रखा गया।[31]

भगवान् श्रेयांस की माता को विशिष्ट शय्या पर बैठने का दोहद हुआ, वह विशिष्ट शय्या श्रेयांस के पिता के पास परम्परागत रूप से उपलब्ध थी, जो देव-परिगृहीत थी, जिसकी नित्य पूजा की जाती थी। उस पर बैठने वाले को देवकृत उपद्रव का भाजन बनना पड़ता था, अतः उस पर कोई बैठ नहीं पाता था। किन्तु श्रेयांस की माता को उस पर बैठने का दोहद उत्पन्न हुआ। रानी जब उस पर बैठी तो देवता आया, किन्तु रोता हुआ वापस चला गया। तीर्थंकर को गर्भस्थ जानकर उस देव ने श्रेयांस की माता को कोई कष्ट नहीं दिया। इस प्रकार गर्भस्थ बालक माता के लिए श्रेयस्कर सिद्ध हुआ, अतः नाम श्रेयांस रखा गया।[32]

भगवान् मल्लि जब गर्भ में आये तब उनकी माता प्रभावती को सब ऋतुओं के सुगंधित फूलों से बनी शय्या पर सोने का दोहद उत्पन्न हुआ, देवता ने उसका दोहद पूर्ण किया।[33]

भगवान् नमि जब गर्भ में आये, तब उनकी माता वप्रा के मन में महल की

अट्टालिका (छत) पर जाने की इच्छा (दोहद) हुई। वह वहाँ गई। उसी समय अचानक शत्रु राजाओं ने आक्रमण किया। माता को अट्टालिका पर देखकर शत्रु राजा नत हो गये। इसी कारण उनका नाम 'नमि' रखा गया।[34]

इसी प्रकार, तीर्थंकर महावीर गर्भ में आये तब माता त्रिशला को दिव्य दोहद उत्पन्न हुए कि मैं अपने हाथों से दान दूँ, सद्गुरुओं को आहार आदि प्रदान करूँ, देश में अमारी पटह बजवाऊँ, कैदियों को कारागृह से मुक्त कराऊँ, समुद्र, चन्द्र और पीयूष का पान करूँ, उत्तम प्रकार के भोजन, आभूषण धारण करूँ और सिंहासन पर बैठकर शासन का संचालन करूँ। राजा सिद्धार्थ ने रानी के समस्त दोहद पूर्ण किये।[35]

कल्पसूत्र की कल्पलता वृत्ति के अनुसार त्रिशला रानी को एक विचित्र दोहद उत्पन्न हुआ। वह यह था कि मैं इन्द्राणी के कानों से कुण्डल-युगल छीनकर पहनूँ। किन्तु ऐसा हो पाना सर्वथा असंभव था, अतः वह दुर्मनस्क रहने लगी। इन्द्र ने अपने अवधिज्ञान के बल सब कुछ जाना तथा इसे पूर्ण करने के लिए उसने इन्द्राणी प्रभृति अप्सराओं को साथ लिया और एक दुर्गम पर्वत के अन्तर्वर्ती विषम स्थान में दिव्य देवनगर का निर्माण किया और वहाँ रहने लगा। राजा सिद्धार्थ को इन्द्र के नये आवास का पता चला और वह ससैन्य इन्द्र के पास आया और कुण्डलों की याचना की। इन्द्र ने उसे देने से इन्कार कर दिया। दोनों में युद्ध हुआ। इन्द्र युद्ध में जानबूझकर पराजित हुआ। किले पर राजा सिद्धार्थ ने अधिकार कर लिया। इन्द्राणी के कानों से कुण्डल छीनकर राजा ने रानी को पहनाया। दोहद पूर्ण होने से रानी त्रिशला अत्यन्त प्रमुदित हुई।[36]

विचित्र एवं कष्टसाध्य दोहद

प्राचीन परिवारों में दोहद की पूर्ति येन-केन-प्रकारेण की जाती थी। जितशत्रु राजा ने सुदर्शना रानी की दोहद-पूर्ति हेतु राजपुरुषों को स्वर्णपृष्ठ वाले मृग लाने का आदेश दिया, क्योंकि रानी के मन में सुनहरी पीठ वाले मृगों का दोहद उत्पन्न हो गया था।[37]

कभी-कभी ये दोहद कष्टसाध्य भी होते थे। श्रेणिक की रानी धारिणी को 'अकाल मेघ' सम्बन्धी दोहद हुआ था। रानी की इच्छा थी कि चमकती हुई बिजली एवं विविध मेघों की घटाएँ आकाश में हों, वर्षा हो रही हो, तब वैभारगिरि के प्रदेशों में वह अपने पति के साथ विहार करे। इस दुष्कर दोहद की पूर्ति राजकुमार अभय के द्वारा देवाराधना की सहायता से की गई थी। अभयकुमार के पूर्वभव के मित्र सौधर्म कल्पवासी देव ने गर्जनायुक्त बिजली, पाँच प्रकार के मेघों की ध्वनि एवं दिव्य वर्षा ऋतु की विक्रिया (कृत्रिम स्थिति) की थी।[38]

इसी प्रकार, यथोचित रीति से धन सार्थवाह की धर्मपत्नी भद्रा के भी दोहद की पूर्ति की गई थी।[39]

दोहद की प्राप्ति होने पर गर्भवती स्त्री प्रसन्न होती हुई विविध अवस्थाओं को प्राप्त होती है–

सम्पूर्ण दोहद – समस्त वांछित अर्थ की संप्राप्ति।

सम्मानित दोहद – अभिलषित अर्थ को सम्यक् प्रकार से प्राप्त करना।

विनीत दोहद – इच्छा का समापन।

विच्छिन्न दोहद – वांछित अर्थ की इच्छा के अनुबन्ध का विच्छेद।

सम्पन्न दोहद – विवक्षित अर्थ के भोग से उत्पन्न आनन्द की प्राप्ति।[40]

इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि प्राचीन काल में पति व अन्य परिवारजनों द्वारा गर्भवती स्त्री के दोहद का सम्मान रखते हुए उसे पूर्ण किए जाने का प्रयास किया जाता रहा है। यह माना जाता था कि गर्भवती माता के चिन्तन, आचरण, व्यवहार, वातावरण आदि का सन्तान निर्माण में तथा सन्तान के चारित्र एवं शरीर-संघटना पर प्रभाव पड़ता है। इस प्राचीन भारतीय मान्यता का सोदाहरण निरूपण प्राकृत साहित्य में उपलब्ध होता है।

संदर्भ-

1. नायाधम्मकहा, 1/20
2. नायाधम्मकहा, 2/12
3. नायाधम्मकहा, 2/12, 14-15
4. नायाधम्मकहा, 1/76-78
5. नायाधम्मकहा, 1/72
6. अभिधानचिंतामणि, 3/205
7. राजपाल हिन्दी शब्दकोश, 'जातुज' शब्द
8. सुश्रुत संहिता, शरीरस्थान, 3/15
9. रघुवंश की मल्लिनाथी टीका, 3/1
10. चरकसंहिता शरीरस्थान, 4/15
11. अष्टांगसंग्रह, शरीरस्थान, 2/17
12. अष्टांगहृदय, शरीरस्थान, 1/52
13. सुश्रुत संहिता, शरीरस्थान, 3/27
14. अष्टांगसंग्रह, शरीरस्थान, 2/18
15. अष्टांगसंग्रह, शरीरस्थान, 2/58
16. याज्ञवल्क्य स्मृति, 79

17. वाल्मीकि रामायण, उत्तरकाण्ड 42/31-36, रघुवंश-14/35
18. सुश्रुत संहिता, शरीरस्थान, 3/19-26
19. याज्ञवल्क्य स्मृति, 79
20. चरक संहिता, शरीरस्थान, 4/17
21. अष्टांगहृदय, शरीरस्थान, 1/53
22. अष्टांगसंग्रह, शरीरस्थान, 2/19
23. सुश्रुतसंहिता, शरीरस्थान, 3/15
24. अष्टांगहृदय, शरीरस्थान, 1/54
25. अष्टांगसंग्रह, शरीरस्थान, 2/20
26. अष्टांगसंग्रह, शरीरस्थान, 2/21
27. द्र. गाथासप्तशती, गाथा 1/6 व व्याख्या
28. द्र. मालविकाग्निमित्र, तीसरा अंक, मेघदूत 2/15 टीका, नैषधीयचरित आदि
29. गाथासप्तशती, 1/15
30. आवश्यक निर्युक्ति, खण्ड-2, गाथा 704/3
31. आवश्यक निर्युक्ति, खण्ड-2 गाथा 704/4
32. आवश्यक निर्युक्ति, खण्ड-2, गाथा 704/6; आवश्यक चूर्णि, भाग-2, पृ. 10
33. आवश्यक निर्युक्ति, खण्ड-2, गाथा 704/6, आवश्यक चूर्णी, भाग-2 पृ. 10
34. आवश्यक निर्युक्ति, खण्ड-2, गाथा 704/11
35. कल्पसूत्र, 92
36. द्र. भगवान महावीर : एक अनुशीलन, पृ. 228
37. पिण्डनिर्युक्ति, प्रस्तावना, पृ. 150
38. नायाधम्मकहा, 1/33-68
39. नायाधम्मकहा, 2/17-21
40. विपाकसूत्र, 2/30 पर महाप्रज्ञ कृत टिप्पण; कल्पसूत्र, 92

❖❖

प्राकृत के बिना भारतीय इतिहास अधूरा है

“भारतीय धर्म और समाज का इतिहास तबतक अधूरा है, जबतक पालि और प्राकृत का उससे सम्बन्ध न हो।” —**जयशंकर प्रसाद**

(कंकाल, प्रसाद ग्रंथावली, पृष्ठ 30, भारतीय ग्रंथ निकेतन, नई दिल्ली, 1988)

◆◆

“प्राकृत से वेद की साहित्यिक भाषा का विकास हुआ, प्राकृतों से संस्कृत का विकास भी हुआ और प्राकृतों से इनके अपने साहित्यिक रूप भी विकसित हुए।” —**डॉ. हरदेव बाहरी**

प्राकृत भाषा और उसका साहित्य (राजकमल प्रकाशन), पृष्ठ 13

जैन साधना का विशिष्ट पक्ष : आतापना योग

-डॉ. सुनीता इन्दौरिया

सारांशिका

भारतीय आध्यात्मिक क्षितिज में दो प्रमुख विचारधाराएं प्रवाहित होती रही हैं-१. वैदिक और २. श्रमण। दोनों विचारधाराओं की अपनी-अपनी साधना पद्धतियां हैं। जैन परम्परा में अन्तिम पुरुषार्थ के रूप में मोक्ष को अत्यधिक महत्त्व दिया गया है। मोक्ष की प्राप्ति के साधन संवर और निर्जरा माने गये हैं। नये कर्मों के आगमन को रोकना संवर है और पुराने कर्मों का आंशिक क्षय निर्जरा है। इन दोनों का मुख्य साधन तपश्चर्या को माना गया है। तप के बाह्य व आभ्यन्तर ये दो भेद प्रमुख हैं। इनमें बाह्य तप के छः भेदों में कायक्लेश की साधना परिगणित है। इस साधना के माध्यम से साधक की तितिक्षा एवं परिषह-जय की चर्या भी पूर्ण होती है। इसी साधना के अन्तर्गत 'आतापना योग' पद्धति का विशिष्ट स्थान है।

प्रस्तुत निबन्ध का उद्देश्य आतापना योग के सम्बन्ध में आगमोक्त सामग्री से पाठकों को परिचित कराना है। आतापना योग क्या है, आतापना योग की विधियां क्या हैं ? इससे क्या विशिष्ट फल प्राप्त हो सकता है, इसके विशिष्ट साधक कौन-कौन रहे हैं-इत्यादि जिज्ञासाओं का समाधान इस निबन्ध के द्वारा किया जाएगा।

भूमिका

वैदिक परम्परा की तरह जैन परम्परा में भी सांसारिक दु:खों से छूटकर परम आनन्दमयी स्थिति की प्राप्ति को ही मोक्ष माना गया है। मोक्ष को भारतीय संस्कृति में परम पुरुषार्थ माना गया है। जैन परम्परा में सभी तीर्थंकरों के उपदेश का सार है- मोक्ष और उसका फल (मोक्ष)। मोक्ष का अर्थ है-समस्त कर्म-बन्धनों से छूट जाना। उत्तराध्ययन में सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, सम्यक् चारित्र व तप-इन चारों को मोक्षमार्ग के रूप में निरूपित किया गया है। वस्तुत: मोक्ष साधना के दो प्रमुख द्वार हैं-संवर व निर्जरा । संवर से तात्पर्य है-कर्मों के आगमन को रोकना और निर्जरा का अर्थ है-पुरातनबद्ध कर्मों का आंशिक क्षय। 'तप' में संवर व निर्जरा दोनों की शक्ति निहित है । अत: जैन परम्परा में तप को विशिष्ट महत्त्व दिया गया है।

तप का अर्थ है- इच्छाओं का निरोध अथवा पांचों इन्द्रियों व मन का संयम। आचारांग निर्युक्ति में कहा गया है कि जैसे मैला वस्त्र जल आदि शोधक द्रव्यों से उज्ज्वल हो जाता है, वैसे ही तप के द्वारा कर्म-मल से मुक्त होकर आत्मा शुद्ध व पवित्र बन जाती है।

CS CamScanner

कायक्लेश : विशिष्ट तपश्चर्या

तप के बाह्य व अन्तरंग-ये दो प्रमुख भेद हैं। इनमें से प्रत्येक के ६-६ भेद इस प्रकार हैं - बाह्य तप के छः भेद हैं- १. अनशन, २. अवमौदर्य, ३. वृत्तिपरिसंख्यान, ४. रसपरित्याग, ५. विविक्तशय्यासन, ६. कायक्लेश।

आभ्यन्तर तप के छः भेद हैं- १. प्रायश्चित्त, २. विनय, ३. वैयावृत्य, ४. स्वाध्याय, ५. व्युत्सर्ग, ६. ध्यान।

बाह्य तप में परिगणित कायक्लेश की साधना का विशिष्ट महत्त्व है। काय-क्लेश में शरीर-क्रियाओं का महत्त्व है। कायक्लेश से तितिक्षा का भाव प्रखर बनता है। तितिक्षा साधक का परम धर्म कहा गया है। साधक होकर जो तितिक्षु नहीं है या सहिष्णु नहीं है, कष्टों में धैर्य नहीं रख सकता तो वह साधना नहीं कर सकता। इसके अतिरिक्त, परीषह-जय की महत्ता भी शास्त्रों में प्रतिपादित की गई है। मोक्षमार्ग से साधक भ्रष्ट न हो और कर्मों की निर्जरा करता हुआ आगे बढ़ता रहे, इस दृष्टि से परिषह-जय का अत्यधिक महत्त्व माना जाता है। परीषह-जय की सिद्धि में उक्त कायक्लेश की उपादेयता स्पष्ट है।

कायक्लेश तप : आतापना

तपश्चर्या के साधन 'कायक्लेश' तप का ही एक भेद आतापना है। आतापना के लिए आगमों में भी प्रेरित किया गया है। दशवैकालिक सूत्र में कहा गया है- **'आयावयाहि चय सोगमल्लं'** अर्थात् सुकुमारता का त्याग कर, शरीर को आतापना से तपाओ। आतापना का अर्थ है: 'सूर्य का ताप सहना'। यह सूर्य की रश्मियों को जगाने की प्रक्रिया है, इसलिए यह योग है।

आचार्य महाप्रज्ञ के अनुसार आतापना का अर्थ है- प्रयोजन के अनुरूप सूर्य का आताप लेना।

आचार्य कुन्दकुन्द ने आतापना योग को मुनि के उत्तर गुणों में निर्दिष्ट किया है।

अनगार धर्मामृत में आतापना को कायक्लेश तप के रूप में परिगणित किया गया है-

ऊर्ध्वार्कांद्ययनै शवादिशयनैर्वीरासनाद्यासनैः
स्थानैरेकपदठागामिभिरनिष्ठीवाठिमावठाहैः।
योगेश्चातपनादिभिः प्रशमिना संतापनं यत्तनोः
कायक्लेशमिदं तपोऽत्र्युपनतौ सद्ध्यानसिद्धयै भजेत्।।

अर्थात् सूर्य के सिर पर या मुंह के सामने आदि रहते हुए अन्य ग्राम को जाना और वहां से लौटना, मृतक के समान या दण्ड के समान आदि रूप में शयन करना, वीरासन

आदि आसन लगाना, एक पैर आगे करके या दोनों पैरों को बराबर करके खड़े रहना, न थूकना, न खुजाना आदि धर्मोपकारक अवग्रह पालना, आतापना आदि योग करना इत्यादि के द्वारा तपस्वी साधु जो शरीर को कष्ट देता है उसे कायक्लेश तप कहते हैं।

ज्ञातव्य है कि सूर्य की उष्णता को सहन करने से सम्बन्धित अनेक गमनयोग भी शास्त्रों में निरूपित किये गये हैं। मूलाराधना के अनुसार कायक्लेश के अनेक भेदों में उक्त गमन योग को परिगणित किया गया है। वहां गमन योग के भी निम्नलिखित छः भेद बताए गए हैं-१.अनुसूर्यगमन, २. प्रतिसूर्यगमन, ३. ऊर्ध्वगमन, ४. तिर्यक्सूर्यगमन, ५. अन्यग्रामगमन, ६. प्रत्यागमन।

कायक्लेश तप की साधना के अनेक रूप, अनेक प्रकार शास्त्रों में बताये गये हैं। स्थानांग सूत्र में कायक्लेश के सात (७) भेद किये गये हैं, और उसी के विस्तार रूप में औपपातिक सूत्र में कायक्लेश के निम्नलिखित १० भेदों में आतापना का भी निर्देश प्राप्त होता है-

१. ठाणट्ठिए (कायोत्सर्ग), २. उक्कुडुयासणिए (उत्कुटुक आसन में बैठना), ३. पडिमट्ठाई (प्रतिमा धारण करना), ४. वीरासणिए (वीरासन में स्थित रहना), ५. नेसज्जिए (पालथी लगाकर स्थिर बैठना), ६. आयावए (आतापना लेना), ७. अवाउडए (वस्त्र आदि का त्याग), ८. अकंडुयए (शरीर पर खुजली न करना), ९. अणिट्ठूहए (थूक भी नहीं थूकना), १०. सव्वगायपरिकम्मविभूसविप्पसुक्के (शरीर की देखभाल न करना, विभूषा से रहित होना)।

औपपातिकवृत्ति के अनुसार आतापना के तीन प्रकार हैं- (१) निपन्न (सोकर ली जाने वाली आतापना उत्कृष्ट), (२) अनिपन्न (बैठ कर ली जाने वाली आतापना मध्यम), (३) ऊर्ध्वस्थित (खड़े होकर ली जाने वाली आतापना-जघन्य)।

बृहत्कल्पभाष्य में 'आतापना योग' को तीन प्रकार का कहा गया है-१. उत्कृष्ट (गर्म शिला आदि पर लेट कर ताप सहना), २. मध्यम (बैठ कर ताप सहना), ३. जघन्य (खड़े रहकर ताप सहना)।

उत्कृष्ट आतापना के भी तीन प्रकार हैं -

१. उत्कृष्ट-उत्कृष्ट-छाती के बल लेट कर ताप सहना।

२. उत्कृष्ट-मध्यम- दाएं या बाएं से लेट कर ताप सहना।

३. उत्कृष्ट-जघन्य- पीठ के बल लेट कर ताप सहना।

मध्यम आतापना के भी तीन भेद इस प्रकार हैं-

१. मध्यमउत्कृष्ट-पर्यंकासन में बैठकर ताप सहना।

२. मध्यममध्यम- अर्धपर्यंकासन में बैठ कर ताप सहना।

३. मध्यमजघन्य- उकडू आसन में बैठ कर ताप सहना।

CamScanner

जघन्य आतापना के भी तीन भेद इस प्रकार हैं-

१. **जघन्यउत्कृष्ट**-एक पैर को पसार कर ताप सहना।

२. **जघन्यमध्यम**- एक पैर के बल खड़े रहकर ताप सहना।

३. **जघन्यजघन्य**- दोनों पैरों को समश्रेणि में रख कर खड़े-खड़े ताप सहना।

वैदिक सूर्योपासना एवं पंचाग्नि तप

वैदिक परम्परा में सूर्योपासना एवं पंचाग्नि तप का विशेष महत्त्व रहा है। चूंकि सूर्य की किरणों को अग्नि का ही एक रूप माना जाता था इस दृष्टि से पंचाग्नि तप के अन्तर्गत सूर्योपासना ही की जाती थी। सूर्योपासना के अनेक उदाहरण महाभारत में मिलते हैं। प्राचीन काल में कुरूराज संवरण ने सूर्य की आराधना की थी। पौरवाह्निक नित्यक्रियायें सम्पन्न करके श्रीकृष्ण सूर्य की उपासना करते थे। शरशय्या पर सोते हुए भीष्म ने सूर्य की उपासना की थी। मैत्रायण्युपनिषत् के प्रथम प्रपाठक में वर्णित है कि राजा वृहद्रथ ने भी सूर्य के प्रति ऊर्ध्वमुख होकर यह तप किया था। फलस्वरूप भगवान् से उनका साक्षात्कार हुआ था।

सूर्योपासना के आधार पर प्राचीन भारत में 'सौर सम्प्रदाय' विकसित हुआ था। विदेशों में कहीं-कहीं सूर्य-पूजा प्रचलित थी। सिकन्दर स्वयं सूर्य का उपासक था। उसने भारत पर विजय की आशा से उगते हुए सूर्य की पूजा की और अपनी कामना पूर्ण करने के लिए निवेदन किया। सूर्य-पूजा का प्रसार एशिया माइनर से रोम तक था। इस प्रकार पंचाग्नि तप भी उक्त सूर्योपासना का ही एक भेद माना जा सकता है।

आतापना योग विधि

जैन परम्परा में उपास्य देवों में सूर्य की गणना नहीं होती है। अत: आतापना योग को सूर्योपासना नाम नहीं दिया जा सकता। किन्तु, सूर्य के उग्र आताप में रह कर की जाने वाली आतापना को एक विशिष्ट साधना कहा जा सकता है। प्राचीन काल में अनेक जैन मुनि सूरज की किरणों से तपी हुई शिला या धूलि पर लेटकर आतापना लेते थे। इसी प्रकार ग्राम या सन्निवेश के बाहर, आतापना भूमि में दोनों भुजाएं ऊपर उठाकर सूर्य के सम्मुख खड़े होकर आतापना लेने की परम्परा प्रवर्तित रही है। आतापना तप में समपादिका, उत्तानशयन, पर्यंकासन आदि आसनों का भी यथाशक्ति प्रयोग किया जाता रहा है। इनमें भूमि पर लेट कर ली जाने वाली आतापना को उत्कृष्ट साधना बताया गया है। भूमि पर लेट कर ली जाने वाली आतापना से शरीर के सारे अंग प्रकृष्ट रूप से तप्त हो जाते हैं। भूमि सूर्य की रश्मियों से अत्यन्त तापित होती है, उस पर वायु का संचरण नहीं होता ऐसी स्थिति में शरीर के किसी भी अवयव को ताप से विश्राम नहीं मिलता है।

CamScanner

दशवैकालिक चूर्णि में श्रमण की ऋतुचर्या के आधार पर तपस्या का विधान बताया गया है। जिस ऋतु में जो परिस्थिति संयम में बाधा उत्पन्न करे उसे उसके प्रतिकूल आचरण द्वारा जीता जाए। ग्रीष्म ऋतु में आतापना लेने का विधान है। ग्रीष्म ऋतु में स्थान, मौन और वीरासन आदि अनेक प्रकार के तप करने चाहिए, जो आतापना ले सकते हैं, उन्हें सूर्य के सामने मुंह कर, एक पैर पर दूसरा पैर टिका कर एक पादासन कर, खड़े-खड़े आतापना लेनी चाहिए। जिनदास महत्तर ने ऊर्ध्वबाहु होकर उकडू आसन में आतापना लेने को मुख्यता दी है। भगवान् महावीर शिशिर में छाया में बैठकर और ग्रीष्म में उकडू आसन में बैठ सूर्याभिमुख हो आतापना लेते थे।

आगम के अनुसार साध्वियां आतापना का अनुष्ठान आपवादिक रूप से कर सकती हैं, ऐसा शास्त्रों में निर्देश है। कप्पो के अनुसार साध्वी के लिए साधु की तरह खुले आकाश में आतापना लेने का निषेध है लेकिन वैकल्पिक रूप में उपाश्रय के भीतर संघाटी प्रतिबद्ध होकर पैरों को समतल और भुजाओं को प्रलंबित करके आतापना लेने का विधान भी है।

आतापना योग से लाभ

आतापना योग से परीषह-जय व तितिक्षा शक्ति की साधना पुष्ट होती ही है, इसका विशिष्ट व प्रत्यक्ष लाभ तेजोलेश्या की सिद्धि होना भी बताया गया है। मंखलिपुत्र गोशालक द्वारा तेजोलेश्या की प्राप्ति कैसे होती है? इस प्रकार की जिज्ञासा के समाधान हेतु भगवान् महावीर ने गोशालक को 'आतापना विधि' इस प्रकार बताई थी-'' जो एक मुट्ठीभर कुल्माषपिंड खाता है, एक चुल्लू भर पानी पीता है, निरन्तर बेले-बेले की तपस्या करता है, आतापना भूमि में सूर्य के सामने दोनों भुजाएं ऊपर उठाकर आतापना लेता है, वह छ: मास के अंतराल में संक्षिप्त व विपुल तेजोलेश्या वाला हो जाता है।'' ठाणांग में भी तेजोलेश्या की उपलब्धि के तीन हेतुओं में 'आतापना' का भी परिगणन किया गया है।

इसी प्रकार, पुद्गल परिव्राजक भी आतापना योग की निरन्तर साधना करता था, जिसके फलस्वरूप उस विशिष्ट अतीन्द्रिय ज्ञान अर्थात् 'विभंग ज्ञान' प्राप्त हुआ था। इस ज्ञान के सामर्थ्य से वह ब्रह्मलोक तक के देवों की स्थिति को जानने-देखने में समर्थ हो गया था ।

आतापना का प्रयोग अर्थात् सूर्य की किरणों से प्राप्त ऊष्मा का वैज्ञानिक महत्त्व भी है। वैज्ञानिक दृष्टि से सूर्य की किरणें मानव के शरीर और मस्तिष्क को स्वस्थ और पुष्ट रखती हैं। ये रोग-निवारक होने के साथ-साथ, कीटाणु-नाशक भी होती हैं। डॉ. चार्ल्स एफा हेलैन तथा लन्दन के सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. डब्ल्यू एम. फ्रेजर का मत है कि संसार में जितनी शक्तियां विकसित हैं, वे सब सूर्य के कारण ही हैं।

CS CamScanner

पिछले कुछ दशकों में 'सूर्य किरण चिकित्सा' (आतापना योग) के आश्चर्यकारी परिणाम सामने आये हैं। डॉ. हेगेन का अभिमत है कि रक्त का पीलापन, पतलापन, लोहतत्त्व की कमी, कमजोरी, पेशियों की शिथिलता, थकान आदि रोगों में सूर्य की सहायता से उपचार करना सरल है। सूर्य की रश्मियों से शरीर की प्रतिरोधात्मक शक्ति बढ़ती है।

आतापना योग के महान् साधक

आतापना योग की विधि द्वारा साधना करने वाले प्राचीन साधकों का वर्णन शास्त्रों में मिलता है। भगवान् महावीर ग्रीष्म ऋतु में सूर्य का आतप लेते थे। वे ऊकडू आसन में वायु के अभिमुख होकर बैठते थे। भगवान् महावीर विहार करते हुए कूर्मग्राम पधारे। कूर्मग्राम के बाहर वैश्यायन नामक तापस द्वारा प्राणामाप्रव्रज्या स्वीकार कर सूर्यमण्डल के सम्मुख दृष्टि केन्द्रित कर दोनों हाथ ऊपर उठाये आतापना लेने का उल्लेख मिलता है। परिव्राजक पुद्गल द्वारा भी निरन्तर आतापना विधि के सेवन किये जाने का उल्लेख मिलता है। इसी तरह श्रेणिक राजा का पुत्र मेघकुमार भी प्रव्रजित होकर, आतापना विधि का सेवन करता था। आर्या सुकुमालिका ने आर्या गोपालिका के समक्ष आतापना विधि की साधना हेतु अपनी इच्छा इस प्रकार व्यक्त की थी। आर्ये! मैं चाहती हूं, आपसे अनुज्ञा प्राप्त कर चम्पानगरी के बाहर सुभूमिभाग उद्यान के परिपार्श्व में निरन्तर बेले-बेले की तपस्या के साथ सूर्याभिमुख हो, आतापना लेती हुई विहार करूं ।

भगवती सूत्र में तापस तामलि द्वारा आतापना तप किए जाने का विस्तृत वर्णन किया गया है। तापस तामलि परिवारजनों की अनुमति लेकर प्राणामा प्रव्रज्या से प्रव्रजित होकर यह अभिग्रह स्वीकार करता है कि मैं जीवनभर बेले-बेले की तप:साधना यावत् केवल चावल को इक्कीस बार पानी से धोकर फिर आहार करूंगा। इस प्रकार के अभिग्रह के साथ तप साधना करता है। वह आतापना भूमि में दोनों भुजाएं ऊपर उठाकर सूर्य के सामने आतापना लेता हुआ विहार करता है।

औपपातिक सूत्र में अम्बड़ परिव्राजक का वर्णन मिलता है, जिसने दो-दो दिनों का उपवास करते हुए ऊँची भुजा उठाये, सूर्य के सामने मुँह किए आतापना भूमि में आतापना लेते हुए तप का अनुष्ठान किया। निरयावलिका में सोमिल ब्राह्मण का कथानक आता है। वह ब्राह्मण वेदाध्ययन करने वाला तथा व्रतों का पालन करने वाला था। ब्राह्मण के मन में संकल्प उत्पन्न हुआ कि तापसों के एक प्रकार दिशाप्रोक्षिक (जल सींचकर दिशाओं की पूजा करने वाले) तापस के रूप में प्रव्रजित होऊं और प्रव्रजित होने के पश्चात् इस प्रकार अभिग्रह अंगीकार करूंगा-'यावज्जीवन के लिए निरंतर षष्ठभक्त (बेला-बेला) पूर्वक दिशा चक्रवाल तपस्या करता हुआ सूर्य के अभिमुख भुजाएं उठाकर आतापना भूमि में आतापना लूंगा (विस्तार से देखें- निरयावलिका ३/३/१६)। इस प्रकार प्रव्रजित होकर उसने अपने अभिग्रह को पूर्ण किया।

CamScanner

श्रमण परम्परा में प्रभावकारी सम्प्रदाय आजीवक सम्प्रदाय रहा है। इस सम्प्रदाय के आचार्य गोशालक थे। आजीवक भिक्षुओं द्वारा पंचाग्नि तप के अन्तर्गत आतापना योग विधि के सेवन का विवरण मिलता है। आवश्यक निर्युक्ति में भी मुनि कूलवाल द्वारा तापस आश्रम में रहते हुए नदी तट पर आतापना विधि सेवन का उल्लेख मिलता है।

व्यवहारभाष्य में मथुरा नगरी में तपस्वी का उल्लेख है, जो आतापना की साधना करते हुए देवताओं को भी आकृष्ट कर लेता था। इस सम्बन्ध में वहां जो कथानक आया है, वह इस प्रकार है-देवता ने एक सर्वरत्नमय स्तूप का निर्माण किया। वहां भगवे वस्त्रधारी भिक्षु आये और बोले-यह स्तूप हमारा है। इस स्तूप के कारण संघ का उनके साथ छः माह तक विवाद चला। संघ ने पूछा-इस संदर्भ को मिटाने के लिए कौन समर्थ है? एक व्यक्ति बोला अमुक तपस्वी इसके लिए समर्थ है। तब संघ ने तपस्वी को बुलाकर कहा-तपस्विन्! आप आराधना कर देवता का आह्वान करें। तपस्वी ने आराधना की। देवता उपस्थित होकर बोला-आदेश दें मैं आपके लिए क्या कर सकता हूं। तपस्वी ने कहा वैसा कार्य करो, जिसमें संघ की विजय हो। तब देवता ने क्षपक की भर्त्सना करते हुए कहा आज मेरे जैसे असंयती से कार्य कराने का प्रयोजन उपस्थित हो गया है। अब एक उपाय बताता हूं। आप राजा के पास जाकर कहें- यदि यह स्तूप इन भिक्षुओं का है तो कल इस स्तूप पर लाल पताका फहरायेगी और यदि यह स्तूप हमारा होगा तो सफेद पताका दिखेगी। वे राजा के पास गये। सारी बात कही। राजा ने यह उक्ति स्वीकार कर ली। राजा ने दोनों पक्षों को बात बता दी और स्तूप की रक्षा के लिए अपने विश्वस्त व्यक्तियों को नियुक्त कर दिया। देवता ने रात ही रात स्तूप पर सफेद पताका फहरा दी। प्रभात में स्तूप पर सफेद पताका लहराते देखी। संघ जीत गया।

तेरापंथ परम्परा में आतापना योग के साधक

आचार्य भिक्षु निर्जल उपवास करते, सहयोगी संतों के साथ धर्मोपकरण साथ लेकर प्रायः गांव के बाहर चले जाते। वे अत्युष्ण रेतीली धरती पर लेट जाते, आतापना के साथ-साथ ध्यान-स्वाध्याय भी करते। पारणे के दिन गांव से यथाप्राप्त आहार-पानी लेकर जंगल में जाते, वृक्ष की छाया में आहार पानी रखकर आतापना लेते, फिर आहार करते। लगभग दो वर्ष तक यह क्रम चला था।

आचार्य महाप्रज्ञ द्वारा भी प्रेक्षाध्यान के साथ-साथ आतापना के प्रयोग किए गए थे। उनका चिन्तन था कि तैजस शक्ति के विकास में तो आतापना का महत्त्व है ही, 'प्रातिभज्ञान' अथवा अंतर्दृष्टि के विकास के लिए भी इस योग का महत्त्व है। इस विचार के साथ प्रेक्षाध्यान शिविर में कुछ समय सूर्य के सामने बैठकर, कभी अचेल अवस्था में उत्तानशयन कायोत्सर्ग की मुद्रा में, कभी अवाङ्मुखशयन कायोत्सर्ग की मुद्रा उसके बाद दक्षिण पार्श्वशयन कायोत्सर्ग की मुद्रा में तथा वाम पार्श्वशयन कायोत्सर्ग की मुद्रा में आतापना योग का प्रयोग करते थे। (यात्रा एक अकिञ्चन की, पृ. १७२-१७३)

CamScanner

इसी परम्परा के तपस्वी मुनि सुखलालजी भी ग्रीष्म ऋतु में लगभग सात माह तक दोपहर में राजस्थान की कड़ी धूप में आतापना लेते थे। वह एक कछोटा लगाकर आंखों पर पट्टी बांधकर दो-दो घण्टे तक (कभी-कभी पांच घण्टे भी) शिलापट्ट पर लेटे रहते। उत्कृष्ट गर्मी के कारण शिलापट्ट पसीने से ठण्डा हो जाता तो वे बीच-बीच में पार्श्ववर्ती दूसरे पत्थर पर लेट जाते। लेटे-लेटे स्वाध्याय में लीन हो जाते। प्रतिवर्ष आतापना काल में डेढ़-दो लाख गाथाओं का स्वाध्याय कर लेते। कभी-कभी वे कहते-'आज तो श्रुतपरावर्त्तना में इतनी तन्मयता आ गई कि आतप का पता ही नहीं लगा, नींद भी आने लगी। सूर्य का ताप सहते-सहते उनके शरीर की चमड़ी सूखकर काली हो गई, किन्तु मन की प्रसन्नता व मुख की आभा में निरन्तर वृद्धि होती रही (यह क्रम वि.स. २००० से २०१६ तक चला)।

उपसंहार :

कायक्लेश तप के रूप में आतापना योग का एक विशिष्ट स्थान है। इससे अनेक सिद्धियां प्राप्त हो सकती हैं। वैदिक परम्परा में यही 'पंचाग्नि तप' के नाम से प्रसिद्ध था। वैज्ञानिक दृष्टि से भी इसकी महत्ता प्रमाणित होती जा रही है। तीर्थंकर महावीर स्वयं भी इसका सेवन करते थे और उनके अनुयायियों में भी अनेक ऐसे साधक हुए हैं जो आतापना योग की साधना करते थे। तेरापंथ परम्परा में भी इसे विशिष्ट सम्मान दिया जाता रहा है।

संदर्भ सूची :

१. मूलाचार, २०२
२. तत्त्वार्थसूत्र, १०/२
३. उत्तराध्ययन, २८/२
४. तत्त्वार्थसूत्र, १०/२
५. तत्त्वार्थसूत्र, ९/३
६. आचारांग निर्युक्ति, २८२
७. तत्त्वार्थसूत्र, ९/१९
८. तत्त्वार्थसूत्र, ९/२
९. तत्त्वार्थसूत्र, ९/८
१०. दशवैकालिक सूत्र, २/५
११. ठाणं, ५/४३ पर आचार्य महाप्रज्ञ कृत टिप्पण
१२. भावप्राभृत, ११३
१३. अनगार धर्मामृत, ७/३२
१४. मूलाराधना, ३/२२४
१५. उत्तराध्ययन, ३०/२७ पर आचार्य महाप्रज्ञ कृत टिप्पण

CamScanner

१६. स्थानांगसूत्र, ७/५५४
१७. औपपातिक सूत्र, ३०
१८. औपपातिक वृत्ति, पत्र ७५,७६
१९. बृहत्कल्पभाष्य, ५९४५-५९४८
२०. महाभारत, आदिपर्व, १७१/१२
२१. महाभारत, उद्योगपर्व, ८३/९
२२. महाभारत, भीष्म पर्व, १२०/५४
२३. मैत्रायण्युपनिषत्, प्रपा./१-२
२४. प्राचीन भारतीय साहित्य की सांस्कृतिक भूमिका, पृ. ४५६ का टिप्पण
२५. दशवैकालिक ३/१२ पर आचार्य महाप्रज्ञ कृत टिप्पण
२६. कप्पो, ५/१९-२० व आमुख
२७. भगवतीसूत्र, १५/७० तथा आवश्यक चूर्णि, भाग-१, पृ.२९८, २९९; आवश्यक नि. ३०८
२८. स्थानांगसूत्र, ३/३८६
२९. भगवतीसूत्र, ११/१२/१८६-१८७
३०. बृहत्कल्पभाष्य, भूमिका, पृ. १९
३१. आयारो, १/९/४/४
३२. आवश्यक चूर्णि, पृ. २९८-२९९
३३. भगवती सूत्र, ११/१२/१८६-१८७
३४. नायाधम्मकहाओ, १/१/२००
३५. नायाधम्मकहाओ १६/१०६
३६. भगवती, ३/१/३३
३७. औपपातिक सूत्र, ९२
३८. स्थानांग सूत्र, ४/३५० पर टिप्पण
३९. आवश्यक निर्युक्ति, कथा, परिशिष्ट, पृ. ५१३
४०. शासनसमुद्र, भाग-१, पृ. १०३
४१. शासनसमुद्र, भाग १४,पृ. १०४, १०६

सन्दर्भ ग्रन्थ -

१. आयारो (प्रथम श्रुतस्कन्ध)-वाचनाप्रमुख आचार्य तुलसी, संपा. मुनि नथमल, जैन विश्वभारती प्रकाशन, लाडनूं, वि.सं. २०३१
२. ठाणं, वाचनाप्रमुख : आचार्य तुलसी, संपा. मुनि नथमल, जैन विश्वभारती, लाडनूं, वि.सं. २०३३
३. भगवई (खण्ड-३)-वाचनाप्रमुख : आचार्य तुलसी, संपा. आचार्य महाप्रज्ञ, जैन विश्वभारती, लाडनूं, ई. २००५

CS CamScanner

४. भगवई (खण्ड-४)-वाचनाप्रमुख : आचार्य तुलसी, संपा. आचार्य महाप्रज्ञ, जैन विश्वभारती, लाडनूं, ई. २००७
५. तत्त्वार्थसूत्र (व्याख्या)- उपा. श्रुतसागर मुनिराज, श्री श्रुतवि. प्रकाशन, दिल्ली, ई. २००२
६. उत्तरज्झयणाणि (खण्ड-४)-वाचनाप्रमुख : आचार्य तुलसी, संपा. आचार्य महाप्रज्ञ, जैन विश्वभारती, लाडनूं, ई. २००६
७. नायाधम्मकहाओ- वाचनाप्रमुख : आचार्य तुलसी, संपा. आचार्य महाप्रज्ञ, जैन विश्वभारती, लाडनूं, द्वितीय संस्करण, ई. २००३
८. मूलाचार (वट्टकेर आचार्य), -पूर्वार्द्ध-उत्तरार्द्ध, संपादक-सिद्धान्ताचार्य, पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री आदि, हिन्दी टीका-आर्यिका ज्ञानमती माताजी, प्रकाशक-भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, ई. १९८४-१९८६
९. बृहत्कल्पभाष्य (भाग-१,२)-वाचनाप्रमुख : गणाधिपति तुलसी, संपा. आचार्य महाप्रज्ञ, अनु. मुनि दुलहराज, जैन विश्वभारती, लाडनूं, ई. २००७
१०. औपपातिक सूत्र, अनुवादक- डॉ. छगनलाल शास्त्री, श्री आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर (राजस्थान) ई. १९८२
११. आवश्यकनिर्युक्ति (खण्ड-१)-संपादक- डॉ. समणी कुसुमप्रज्ञा, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं, ई. २००१
१२. प्राचीन भारतीय साहित्य की सांस्कृतिक भूमिका- डॉ. रामजी उपाध्याय, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, ई. १९६६
१३. दसवेआलियं, वाचना प्रमुख: आचार्य तुलसी, संपा. मुनि नथमल, जैन विश्वभारती, लाडनूं, ई. १९७४
१४. कुन्दकुन्दभारती (कुन्दकुन्द ग्रन्थावली)- संपा.-अनुवादक- पं. पन्नालाल 'साहित्याचार्य',. प्रकाशन- श्रुतभण्डार व ग्रंथ प्रकाशन समिति, फल्टन, ई. १९७०
१५. यात्रा एक अकिञ्चन की, आचार्य महाप्रज्ञ, संपादक- मुनि धनंजय कुमार, मुख्य नियोजिका साध्वी विश्रुतविभा, प्रका. जैन विश्वभारती, लाडनूं, तृतीय संस्करण, ई. २०१०।

****

CS CamScanner

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८६/२

ISSN : 2395-7115

मार्च 2024

Vol.-19, Issue-3(1)

Impact Factor
7.523

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

सम्पादक : डॉ. नरेश सिहाग, एडवोकेट

Publisher :

Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

14.	आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन पर प्राचीन भारतीय एवं पाश्चात्य चिंतन के प्रभावों का मूल्यांकन	म्होर सिंह मीणा, पूरण मल मीणा	83-87
15.	फणीश्वरनाथ 'रेणु' जी के साहित्य मे आंचलिकता	रमन	88-90
16.	राजकमल चौधरी की हिन्दी कहानियों में धर्म भावनाः प्रसंग	शिव कुमार	91-96
17.	विकलांग विमर्श : निशक्त का जीवन से मृत्यु तक संघर्ष (उसका आकाश के संदर्भ में)	वनीता रानी	97-101
18	छायावादयुगीन हिन्दी ग़ज़लें	आनन्द वर्धन, डॉ० इन्द्रनारायण सिंह	102-107
19.	हिन्दी नाटकों में दलित विमर्श	राजेश कुमार	108-113
20.	हिन्दी साहित्य में झारखण्ड : सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टिकोण	तरूण कांति खलखो	114-119
21.	آزادی کے بعد اردو افسانہ	ڈاکٹر میمونہ بیگم سروڈگی	120-124
22.	वेद और भौतिक विज्ञान का संबंध	डॉ. मीनू तलवाड़	125-129
23.	दलित साहित्य : एक प्रश्न	योगेंद्र सिंह, प्रो. सर्वेश पाण्डेय	130-134
24.	किशोर बालक : किसकी जिम्मेदारी	डॉ. जयप्रकाश सिंह	135-140
25.	वेदांत एवं बौद्ध दर्शन में मोक्ष की अवधारणा	Dr. Sita Kumari	141-143
26.	स्वाधीनता आन्दोलन में हो जनजातीय की भूमिका झारखण्ड के संदर्भ में	विजया बिरूवा	144-147
27.	Role of interventions programme in sensitizing students towards disability: An Analytical Study	Dr. Renu Kansal, Dr. Shashi Bala, Sonia Mahi	148-153
28.	Social Conformity A Review Study	Dr. Aruna Anchal, Dr. ManMohan Gupta, Kapil Dev	154-159
29.	कबीर के अनुसार माया का स्वरूप	डॉ० सुनीता	160-165

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 7.523

Bohal Shodh Manjusha
March 2024

ISSN : 2395-
Page No. : 135-1

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

किशोर बालक : किसकी जिम्मेदारी

डॉ. जयप्रकाश सिंह
सहायक आचार्य कम समन्वयक, दूरस्थ एवं ऑनलाईन शिक्षा केन्द्र, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं (राज.)

सारांश :-

किशोरावस्था के दौरान बालकों में शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अति तीव्र परिवर्तन होता है। जब हम किशोर–किशोरियों को समझने का प्रयास करते हैं तो हम पाते हैं कि इस अवस्था की अपनी अलग ही दुनिया है। इस विषय पर कई शोध एवं अनेकों पुस्तकें छपी हैं, साथ–ही–साथ समय–समय पर सेमिनार, कॉन्फ्रेन्स, कार्यशाला आयोजित की जाती रही हैं, फिर भी यह अहसास होता है कि इसकी दुनिया के बारे में हम कम ही समझ सके हैं। वर्तमान समय में टी.वी. से लेकर बॉलीवुड सिनेमा तक या यू–ट्यूब से लेकर अन्य सोशल मीड़िया (फेसबुक, व्हाट्सऐप, ट्वीटर, इन्स्टाग्राम आदि) से किशोर काल्पनिक दुनिया की चकाचौंध से प्रभावित रहते हैं। यदि हम किशोर–किशोरियों की वास्तविक एवं काल्पनिक दुनिया को देखें तो यह किसी बॉलीवुड फिल्म मसाले के रूप से कुछ कम नहीं दिखता, जिसमें दोस्ती, प्रेम, विद्रोह, आदर, निराशा, कुण्ठा, अपराध प्रवृत्ति, घर से भाग जाने का ख्याल, महत्त्वाकांक्षा, एक–तरफा प्रेम, तिरस्कार, निंदा, आलोचना, अकेलापन आदि इनकी जिन्दगी का अनोखा हिस्सा है।

ये बुद्धिजीवी वयस्कों के बनाये हुए नैतिक–सामाजिक रीति–रिवाज, आर्थिक मापदण्ड, धार्मिक –सांस्कृतिक, राजनीतिक मूल्य या भौगोलिक दायरा–ये सब किशोर–किशोरियों की समझ से परे है। उनकी आंखों पर नासमझी का चश्मा चढ़ा होता है। या यों कहें कि वे समझना नहीं चाहते और यदि हम समझाने का प्रयास करते हैं तो तीखे, तार्किक और सीधे छलनी करने वाले प्रश्न खड़े करते हैं। ऐसी ही अनेक प्रश्नों के साथ अनेक अवसरों पर माता–पिता या अध्यापक लाचार होते हैं। ऐसे में प्रश्न उठता है कि जीवन की इस अमूल्य अवस्था (किशोरावस्था) की जिम्मेदारी किसकी है ?– किशोर–किशोरियों के अभिभावकों की या उसके शिक्षक या समाज की ?

की-वर्ड :- किशोरावस्था, किशोरों की समस्याएँ, किशोर बालक : किसकी जिम्मेदारी।

प्रस्तावना :-

विकास एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है, जो प्रत्येक प्राणी में पायी जाती है और जिसका शुभारम्भ जन्म से पूर्व गर्भाधान से ही जारी रहता है। व्यक्ति का सम्पूर्ण विकास कई चरणों में सम्पन्न होता है। विद्वानों में इस विषय पर मतभेद हैं, फिर भी सर्वमान्य वर्गीकरण इस प्रकार है[1] :–

आलोचना

त्रैमासिक

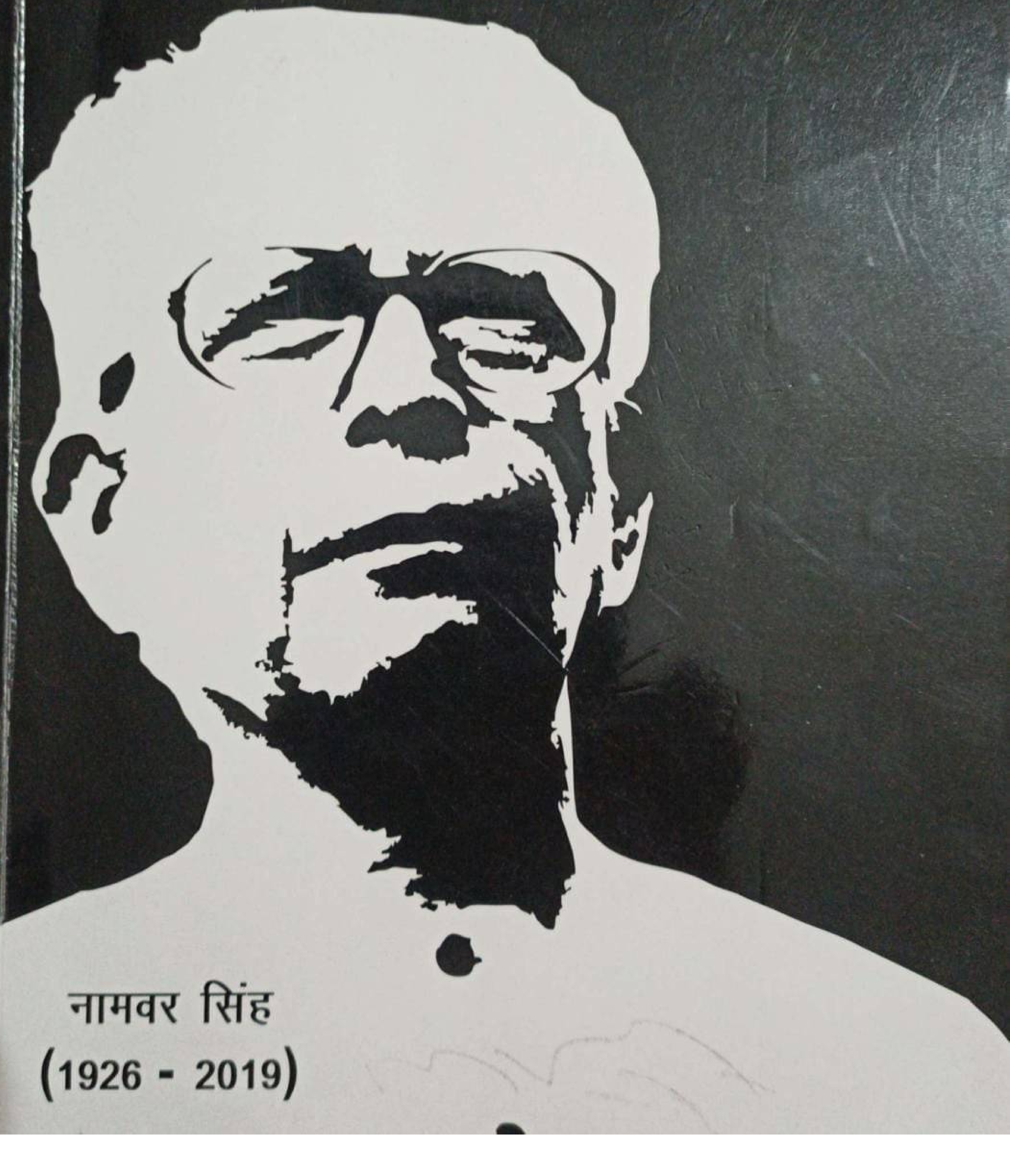

नामवर सिंह

(1926 - 2019)

S. No.	Content	Author's	Page No.
1	शिक्षण में परम्परागत पद्धति एवं शिक्षण अधिगम सामग्री के प्रयोग द्वारा विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के प्रभाव का अध्ययन।	Seema Tripathi Dr. Jay Prakash Singh	1-5
2	SALMAN RUSHDIE'S MIDNIGHT'S CHILDREN: A POSTCOLONIAL EPIC OF IDENTITY AND NATIONHOOD IN INDIA	Dr Subhash Chander Jyotsna Bagerwan	6-11
3	सामाजिक समरसताः गांधी के विचारों का एक अध्ययन	बसन्ती दाधीच	12-19
4	भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था तथा जाति प्रथा	डॉ. बलबीर सिंह	20-24
5	उच्च प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों की अधिगम शैली का विश्लेषणात्मक अध्ययन	रेहाना उस्मानी डॉ. गिरिराज भोजक	25-42
6	''जयपुर जिले के विभिन्न प्रकार, के विद्यालयों में विद्यार्थियो के अनुशासन का तुलनात्मक अध्ययन''	अनुराधा षर्मा डॉ. सरोज राय	43-50
7	दुर्गासप्तषती में वर्णित शक्ति स्वरूपों का आध्यात्मिक महत्व	रेवतीरमण शर्मा प्रो. दामोदर शास्त्री	51-54
8	वॉलीबाल खिलाड़ियों के व्यक्तित्व पर योग का प्रभाव	प्रो. सरोज गर्ग रघुनाथ जाट	55-66
9	शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों के कार्य संतोष, समायोजन, मनोबल एवं व्यक्तित्व का तुलनात्मक अध्ययन	प्रो. सुषमा सिंह सुधीरा	67-89
10	ऑनलाइन शॉपिंग के फायदे एवं नुकसान	प्रिया मिश्रा डॉ. राजेश वर्मा	90-93
11	भारतीय ज्ञान परम्परा में साहित्य की भूमिका	डॉ. भावना शर्मा	94-97
12	भारतीय ज्ञान परम्परा और व्यक्तित्व निर्माण	डॉ. ललिता शर्मा	98-102
13	पंचायतीराज रू महिला सरपंच का आदर्श और व्यवहार	रतिलाल अमीन डॉ. साहिल श्रीवास्तव	103-111

आलोचना
त्रैमासिक
ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

शिक्षण में परम्परागत पद्धति एवं शिक्षण अधिगम सामग्री के प्रयोग द्वारा विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के प्रभाव का अध्ययन।

Seema Tripathi
Research Scholar, Jain Vishva Bharati Institute , Ladnun

Dr. Jay Prakash Singh
Assistant Professor, Jain Vishva Bharati Institute , Ladnun

प्रस्तावना

'शिक्षा', शिक्षक एंव बालक के बीच की अन्तः क्रिया है। प्रारम्भ में शिक्षा शिक्षक केन्द्रित हुआ करती थी। उस समय शिक्षक को ज्यादा महत्त्व दिया जाता था बालक को नहीं, किन्तु वर्तमान समय में शिक्षा तथा शिक्षण पद्धति में बहुत परिवर्तन आए है। शिक्षा अब शिक्षक केन्द्रित नहीं है बल्कि वर्तमान में शिक्षा शिक्षार्थी केन्द्रित हो गई है। बालक की रूचि के अनुसार विभिन्न विषय वस्तुओं को रोचक एवं प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने के लिए शिक्षक शिक्षण अधिगम सामग्री का प्रयोग करते है। शिक्षण में दृश्य सामग्री, श्रव्य सामग्री अथवा दोनो दृश्य–श्रव्य सामग्री द्वारा विद्यार्थी की अभिरूचि व अभिवृत्तियों को विकसित किया जा सकता है। शिक्षण अधिगम सामग्री विषय को स्थाई रूप से सीखने व समझने में सहायक होती है। शिक्षक के अधिगम सामग्री द्वारा किए गए शिक्षण का प्रभाव परम्परागत शिक्षण की तुलना में अधिक पड़ता है। अधिगम सामग्री पाठ को रोचकता प्रदान कर उसे बोधगम्य बनाती है तथा अनुभवों द्वारा ज्ञान प्रदान करती है।

शिक्षण अधिगम सामग्री छात्रों के ध्यान को शिक्षण अधिगम की ओर आकर्षित करती है, तथा शिक्षण में विविधता उत्पन्न करने में सहायक होती है। शिक्षण अधिगम सामग्री छात्रो को मानसिक रूप से तैयार करती है। साथ ही प्रदर्शित सामग्री के कौनसे शिक्षण बिन्दुओं पर ध्यान देना है, यह भी स्पषट करती है। सहायक सामग्री, विषय की निरसता और जटिलता को समाप्त करने में सक्षम है। शिक्षण अधिगम सामग्री छात्रों को पर्यावरण एवं सामाजिक वातावरण के साथ प्रत्यक्ष अन्तः क्रिया का अवसर प्रदान करती है। इनके द्वारा भूतकाल की घटनाओं को स्पष्ट रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। यह व्यवहार परिवर्तन तथा अभिवृत्ति विकास में भी सहायक है। सामाजिक विज्ञान शिक्षण में सहायक सामग्री का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसकी सहायता से शिक्षण में स्थायित्वता तथा सजीवता आती है, एवं विद्यार्थियों की रुचि विषय में उत्पन्न होती है। पृथ्वी के विशाल भाग पर विभिन्न जटिल प्राकृतिक क्रियाएँ होती हैं। पर्याप्त सहायक सामग्री के द्वारा इन जटिल प्राकृतिक क्रियाओं का स्पष्टीकरण एंव प्रत्यक्षीकरण आसानी से कराया जा सकता है। इसके माध्यम से भौगोलिक विषयवस्तु को आकर्षक बनाकर सरलतापूर्वक समझाया जा सकता है जिसके द्वारा सामाजिक विज्ञान शिक्षण को अधिक स्पष्ट व सजीव बनाया जा सकता है। विद्यार्थियों की रुचि बनाए रखने एंव विषय वस्तु को उत्साह पूर्वक पढ़ने में सहायक सामग्री का महत्त्वपूर्ण योगदान होतां है।

अध्यापन के दौरान विषय वस्तु को समझाते समय शिक्षक जिन–जिन संसाधनों या उपकरणों का प्रयोग करता है, वह शिक्षण अधिगम सामग्री कहलाती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 का एक लक्ष्य यह भी रहा है कि पाठ्य विषयों को रोचक, बोध गम्य, सृजनात्मक एवं आकर्षक बनाने के लिए कक्षागत शिक्षण में अधिगम सामग्रियों का अधिकाधिक उपयोग किया जाये। विषय वस्तु में निर्धारित लक्ष्यों तक पहुंचने के लिए उपयोगी शिक्षण अधिगम् सामग्रियों के निर्माण एंव प्रयोग पर विशेष जोर दिए जाने की अनुशंसा की गई है।

International Double Blind Peer Reviewed, Refereed , Indexed , Multilingual-Multidisciplinary-High Impact Factor-Monthly-Research Journal Related to Higher Education For all Subject

ISSN 0974-2832 (Print), E-ISSN- 2320-5474,RNI RAJBIL 2009/29954

SHODH, SAMIKSHA AUR MULYANKAN

January , 2024
Vol-1, ISSUE-I

IMPACT FACTOR- 6.115 (SJIF)

Editor in Chief

Dr. Krishan Bir Singh

www.ugcjournal.com

International Level Double Blind Peer Reviewed,Refereed,Indexed Research Journal,ISSN(Print)-0974-2832,E-ISSN-2320-5474,RNI-RAJBIL-2009/29954,Impact Factor-6.115(SJIF),January-2024,VOL-I,ISSUE-1

Research Paper - Education

पर्यावरण संरक्षण के लिए शाश्वत विकास की संकल्पना आवश्यक

* डॉ. विष्णु कुमार ** डॉ. जय प्रकाश सिंह

* सहायक प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं
** सहायक प्रोफेसर, दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केन्द्र, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं

सारांश

प्राचीन काल में अपने महर्षियों ने पर्यावरण की महत्ता को ध्यान में रखकर इसे अपनी सांस्कृतिक मूल्यों के रूप में अपनाकर पल्लवित एवं पोषित किया था परन्तु विकास के अंधाधुंध दौड़ में अपनी ही सांस्कृतिक मूल्यों को हम लोग भूलते जा रहे हैं। मनुष्य के लालच एवं आधुनिकता एवं औद्योगिकीकरण की गलत नीतियों के कारण पर्यावरण में असंतुलन हुआ है। ठीक ही कहा गया है "अति सर्वत्र वर्जयते।" मानव अपनी सुख–सुविधा एवं भोग–विलास के साधन जुटाने के लिए पर्यावरणीय संसाधनों का अत्यधिक दोहन करता जा रहा है जिससे प्रदूषण का जन्म हुआ। आधुनिकता एवं विकास के नाम के साथ–साथ प्रदूषित खाद्य, प्रदूषित जल, प्रदूषित हवा सेवन करना पड़ रहा है। वर्तमान में दिल्ली शहर में हवा में प्रदूषण की मात्रा अत्यधिक होने के कारण सास लेने में परेशानी एवं आंखों में जलन की शिकायत आम बात हो गई है। अर्थात् पर्यावरण प्रदूषण दिनों–दिन अत्यधिक खतरनाक होता जा रहा है। इसके संरक्षण के लिए शाश्वत विकास की संकल्पना आवश्यक है ताकि आवश्यकता और विकास के साथ–साथ संतुलन बनाते हुए समुचित उपयोग पर बल देकर संरक्षण किया जा सकता है।

की–वर्ड– पर्यावरण संरक्षण, शाश्वत विकास की संकल्पना, सतत विकास।

प्रस्तावना–

प्रकृति का निर्माण मूलतः पंच तत्वों से मिलकर हुआ है। ये तत्व है जल, वायु, आकाश, अग्नि, एवं प्रकृति। यह समस्त तत्व ही हमारे पर्यावरण के प्रमुख घटक और जीवन के आधार भूत स्तम्भ है। पर्यावरण भौतिक तत्वों, शक्तियों और परिस्थितियों का एक ऐसा समुच्चय है जिसका प्रभाव जैव–जगत के विकास चक्र पर पड़ता है। पर्यावरण की प्रमुख विशेषता इसकी साधन सम्पन्नता है और ये प्राकृतिक संसाधन ही मानव के भौतिक विकास के आधार है। प्राथमिक संसाधनों की उपलब्धता एवं जैव विविधता के अनुसार ही प्रगति का मार्ग प्रशस्त होता है। जो सामाजिक कल्याण का आधार है। पर्यावरण प्रकृति की सहज गति है और तकनीकी विकास के इस युग में मनुष्य प्रकृति का विजेता बनकर सभ्यता के शिखर पर खड़ा होने का दावा करता है, परन्तु मानव की उच्च महत्वाकांक्षाओं उसकी निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या पारिवारिक जरूरतों औद्योगीकरण, नगरीकरण एवं प्राकृतिक संसाधनों के अन्धाधुन्ध दोहन ने प्रकृति एवं उसके घटकों के मध्य स्थापित सामंजस्य में हस्तक्षेप किया और प्रदूषण को जन्म दिया है। वर्तमान में मनुष्य की वैभवयुक्त एवं विलासतापूर्ण जीवनशैली ने इन परिस्थितियों को और भी

ISSN (P) : 2321-290X ★ (E) 2349-980X
VOL:-XI,ISSUE:-IX May 2024
RNI No. : UPBIL/2013/55327

Srinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika

Peer Reviewed / Refereed Journal

Publisher : Social Research Foundation, Kanpur
(SRF International)

The Research Series

द्विभाषीय - मासिक

Shrinkhala
श्रृंखला

A Multi-Disciplinary International Journal

Indexed with Google scholar

Impact Factor
SJIF = 6.746 (2020)
GIF = 0.543 (2015)
IIJIF = 6.038 (2018)

Annals of the Bhandarkar Oriental Research Institute
ISSN: 0378-1143

AN IMPACT OF SAMAGRA SHIKSHA ABHIYAN 2.0- A HOLISTIC APPROACH TO EDUCATION

Dr. Abha singh[1], Ms. Monika Sisodiya[2]
[1]Assistant professor , Jain Vishva Bharti Institute, Ladnun, Rajasthan
[2]Research Scholar, Jain Vishva Bharti Institute, Ladnun. Rajasthan

Abstract:
The **SAMAGRA SHIKSHA ABHIYAN 2.0** has been constituted to improve the standard of education in India. It's the biggest plan ever to provide free elementary and secondary schooling for all children. By November 30, 2022, only 51% of the total Rs 37,383 crore allotted to SSA had been disbursed by the union government. The report also noted that by the end of October, governments had spent 22% of the total cash allowed for the scheme. The SSA is co-funded by the federal government and the states at a ratio of 60:40, or 90:10 for states in the mountains and the northeast. Centre for Policy Research's Accountability Initiative found that by December 2022, the union government had only spent half of the money it had set aside for the Samagra Shiksha Abhiyan (SSA). This article's goal is to investigate how SAMAGRA SHIKSHA ABHIYAN has contributed to the growth of pupils in Rajasthan.

Keywords: **SAMAGRA SHIKSHA ABHIYAN 2, School Education, Budget Allocation,**

1. Introduction

According to the Union Budget for 2018–19, all grades, from kindergarten through high school, would be considered together. In light of this, in 2018, the Department of Education introduced the Integrated Scheme for School Education, SamagraShiksha, which merged the previous Centrally Sponsored Schemes of SarvaShikshaAbhiyan (SSA), Rashtriya Madhyamik Shiksha Abhiyan (RMSA), and Teacher Education (TE). The plan is in line with Sustainable Development Goal 4 (Education) since it views schooling as an ongoing process. In addition to aiding in the rollout of the RTE Act, the scheme is also in line with the goals of NEP 2020, which are to provide all children with an opportunity to receive a high-quality education in a setting that respects and accommodates their individuality and diversity in terms of culture, language, intelligence, and other characteristics. The Centrally Sponsored Scheme of SamagraShiksha Scheme, an integrated scheme for the school education sector, will be extended from 1st April 2021 to 31st March, 2026 at a cost of Rs 294283.04 crore, as agreed by the Union Cabinet. To guarantee all students have access to a high-quality, well-rounded education, the Scheme has been updated to reflect the goals of the National Education Policy (NEP) 2020. This is in line with Sustainable Development Goal 4. It seeks to guarantee that all students, regardless of socioeconomic status, language proficiency, or other factors, are provided with a high-quality education in a classroom that respects and accommodates their individual needs and strengths.

Samagra Shiksha Abhiyan-2.0has received official sanction from the central government. On August 4, 2021, we gave the go light for this. This plan encompasses all levels of education, from kindergarten to twelve. This plan follows the guidelines set forth by the New Education Policy. Specifically, the educational targets of the Sustainable Development Goals. Gradually over the next few years, schools participating in the SamagraShiksha Abhiyan-2.0 will be outfitted with children's gardens, smart classrooms, and trained teachers. The infrastructure, vocational training, and innovative methods of instruction will also be set up. The students will be immersed in a community that celebrates and supports their unique cultural identities, linguistic backgrounds, and developmental levels. In addition,

International Peer Reviewed,Referred,Indexed,Multidisciplinary,
Multilingual,Monthly Research Journal

Month - December - 2023 Vol - I Issue -XII

ISSN (P) : 2250-2556
ISSN (E) : 2320-5458
Impact Factor : SJIF- 6.176

International Research and Review

Editor

Neha Singh

Published By

Captain Netram Singh Charitable Trust

Published By
Captain Netram Singh Charitable Trust,

www.ugcjournal.com/IRR

International Research and Review

मुख्य सम्पादक का मानद पद कार्य पूर्णतः अवैतनिक है।

इस शोध पत्रिका के प्रकाशन, सम्पादन मुद्रण में पूर्णतः सावधानी बरती गई है। किसी भी प्रकार की त्रुटि महज मानवीय भूल मानी जाये।

शोध पत्र की समस्त जिम्मेदारी शोधपत्र लेखक की होगी।उक्त जर्नल में प्रकाशन हेतु भेजे गए पेपर सामग्री का सम्पूर्ण नैतिक दायित्व पेपर लेखक का होगा। मुख्य संपादक ,प्रकाशक ,मुद्रक , पिअर रिविव्यु मंडल जिम्मेदार नहीं होगा। लेखकों से अनुरोध है किसी भी प्रकार की साहित्यिक चोरी न करें।

समस्त विवादों का न्याय क्षेत्र जयपुर शहर ही होगा।

1. Editing of the research journal is processed without any remittance. **The selection and publication is done after recommendation of Peer Reviewed Team, Refereed and subject expert Team.**
2. Thoughts, language vision and example in published research paper are entirely of author of research paper. It is not necessary that both editor and editorial board are satisfied by the research paper. **The responsibility of the matter of research paper is entirely of author.**
3. Along with research paper it is compulsory to sent Membership form and copyright form. Both form can be downloaded from website i.e. **www.ugcjournal.com**
4. In any Condition if any National/International university denies to accept the research paper published in the journal then it is not the responsibility of Editor, Publisher and Manangement.
5. Before re-use of published research paper in any manner, it is compulsory to take written acceptance from Chief Editor unless it will be assumed as disobedience of copyright rules.
   In case of plagiarism, the entire moral responsibility of the paper material will rest with the author only.
6. **The entire moral responsibility of the paper material sent for publication in the said journal will be that of the paper author. Chief Editor, Publisher, Printer, Peer Review and Refereed Board will not be responsible.**

Authors are requested not to do any kind of plagiarism

7. All the legal undertaking related to this research journal are subjected to be hearable at jaipur jurisdiction only.

EDITORIAL BOARD OF OUR JOURNALS

Patron

Prof. Dr. Alireza Heidari

Full Professor And Academic Tenure, USA

Chief Editor

NEHA SINGH

Dr.Krishan Bir Singh

Associate Chief Editor

Ravindrajeet Kaur Arora
S. Bal Murgan
Dr. Sandeep Nadkarni
Dr. A Karnan
Dr. S.R. Boselin Prabhu
Deepika Vodnala
Dr. Kshitij Shinghal
Christo Ananth
Gopinath Palai
Dr. Neeta Gupta
Dr. Vinita Shukla
Harold Jan R. Terano
Dr Sajid Mahmood
Dr Pavan Mishra

Editor

Dr.H.B.Rathod
Dr.Kishori Bhagat
Dr. Mohini Mehrotra
Dr. Arvind Vikram Singh
Dr. Suresh Singh Rathore
Bindu Chauhan
Kamalnayan. B. Parmar
Dr.sanjay B Gore
Dr. A.karnan
Dr.amita Verma
Dr . Ity Patni
Dr. Somya Choubey
Dr.surinder Singh
Dr. Manoj S. Shekhawat,
Dr. Anshul Sharma
Dr. Ramesh Kumar Tandan
S N Joshi
Dr. Sant Ram Vaish
Dr. Vinod Sen
Dr. Sushila Kumari
Dr Indrani Singh Rai
Dr Abhishek Tiwari
Prof.S.K.Meena
Prof.Praveen Goswami
G Raghavendra Prasad

International Advisory Board

Aaeid M. S. Ayoub
Geotechnical Environmental Engineering
Uqbah bin Muhammad Iqbal
Postgraduate Researcher
Badreldin Mohamed Ahmed Abdulrahman
Associate Professor
Dr. Alexander N. LUKIN
Principal Research Scientist & Executive Director
Dr. U. C. Shukla
Chief Librarian and Assistant Professor
Dr. Abd El-Aleem Saad Soliman Desoky
Professor Assistant
Prof. Ubaldo Comite
Lecturer
Moustafa Mohamed Sabry Bakry
Dr Sajid Mahmood

Shameemul Haque

International Research and Review

Dr. Dnyaneshwar Jadhav
Akshey Bhargava
Dr. A. Dinesh Kumar
Dr. Pintu Kumar Maji
Dr Hanan Elzeblawy Hassan
Sandeep Kumar Kar
Dr.R.devi Priya
Dr.P.Thirunavukarasu
Dr. Srijit Biswas
Parul Agarwal
Dr. Preeti Patel
Archana More
Dr. Harish N
Dr. Seema Singh
Dr. Ram Singh Bhati
Dr. Pankaj Gupta
Dr Arvind Sharma
Dr. Ramesh Chandra Pathak

Dr. Ankush Gautam
Dr Markandey Dixit
Dr. Manoj Kumar
Ratko Pavlovi, Phd
Dr.S.Mohan
Dr Ramachandra C G
Dr.Sivakumar Somasundaram
Dr. Sanjeev Kumar
Dr. Padma S Rao
Dr Munish Singh Rana
Dr. Piyush Mani Maurya

Associate Editor

Dr. Yudhvir Redhu
Dr.Kiran B.R
Dr Richard Remedios
Dr. R Arul
Anand Nayyar
Dr . Ekhlaque Ahmad
Dr. Snehangsu Sinha
Dr Niraj Kumar Singh
Sandeep Kataria
Dr Abhishek Shukla
Somesh Kumar Dewangan
Amarendra Kumar Srivastav
Dr K Jayalakshmi
Dilip Kumar Jha

Assistant Editor

Jasvir Singh
Dr.pintu Kumar Maji
Dr. Soumya Mukherjee
Prof Ajay Gadicha
Ashutosh Tiwari
Gyanendra Pratap Singh
Jitendra Singh Goyal
Ashish Jaiswal
Hiten Barman
Dr. Priti Bala Sharma

Subject Expert

Dr. Jitendra Arolia
Dr. Suresh Singh Rathore
Dr.kishori Bhagat
Dr Mrs Vini Sharma
Ranjan Sarkar
Chiranji Lal Parihar
Dr. Lalit Kumar Sharma
Dr Amit Kumar
Santosh Kumar Jha
Dr . Ekhlaque Ahmad
Naveen Kumar Kakumanu
Dr. Chitra Tanwar
Jyotir Moy Chatterjee
Somesh Kumar Dewangan
Raffi Mohammed
Dr. Sunita Arya
Dr. Ram Singh Bhati
Dr. Janak Singh Meena
Dr. Neha Kalyani

International Research and Review

Dr. Rajeev Nayan Singh
Dr. Pankaj Rathore
Dr. Mahendra Parihar
Pradip Kumar Mukhopadhyay
Dr Vijay Gaikwad

Research Paper Reviewer

Dr. B H Kirdak
Amit Tiwari
Dr Dheeraj Negi
Dr. Shailesh Kumar Singh
Dr. Meeta Shukla

Dr. Ranjana Rawat
Sonia Rathi
Dr.Anand Kumar
Dr.Pardeep Sharma
Anil Kumar
Dr. Deepa Dattatray Kuchekar
Dr Ade Santosh Ramchandra

Guest Editor

Dr. Lalit Kumar Sharma
Dr. Falguni S. Vansia

Chief Advisory Board

Ashok Kumar Nagarajan

Advisory Board

Dr. Naveen Kumar
Manoj Singh Shekhawat
Pranit Maruti Patil
Vishnu Narayan Mishra

international Research and Review

International Research And Review

ISSN(P) : 2250-2556
ISSN(E) : 2320-5458
Impact Factor : 6.176(SJIF)

Issue- December-2023

Research Paper - Education

international Research and Review

आर्थिक विकास में महिलाओं का योगदान

प्रो. बी. एल. जैन
विभागाध्यक्ष, शिक्षा विभाग,
जैन विश्व भारती संस्थान लाडनूं (राज.)

डॉ अमिता जैन
सहायक आचार्य, शिक्षा विभाग,
जैन विश्व भारती संस्थान लाडनूं (राज.)

सारांश–

महिलाएँ प्रत्येक क्षेत्र में अग्रणी भूमिका का निर्वहन कर रही हैं और वर्तमान में महिलाओं ने एक सशक्त नारी की छवि स्थापित की है। महिलाओं की आर्थिक भागीदारी के बिना देश की प्रगति, उन्नति एवं समृद्धि संभव नहीं है। सरकार भी महिलाओं को आर्थिक क्षेत्र से जोड़ने हेतु उनका प्रशिक्षण, बाजारों से वस्तुओं का विनिमय, उद्योग खोलने हेतु ऋण उपलब्धता आदि अनेक सहयोग प्रदान किये जा रहे हैं। आज अर्थ के अनेक क्षेत्रों में महिलायें सहयोग से अग्रिम भूमिका की ओर बढ़ रही है। आज दलित, पिछड़ी, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, ग्रामीण महिलाओं के विकास पर जोर देने की आवश्यकता है। वे अपने घर में भोजन बनाने, कपड़े धोने, बच्चे पालने तक अपने को सीमित मानती है। काफी महिलाएं शिक्षा के द्वार पर नहीं पहुंच पाई है, उनका आर्थिक विकास छोटे–छोटे लघु उद्योगों से किया जा सकता है। उनके अंदर हुनर है लेकिन हुनर को प्रकट करने का परिवेश नहीं है।

मूल शब्द–व्यावसायिक स्थिति, आर्थिक भागीदारी, महिला शिक्षा,लघु उद्योग

प्रस्तावना–

भारत सरकार ने नारी शक्ति का संवर्धन करने हेतु अनेक उद्यमिता कार्यक्रम संचालित किए हैं। महिलाओं की आर्थिक भागीदारी के बिना देश की प्रगति, उन्नति एवं समृद्धि संभव नहीं है। सरकार भी महिलाओं को आर्थिक क्षेत्र से जोड़ने हेतु उनका प्रशिक्षण, बाजारों से वस्तुओं का विनिमय, उद्योग खोलने हेतु ऋणउपलब्धता आदि अनेक सहयोग प्रदान किये जा रहे हैं। आज अर्थ के अनेक क्षेत्रों में महिलायें सहयोग से अग्रिम भूमिका की ओर बढ़ रही है। भारत की महिलाओं का कार्य सहभागिता अनुपात 25% है, उसे आगे बढाने का प्रयास हमें निरंतर करना है। एमएसएमई महिलाओं के विकास में मूल्य संवर्धन, रोजगार सृजन, आय की समानता, क्षेत्रीय असमानताओं से मुक्त कर आर्थिक, सामाजिक विकास में प्रगति करता है। 27 जनवरी 2023 तक एमएसएमई में कुल रोजगार के 23.59% रोजगार सृजित हुए हैं। महिला उद्यमिता के अंतर्गत महिला दस्तकारी, मधुमक्खी पालन,पॉटरी, चमड़े का सामान बनाना, फल और सब्जियों के प्रसंस्करण,बेकरी पाठ्यक्रम, टेलरिंग, सिलाई–कढ़ाई (एंब्रॉयडरी), सर्फ बनाना, साबुन बनाना, ब्यूटीशियन कोर्स करना, नए क्षेत्रों में कार्य उत्पादन बढ़ाना, सूक्ष्म,लघु, मध्यम उद्योग खोलना, मैन्युफैक्चरिंग का काम आदि। आज दलित, पिछड़ी, अनुसूचित जाति,अनुसूचित जनजाति, ग्रामीण महिलाओं के विकास पर जोर देने की आवश्यकता है। वे अपने घर में भोजन बनाने, कपड़े धोने, बच्चे पालने तक अपने को सीमित मानती है। काफी महिलाएं शिक्षा के द्वार पर नहीं पहुंच पाई है, उनका आर्थिक विकास छोटे–छोटे लघु उद्योगों से किया जा सकता है। उनके अंदर हुनर है लेकिन हुनर को प्रकट करने का परिवेश नहीं है। हुनर प्रकट करने के कार्यक्रम, मेले, प्रशिक्षण आदि आयोजित करने चाहिए। भारत सरकार, राज्य सरकारें भी इस प्रकार पिछड़ी हुई महिलाओं के विकास को समृद्ध बनाने हेतु कार्यक्रम आयोजित करती है ताकि विकास के कदम में वे भी अपना हाथ बढ़ावें। आर्थिक कारण से वह उद्योग नहीं खोज पाती हैं तो सरकार उनको ऋण उपलब्ध कराती है ताकि वे अपना आर्थिक विकास कर सके। इन महिलाओं को कार्यबल में अग्रसर करना, उनके मन मुताबिक रोजगार दिलाना, समर्थन एवं प्रोत्साहन देना, उत्पाद के क्षेत्र में, अक्षम ऊर्जा के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास करना, कृषि के नवाचारों से भी ओतप्रोत कराना, फसल प्रबंधन, खाद्य सुरक्षा से जागरुक करना आदि कार्य आर्थिक कारण हेतु किये जा रहे है।

नारियों का देश की अर्थव्यवस्था में प्राचीनकाल से ही किसी–न–किसी रूप में योगदान रहा है। नारियों के आर्थिक एवं उत्पादक कार्यों का निर्धारण मानव सभ्यता के प्रारम्भिक काल से ही चला रहा है। यद्यपि नारियाँ

International Research and Review

शिकार करने नहीं जाती थीं, लेकिन उनको परिवार में ही रहकर विभिन्न कार्य जैसे अनाज साफ करना व उसे काटना, छानना, पीसना आदि प्रमुख थे। पशुपालन युग प्रारम्भ हुआ तो उसमें भी महिलाओं को अनेक घरेलू कार्य करने पड़ते थे जिनमें पशुओं की देखभाल करना, दूध से अनेक व्यंजन बनाना, पशुओं की सेवा टहल करना आदि प्रमुख थे। इसके बाद जब कृषि युग आया तब महिलाओं को जो विभिन्न घरेलू कार्य करने पड़ते थे उनमें घर में कपड़ा बुनना, मिट्टी के बर्तन बनाना, टोकरियाँ बनाना तथा कूटना–पीसना आदि प्रमुख थे।

1. औद्योगिक क्रान्ति का प्रभाव– औद्योगिक क्रान्ति ने महिलाओं की आर्थिक स्थिति को भी प्रभावित किया। इसका प्रभाव यह हुआ कि महिलाओं ने पारिवारिक सीमाओं का परित्याग करके घर से बाहर भी कार्य करना प्रारम्भ कर दिया, क्योंकि औद्योगिक जगत में महिलाओं को अब श्रम करने के अधिक अवसर प्राप्त होने लगे। जिस समय उन्नीसवी शताब्दी का समापन हुआ तो उस समय सम्पूर्ण महिलाओं का वर्ग 'श्रमजीवी वर्ग' के रूप में अपना स्थान ग्रहण कर चुका था। उस समय श्रमिक महिलाओं की स्थिति का प्रतिशत विभिन्न देशों में इस प्रकार था–अमेरिका में 33%, जर्मन में 36%, पोलैण्ड में 44.8%, रूस में 45% तथा भारत में 27% जो विभिन्न व्यवसायों में आज भी व्यापक रूप से कार्यरत हैं।

2. भारतीय महिलाओं की व्यावसायिक स्थिति– यद्यपि भारत में महिलाओं के घरेलू कार्यों का निर्धारण प्राचीन काल में ही हो गया था, लेकिन इन कार्यों में महिलाओं की सहभागिता में उन्नीसवी सदी के अन्तिम चरण में काफी तेजी आ गयी थी, जिसका प्रभाव समाज के प्रत्येक वर्ग की महिलाओं पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित हुआ। इसका विवरण इस प्रकार है–

(i) निम्न वर्गीय महिलाओं के प्रमुख कार्यः– जब औद्योगिक क्रान्ति का समापन हुआ तो उस समय महंगाई अपनी चरम सीमा पर थी। इस महँगाई के कारण समाज की निम्नवर्गीय महिलाओं को परिवार से निकलकर विभिन्न व्यावसायिक कार्य करने पड़े। इस वर्ग की महिलाओं के प्रमुख कार्यखेतों का जोतना, पत्थर की खानों तथा चाय के बागानों में चाय की पत्तियां निकालना आदि था।

(ii) मध्यम वर्गीय महिलाओं के प्रमुख कार्यः– भारतीय व्यवसायों में मध्यम वर्गीय महिलाओं का प्रवेश काफी समय बाद हुआ। इस सम्बन्ध में सुप्रसिद्ध समाजशास्त्री **श्री पी० सेन गुप्ता** ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि "महिला शिक्षा को गति प्रदान करने के लिए और महिलाओं को आर्थिक रूप से अपने पैरों पर खड़ा करने के लिए सर्वप्रथम शिक्षक के धन्धे का द्वार खुला।"महिलाओं का दूसरा प्रमुख कार्य परिचारिकाका कार्य था। इसीलिए ब्रिटिश सरकार द्वारा स्त्रियों को सन् 1875–76 ई० में 'परिचारिका' का प्रमुख रूप से प्रशिक्षण दिया गया। महिलाओं की व्यावसायिक गतिविधियाँ देश के आर्थिक विकास के साथ–साथ बढ़ती चली गई।जैसे–जैसे शैक्षिक प्रचार होता गया वैसे–वैसे सरकार के प्रशिक्षणयुक्त व्यवसायों में महिलाओं की सहभागिता में उत्तरोत्तर वृद्धि होने लगी। सन् 1920 में महिलाओं ने व्यावसायिक क्षेत्र में अपना एक निश्चित स्थान बना लिया था। स्वतन्त्र भारत में भी मध्यम वर्गीय महिलाओं के कार्य करने के अधिकार को मान्यता प्रदान की गयी तथा उनकी विभिन्न समस्याओं को ध्यान में रखते हुए सरकार द्वारा विभिन्न कानून पारित किए गए। मध्यम वर्गीय महिलाओं द्वारा किए जाने वाले प्रमुख कार्यों का विवरण **श्रीमति पी० सेन गुप्ता** ने अपनी 'वीमेन वर्कर्स ऑफ इण्डिया' में निम्न प्रकार प्रस्तुत किया है–

1. शैक्षिक कार्यः – मध्यम वर्गीय महिलाओं का सबसे प्रथम व प्रमुख कार्य शिक्षण कार्य है। इसीलिए आज महिलाएँ शिक्षिका, प्रोफेसर या मुख्य आचार्य के पद पर कार्य कर रही है।

2. स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यः – मध्यम वर्गीय महिलाओं का द्वितीय प्रमुख कार्य स्वास्थ्य कार्य है। इसलिए आज

स्वास्थ्य विभाग में दाई, परिचायिका, स्वास्थ्य निरीक्षिका, सामान्य डॉक्टर या चिकित्सक के पद पर अधिकांश महिलाएं कार्य कर रही है।

3. कारखाना सम्बन्धी कार्यः – प्रायःआज विभिन्न प्रकार के कारखानों में भी विभिन्न कार्यों के लिए महिलाओं को ही नियुक्त किया जाता हैजिनमें कपड़े, तम्बाकू, आटा मीलें, तेल तथा काजू आदि के कारखाने प्रमुख है।

4. खान सम्बन्धी कार्यः – कोयला, इस्पात, पत्थर, अभ्रक, मैगनीज, इस्पात आदि खानों में महिलाओं की संख्या सबसे अधिक है।

5. बगीचे (बागान) सम्बन्धी कार्यः – आज महिलाएँ चाय, कॉफी, रबर के बागानों में भी पर्याप्त संख्या में कार्य कर रही है।

6. कला सम्बन्धी कार्यः– प्राचीन काल में नृत्य करने वाली महिलाओं को आलोचना युक्त दृष्टिकोण से देखा जाता था क्योंकि यह कार्य बाह्य बालाओं या वेश्याओं का ही माना जाता था, लेकिन आजकल ऐसा नहीं है। आज समाज में नृत्य, संगीत तथा कला को काफी महत्त्व दिया जाने लगा है। इसीलिए इस क्षेत्र में महिलाओं का प्रवेश सम्माननीय हो गया है।

7. विधिक क्षेत्र मेंः – आज महिलाओं ने विधिक क्षेत्र पर भी अपना अधिकार स्थापित कर लिया है, क्योंकि आजकल वकील, बैरिस्टर या न्यायाधीशों के पद पर महिलाएँ कार्य कर रही है, विधिक क्षेत्र के अतिरिक्त कूटनीतिक क्षेत्र में भी महिलाएँ कार्य कर रही हैं।

8. ग्रामीण क्षेत्र सम्बन्धी कार्यः– आधुनिक काल में सरकार द्वारा संचालित सामुदायिक योजना के अन्तर्गत ग्राम सेविकाओं के पद पर महिलाओं को नियुक्त किया जाता है, जिनका कार्यक्षेत्र ग्रामीण क्षेत्र ही होता है। सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के रूप में भी महिलाओं को ही नियुक्त किया जाता है।

9. सार्वजनिक निर्माण विभाग के कार्यः– आज महिलाओं से सस्ती दरों पर विभिन्न प्रकार के निर्माण कार्य कराए जाते हैं, जिनमें नये रास्तों का निर्माण, भवन निर्माण कार्य तथा नदी योजनाओं में बांध निर्माण आदि का कार्य प्रमुख है।

10. लघु व्यवसायः– महिलाएं कुछ व्यावसायिक कार्य घर पर रहकर ही करती हैं, क्योंकि इनमें मशीनो तथा बिजली की आवश्यकता नहीं होती है। इन कार्यों में मछली पकड़ना, बीड़ी बनाना, रंगाई, सिलाई–कढ़ाई, बुनाई आदि का कार्य करना, छपाई का कार्य करना, खिलौने बनाना आदि प्रमुख कार्य हैं। कुछ महिलाएँ घर पर रहकर ही पापड़, आचार भी बनाती है। घर पर कागज के थैले आदि भी तैयार करना, गत्ते के डिब्बे बनाना, चटाई व टोकरियाँ आदि बनाना भी इन्हीं कार्यों में शामिल होते हैं।कुछ महिलाएं रेलवे तथा अन्य विभागों में भी परिचारिकाओं के रूप में कार्य कर रही हैं।

11. अन्य कार्यः– उपर्युक्त कार्यों के अतिरिक्त महिलाएँ दुकानों, दफ्तरों तथा वितरण केन्द्रों पर भी कार्य कर रही हैं। महिलाएं सहायकटाइपिस्ट, टेलीफोन ऑपरेटर आदि के पदों पर भी कार्य करती हैं। आज बहुत सी महिलाएं सिलाई–कढ़ाई की दुकानों पर कार्य ही नहीं कर रही है, अपितु बैंकों आदि से ऋण प्राप्त कर स्वयं इनके केन्द्रों का संचालन कर रही हैं।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि आज भारत केआर्थिक विकास में महिलाओं का योगदान पुरुषों से कम नहीं है। जिस महिला को कुछ समय पूर्व तक अबला, निम्न स्तर की स्त्री माना जाता था, आज वही महिला पुरुषों से सम्बन्धित क्षेत्रों में उनसे आगे निकल गयी है।

वर्तमान वैश्वीकरण के युग में **महिलाओं की स्थिति** में परिवर्तन हो रहे हैं। वे अब अपने अधिकारों के प्रति न केवल जागरूक होती जा रही हैं बल्कि अपने अधिकारों को प्राप्त भी कर रही हैं। भारत में महिलाओं के

International Research and Review

आर्थिक तथा राजनैतिक अधिकारों तथा उनकी प्राप्ति का उल्लेख निम्नलिखित रूप से किया जा सकता है–

• **महिलाओं के आर्थिक या सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार** –भारतीय समाज में विभिन्न धर्मों, जनजातियों, वर्गों तथा सम्प्रदायों में सम्पत्ति के सम्बन्ध में अलग–अलग प्रावधान या नियमों का प्रचलन पाया जाता है। वर्तमान बदलते परिवेश में सम्पत्ति सम्बन्धी मूल्यों में परिवर्तन हो रहे हैं जिनका उल्लेख निम्न प्रकार से किया जा सकता है–

1. **विवाहित महिला का सम्पत्ति अधिकार अधिनियमः** – इस अधिनियम के पारित होने से पहले स्त्रियों को पारिवारिक सम्पत्ति पर अधिकार नहीं था, किन्तु इस अधिनियम के द्वारा महिलाओं को परिवार की सम्पत्ति पर अधिकार प्राप्त हो गया है। अब महिला को परिवार की किसी भी स्रोत से होने वाली आय पर अधिकार प्राप्त है। स्त्री को कला, बौद्धिक या साहित्यिक स्रोत से होने वाली आय, पारिवारिक बचत से होने वाली आय, महिला के बीमा पॉलिसी से होने वाली आय इत्यादि।

2. **हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियमः** – इस अधिनियम से महिलाओं को जो आर्थिक अधिकार प्राप्त हुए हैं, उनका उल्लेख निम्नलिखित रूप से किया जा सकता है–

1. मातृसत्तात्मक परिवारों पर भी यह अधिनियम लागू होता है।
2. महिला धन तथा महिला के विरासत सम्बन्धी कानूनों को समाप्त कर दिया गया है।
3. महिला को पारिवारिक सम्पत्ति पर अधिकार प्राप्त हो गया है।
4. चल तथा अचल सभी प्रकार की सम्पत्ति पर महिलाओं को अधिकार प्राप्त हो गया है।
5. पुरुषों तथा महिलाओं को सम्पत्ति सम्बन्धी समान अधिकार प्राप्त हो गए हैं।
6. उत्तराधिकार का आधार पिण्डदान या रक्त सम्बन्ध के साथ–साथ स्नेह तथा प्रेम भी माना गया है।
7. इस संविधान में दूर के सम्बन्धियों का भी उल्लेख मिलता है।
8. यह संविधान महिला तथा पुरुष में कोई भेद नहीं करता है।
9. रोग सम्पत्ति के उत्तराधिकार में बाधक नहीं है।
10. यह संविधान पुत्रियों को पुत्रों के समकक्ष मानता है।
11. इस कानून ने महिलाओं को उच्च स्थिति प्रदान की है।

3. **मुस्लिम महिलाओं का सम्पत्ति पर अधिकारः** – मुस्लिम समाज में स्त्रियों को तुलनात्मक रूप से अधिकार प्राप्त हैं, जैसे–

1. मुस्लिम महिलाओं को पारिवारिक सम्पत्ति पर अधिकार प्राप्त है।
2. मुस्लिम समाज में महिला को शरीयत या इस्लामिक कानून के अनुसार अपने पिता की सम्पत्ति में अधिकार प्राप्त है।
3. विवाह के समय स्त्री जो धन लाती है वह अपने पति से वापस मांग सकती है।
4. पत्नी के भरण–पोषण का उत्तरदायित्व पति का होता है।

• **महिलाओं के राजनैतिक अधिकार**–यदि राजनैतिक क्षेत्र पर दृष्टि डाली जाए तो यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि राजनैतिक क्षेत्र में भी महिलाओं में जागरूकता का अभाव है। इसीलिए वह सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अधिक भागीदारी नहीं कर पाती हैं। भारत में अनेक ऐसी कुप्रथाएं प्रचलित हैं जो महिलाओं का राजनैतिक दृष्टिकोण से जागरूक होने में बाधा उत्पन्न करती हैं। अशिक्षा, बाल विवाह, पर्दा प्रथा इत्यादि के कारण महिलाएँ

International Research and Review

राजनैतिक क्षेत्र में पिछड़ी हुई हैं। अभी भी महिलाएं परिवार के पुरुष सदस्यों की इच्छा के अनुसार मतदान करती हैं। यद्यपि महिलाएं ग्राम प्रधान से लेकर राष्ट्रपति पद तक पर विराजमान हैं। यदि कुछ अपवादों को छोड़ दें तो महिलाएं अभी भी अपने परिवार के पुरुष सदस्यों के सहयोग से इन पदों पर कार्य कर रही हैं। किन्तु अब धीरे–धीरे परिस्थितियां बदल रही है और वे राजनैतिक दृष्टिकोण से न केवल जागरूक हो रही हैं वरन् सक्रिय रूप से राजनीति में भागीदारी भी कर रही हैं।स्वतन्त्रता संग्राम के दौरान **गाँधीजी** ने यह अनुभव किया कि महिलाएँ स्वतन्त्रता संग्राम में महती भूमिका निभा सकती हैं। अतः उन्होंने स्वतन्त्रता संग्राम में महिलाओं का आह्वान किया जिसका परिणाम यह हुआ कि अनेको महिलाएं गाँधीजी के साथ स्वतन्त्रता संग्राम में कूद पड़ी। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद 1951 से लेकर 2009 तक जो लोकसभा, विधानसभा, ग्राम पंचायत, नगर पंचायत इत्यादि के जो चुनाव हुए उनमें महिलाओं ने चुनाव लड़ा और अनेक महिलाएँ चुनाव जीतकर विभिन्न राजनैतिक पदो पर आसीन हुई। यद्यपि प्रारम्भ में चुनावों में महिलाओ का प्रतिशत कम था किन्तु धीरे–धीरे चुनावों में महिला प्रत्याशियों का प्रतिशत बढ़ता जा रहा है।भारत की प्रथम महिला प्रधानमन्त्री के रूप में श्रीमती **इन्दिरा गांधी** का चुना जाना भारतीय महिलाओं का राजनीति में सक्रिय होना ही दर्शाता है, प्रथम महिला राष्ट्रपति के रूप में श्रीमती **प्रतिभा देवी पाटिल** का चुना जाना भी इस ओर संकेत करता है कि भारत में महिलाएं जागरूक होती जा रही हैं। श्रीमती **सोनिया गांधी, विजयराजे सिंधिया, मायावती, ममता बनर्जी, जय ललिता, शीला दीक्षित, उमा भारती, सुषमा स्वराज, नजमा हेपतुल्ला, वसुंधरा राजे, स्मृति ईरानी, द्रौपदी मुर्मु, दिया कुमारी** आदि महिलाओं का राजनीति में सक्रिय होना महिलाओं की राजनैतिक जागरुकता तथा सक्रियता को ही दर्शाता है।पृथ्वी शिखर सम्मेलन के बाद भारत ने ग्राम पंचायतों में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण दिया, जिससे ग्राम पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि हुई है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भारत में महिलाओं में जैसे–जैसे साक्षरता का प्रतिशत बढ़ता जा रहा है, वैसे–वैसे उनकी राजनैतिक जागरुकता तथा सक्रियता बढ़ती जा रही है।इस बढ़ती साक्षरता दर ने महिलाओं को राजनैतिक रूप से जागरुक तथा सक्रिय किया है।

निष्कर्ष–

स्टार्टअप नए भारत की रीढ़ है। यह स्टार्टअप नवाचार को प्रोत्साहित के साथ महिला विकास में अनूठा योगदान प्रदान करेगा। नवाचार महिलाओं के अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में घरेलू जीवनोपयोगी सामग्री निर्माण, दैनिक जीवन से संबंधित व्यवसाय उन्हें आत्मनिर्माण बनाने में सक्षम होंगे। आत्मनिर्भर भारत ही हमें विकसित देशों की श्रेणी में अग्रसरित कर सकेगा। देश में महिलाएं जितनी समृद्ध होंगी, उतना ही हम आर्थिक विकास कर सकेंगे। महिलाओं को समृद्ध बनने हेतु उन्हें अपने पर खड़ा होना सीखना चाहिए। नवाचार को बढ़ावा देना,उद्धमियों में उनकी सहायता प्रदान करना, स्टार्टअप में महिला निदेशक, महिला सदस्यों की कार्यकारिणी बनानी चाहिए, महिलाओं का स्टार्टअप हब बने, असाधारण नवाचारों को ग्रामीण महिलाओं के क्षेत्र में भी लाने का प्रयास करना चाहिए, नए कार्यों की संकल्पना को बढ़ाने का प्रयास महिलाओं को अपने जीवन चक्र में करना चाहिए।

International Research and Review

सन्दर्भ ग्रन्ध सूची–

- कोठारी, गुलाब (2006), नारी, पत्रिका प्रकाशन, जयपुर
- नीरज, सुरेश (2005), शिक्षा मेंक्रांति, ताओपब्लिशिंगप्रा. लि., 50 कोरगांवपार्क, पुणे
- गुप्ता,एस.पी. (2005), भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवंसमस्याएं, शारदापुस्तकभवन, 11 यूनिवर्सिटीरोड़, इलाहाबाद
- आचार्यश्रीराम शर्मा (2006), गृहलक्ष्मी की प्रतिष्ठा, युगनिर्माण योजना, गायत्री तपोभूमिमथुरा
- कोठारी, गुलाब (2015), मानस, नारीऔरमातृत्व, पत्रिका प्रकाशन, जयपुर
- निर्वाणश्री, साध्वी (2012), आदर्शनारियां (खण्ड–1) आदर्शसाहित्य संघ, नईदिल्ली
- निर्वाणश्री, साध्वी (2012), आदर्शनारियां (खण्ड–2) आदर्शसाहित्य संघ, नईदिल्ली

international Research and Review

ISSN 2319-829X
Humanities and Social Science Studies, Vol. 13(3) 2024

CRITICAL REFLECTION OF NATIONAL EDUCATION POLICY (NEP-2020) IN TUNE WITH TEACHER EDUCATION IN INDIA.

[1]Chinmayee Das, [2]Prof. Banwarilal Jain

Abstract

The study highlights the paradigm shift of Teacher Education & its innovative pedagogical practices in twenty first century of India. Preparation of professional ethics in educational system is the moto of it. Holistic development or 360-degree development with cultural ethos and rootedness of Indian Knowledge system the vision is envisaged by NEP-2020. This **National Education Policy 2020** is the first education policy of the 21st century and aims to address the many growing developmental imperatives of our country. This Policy proposes the revision and revamping of all aspects of the education structure, including its regulation and governance, to create a new system that is aligned with the inspirational goals of 21st century education, including SDG4, while building upon India's traditions and value systems.Developing Twenty-first century skills i.e., critical thinking, collaboration, Leadership skills, community participation, peer learning, problem solving, Integration of ICT in class room teaching learning practices. The Present study encompasses the rooted ness of Indian tradition, knowledge, cultural heritage, moral values should integrate in teacher education and its curricular transaction.Integrated and multidisciplinary teacher education concept are being emerged in the pedagogical thoughts of new education -policy and make it success in Implementation. Four years integrated in a multidisciplinary Institution leads to the society to be very vibrant and engaging learning society. It focusses the innovative idea, thoughts, beliefs, values, skills, dispositions, knowledge among teachers and learners are reflected in real life situation in day today life. Society requires skillful and competency-oriented citizen who can change the society as vibrant and sensible."The vision of the policy envisages in Transforming Indian Educational system are: Reflecting a human & truly global citizen, Capable of rational thought and action, Rootedness of Indian culture and ethos and values, provide high quality education to all, develop knowledge, skills, values and dispositions, preparing vibrant knowledge society, Make India a global knowledge super power". (Vision of NEP-2020)

KeyWords: Indian traditions, NEP-2020, 21stcentury Skills,ICT,Holistic Development.

Conceptual background:

The National Education Policy 2020 has highlighted the importance of moving towards multidisciplinary learning in our classroom for preparing our future generation. NEP states that 'the world is undergoing rapid changes in the knowledge landscape.The aim of the National Education Policy 2020 is to create an education system, which is deeply rooted in Indian ethos. India will have the highest population of young people in the world over the next decade, and our ability to provide high-quality educational opportunities to them will determine the future of our country. National Education Policy-2020 focused 'teachers and teacher educators' major part of Teaching - learning processes. Teachers truly shape the future of our children - and, therefore, the future of our nation. It is because of this noblest role that the teacher in India was the most respected member of society. Society gave teachers, or gurus, what they needed to pass on their knowledge, skills, and ethics optimally to

[1]**Ph.D. Research Scholar**, Department of Education, JainVishva Bharati Institute, Deemed University, Ladnun, Rajasthan-341306

[2]**Professor& Head, Department of Education**, JainVishva Bharati Institute, Deemed University, Ladnun, Rajasthan-341306

students.The quality of teacher education is the most crucial input for improving the quality of school education since the policies prepared for schools are to be implemented by the teachers, the teacher's needs to be prepared accordingly.The National Education Policy (**NEP- 2020)** is a new initiation of India to improve the quality system of Education. It focuses the fullest development of child. It aims toaddressthemanygrowingdevelopmentalimperativesofourcountry.The vision of NEP 2020, it is imperative to foster an understanding of its principles, adopt practical recommendations outlined in NCF-SE 2023, and cultivate an experiential learning environment through innovative pedagogical methods such as toy and game-based approaches, interdisciplinary teaching, and comprehensive assessment reforms including holistic progress card. Additionally, ensuring that teachers and school leaders are well-versed in NEP 2020 necessitates not only raising awareness but also enhancing their competencies to effectively implement its mandates. This entails providing professional training followed by ongoing support and follow-up measures.NEP 2020 also recommends that, the multi-disciplinary institutions offering 4 Year B.Ed. (Integrated Teacher Education Programme (ITEP)) can offer 2-year B.Ed. and 1 Year B.Ed. programmes. Currently the different teacher education programmes are being offered in standalone institutions, that offers only teacher education programmes with a few visions and goal. As per the recommendation of NEP- 2020 it has to be shifted to a multidisciplinary institutions or universities. There are few institutions across the country, which run 4 years integrated and multidisciplinary courses such as B.Sc., B.Ed. and B.A., B.Ed. along with other under graduate and post graduate programmes. If we need to offer ITEP courses in a large number of multi-disciplinary Institutions a holistic framework in the form of guidelines will be helpful for teachers, teacher educators, and students. This Policyproposes therevisionandrevampingofallaspectsoftheeducationstructure,includingitsregulationandgovernance,tocreateanewsystemthat encompasseswith theinspirationalgoalsof21st centuryeducation. It promotes universal access to quality education in India. It aims to create the education system, which provides potential skill based and Liberal education for the Nation.

How is NEP 2020 different from earlier Policies?

1. Restructuring education system from 10+**2 pattern to 5+3+3+4** in School education
2. Shifted Teacher Education **Stand-alone Institute**/College to Integrated &**multidisciplinary** institutionandmake **learning experiential** and hands on.
3. NEP-2020 envisages the **rootedness of Indian culture, values and ethos**
4. Modify the assessment **of Learning** (Summative) to assessment **for and as Learning** (Formative) which includes self- assessment, peer-assessment, teacher-assessment for 360 degree/holistic progress
5. Adoption of vocational education in **middle stage** (Grade: 6-8)
6. Shift rote learning to higher order thinking, **critical thinking**, inquiry and 21 century skills.
7. More focus on Digital literacy equipped with **21st century skills**.
8. **Multilingualism** classroom practices is the need of the hour

Teacher Education plays the vital role for preparing school teachers, whom will shape the Nation strong. Teacher preparation is an activity that requires **multidisciplinary perspectives.** Teachers must be rooted in Indian knowledge, values, languages, ethos, and traditions and well-versed in the latest educational practices and pedagogy.

School Stages: Logic and Design

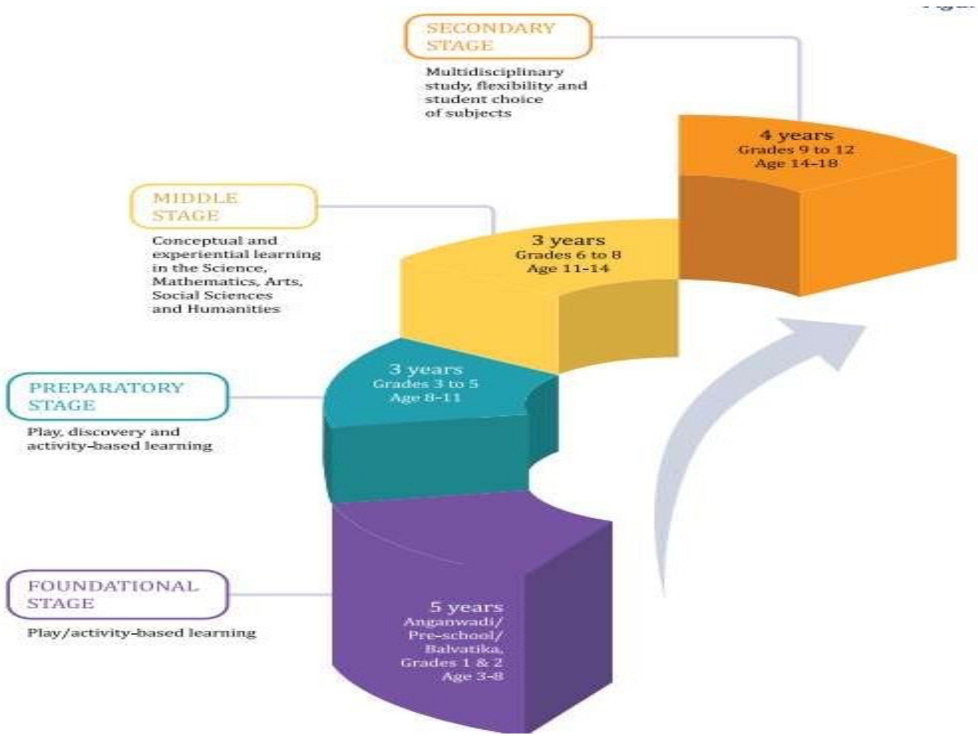

(NCFSE-2023)

Reflections on NEP-2020

- Teachers and faculty as the heart of learning Process: their recruitment, **Continuous professional development (CPD**), positive working environment and service conditions
- Addressing **21st Century skills (**NEP-2020, 4.41)
- Higher order skills and application of knowledge in real life situations rather than rote learning
- **Holistic/360-degree development** of Learners
- ECCE is the base of learning where allstudents feel **cared, safe** and stimulating learning environment.
- **Foundational Literacy and Numeracy:** an urgent & necessary prerequisite to learning (ability to read, write and basic operation with numbers)
- **Experiential Learning:** (Connection with real life situation, hands on learning, arts integrated, sports-integrated and storytelling-based Pedagogy) (NEP-2020, 4.6)
- **Art Integrated Pedagogy**: (Imbibe the Indian ethos through integration of Indian art and culture in teaching and learning process)
- Classroom transaction will shift towards **Competency based learning**.
- Promoting **Multilingualism**: Grade- 3 onwards
- Outstanding research is the major part of the new policy.

➢ **Continuous Professional Development (CPD):**

NEP-2020 talks about in the areas of Continuous professional development (CPD), Curriculum and Pedagogy, Learning Outcomes & competency-based assessment, Integration of ICT in Teacher Education, curriculum, and inclusive education need to be developed, and capacity-building programmes for teacher educators need to be organized and holistic development of teacher, teacher educators and students as competency based and 360-degree manners.

NEP-2020 as reflected in NCF FS-2022:

Foundational Stage:

During the foundational stages in the ages of 3 to 8 years child appropriate and high-quality ECCE must be provided to all children

i. 3-6 years: Early childhood education programmes in **Anganwadis, Balvatikas, or preschools**.

Modalities: forming all-round good habits, continued attention to safety, care, health and nutrition

ii**. 6-8 years**: Early primary education programmes in school **(Grades 1 and 2)**

- **Foundational Literacy and Numeracy (FLN): (6-8 years)**

Modalities: learning about the alphabet, languages, numbers, counting, colours, shapes, drawing/ painting, indoor and outdoor play, puzzles and logical thinking, art, craft, music, and movement. Age-appropriate, physical, educational, and social activities through play-based / Toy-based Pedagogy for better learning is base of these foundational stages of education.

- **Holistic Development (bothinner and external development):**

1. **Annamaya kosha** or the physical body, which is sustained and nourished by our food, health, exercise, fitness, strength, development of senses, habit formation
2. **Pranamaya kosha** or the vital body/life force energy- balance and retention of energy, smooth functioning of organ systems by activating nervous system.
3. **Manomaya kosha** - Emotional and mental development. concentration, peace, will power, courage, virtues, happiness
4. **Vigyanamaya kosha -** intellectual/buddhi or understanding, the highly purified form of thought. observation, experimentation, abstract thinking, linguistic skills, imagination, creativity, power of discrimination
5. **Anandamaya*kosha*,** or the causal body/inner self—through which we experience a kind of bliss – spiritual.

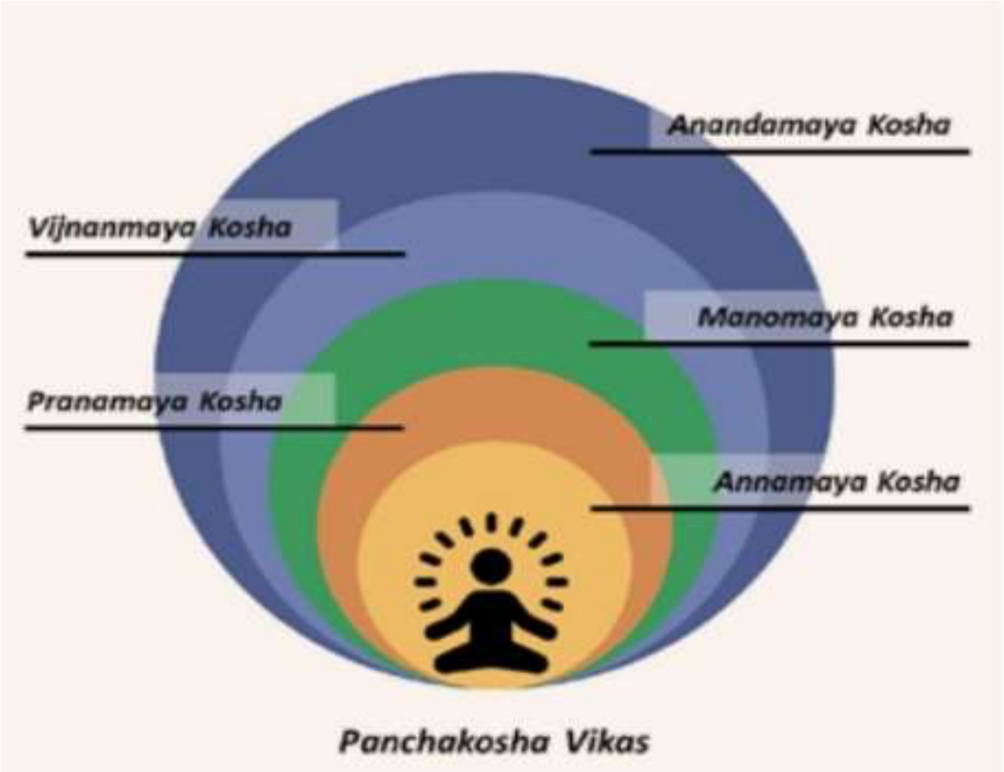

(NCFFS-2022) PanchKosh Vikas

- **Competency Based Assessment**

The NEP-2020 has given greater emphasis on output potential concerning desired learning outcomes. It further states that "In all stages, experimental learning will be adopted, including hands-on learning, art-integrated and sports-integrated education, story–telling-based pedagogy, among others, as standard pedagogy within each subject, and with exploration of relations among different subjects. To close the gap in achievement of learning outcomes, classroom transactions will shift, towards competency-based learning and education. The assessment tools (including assessment "as", and "for" learning) will also be aligned with the learning outcomes, capabilities, and dispositions as specified for each subject of a given class. Keeping these in mind these documents need to be aligned with the recommendations of NEP-2020.

Thrust Areas of Teacher Education & its Innovation:

- Experiential learning (NEP-2020, 4.6) (4.2, 4.5, 4.7, 5.15)
- Integrated Teacher Education Programme (ITEP) (NEP-2020, 5.23, 15.5)
- Continuous Professional Development (CPD) (NEP-2020, 5.16)
- National Professional Standard for Teachers (NPST) (NEP-2020, 5.20)
- Indian Knowledge System (IKS) (NEP-2020, 4.27)
- B.Ed. Programme for Gifted/Advanced learners (NEP-2020, 4.43)
- Innovative Pedagogy & Research Practices (NEP-2020, 4.25, 13.4,13.7)
- Training of Master Trainer in DIETs/SCERTs (Region-wise) (NEP-2020, 5.19, 5.25)

Concluding Remarks:

Teacher education is vital role in creating a teacher that will shape the futuristic learner. The quality of teacher education is the most crucial input for improving the quality of school education since the policies prepared for schools are to be implemented by the teachers, the teacher's needs to be prepared accordingly.The National Education Policy-2020 highlights and stressed for 4-year B.Ed. programmes will be the basic qualifications to become teachers at any level by 2030. The policy also highlighted that "As teacher education requires multidisciplinary inputs, and education in high-quality content as well as pedagogy, all teacher education programmes must be conducted within composite multidisciplinary institutions." **Four-year undergraduate degrees** with multiple entry and exit options will be introduced.Quality secondary education for all is the key to reach out for economic development, eliminating poverty and achieving sustainable development in country. Many interventions are already underway to improve the quality of education. The duration of pre-service secondary teacher education programme has been increased from one to two years with a view to prepare teachers for quality education. Programmes for professional development of teachers on a continuing basis are being organized. It is found that these interventions have a limited impact on the quality of education, school education and teacher education.

Works Cited:

- **ITEP (2023),** Integrated Teacher Education Programme, NCERT Publication, New Delhi.
- **MHRD Report, (2020**) National Policy on Education **(NPE-2020**), New Delhi.
- **Mohan, R. (2011**): Teacher Education, PHI learning Pub., New Delhi.
- **NCF-FS (2022),** National Curriculum Frame work for Foundational Stages, NCERT Publication, New Delhi.
- **NCF-SE (2023),** National Curriculum Frame work for School Education, NCERT Publication, New Delhi.

- **NCTE Document (2005)** National curriculum Framework for school Education NCF-2005, NCTE pub. New Delhi.
- **NCTE Document (2009)** National curriculum Framework for Teacher Education **NCFTE-2009**: Towards Preparing Professional and Humane Teacher, NCTE Pub. New Delhi.
- **NCTE Document (2023)** National Professional Standard for Teacher **NPST**, NCTE Pub. New Delhi.
- **Sidhiqui, M.A.et.al. (2009**) Teacher Education, Reflections Towards policy formation, New Delhi, NCTE.

Madhya Pradesh Journal of Social Sciences
A biannually Journal of M. P. Institute of Social Science Research, Ujjain
ISSN: 0973-855X (Vol 29 No 4, April 2024)

INNOVATIVE PRACTICES & CONCERN IN TEACHER EDUCATION WITH REFERENCE TO NEP-2020

***[1] Chinmayee Das & **[2] Prof. Banwarilal Jain**

Abstract

The present study highlights the new trends and issues relating to teacher education and its implementation in Indian education system. Teacher is the torch bearer of the society. Preparing teacher with ethical and moral value, traditional Indian ethos, multilingual skills and innovative pedagogy itself is a tedious job of the teacher and teacher educators. Continuous professional development (CPD) of teacher training both in-service and pre-service teacher education across the country is itself a great challenge of the govt. and the Nation. Holistic development or 360 degree development with cultural ethos and rootedness of Indian Knowledge system the vision are envisaged by NEP-2020.

Key Words: Rootedness, NEP-2020, Holistic Development, Techno-savvy, CPD, Cultural Ethos

Introductory Remarks: The National Education Policy (NEP- 2020) is a new initiation of India to improve the quality system of Education. It focuses the fullest development of child. It aims to address the many growing developmental imperatives of our country. This Policy proposes the revision and revamping of all aspects of the education structure, including its regulation and governance, to create a new system that encompasses with the inspirational goals of 21st century education. It promotes universal access to quality education in India. It aims to create the education system, which provides potential skill based and Liberal education for the Nation. The aim of **the National Education Policy 2020** is to create an education system, which is deeply rooted in Indian ethos. India will have the highest population of young people in the world over the next decade, and our ability to provide high-quality educational opportunities to them will determine the future of our country. National Education Policy-2020 focused 'teachers and teacher educators major part of Teaching - learning processes. Teachers truly shape the future of our children - and, therefore, the future of our nation. It is because of this noblest role that the teacher in India was the most respected member of society. Society gave teachers, or gurus, what they needed to pass on their knowledge, skills, and ethics optimally to students. Teacher education is vital role in creating a teachers that will shape the futuristic learner . The quality of teacher education is the most crucial input for improving the quality of school education since the policies prepared for schools are to be implemented by the teachers, the teacher's needs to be prepared accordingly. Quality secondary education for all is the key to reach out for economic development, eliminating poverty and achieving sustainable development in country. Many interventions are already underway to improve the quality of education. The duration of pre-service secondary teacher education programme has been increased from one to two years with a view to prepare teachers for quality education. Programmes for professional development of teachers on a continuing

[1]* **Ph.D. Research Scholar**, Department Of Education, Jainvishva Bharati Institute, Deemed University, Ladnun, Rajasthan-341306

[2]** **Professor& Head, Department of Education**, Jainvishva Bharati Institute, Deemed University, Ladnun, Rajasthan-341306

basis are being organized. It is found that these interventions have a limited impact on the quality of education, school education and teacher education.

Continuous Professional Development (CPD):

NEP-2020 talks about in the areas of Continuous professional development (CPD), Curriculum and Pedagogy, Learning Outcomes & competency-based assessment, Integration of ICT in Teacher Education, curriculum, and inclusive education need to be developed, and capacity-building programmes for teacher educators need to be organized and holistic development of teacher , teacher educators and students as competency based and 360 degree manners.

Major Concern of NEP-2020:

- Assessment reforms with 360-degree Holistic Progress Card, tracking Student Progress for achieving Learning Outcomes.
- GER in higher education to be raised to 50 % by 2035; 3.5 core seats to be added in higher education.
- Higher Education curriculum to have Flexibility of Subjects.
- Multiple Entry / Exit to be allowed with appropriate certification.
- Academic Bank of Credits to be established to facilitate Transfer of Credits.
- National Research Foundation to be established to foster a strong research culture.
- Light but Tight Regulation of Higher Education, single regulator with four separate verticals for different functions..
- NEP 2020 advocates increased use of technology with equity; National Educational Technology Forum to be created.
- NEP 2020 emphasizes setting up of Gender Inclusion Fund, Special Education Zones for disadvantaged regions and groups.
- New Policy promotes Multilingualism in both schools and HEs; National Institute for Pali, Persian and Prakrit, Indian Institute of Translation and Interpretation to be set up

Implementation of ITEP in tune with NEP-2020:

The National Education Policy-2020 highlights and stressed for 4 year B.Ed. programmes will be the basic qualifications to become teachers at any level by 2030. The policy also highlighted that “As teacher education requires multidisciplinary inputs, and education in high-quality content as well as pedagogy, all teacher education programmes must be conducted within composite multidisciplinary institutions.” **Four-year undergraduate degrees** with multiple entry and exit options will be introduced.

This **National Education Policy 2020** is the first education policy of the 21st century and aims to

address the many growing developmental imperatives of our country. This Policy proposes the revision and revamping of all aspects of the education structure, including its regulation and governance, to create a new system that is aligned with the inspirational goals of 21st century education, including SDG4, while building upon India's traditions and value systems.

The vision of NEP 2020, it is imperative to foster an understanding of its principles, adopt practical recommendations outlined in NCF-SE 2023, and cultivate an experiential learning environment through innovative pedagogical methods such as toy and game-based approaches, interdisciplinary teaching, and comprehensive assessment reforms including holistic progress card. Additionally, ensuring that teachers and school leaders are well-versed in NEP 2020 necessitates not only raising awareness but also enhancing their competencies to effectively implement its mandates. This entails providing professional training followed by ongoing support and follow-up measures.

NEP 2020 also recommends that, the multi-disciplinary institutions offering 4 Year B.Ed. (Integrated Teacher Education Programme (ITEP)) can offer 2 year B.Ed. and 1 Year B.Ed. programmes. Currently the different teacher education programmes are being offered in standalone institutions, that offers only teacher education programmes with a few vision and goal. As per the recommendation of NEP- 2020 it has to be shifted to a multidisciplinary institutions or universities. There are few institutions across the country, which run 4 year integrated and multidisciplinary courses such as B.Sc., B.Ed. and B.A., B.Ed. along with other under graduate and post graduate programmes. If we need to offer ITEP courses in a large number of multi-disciplinary Institutions a holistic framework in the form of guidelines will be helpful for teachers, teacher educators, and students.

The NEP-2020 has given greater emphasis on output potential concerning desired learning outcomes. It further states that "In all stages, experimental learning will be adopted, including hands-on learning, art-integrated and sports-integrated education, story–telling-based pedagogy, among others, as standard pedagogy within each subject, and with exploration of relations among different subjects. To close the gap in achievement of learning outcomes, classroom transactions will shift, towards competency-based learning and education. The assessment tools (including assessment "as", and "for" learning) will also be aligned with the learning outcomes, capabilities, and dispositions as specified for each subject of a given class. Keeping these in mind these documents need to be aligned with the recommendations of NEP-2020.

Higher Education- related: Four-year undergraduate degrees with multiple entry and exit options will be introduced.

1. The **M.** Phil. **degree will be abolished.**
2. **New umbrella regulator for all higher education** except medical, legal courses.
3. An **Academic Bank of Credit** will be set up to make it easier to transfer between institutions.
4. It also aims to **double the Gross Enrolment Ratio in higher education,** including vocational education, from 26.3% in 2018 to 50% by 2035, with an additional 3.5 core new seats.

Concluding Remarks:

The National Education Policy, 2020 has highlighted the importance of moving towards multidisciplinary learning in our classroom for preparing our future generation. NEP states that 'the world is undergoing rapid changes in the knowledge landscape. The quality of teacher education is the most crucial input for improving the quality of school education since the policies prepared for schools are to be implemented by the teachers, the teacher's needs to be prepared accordingly. NEP-2020 talks of various educational reforms that are structural, pedagogical and assessment oriented. These reforms have become a necessity owing to the rapidly changing situations due to globalization and development of technologies. These changes influence the attitudes and functioning of the educational systems as well as institutions

Works Cited:

- Association of Indian Universities documents selection from *University News-7* :(2000) *Value Education in India*, New Delhi, AIU Pub.
- **ITEP (2023),** Integrated Teacher Education Programme, NCERT Publication, New Delhi.
- **MHRD Report, (2020**) *National Policy on Education* (**NPE-2020**), New Delhi.
- **Mohan, R. (2011**): *Teacher Education*, PHI learning Pub., New Delhi.
- **NCF-FS (2022),** National Curriculum Frame work for Foundational Stages, NCERT Publication, New Delhi.
- **NCF-SE (2023),** National Curriculum Frame work for School Education, NCERT Publication, New Delhi.
- **NCTE Document (2005)** *National curriculum Framework for school Education NCF-2005*, NCTE pub. New Delhi.
- **NCTE Document (2009)** *National curriculum Framework for Teacher Education NCFTE-2009: Towards Preparing Professional and Humane Teacher*, NCTE Pub. New Delhi.
- **Pradhan, B. (2016),** Producing value based Teachers and students for world peace in Democratic set up, *Signifier of the Change*, New Delhi , R.B. Media , Vol. 3, PP. 28-35.
- **Sidhiqui, M.A. et.al. (2009**) *Teacher Education, Reflections Towards policy formation,* New Delhi, NCTE.

Peer Reviewed Journal for M.Phil. , Ph.D. & Appointment of Teacher in Universities & College
ISSN : 2454-4655 VOLUME - 10 No. : 3, April - 2024

International Journal of Social Science & Management Studies

Peer Reviewed & Refereed Journal

Indexing & Impact Factor 5.2

राष्ट्रीय संगोष्ठी
"लैंगिक संवेदनशीलता एवं समानता"
(Gender Sensitivity & Equality)
दिनांक : 27 अप्रैल, 2024, शनिवार
श्री अग्रसेन स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय, जामडोली, जयपुर

International Journal of Social Science & Management Studies

Contents

S. No.	Paper Title	Author Name	Page No.
1	Creating Gender Friendly Classrooms	Dr. Dinesh Kumar Gupta	1-6
2	Gender Discrimination in India	Dr. Anupama Verma	7-9
3	Gender Equality and the Aspects of Curriculum	Dr. Alpa Nagar	10-13
4	Gender Equality and Policy Determination in Indian Perspective	Dr. Ashok Kumar Bairwa	14-18
5	Gender Sensitivity and Equality in Indian Perspective	Dr. Nekram Jigarkumar G. Acharya	19-22
6	A Review Paper on Gender Differences in Emotional Intelligence	Prof. Mudit Rathore Ms. Mahak Chhabra	23-26
7	Gender Sensitivity & Equality	Neeta Arya	27-31
8	Gender Inequality: Reason and Solution	Dr. Lokendra Singh Roshankumar R.Patel	32-34
9	Sexual Sensitivity in Adolescence	Dr. Suman Choudhary	35-38
10	Gender Sensitivity & Equality in Indian Perspective	Dr. Alpa Nagar Suresh Kumar Yadav	39-43
11	Gender Sensitivity and Equality	Dr. Ashok Bhargava Vikram Singh	44-48
12	Role of Family, School and Society in Gender Equality	Dr. Lokendra Singh Vinodkumar H.Pandya	49-51
13	The Causes and Solutions of Gender Inequality	Pro. Rita Sharma Ashok Kumar	52-55
14	किशोरावस्था में लैंगिक संवेदनशीलता	बनवारी लाल बैरवा	56-58
15	भारतीय परिवेश में लैंगिक संवेदनशीलता	डॉ. मुकेश कुमार मीणा	59-62
16	लैंगिक असमानता : कारण एवं समाधान	डॉ. ज्योति भारद्वाज	63-64
17	सतत् विकास के लक्ष्य के रूप में लैंगिक समानताओं की चुनौतियाँ	डॉ. रणजीत खींची	65-67
18	लैंगिक समाज में परिवार, विद्यालय एवं समाज की भूमिका	श्रीमती कविता भारद्वाज	68-69
19	लैंगिक असमानता कारण व समाधान	डॉ. संध्या शर्मा मोनालिसा शर्मा	70-71

20	लैंगिक समानता एवं समान नागरिक संहिता	डॉ. प्रियंका गुप्ता श्रीमती सुमन शर्मा	72-74
21	लैंगिक संवेदनशीलता और समानता	प्रो. बी.एल.जैन	75-77
22	लैंगिक संवेदनशीलता तथा समानता में शिक्षा की भूमिका	डॉ. श्रद्धा सिंह चौहान रजनी जादौन	78-79
23	लैंगिक असमानता : कारण और समाधान	राजेंद्र शर्मा	80-82
24	लैंगिक संवेदनशीलता एवं समानता	राजकुमारी सैन	83-85
25	लैंगिक असमानता : कारण एवं समाधान	डॉ. नवजोत भनोत सीमा कुमारी	86-90
26	लैंगिक संवेदीकरणः शिक्षक शिक्षा की भूमिका	डॉ. शालू सोनी	91-95
27	लैंगिक समानता और समान नागरिक संहिता	सीताराम चौधरी	96-98
28	दिव्यांग बालक–बालिकाओं की शिक्षा	डॉ. पंकज पारीक तारा चन्द्र रैगर	99-103
29	लैंगिक समानता में परिवार, विद्यालय और समाज की भूमिका	सुश्री शुभांगी नामा श्रीमती आशा शर्मा	104-106
30	लैंगिक असमानता : कारण एवं समाधान	डॉ. संगीता यादव	107-108
31	लैंगिक संवेदनशीलता एवं समानता	वेद प्रकाश नागर	109-112

International Journal of Social Science & Management Studies (I.J.S.S.M.S.)
Peer Reviewed–Refereed Research Journal, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex - UGC S.N. 5351
ISSN : 2454 - 4655, Vol. - 10, No. – 3, April – 2024, Conference Special Issue 2nd

लैंगिक संवेदनशीलता और समानता

प्रो. बी.एल. जैन
विभागाध्यक्ष, शिक्षा विभाग, जैन विश्व भारती संस्थान, लाडनूं (राजस्थान)

सारांश :– लैंगिक संवेदनशीलता और समानता सामाजिक और नैतिक मूल्यों का भाग है। यह सभी को समान रहने का भाव पैदा करती है। समाज के विकास, प्रगति और उन्नति में इसका अनुपम योगदान है। भेदभाव से किसी भी समाज का, प्रांत का, राष्ट्र का, धर्म का विकास नहीं हुआ है। लैंगिक संवेदनशीलता के प्रति गहनता से सोचना होगा तब जाकर समाज में समानता का भाव अभिव्यक्त किया जा सकता है। लैंगिक संवेदनशीलता और समानता से ही समाज में समानता, मूल्यों का संवर्धन, न्याय की उपस्थापना, सामाजिक और व्यक्तिगत उत्थान, समर्थ समाज का निर्माण किया जा सकता है। लैंगिक समानता और संवेदनशीलता का प्रयोग समाज में समानता, न्याय और समृद्धि को बढ़ाने के लिए किया जाता है। इसका मतलब यह है कि हर व्यक्ति को उनकी क्षमताओं, प्रतिबद्धताओं, और अधिकारों का समान दर्जा मिलना चाहिए, बिना किसी भेदभाव के।

शब्दावली :– संवेदनशीलता, समानता, मूल्य, समरसता, समर्थ, समान अवसर, न्याय, व्यक्तित्व विकास।

प्रस्तावना :– लैंगिक संवेदनशीलता और समानता दो अहम मुद्दे हैं, जो समाज में उचित और समर्थन के प्रति संवेदनशीलता बढ़ाते हैं। लैंगिक समानता सामाजिक और नैतिक मूल्यों का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जो सभी व्यक्तियों को समान अधिकार और अवसर प्रदान करता है। लैंगिक समानता समाज के विकास और प्रगति में एक महत्वपूर्ण योगदान देती है, जो विभिन्न समुदायों और व्यक्तियों को एक समान और समान अवसरों का सामर्थ्य प्रदान करती है। **"लैंगिकता"** शब्द का अर्थ है व्यक्ति की लैंगिक पहचान या संलिप्ति। यह एक व्यक्ति के लिंग जैसे कि पुरुष, महिला या अन्य लैंगिक भेद के साथ जुड़ा है। **"लैंगिकता"** शब्द लैंगिक समानता और समलैंगिकता के बारे में भी उपयोग किया जाता है। और लैंगिक समानता का मतलब होता है, व्यक्तियों को समान अधिकारों और अवसरों की पहुंच प्रदान करना, जबकि समलैंगिकता का मतलब होता है व्यक्तियों के लिंग के आधार पर भेदभाव को समाप्त करना। **"संवेदनशीलता"** का मतलब है किसी अन्य व्यक्ति के भावनाओं, अनुभवों और परिस्थितियों के साथ संवाद करने की क्षमता। एक संवेदनशील व्यक्ति दूसरों की भावनाओं को समझने में सक्षम होता है और उसकी आवश्यकताओं को समझने की कोशिश करता है। यह उसकी सामाजिक और व्यक्तिगत संबंधों को मजबूत करता है और संवाद को सुगम और संवेदनशील बनाता है। **"समानता"** शब्द का अर्थ है सभी को समान और न्यायसंगत दृष्टिकोण से देखना और व्यवहार करना। यह विभिन्न समूहों, समुदायों, जातियों, लैंगिकताओं और समाज के सभी व्यक्तियों के लिए उपयोगी होती है। समानता का अर्थ है सभी के साथ बराबरी का व्यवहार करना, न्यायपूर्णता का आदर करना और किसी भी प्रकार के भेदभाव के खिलाफ लड़ना। समानता का सिद्धांत मानवीयता, सामाजिक न्याय और समाज के विकास के लिए महत्वपूर्ण है। यह समाज में एकता, सहयोग और समरसता को बढ़ावा देता है और हर व्यक्ति को उसके सामाजिक और नैतिक मूल्यों के साथ समान सम्मान प्राप्त करने का अवसर देती है। लैंगिक समानता के प्रति संवेदनशीलता और गहरी समझ समाज में उचित अभिवृद्धि के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह न केवल समाज के साथ सामाजिक न्याय और समानता को बढ़ाता है बल्कि समृद्धि, सामाजिक विकास और व्यक्तिगत उत्थान के लिए भी महत्वपूर्ण है। एक समर्थ और समान समाज का निर्माण केवल विभिन्न लैंगिक और समुदायों के साथ समानता और समर्थन के माध्यम से ही संभव है। लैंगिक संवेदनशीलता और समानता के विषय में अग्रांकित महत्वपूर्ण बिंदु–

1. **लैंगिक समानता सामाजिक और नैतिक मूल्यों का महत्वपूर्ण हिस्सा है** – यह समाज में न्याय, समानता और समरसता के मूल्यों को बढ़ावा देता है। लैंगिक समानता सामाजिक मूल्यों के साथ ही व्यक्तिगत और पारिवारिक मूल्यों को भी समाहित करती है।
2. **लैंगिक समानता से समाज में समरसता का संवर्धन** – समाज में लैंगिक समानता के माध्यम से हर व्यक्ति को अपनी क्षमताओं के आधार पर मौके और समान अवसर मिलते हैं। इससे समाज में समरसता बढ़ती है और समृद्धि के लिए एक महत्वपूर्ण योगदान बनता है।
3. **लैंगिक समानता से सामाजिक मूल्यों में समरसता और समानता को बढ़ावा** – लैंगिक समानता से सामाजिक मूल्यों में समरसता और

समानता को बढ़ावा मिलता है, क्योंकि यह व्यक्तियों को समान अधिकार और अवसर प्रदान करता है। जब लोग लैंगिक समानता के प्रति संवेदनशील होते हैं, तो वे विभिन्न लैंगिक समुदायों के सदस्यों के साथ सहयोग, समरसता और समानता को समर्थन करते हैं। अतः लैंगिक समानता को समर्थन और प्रोत्साहन देना आवश्यक है। लैंगिक समानता से समाज में अधिक उचित माहौल बनता है, जिससे लोग खुले मन से अपने विचार और भावनाओं को व्यक्त कर सकते हैं। इससे व्यक्तियों के बीच संबंधों में समरसता बढ़ती है और विविधता को समृद्धि का माध्यम माना जाता है।

4. **समर्थ समाज का निर्माण** – लैंगिक समानता नैतिक दृष्टिकोण से भी मानविक मूल्यों के साथ आत्म–सम्मान, सम्मान और समरसता को बढ़ाती है। लैंगिक समानता के प्रति समर्थन और संवेदनशीलता नैतिक आदर्शों का पालन करने में मदद करती है और एक न्यायाधीश और समर्थ समाज का निर्माण करता है।
5. **लैंगिक समानता से समाज में समान अवसरों की स्थापना** – लैंगिक समानता से समाज में समान अवसरों की स्थापना होती है, जो विभिन्न लोगों को समान रूप से उत्तेजित करती है। इसके परिणामस्वरूप समाज में उचिता, न्याय और सामाजिक समरसता का माहौल बनता है जो हर किसी के लिए अधिक संवेदनशील और सहयोगी होता है। इससे समाज की स्थिरता और समृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान होता है।
6. **लैंगिक समानता से न्याय का माहौल** – लैंगिक समानता से न्याय का माहौल बढ़ता है, क्योंकि यह सभी व्यक्तियों को समान रूप से विचार और कार्य करने का मौका देती है। जब समाज में लैंगिक समानता की स्थापना होती है, तो वहाँ हर व्यक्ति को उसकी योग्यता और प्रतिभा के आधार पर मौका मिलता है बिना किसी भेदभाव या भ्रांति के। यह न्याय का माहौल सृजित करता है, जिससे लोग स्वतंत्रता, उत्साह और सहयोग में रहकर अपनी क्षमताओं को विकसित कर सकते हैं। समाज में लैंगिक समानता के माध्यम से लोगों को न्याय की भावना प्राप्त होती है और उन्हें समान अवसरों की पहुंच मिलती है, जो उनके व्यक्तित्व के विकास में महत्वपूर्ण होती हैं। इस तरह, लैंगिक समानता से समाज में एक न्यायपूर्ण माहौल बनता है जो विविधता, समरसता और समानता को प्रोत्साहित करता है। यह समाज को समृद्धि और सम्मान के साथ एकजुट करता है और न्याय के मानकों को प्रोत्साहित करता है।
7. **लैंगिक समानता व्यक्तित्व के विकास में महत्वपूर्ण** – लैंगिक समानता व्यक्तित्व के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जब लोगों को समाज में लैंगिक समानता का मौका मिलता है, तो वे अपनी व्यक्तित्व विकास की नींव रख सकते हैं। यह समानता न केवल उनके लिए समान अवसर प्रदान करती है, बल्कि उन्हें अपने स्वार्थों, इच्छाओं, और क्षमताओं को स्वतंत्र रूप से व्यक्त करने की सामर्थ्य प्रदान करती है। लैंगिक समानता से लोगों को समाज में समान रूप से महत्वपूर्ण भूमिकाओं में प्रतिष्ठित किया जाता है, जैसे कि शिक्षा, निर्धारित कार्य और नेतृत्व। इसके परिणामस्वरूप लोग स्वतंत्रता के साथ अपने रूचिकर और स्वाभाविक रूप से अपनी पहचान विकसित कर सकते हैं। व्यक्तित्व के विकास में लैंगिक समानता का महत्वपूर्ण योगदान है क्योंकि यह व्यक्ति को उसकी अद्वितीयता को स्वीकार करने और समाज में अपनी स्थिति को स्थापित करने में मदद करता है। इससे समाज में विविधता और समृद्धि की भावना विकसित होती है, जिससे समाज का समृद्धि से उत्थान होता है।

निष्कर्ष :– लैंगिक समानता सामाजिक और नैतिक मूल्यों का महत्वपूर्ण हिस्सा है। मूल्यों का संवर्धन लिंग समानता से बढाया जा सकता है। लैंगिक समानता से समाज में समरसता के भाव विकसित होते है। सामाजिक मूल्यों में समरसता और समानता को बढ़ावा, समर्थ समाज का निर्माण, समाज में समान अवसरों की स्थापना, व्यक्तित्व के विकास में महत्वपूर्ण योगदान, लैंगिक समानता से न्याय का माहौल बढ़ता है। इससे समाज में विविधता और समृद्धि की भावना विकसित होती है। जिससे समाज समृद्धि से उत्थान को अग्रसरित होता है। लैंगिक समानता और संवेदनशीलता के माध्यम से समाज में सामाजिक, आर्थिक, और सांस्कृतिक रूप से समानता को प्रोत्साहित किया जा सकता है, जिससे एक उन्नत, संवेदनशील, और समृद्ध समाज का निर्माण हो सकता है। लैंगिक संवेदनशीलता और समानता दो अहम मुद्दे हैं जो समाज में समानिता और न्याय की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये विषय लैंगिक समानता और पारितंत्रिक व्यक्तित्व के आधार पर हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. जॉर्ज फर्नांडीज का लेख "नैतिक अधोपतन के पचास वर्ष, जनसत्ता दिल्ली, 13 अगस्त, 1997
2. नेगी, सुरेंद्र सिंह,(2000) नैतिक मूल्यों की प्रासंगिकता, आदित्य पब्लिर्स (मध्य प्रदेश)
3. लोढ़ा, महावीर मल (2007 द्वितीय संशोधित संस्करण) नैतिक शिक्षाः विविध आयाम, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
4. समणी ऋजु प्रज्ञा, नवीन संस्करण (2011) व्यक्तित्त्व विकास और योग, जैन विश्व भारती विश्वविद्यालय, लाडनूं–341306
5. कोठारी, गुलाब (2016) मानसः संस्कृति और सभ्यता, पत्रिका प्रकाशन, जयपुर।

Ajasra, ISSN: 2278-3741
UGC CARE Group 1 (Peer Reviewed Refereed Journal)
www.ajasra.in

CERTIFICATE OF PUBLICATION

This is to certify that the article entitled

पं. मदन मोहन मालवीय के शैक्षिक विचारों की समसामयिक प्रासंगिकता का अध्ययन

Authored By

प्रो. बी.एल. जैन
शिक्षा विभागाध्यक्ष
जैन विश्वभारती संस्थान
(मान्य विश्वविद्यालय), लाडनूँ

Published in

Ajasra,ISSN:2278-3741
Volume 13 Issue 4 April 2024 with Impact Factor 7.448

Gayathri

Editor in Chief

Scanned with OKEN Scanner

Ajasra
UGC CARE GROUP 1
www.ajasra.in
ISSN: 2278-3741
(Peer Reviewed Refereed UGC CARE Group 1 International Journal)

पं. मदन मोहन मालवीय के शैक्षिक विचारों की समसामयिक प्रासंगिकता का अध्ययन

(A Study of Contemporary Relevance of Educational Thoughts of Pt. Madan Mohan Malviya)

प्रो. बी.एल. जैन
शिक्षा विभागाध्यक्ष
जैन विश्वभारती संस्थान
(मान्य विश्वविद्यालय), लाडनूँ

ऊषा शर्मा
शोधार्थी – शिक्षाविभाग
जैन विश्वभारती संस्थान
(मान्य विश्वविद्यालय), लाडनूँ

सार संक्षेप (Abstract) –किसी भी राष्ट्र एवं समाज की प्रगति एवं विकास शिक्षा पर निर्भर करता है। वर्तमान में शिक्षा कैसी है तथा वैश्विक परिप्रेक्ष्य में शिक्षा कैसी होनी चाहिए इन सन्दर्भों में महापुरुष, विद्वान, समाज सुधारक एवं राजनीतिज्ञ अपनी संस्कृति के अनुरूप शिक्षा संरचना का मार्गदर्शन करते हैं। प्राचीन काल से ही गुरु, ऋषि, मुनि कालान्तर में वाल्मीकि, व्यास, चाणक्य तथा आधुनिक काल में दयानन्द, अरविन्द, टैगोर, गाँधी, ज्योतिबा फुले, मदन मोहन मालवीय, बाबा साहब अम्बेडकर, डॉ. जाकिर हुसैन आदि के शैक्षिक विचारों ने भारतीय शिक्षा को प्रभावित किया है। इनकी शैक्षिक विचारधाराओं पर शिक्षण संस्थानों की स्थापना हुई है। इन शैक्षिक चिन्तकों में मालवीय जी का नाम विशेष उल्लेखनीय है। उन्होंने अपने शैक्षिक विचारों के आधार पर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय जसे विश्वप्रसिद्ध विश्वविद्यालय की बनारस में स्थापना की। उनके शैक्षिक विचारों की वर्तमान में व भावी सन्दर्भ में प्रासंगिकता जानने के लिए प्रस्तुत अध्ययन सम्पन्न हुआ है। उच्च माध्यमिक स्तरीय शिक्षकों एवं विद्यार्थियों की राय में वर्तमान भारत मे मालवीय जी के शैक्षिक विचार अत्यन्त प्रासंगिक हैं।

प्रमुख शब्द –शैक्षिक विचार, समसामयिक, प्रासंगिकता, आयोग एवं नीतियाँ, शैक्षिक घटक, मानव निर्माण, व्यक्तित्व, सुसंस्कृत, भूमण्डलीकरण एवं उपकरण।

Scanned with OKEN Scanner

प्रस्तावना –शिक्षा और धर्म का आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध है। शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य को सुसंस्कृत बनाना है, जबकि धर्म जीवन में 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' को समाहित करके मनुष्य को देवत्व की ओर ले जाता है। जिससे मनुष्य में उन्नत विचारा, उद्दात्त भावों एवं श्रेष्ठ मानवीय रूचियों का विकास होता है। प्राचीन भारतीय विचारधारा के अन्तर्गत यह माना जाता रहा है कि जब किसी भी समाज व देश की सभ्यता एवं संस्कृति का पतन होने लगता है, तब ईश्वर महापुरुषों के रूप में जन्म लेकर धर्म और मानवता की रक्षा करता है। प्राचीनकला से ही भारत भूमि में ऐसे महापुरुषों का जन्म होता रहा है, जिन्होंने इसकी सांस्कृतिक निधि में अपना योगदान देकर मानवता की रक्षा की है। ऐसे महापुरुष अपने लिए नहीं जीते, बल्कि वे अपने देश और समाज के लिए अपना बलिदान कर देते हैं। इन महापुरुषों की श्रृंखला में पं. मदन मोहन मालवीय प्रमुख है, जिन्होंने समाज, धर्म, देश व विश्व के लिए महान कार्य करके समाज को सुधारने तथा भारतीय शिक्षा के स्वरूप की संरचना में महत्वूपर्ण योगदान किया।

पं. मदन मोहन मालवीय न केवल राष्ट्रभक्त थे, बल्कि वे महान समाज सुधारक एवं शिक्षाशास्त्री थे। शिक्षा के रूप में उनके द्वारा स्थापित काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस प्रत्यक्ष उदाहरण है। उनके शैक्षिक विचार आज भी प्रासंगिक प्रतीत होते हैं। इसी विषय को शोधकर्त्री ने अपने शोध का आधार बनाया है।

समस्या कथन – पं. मदन मोहन मालवीय के शैक्षिक विचारों की समसामयिक प्रासंगिकता : एक अध्ययन।

समस्या में प्रयुक्त शब्दों का परिभाषीकरण–समस्या में प्रयुक्त शब्दों के मूल्य और उसकी व्यावहारिकता को स्पष्ट करता है।

Scanned with OKEN Scanner

उपरोक्त समस्या में मुख्य रूप से तीन घटक हैं–

1. शैक्षिक विचार
2. समसामयिक
3. प्रासंगिता

- शैक्षिक विचारों से तात्पर्य विभिन्न शैक्षिक पक्षों यथा– शिक्षा दर्शन, शिक्षा से अभिप्राय, शिक्षा का उद्देश्य, शिक्षा का कार्य, शिक्षा का आधार, शिक्षक, शिक्षार्थी, विद्यालय एवं उसका वातावरण, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि एवं अनुशासन से है।
- समसामयिकता से अभिप्राय स्वातंत्रोत्तर भारत का आधुनिक काल। प्रमुखतः 2010 के पश्चात् का समय।
- प्रासंगिकता से अभिप्राय समाज द्वारा स्वीकार्यता है।
- तीनों घटकों का सामान्य अर्थ पं. मदन मोहन मालवीय के शिक्षा सम्बन्धी विचारों की 2010 के बाद अर्थात् वर्तमान भारतीय सामाजिक व्यवस्था द्वारा स्वीकार्यता है।

अध्ययन का औचित्य– शिक्षा एक प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से विद्यार्थी के व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाया जाता है तथा शिक्षण एक ऐसा कार्य है जिसका सीधा संबंध अधिगम से होता है।

- शिक्षा को शिक्षार्थी के व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाने के लिए सुव्यवस्थित प्रयास करने पड़ते ह। एतदर्थ समाज शिक्षा के उद्देश्य तथा लक्ष्य निर्धारित करता है।
- वर्तमान में विश्वस्तर पर भूमण्डलीकरण तथा अनेक अन्य कारणों से समस्याएँ बढ़ती जा रही हैं। इन समस्याओं का समाधान शिक्षा से ही सम्भव है। किसी राष्ट्र की प्रगति तथा भविष्य भी शिक्षा पर ही निर्भर करता है। इसके लिए नीतियाँ बनती हैं, आयोग बिठाए जाते है। आंग्लकाल में हर्टाग समिति, हंटर कमीशन तथा मैकाले की शिक्षा नीति ने उस समय की शिक्षा को प्रभावित किया।

Scanned with OKEN Scanner

स्वतंत्रता के बाद भी भारत में शिक्षा सुधार के लिए कई आयोग व नीतियाँ बनाइयी गयीं। इन नीतियों व आयोगों के साथ विद्वान, समाज सुधारक व शिक्षा शास्त्री भी शिक्षा के स्वरूप निर्धारण में महती भूमिका निभाते रहे हैं। अनेक शिक्षाविदों यथा गाँधी, दयानन्द, टैगोर, अरविन्द, ज्योति बा फुले, सर सैयद अहमद खाँ, मालवीय जी तथा डॉ. जाकिर हुसैन के शैक्षिक विचारों पर भारत में शिक्षा संस्थान भी स्थापित हुए है। समसामयिक सन्दर्भ में भारतीय शिक्षा की समीक्षा करें तो ज्ञात होता है कि शिक्षा केवल, जीविकोपार्जन के लिए तैयार करने तथा पुस्तकीय ज्ञान पर आधारित हो गई है। मूल्य विकास, मानव निर्माण तथा आध्यात्मिक गुण विकसित करना गौण सा हो गया है। यद्यपि भारत अन्य देशो की तरह विकास की ओर अग्रसर है, परन्तु वह भी दूसरे देशों की तरह भौतिक व तकनीकी विकास में ही प्रगति कर रहा है। चिरन्तन मूल्य, प्राचीन संस्कृति, आध्यात्मिकता एवं समृद्ध ज्ञान परम्परा भारत के प्राण हैं। भारत के भविष्य की दृष्टि से वर्तमान शिक्षा में इन्हें स्थान दिया जाए या नहीं, स्थान मिले तो कैसे सम्भव है। यह राष्ट्रीय नेतृत्व, शिक्षाविदों तथा महापुरुषों के चिन्तन का विषय है। निःसन्देह शिक्षाविद् व महापुरुष ही शिक्षा के आदर्श स्वरूप का मार्गदर्शन कर सकते है।

हमारे देश में शिक्षा का जो स्तर गिर रहा है, उसका मुख्य कारण शिक्षा का अपने उद्देश्यों से विचलित हो जाना है। इसके लिए शिक्षा की श्रेष्ठ नीतियाँ बनानी होंगी। इसके अलावा महापुरुषों एवं शिक्षाशास्त्रियों की शक्षिक विचारधाराओं को अपनाना होगा।

शिक्षा मनीषियों ने ही समय–समय पर शिक्षा के दुर्गम एवं दुरूह पथ को प्रशस्त करके उसकी रूपरेखा को आसान बनाकर बहुमूल्य धरोहर के रूप में अपने विचारों समाज को से अलंकृत किया है। इन शिक्षा मनीषियों म मालवीय जी का नाम अग्रगण्य है। शिक्षा द्वारा ये एक चरित्रवान, स्वस्थ, आत्मनिर्भर, देशभक्त, भविष्य दृष्टा तथा उत्तम नागरिक का निर्माण करना चाहते थे। क्या समसामयिक सन्दर्भ में भारत के वर्तमान व भविष्य की दृष्टि

Scanned with OKEN Scanner

से उनके शैक्षिक विचार प्रासंगिक हैं, इस पर अध्ययन किए जाने की आवश्यकता प्रतीत होती है।

उद्देश्य –

1. मालवीय जी के शैक्षिक विचारों का अध्ययन करना।
2. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पं. मदन मोहन मालवीय के शक्षिक विचारों की समसामयिक प्रासंगिकता का अध्ययन करना।

संकल्पनात्मक प्राक्कल्पना –पं. मदन मोहन मालवीय के शैक्षिक विचार समसामयिक संदर्भ में प्रासंगिक हैं।

संक्रियात्मक प्राक्कल्पना–

1. उच्च माध्यमिक स्तरीय अध्यापकों की राय में पं. मदन मोहन मालवीय जी के शैक्षिक विचार समसामयिक सन्दर्भ में अत्यन्त प्रासंगिक हैं।
2. उच्च माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों की राय में पं. मदन मोहन मालवीय जी के शैक्षिक विचार समसामयिक सन्दर्भ में अत्यन्त प्रासंगिक है।

समय सीमा को ध्यान में रखकर इन दो प्राक्कल्पनाओं का छात्र–छात्रा, शहरी–ग्रामीण विद्यार्थी, पुरुष–महिला शिक्षक, शहरी–ग्रामीण शिक्षक तथा छात्र–शिक्षक के लिए पाँच उपप्राक्कल्पनाएँ बनाकर प्रतिशत के आधार पर जाँच की गयी है।

परिसीमन –

1. पं. मदन मोहन मालवीय के बहुआयामी व्यक्तित्व एवं योगदान को देखते हुए उनके शैक्षिक विचारों का अध्ययन।
2. पं. मालवीय के शैक्षिक विचारों की शिक्षकों एवं विद्यार्थियों से प्रासंगिकता की जानकारी।

Scanned with OKEN Scanner

अनुसंधान विधि –प्रस्तुत अध्ययन में सर्वेक्षण एवं विश्लेषण विधि का प्रयोग किया गया है।

प्रयुक्त चर

1. स्वतंत्र चर –पं. मदन मोहन मालवीय के शैक्षिक विचार।
2. आश्रित चर –पं. मदन मोहन मालवीय के विचारों की समसामयिक प्रासंगिकता।

न्यादर्श –प्रस्तुत शोध अध्ययन में पं. मदन मोहन मालवीय के सम्बन्ध में प्राप्त सभी पुस्तकों, पत्रिका, आलेखों एवं दस्तावेजों को न्यादर्श के रूप में स्वीकार कर उनके शैक्षिक विचारों की समसामयिक प्रासंगिकता जानने के लिए दो उच्च माध्यमिक स्तरीय विद्यालयों का यादृच्छिक विधि से चयन कर 20 अध्यापकों तथा 30 विद्यार्थियों को न्यादर्श के रूप में लिया गया है।

उपकरण –शोधकर्त्री द्वारा शिक्षा के 8 आयामों अर्थात् मालवीय जी के अनुसार शिक्षा के अर्थ, उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षक, शिक्षार्थी, विद्यालय, स्त्री शिक्षा एवं आत्मनिर्भरता से सम्बन्धित 5–5 प्रश्नों अर्थात् 40 प्रश्नों की एक प्रश्नावली शैक्षिक विचारों की शिक्षकों तथा विद्यार्थियों से समसामयिक प्रासंगिकता जानने के लिए उपकरण के रूप में बनायी गयी।

प्रयुक्त सांख्यिकी – शोधकर्त्री ने शोध अध्ययन के निष्कर्ष निष्पादन एवं व्याख्या हेतु प्रतिशत सांख्यिकी का प्रयोग किया है।

विश्लेषण विधि – निष्कर्ष निष्पादन के लिए विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के न्यादर्श पर उक्त प्रश्नावली का प्रशासन किया गया। प्राप्त उत्तरों के आधार पर प्रतिशत को प्रासंगिकता के रूप में स्वीकार किया गया है। प्राप्त प्रतिशत यदि 80 प्रतिशत से अधिक स्वीकार्यता दर्शाता है तो प्राक्कल्पना को उच्च स्तरीय स्वीकार्य मानते हुए निष्कर्ष की व्याख्या की गयी है।

विश्लेषण एवं निष्कर्ष – शोधकर्त्री द्वारा इस अध्ययन के लिए बनाए गए उपकरण (प्रश्नावली) स प्राप्त आँकड़ों एवं प्रतिशत को सारणी सं. 1 में दर्शाया गया है।

सारणी सं. 1

उच्च माध्यमिक स्तरीय शिक्षक एवं विद्यार्थियों की राय में मालवीय जी के शैक्षिक विचारों की समसामयिक प्रासंगिता सम्बन्धी प्रतिशत सारणी

समूह	क्र. सं.	वर्ग	न्यादर्श	अधिकतम सम्भावित प्राप्तांक	वास्तविक प्राप्तांक	प्रतिशत	परिणाम
शिक्षक	1	पुरुष शिक्षक	10	400	349	87.25	5 प्रतिशत से कम अन्तर के कारण प्राक्कल्पना स्वीकृत
	2	महिला शिक्षक	10	400	342	85.50	
शिक्षक	1	शहरी शिक्षक	10	400	355	88.75	5 प्रतिशत से कम अन्तर के कारण प्राक्कल्पना स्वीकृत
	2	ग्रामीण शिक्षक	10	400	336	84.00	
विद्यार्थी	1	लड़के	15	600	496	82.66	5 प्रतिशत से कम अन्तर के कारण प्राक्कल्पना स्वीकृत
	2	लड़कियाँ	15	600	523	87.16	
विद्यार्थी	1	शहरी विद्यार्थी	15	600	501	83.50	5 प्रतिशत से कम अन्तर के कारण प्राक्कल्पना स्वीकृत
	2	ग्रामीण विद्यार्थी	15	600	518	86.33	
शिक्षक एवं विद्यार्थी	1	शिक्षक	20	800	691	86.38	5 प्रतिशत से कम अन्तर के कारण प्राक्कल्पना स्वीकृत
	2	विद्यार्थी	30	1200	1019	84.92	

उक्त संक्रियात्मक प्राक्कल्पनाओं से सम्बन्धित आंकड़ों एवं प्रतिशत के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि मालवीय जी के शैक्षिक विचारों की वर्तमान शिक्षा में प्रासंगिकता के प्रति उच्च माध्यमिक स्तरीय शिक्षकों एवं विद्यार्थियों की राय का सकारात्मक प्राप्त प्रतिशत 80 प्रतिशत से अधिक प्राप्त हुआ है। अतः हम कह सकते है कि वर्तमान शिक्षा में मालवीय जी के शैक्षिक विचारों की समसामयिक प्रासंगिकता उच्च स्तरीय है।

Scanned with OKEN Scanner

पुरुष एवं महिला शिक्षको का प्रतिशत क्रमशः 87.25 तथा 85.50, शहरी एवं ग्रामीण शिक्षकों का प्रतिशत क्रमशः 88.75 तथा 84.00 प्रतिशत। इसी प्रकार बालक एवं बालिकाओं का प्राप्त प्रतिशत 82.66 तथा 87.16, शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों का प्रतिशत क्रमशः 83.50 तथा 86.33 प्रतिशत तथा उच्च माध्यमिक स्तरीय शिक्षकों तथा विद्यार्थियों के मध्य प्राप्त प्रतिशत क्रमशः 86.38 तथा 84.92 है। इन पाँचों प्राक्कल्पनाओं के समूहों के प्राप्त प्रतिशत का अन्तर 5 प्रतिशत से अधिक नहीं है। अतः प्राप्त आंकड़ों एवं प्रतिशत के आधार पर कहा जा सकता है कि समसामयिक सन्दर्भ में उच्च माध्यमिक स्तरीय विद्यार्थियों एवं शिक्षकों की राय में मालवीय जी के शैक्षिक विचार अत्यन्त प्रासंगिक हैं।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि वर्तमान शिक्षा में मालवीय जी के शैक्षिक विचारों को उच्च वरीयता दी जानी चाहिए।

शैक्षिक फलितार्थ—

प्रश्नावली में शिक्षा के आठ सन्दर्भों पर पाँच—पाँच प्रश्न निर्मित किए गए थे, अतः प्राप्त उच्च स्तरीय सकारात्मक प्रतिशत यह दर्शाता है कि शिक्षा क अर्थ, उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षक, शिक्षार्थी, विद्यालय, स्त्री शिक्षा एवं आत्मनिर्भरता सम्बन्धी मालवीय जी के विचार समसामयिक सन्दर्भ में अत्यन्त प्रासंगिक है। प्रश्नों पर प्राप्त विश्लेषण यह भी दर्शाता ह कि शिक्षा का अर्थ मनुष्य की अन्तर्निहित शक्ति का विकास, शिक्षा का उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास, पाठ्यक्रम में भारतीय संस्कृति तथा आधुनिक विज्ञान विषयों का निर्धारण, शिक्षक तथा बालक को आत्मनिर्भर बनाने को स्थान दिया जाना चाहिए। विश्व मैत्री, स्त्री शिक्षा का विकास, राष्ट्रभक्ति, सुस्वास्थ्य एवं सामाजिक समरसता विकसित करना शिक्षा का लक्ष्य रखा जाना अपेक्षित है।

उपसंहार—प्रस्तुत शोध अध्ययन का प्रमुख निष्कष है कि यदि भारत को श्रेष्ठ, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, आत्मनिर्भर, राष्ट्रभक्त एवं वैज्ञानिक रूप से उन्नत एवं सुदृढ़

Scanned with OKEN Scanner

UGC CARE GROUP 1
ISSN: 2278-3741
www.ajasra.in
(Peer Reviewed Refereed UGC CARE Group 1 International Journal)

बनाना है तो मालवीय जी के शैक्षिक विचारों को आज की शिक्षा में समाहित किया जाना चाहिए। उनके शैक्षिक विचार समसामयिक सन्दर्भ में अत्यन्त प्रासंगिक हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

1. उपाध्याय, रामजी (1965) : प्राचीन साहित्य की सांस्कृतिक भूमिका, वाराणसी, भारत सांस्कृतिक संस्थानम्।
2. गुप्त, एस.पी. (2000) : अनुसंधान सन्दर्शिका, इलाहाबाद, शारदा पुस्तक भवन।
3. प्रज्ञा, बी.एच. यू. जर्नल (2018) : मालवीय शती विशेषांक, वाराणसी, नागरी, प्रचारिणी सभा।
4. पाण्डेय, रामशकल (2008) : विश्व के श्रेष्ठ शिक्षाशास्त्री, आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर।
5. मिश्र, लोकमान्य (2007) : भारतीय शिक्षा शास्त्रिण:, लखनऊ, मृगाक्षो प्रकाशन।
6. वर्मा, बैजनाथ प्रसाद (1972) : विश्व के महान शिक्षा शास्त्री, पटना, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
7. शर्मा, आर.ए. (1985) : शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व, मेरठ, लायल बुकडिपो।
8. स्मारिका, विशेषांक (दिसम्बर, 1985) : महामनामालवीय मिशन, लखनऊ, काशीहिन्द विश्वविद्यालय।

Scanned with OKEN Scanner

THE KUPPUSWAMI SASTRI RESEARCH INSTITUTE

तमसो मा ज्योतिर्गमय

THE JOURNAL OF ORIENTAL RESEARCH MADRAS

UGC CARE LIST NO. 367
ISSN : 0022 - 3301

THE JOURNAL OF ORIENTAL RESEARCH MADRAS

(Founded by Mm. Prof. S. Kuppuswami Sastri)

2024 Vol. XCVII

तमसो मा ज्योतिर्गमय

THE KUPPUSWAMI SASTRI RESEARCH INSTITUTE
MADRAS - 600 004

2024

Price : Rs. 500 (India)

Foreign : $30: £25

Vol. XCVII, No.1
ISSN: 0022-3301 | YEAR 2024

पंडित मदन मोहन मालवीय के शैक्षिक विचार

प्रो. बी. एल. जैन
विभागाध्यक्ष शिक्षाशास्त्र जैन विश्व भारती संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय) लाडनूँ (राज.)
उषा शर्मा
शोध छात्रा, शिक्षा विभाग जैन विश्व भारती संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय) लाडनूँ (राज.)

सारांश– शिक्षा के द्वारा व्यक्ति को उसके पूर्वजों के द्वारा संग्रहीत धरोहर, उनकी सांस्कृतिक एवं सामाजिक विरासत और उनके संचित अनुभवों पर आधारित ऐसा ज्ञान प्रदान किया जाता है, जिससे व्यक्ति को उसके जीवन की समस्याओं के समाधान में सहायता प्राप्त होती है। शिक्षा व्यक्ति को मात्र ज्ञान ही नहीं देती है, बल्कि उसके उज्ज्वल भविष्य के निर्माण में योगदान करती है। आंग्लकाल में शिक्षा में आई गिरावट को दूर करने के लिए जिन महापुरुषों ने काम किया उस शृंखला में पं. महामना मदन मोहन मालवीय का नाम उल्लेखनीय है। भारतीय संस्कृति के पोषक के रूप म मदन मोहन मालवीय ने वर्तमान शिक्षा व्यवस्था की कमियों को दूर करने की दृष्टि से शिक्षा के स्वरूप, शिक्षा के उद्देश्यों, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, शिक्षक, शिक्षार्थी, विद्यालय, अनुशासन, स्त्री शिक्षा, रोजगारपरक शिक्षा एवं मूल्य शिक्षा पर अपने महत्वपूर्ण विचार व्यक्त किए हैं।

प्रमुख शब्दावली – संस्कृति, आत्म–साक्षात्कार, मूल्य शिक्षा, बौद्धिक, व्यावहारिक शिक्षा, शिक्षा स्वरूप, आत्म शुद्धि।

प्रस्तावना – विश्वगुरु के रूप में भारत देश सदैव से शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी रहा है। भारतीय संस्कृति, सभ्यता, विशाल साहित्य और महापुरुषों ने भारतीय शिक्षा के स्वरूप निर्धारण में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। वर्तमान शिक्षा के स्वरूप निर्धारण में अनेक शिक्षाविदों ने शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र में अपना योगदान दिया है। इन्हीं शिक्षाविदों में राष्ट्रनिर्माता के रूप में महामना पं. मदन मोहन मालवीय का नाम विशेष उल्लेखनीय है। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के शिलान्यास समाराह के अवसर पर मालवीय जी ने अपने व्याख्यान में कहा था–

"उत्थातव्यं जागृतव्यं योक्तव्यं भूतिकर्मसु
भविष्यतीत्येवमनः कृत्वा सततमत्यथै।"

अर्थात् मेरा कार्य अवश्य सिद्ध होगा, ऐसा दृढ निश्चय करके मनुष्य को आलस्य छोड़कर कल्याणकारी कामों में जुट जाना चाहिए।

जन्म एवं परिवार – पं. मदन मोहन मालवीय जी का जन्म इलाहाबाद (वर्तमान में प्रयागराज) में 25 दिसम्बर, 1861 को हुआ था। इनके पिता का नाम पण्डित ब्रजनाथ व्यास तथा माता का नाम मूना देवी था। मूलरूप में यह परिवार मालवा क्षेत्र से था, इसलिए इनके परिवार की मल्लई नाम से प्रसिद्धि थी, जो संशोधित होकर मालवीय नाम से जाना गया। मालवीय जी ने अपनी शिक्षा समाप्ति के बाद वकालत प्रारम्भ की। किन्तु अंग्रेजों के शासन से दुःखित भारतीयों की दशा देखकर उनमें दश भक्ति का भाव जाग्रत हुआ। निरक्षरता तथा गरीबी से त्रस्त लोगों को देखकर उनमें शिक्षा विस्तार तथा गुणात्मक शिक्षा का भाव जागा और उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में अद्भुत कार्य किया। उनके शैक्षिक विचार भारतीय बालक को देशभक्त तथा अत्मनिर्भर बनाने पर आधारित हैं।

Vol. XCVII, No.1
ISSN: 0022-3301 | YEAR 2024

शिक्षा का स्वरूप – मालवीय जी 'शिक्षा' और 'विद्या' में अन्तर बताते हुए कहते हैं कि शिक्षा से सीखना समझ लिया जाता है, किन्तु विद्या से जानने का बोध होता है, जो सीखने से भिन्न है। शिक्षा विद्या का माध्यम कही जा सकती है। मालवीय जी विद्यार्थियों को सुसंस्कृत तथा परिष्कृत बनाने हेतु सामाजिक तथा पारिवारिक वातावरण को सबसे महत्वपूर्ण मानते थे। उनके अनुसार व्यष्टि की जगह समष्टि पर महत्व देना चाहिये। मालवीय जी का शिक्षा से तात्पर्य हृदय और मन की सारी शक्तियों का समुचित विकास एवं उसकी पुष्टि है।यहाँ हृदय का आत्मा से और मन का सम्बन्ध बुद्धि, विवेक और मस्तिष्क से लिया गया है।

शिक्षा के लक्ष्य – पं. मदन मोहन मालवीय जी के अनुसार शिक्षा वह है जिससे मनुष्य का सर्वांगीण विकास हो। सर्वांगीण विकास के अन्तर्गत मालवीय जी ने शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक, सांवेगिक विकास को स्थान दिया। महामना के अनुसार शिक्षा वह है जो व्यक्तित्व निर्माण के साथ–साथ अपनी संस्कृति एवं सभ्यता को भी एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करती है।

शिक्षा के उद्देश्य – "यदि देश का अभ्युदय चाहते हो तो सब प्रकार से यत्नकरो कि देश में कोई बालक या बालिका निरक्षर न रहे।"– महामना

मालवीय जी ने शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये हैं–

1. शिक्षा का मुख्य उद्देश्य आत्म साक्षात्कार कराना है।
2. शिक्षा साक्षरता वृद्धि के साथ बालक का सर्वांगीण विकास करे।
3. शिक्षा से प्रत्येक बालक आत्मनिर्भर बने।
4. शिक्षा का उद्देश्य कला, विज्ञान तथा अन्वेषण दृष्टि की वृद्धि करना है।
5. देश में शिल्प, कृषि, वाणिज्य आदि से सम्बन्धित शिक्षालयों का अधिकाधिक विकास किया जाना चाहिये।
6. व्यक्ति का पुरातन व नवीन एवं भारतीय तथा पाश्चात्य विचारों के अनुसार व्यक्तित्व निर्माण करना शिक्षा का उद्देश्य है।
7. शिक्षा का उद्देश्य बालकों में राष्ट्रप्रेम की भावना जाग्रत करना है।

शिक्षा के स्तर – पं. मदन मोहन मालवीय जी ने शिक्षा के स्तरों को तीन प्रकार से विभक्त किया है, जो निम्न हैं–

1. **प्राथमिक शिक्षा स्तर** – मालवीय जी के अनुसार प्राथमिक शिक्षा को अधिक से अधिक व्यावहारिक बनाया जाये। जिसमें सामान्य विषय के रूप में मातृ भाषा, गणित, सामान्य विज्ञान, सामाजिक विषय के साथ–साथ चित्रकला, हस्तकला व औद्योगिक कला को सम्मिलित किया जाये।
2. **माध्यमिक शिक्षा स्तर** – माध्यमिक शिक्षा के अन्तर्गत उन विषयों को लिया जाये, जिनसे बालक अपनी आजीविका कमा सकें। मालवीय जी ने माध्यमिक स्तर पर औद्योगिक व व्यावसायिक विषयों पर अधिक बल दिया है।

3. उच्च शिक्षा स्तर – उच्च शिक्षा के अन्तर्गत मालवीय जी ने शिक्षा के प्राचीन व आधुनिक तथा वैज्ञानिक व नवीन अनुसंधान के विषयों पर चर्चा की। उच्च शिक्षा स्तर पर वर्तमान सभ्यता की अनुकरणीय तथा लाभदायक बातों के साथ भारतीय सभ्यता का उचित सामंजस्य स्थापित किया जाना चाहिए।

शिक्षक–शिक्षार्थी –मालवीय जी के अनुसार विद्यार्थी– 'वह है जो यह भाव चित्त में रखता है कि उसे अपने को इस योग्य बनाना चाहिये, जिससे वह भारत माँ की अच्छी सेवा कर, अपनी विद्या, अपने चरित्र और अपनी देश–भक्ति से अपने देश का गौरव बढ़ा सके।' उनके अनुसार विद्यार्थियों को कर्त्तव्य के रूप में विद्या का अभ्यास करना चाहिए और उसे देश के हित व अनहित की बातों का ज्ञान होना चाहिए।

मालवीय जी के अनुसार शिक्षक एक महान व्यक्तित्व है। बिना शिक्षक के शिक्षार्थी को ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो सकती है। शिक्षक विद्यार्थी का पथ प्रदर्शक, मार्गदर्शक, भाग्यनिर्माता होता है। अतः शिक्षक को अपना जीवन ऐसा बनाना चाहिए जो विद्यार्थियों के लिए अनुकरणीय हो। शिक्षक के प्रति मालवीय जी के विचार ईश्वर सदृश हैं। उनका मानना था–

"गुरुर्ब्रह्मा, गुरुर्विष्णुः, गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरु साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः।"

पाठ्यक्रम – मालवीय जी के अनुसार वर्तमान पाठ्यक्रम न तो छात्रों को भावी जीवन के लिए तैयार कर पाता है और न ही अपनी संस्कृति व सभ्यता की रक्षा करने में सक्षम है। यह तो पूर्ण रूप से पुस्तकों पर आधारित पाठ्यक्रम है जो मात्र रटने पर बल देता है। मालवीय जी के अनुसार पाठ्यक्रम में निम्न विशेषताएँ होनी चाहिए –

1. वेदों की शिक्षा पर आधारित ज्ञान का विकास करने वाला।
2. धर्म व संस्कृति का ज्ञान एवं विकास।
3. प्राचीन व अर्वाचीन ज्ञान का समन्वय।
4. भाषा व साहित्य पर आधारित।
5. विज्ञान व तकनीकी पर आधारित।
6. व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का समायोजन।
7. भविष्योन्मुखी

शिक्षण विधि – मालवीय जी भारतीय संस्कृति व सभ्यता के अनुरूप प्राचीन शिक्षा के समर्थक थे। इसलिए उन्होंने शिक्षण विधियों के अन्तर्गत पारम्परिक शिक्षण विधि के रूप में चिन्तन, मनन एवं स्वाध्याय को रखा। तथापि उन्होंने शिक्षण विधियों में वैज्ञानिक, औद्योगिक और मानविकी पक्षों पर अधिक बल देते हुए आधुनिक विधियों के समावेश की बात कही। इन्होंने शिक्षा में मानव प्रकृति के आधार पर निम्न विधियों पर बल दिया –

1. वाचन एवं पठन

Scanned with OKEN Scanner

Vol. XCVII, No.1
ISSN: 0022-3301 | YEAR 2024

2. निदिध्यासन विधि
3. स्वाध्याय विधि
4. उपदेश एवं भाषण विधि
5. प्रयोगात्मक विधि
6. अनुवर्ग विधि (ट्यूटोरियल विधि)
7. करके सीखना।
8. निरीक्षण विधि।

विद्यालय – मालवीय जी ने अति सुन्दर शब्दों में विद्यालय को स्पष्ट किया है– "इमारतें विद्यालय नहीं हैं।" अर्थात् जहाँ शिक्षक, विद्यार्थी और ज्ञान हो वह विद्यालय है। विद्यालय एक प्राकृतिक और सामाजिक वातावरण के रूप में है। मालवीय जी के अनुसार विद्यालय व स्थान है जहाँ पूर्व निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु शिक्षा के विविध क्रियाकलाप आयोजित किये जाते है। विद्यालय का वातावरण सर्वधर्म समभाव पर आधारित हो, जहाँ किसी प्रकार का भेदभाव न हो।

स्त्री शिक्षा – पं. मदन मोहन मालवीय जी भारतीय सनातन परम्परा के उपासक माने जाते हैं। भारतीय परम्परा में स्त्री को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। हम कह सकते हैं कि मालवीय जी के लिए नारी पूज्य थी। मालवीय जी की दृष्टि में स्त्री की शिक्षा ही समाज और परिवार की शिक्षा है। उनका मानना था कि भारतीय समाज में वर्तमान समय में व्याप्त बुराइयों एवं अंध – विश्वासों को स्त्री शिक्षा से ही दूर किया जा सकता हे। स्त्री–शिक्षा को बढ़ावा देने हेतु मालवीय जी ने निम्न सुझाव दिये –

1. वर्तमान समय में स्त्री – शिक्षा पर अधिक बल दिया जाए।
2. बालिकाओं के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान किया जाए।
3. स्त्री–शिक्षा से सम्बन्धित संविधान में व्याप्त प्रावधानों व कानूनों को दृढ़ता से लागू किया जाए।

व्यावसायिक शिक्षा – मालवीय जी ने देश में निर्धनता एवं बेरोजगारी सम्बन्धित समस्याओं को देखा, उन्होंने इसका एक ही उपाय बताया–शिक्षा के हर स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए। इसलिए मालवीय जी ने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रारम्भ से ही कृषि, विज्ञान, गणित, इंजीनियरिंग और तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था की थी। मालवीय जी ने सन् 1909 में कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन में भारत में औद्योगिक, यांत्रिक, शिल्प शास्त्र से सम्बन्धित शिक्षा के विकास पर अधिक बल दिया। मालवीय जी का मानना था कि विद्यार्थियों को ऐसी शिक्षा दी जाये जिससे वे किसी न किसी उपाय से जीविकोपार्जन कर सकें। मालवीय जी के शिक्षा संबंधी विचार– समग्र दृष्टि में :

"सर्वेभवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भागभवेत।।"

उक्त श्लोक में मालवीय जी की हृदय भावना प्रकट होती है। वे प्राणीमात्र को सुखी एवं स्वस्थ देखना चाहते थे। सबका कल्याण चाहते थे। नूतन और पुरातन ज्ञान के समन्वय की आयोजना महामना के व्यक्तित्व की

Scanned with OKEN Scanner

Vol. XCVII, No.1
ISSN: 0022-3301 | YEAR 2024

विशेषता है। उनका मानना था कि मानव कल्याण ही सर्वोपरि है। शिक्षा से व्यक्ति को ज्ञान के साथ व्यावहारिकता, चरित्र निर्माण तथा आत्मनिर्भरता प्राप्त होनी चाहिए। ये ही शिक्षा के उद्देश्य और कार्य हैं। पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिये जिसमें भारतीय संस्कृति का समावेश, मूल्य शिक्षा तथा ज्ञान का विकास हो। शिक्षण विधियों में मालवीय जी ने प्राचीन विधियों के साथ–साथ आधुनिक शिक्षण विधियों के प्रयोग पर बल दिया। मालवीय जी के अनुसार शिक्षक का व्यक्तित्व ऐसा होना चाहिए कि विद्यार्थी उसके समस्त गुणों को सीख सकें। मालवीय जी के अनुसार विद्यालय वह स्थान है जहाँ समाज और संस्कृति का संरक्षण व विकास होता है। मालवीय जी ने स्त्री शिक्षा के साथ–साथ व्यावसायिक शिक्षा पर भी बल दिया। साथ ही शिक्षा में गरीब व पिछड़े वर्गों की शिक्षा और राष्ट्रीयता की शिक्षा को प्रमुख स्थान दिया। शिक्षा के क्षेत्र में उनका योगदान अतुलनीय है, इसीलिए उन्हें भारतीय शिक्षा का अग्रदूत कहा जाता है।

उपसंहार – यदि देखा जाए तो हम कह सकते हैं कि पं. मदन मोहन मालवीय जी के शैक्षिक विचार वर्तमान शिक्षा हेतु वरदान सिद्ध हो रहे हैं। क्योंकि वर्तमान समय की शिक्षा में जहाँ नवीन स्रोतों को लिया जा रहा है, वहीं प्राचीन संस्कृति, वेद, पुराण एवं ज्ञान को सम्मिलित किया जा रहा है। आज की शिक्षा में प्राचीन शिक्षा के सभी उद्देश्यों को महत्व दिया जा रहा है। पं. मदन मोहन मालवीय जी ने भाषा की दृष्टि से जहाँ हिन्दी को सर्वोपरि रखा, वहीं राष्ट्र निर्माण की भी बात रखी। वर्तमान शिक्षा में इन सन्दर्भों को सम्मिलित किया जा रहा है। मालवीय जी के शिक्षा विचार आज व भविष्य की दृष्टि से अत्यंत प्रासंगिक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

हिन्दी सन्दर्भ –

1. अग्रवाल, वासुदेव शरणः महामना मालवीय, लेख और भाषण (धार्मिक–1) बनारस, प्रकाशन–काशी हिन्दू विश्वविद्यालय।
2. तिवारी, उमेश दत्त (1988): महामना पं. मदनमोहन मालवीय जी जीवनी, वाराणसी, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय।
3. पचौरी, गिरीश (2010): भारतीय शिक्षा दर्शन, मेरठ, आर. लाल बुक डिपो।
4. पाण्डेय रामशकल (2008): विश्व के श्रेष्ठ शिक्षा शास्त्री, आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर।
5. पाठडेय रामशकलः शिक्षा का दार्शनिक एवं समाज शास्त्रीय आधार, आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर।
6. लाल, मुकुट बिहारी (1978): महामना मदन मोहन मालवीयः जीवन और नेतृत्व, वाराणसी, मालवीय अध्ययन संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय।
7. लाल एवं तोमर (2008): विश्व के श्रेष्ठ शैक्षिक चिन्तक, मेरठ, आर. लाल बुक डिपो।
8. वर्मा, वैद्यनाथ प्रसाद (1972): विश्व के महान शिक्षाशास्त्री, पटना, बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी।

English Reference –

1. Singh, Ram Pratap and Shukla, R.P. (2013): 150 years of Mahamana's : Service to Humanity, Delhi, Bharti Publications.

Scanned with OKEN Scanner

Vol. XCVII, No.1
ISSN: 0022-3301 | YEAR 2024

पत्रिकाएँ –

1. प्रज्ञा (बी.एच.यू., जर्नल), 1976–77, महामना हीरक जयंती अंक।
2. शिविरा पत्रिका : दिसम्बर, 2009, बीकानेर, शि.वि.रा.

Website –

1. http://www.wikipedia.org/

Scanned with OKEN Scanner

THE JOURNAL OF ORIENTAL RESEARCH MADRAS Vol. XCVI, No.2
ISSN: 0022-3301 | YEAR 2023

PICTURE STYLE AND THEORY REPRESENTATION IN TIME RELATIVITY

Professor Banwari Lal Jain
Dr. Amita Jain
Assistant Professor, Department of Education,
Jain Vishva Bharati Institute, Ladnun, (Raj.) INDIA

Abstract-Colours have been important in Indian painting from prehistoric times to modern times. In painting, the feelings of the artist are expressed through paintings. Art is born in the mind of the painter. It develops from the unconscious unknown depths of the mind. Painting has been an important medium in converting these feelings into concrete form. Colours have their own distinct importance. Along with this, colours have their own expressions and language. They have a deep connection with human emotions. In Indian aesthetic philosophy, the colours depicted in the pictures have different meanings. Like white colour is a symbol of peace and goodness, red colour is a symbol of courage and bravery, black colour is a symbol of evil and mental tendencies. The genre of pictures plays a special role in awakening and developing this feeling of aliveness about the past among the students. Pictures provoke thought among students. Pictures encourage students to think on their own instead of giving ready-made answers so that students can come to their own conclusions and meaningful learning occurs.

***Keywords* –**Cooperation, Harmony, Balance, Effectiveness, Flow,Picture

Introduction -Symbolically, colour balance means the well-organized combination of colours in a picture, that is, colour is a big topic in painting and the combination of colours in a picture is very important. Colours have been important in Indian painting from prehistoric times to modern times. In painting, the feelings of the artist are expressed through paintings. Art is born in the mind of the painter. It develops from the unconscious unknown depths of the mind.Painting has been an important medium in converting these feelings into concrete form. Colours have their own distinct importance. Along with this, colours have their own expressions and language. They have a deep connection with human emotions. In Indian aesthetic philosophy, the colours depicted in the pictures have different meanings.Like white colour is a symbol of peace and goodness, red colour is a symbol of courage and bravery, black colour is a symbol of evil and mental tendencies. Combination is the melodious arrangement of any two or more elements. From the point of view of art, composition means displaying artistic ideas systematically. The combination can also be called cherishing in simple words. This cherishing may be a sweet plan of the elements related to the medium in which we work. When we talk about painting. So, in this the six elements of painting are cherished, those six elements are: - 1. Line 2. Form 3. Colour 4. Tone 5. Vessel. 6. Interval. In picture composition, we employ lines, forms, colours etc. in such a way that the picture looks balanced and attractive.**For example**, when we decorate the room in our new house with various items, we place chairs, tables, beds etc. at different places in such a way that the room looks balanced and attractive. Care is also taken to ensure that the colour of the walls of the room, the colour of the curtains, sofa cushions etc. match with each other. We do similar planning in our pictures by using different shapes and colours related to the subject. While making every picture, there is a difference in the thinking and making of every artist, but some rules apply to everyone by which the picture can be made attractive. We know these rules as principles of combination. By using these principles, the picture appears balanced and attractive. The rules of combination have not been made arbitrarily but we find the same rules in nature. A good painting has unity in diversity.By following the following six

principles the picture becomes attractive and balanced. This is called the principle of combination.

1.Cooperation-Collaboration means unity, equality, and a relationship among the various elements of the picture which binds the entire composition into a single thread. Due to this, there is no scattering of different shapes, colours etc. in the picture. The various shapes and characters in the picture should be combined in such a way that the picture appears to be one, that is, the purpose of unity is to prevent the picture from breaking into pieces and to avoid giving the impression of multiple pictures in one picture. A group of several pictures does not seem like a good combination.Looking at the picture, it should not appear that the various shapes and other elements of the picture are all different from each other. It is like in clothes we buy paint with the shirt and notwith the dhoti. To cooperate in drawing, similarity in various shapes and colours etc. often leads to monotony. To create attraction in a picture, some contradiction should also be created in it.For this, some shapes of different types can be depicted along with shapes of similar size. And similar usage can also be done in varna, taan, pot etc. But care should be taken that this contradiction does not affect the subject of the picture. Contradiction should be done in moderation just for the sake of attraction.

2.Harmony- Many shapes are made in any picture. When these shapes have one or more types of similarity, their combination creates harmony. Harmony means that all the elements of the picture, like form, colour, tone, vessel etc. should match each other. It should be kept in mind that all the elements like lines, shapes, colours etc. are related to the subject of the picture. The urban environment in the village scene disturbs the harmony of the picture. Harmony is the opposite of contradiction. But this does not mean that contradiction should not be used at all in the picture. Harmony awakens the sense of beauty in a picture. There are some main figures and some auxiliary figures in the picture. There must be harmony in the main shapes. For attraction, contrast should be used in supporting figures. Similarly, harmony between line, colour and vessel also brings beauty to the picture. Adjacent colour scheme can be used to harmonize colours.Use of cool colours along with cool colours brings a sense of harmony to the picture.

3. Balance- According to balance, all the elements of the illustration should be arranged in such a way that their weight is properly distributed over the entire picture plane. Here weight means the ability to catch the viewer's eye in attraction. This attraction depends on the use of various elements of illustration. This load can be balanced by other loads. To understand this, we can take the example of scales. Both the scales of the scale move up and down due to unequal weight. To bring them equal, equal weight must be placed on both the pans. Wemust apply the same principle in painting also. Uneven weights are placed at unequal distances from the centre of the figure. The larger figure in the picture has more weight. Larger sizes are combined near the centre. And smaller sizes are combined away from the centre. Warm colours have more weight and cool colours have less weight. The use of a vessel in its shape increases its weight. The influence of larger areas of colour should be calm while smaller areas should have powerful contrasts. For this, cool colours should be used in large areas and use of warm colours in small areas brings balance.

4. Effectiveness-Effectiveness means that our attention should first fall on the most important element of the picture and then move to other elements in the order of importance. The picture should have the power to catch the viewer's eye. There should be a centre of attraction in the picture. Whatever element takes the viewer's gaze towards this centre is good from the point of view of composition and whatever element takes

the viewer's gaze away from this centre is not good. The centre of attraction in the human figure is the human face. To create impact, while painting the main figures, care should be taken that they do not get buried or hidden in the group of figures. Just as a person standing in a crowd is not visible even though he is in front of him, in the same way the main figure in a group of figures is not visible. Therefore, by keeping empty space behind the main figure, it can be made bigger than other figures and given importance with attractive colour. The contrast in shadow and light also gives effect to the form. The eye is attracted to a decorated place or form. But it should be kept in mind that excessive ornamentation distracts the viewer from the subject.

5. Flow-Flow means the free, uninterrupted, and sweet movement of the viewer's vision. In a good picture, the viewer's eyes can roam over the entire picture without any confusion. While viewing any picture, the viewer's gaze enters the picture from the lower left part and then rotates over the entire picture. A good painter has this quality that he controls the viewer's vision and moves it along the desired path and brings it to the main place of the picture. This flow together produces the elements of depiction like line, form, character, tone etc. We feel more joy in the wavy flow. For example, if we are traveling on a highway, within a short time we start feeling monotonous in the journey and if we are walking on a village path, we remain excited and joyful every moment. We experience the same happiness in our mother's lap or cradle.There is a sense of monotony in the straight and simple movement. Wavy lines give the impression of movement more than angular lines. Wavy lines are the basis of ancient Indian arts. Wavy flowing lines have been used in various wall paintings made in Ajanta caves, Rajasthani painting style, Mughal painting style etc. Apart from this, flow in the picture can also be experienced by repeating the shapes i.e., drawing one type of shape again and again at different places in the picture.

6.Pramana- Pramana means ratio. While making any picture, a question comes in our mind that how big or small should we make the shape in the picture, this measurement of length and width is called ratio. If we must create a scene of a village, then determining how big the mountains should be, what should be the size of the treesetc. is called proof. The proportions of all the shapes are related to each other; human figures are made in the same proportion as the mountains and trees.Through Pramana, we determine the differences between animals and birds, difference in the height of men and women, differences in the pictures of humans and gods and goddesses. It is necessary to have knowledge of Pramana even while making the human body. There is also a proportional relationship between different parts of the human body. If we place our palm on our mouth on the line joining the hair and forehead from the chin, then we will know that the proof of our mouth and palm is the same, it should be counted as one unit. They speak.Some human measurements have been mentioned in ancient Indian texts which are called 'Uttam Navtal'.

Painting is an important part of Kama Sutra. Indian painting has had an important place in every period (prehistoric, protohistoric, historical, medieval, literary). How many types and parts of Indian painting are there and where is their purpose and in what form, the details are as follows –

1. **Prehistoric period: -** The word prehistoric is made up of prehistory. Which literally means – the era before history. Thousands of years ago, humans used to live in caves and satisfy their hunger by hunting wild animals. Early humans displayed their art and skills by carving pictures on the walls of these caves. The pictures written on these cave walls introduced us to the reality of the then life of our ancestors.Many pictographic remains of this period are found all over the world. The contemporary paintings obtained in India along with the entire world hold their important place. The first evidence of prehistoric

ISSN: 0022-3301 | YEAR 2023

times was found in France and Italy in 1887 AD. The credit for bringing prehistoric painting to light in India goes to institutions like Carlyle, Corkburn and Panchanan Mishra and the Asiatic Society. Who revealed through cave paintings of hills of Kaimur, Mirzapur (Uttar Pradesh).

2. **Protohistoric period: -** The next phase of the tradition of Indian painting is the protohistoric period. During this period, a highly developed civilization existed in the lowlands of the Indus Valley. Various remains of this civilization were initially found from Harappa and Mohenjo-Daro. Till now the remains of this civilization have been found from many places like Rangpur, Lothal, Atranjikheda and Alamgirpur. In this civilization, along with other materials, innumerable pieces of pottery have been found on which paintings in black or white colours have been found. These utensils were used for worship and rituals as well as for daily use. These utensils were also buried with the dead during that period. This clearly shows how art-loving the people of that time were. Art was his companion in life and death.
3. **Historical period: -** Painting of Indian historical period is famous all over the world today. The reason for this fame is the paintings found in the caves of Ajanta.2nd century BC We have started finding remains of Indian painting in the caves of Ajanta, where the gradual development of the tradition continued till the seventh century AD. Apart from Ajanta, evidence of Indian historical painting has also been found in places like Bagh, Badami, Aurangabad, Sittannavasal etc.
4. **Medieval period: -** Since the medieval period, painting in India was limited to miniature paintings. Various subjects and stories started being depicted on the pages of books. Later, many styles of painting in the form of miniature painting became popular, among which Pahari style, Rajasthani style and Mughal style are especially notable. In the last 100-150 years, since we got information about the paintings of Ajanta, there has been a redevelopment of Indian painting. Many painters of Bengal have tried to revive their old tradition. Among these, the names of Rabindranath Tagore, Asitkumar Haldar, Yamini Rai, Rajarvi Verma etc. are notable. Thus, the tradition of Indian painting has remained intact from ancient times till today.
5. **Literary evidence: -** According to Raikrishna Das, a great scholar of Indian painting, there is a discussion of the picture of Agni made on leather in Rigveda (1/145). Buddhist period i.e., sixth century B.C. There are clear mentions of drawings and paintings. Painting was very popular in that era. This is reflected in the order given to Buddhist monks in which they were asked to abstain from painting. Pictures are mentioned in Vinay Pitaka and Theri-Theri Gatha. In Mahaummag Jatak, various instructions for painting and painting are available. There is a description of the ruined Ayodhya Puri in Kalidasa's Raghuvansham, whose paintings on the walls had beautiful depictions of elephants playing in the Padam Sarovar. The materials for painting are mentioned in Kama Sutra.

Indian painting is very rich, it has antiquity, diversity and based on vastness, there are many regional and local specialties. The following four forms of Indian painting are visible-

- Murals
- Movie
- Picture panel
- Miniature picture

ISSN: 0022-3301 | YEAR 2023

Man's thirst to create art, which started with cave paintings, gave birth to visual art. Visual art means visual art which is related to the eyes.

Painting, sculpture, and architecture are referred to under this. Painting is considered the best among these three arts. The following formula from Chitrasutra of Vishnudharmottara Purana is proof of this -

''Kalanam Pravaram Chitram Dharmarthkaamokshard
Mangalya Pratham Dotad Grihe Satra Pratishthatam”

That is, painting is the highest among the arts. In which religion, wealth, work, and salvation are attained. Therefore, the presence of Mars is always considered to be present in the house where paintings are highly respected.

Students are required to be aware of the pictorial material in historical sources. In the modern environment, the child is forgetting his practical and social conduct. The child should develop interest in the subject of history and understanding it through pictures of ancient history provides easy and direct knowledge. In the subject of painting, students develop their abilities by painting various activities, objects and forms of inanimate consciousness related to life based on visual knowledge. Indian painting, like Indian culture, shows a special kind of unity from ancient times till today. During the ancient and medieval period, Indian painting was mainly inspired by religious sentiments, but by the modern period, it depicted secular life to a great extent. Even today, Indian painting is taking up the subjects of folk life and making them concrete.Painting contributes organically to the physical, mental, moral, and emotional development of a child. Its value can be experienced at various levels in school education.

In painting, the senses of the students work, hence it is helpful in the development of consciousness. By giving pictures in the textbook, it becomes easier to understand the various abstract concepts contained in the text.

Because with the help of pictures the conceptual power of students increases. He can conceptualize well and understand the idea and concept.

Amaravati sculpture is an ancient sculpture style. Which occurred in south-eastern India around the second century BC. to the 3rd century BC. It flourished during the reign of Satavahana dynasty. It is known for its magnificent relief wall paintings.

Like rivers, valleys, civilizations and developing to developed cities have been depicted through various maps. At the same time, through palm leaves and manuscripts and inscriptions of archaeological importance, pictures of various policies developed with human civilization can be seen. By looking at the pictures of stone and iron tools and weapons developed in the Stone Age and Iron Age, one can get an idea of the skilful methods of humans.Along with this, the coins and currencies of Shaka, Hun, Kushan, Satvahana, Hind, Yavana, Maurya, Gupta and Mughal periods, which were used for economic activities along with the developed civilization in different periods, are very useful in understanding the economy of the then society. To understand the architecture, architecture, and building construction art developed by human civilization, the social standard of living can be ascertained by looking at the urban settlements of the civilized society of Harappa and Mohenjo-Daro period.Later, with the development of human civilization, one cannot help but be surprised to see the temples and monasteries built by many dynasties, and the building art developed by the Mughals and the British. Seeing each level of the learning situation in concrete form for the students through pictures. The child can remember them in his mind for a longer time, and by knowing their relation with other things, he can get information about their real importance.To compose the history of any country, one must take the help of historical sources related to that country through pictorial material. Materials obtained from excavation of these sources, inscriptions, samples of ancient ruins, architecture and paintings, poetry, and fame, genealogy, permits, documents, donation letters issued by rulers, bravery stories of freedom fighters shown through pictures, temples, mosques, pilgrimage centers etc.

are considered very important.

Major sources of Indian history

We can divide all the sources of Indian history into three parts: -

1. Archaeological sources
2. Literary sources
3. Accounts of foreign travelers and writers

1 Archaeological source – Special importance has been given to archaeological sources for the study of ancient India. These are considered more authentic than literary sources. The major archaeological sources providing information about ancient Indian history have been classified as follows-

(1.) Records
(2.) Monuments and ruins
(3.) Currencies, coins, and seals
(4.) Artefacts (buildings, temples, stupas, chaitya Bihar)
(5.) Earthen pots

1 Records: - Records are considered important and authentic sources of ancient Indian history because the records are contemporary. According to Dr. Ramesh Chandra Majumdar, "The records being contemporary are reliable evidence and they have helped us the most."

From time to time, ancient Indian rulers, feudal lords, and rich people got many inscriptions engraved to commemorate their victory, fame, charity, good deeds or celebrations. Depending on the object on which the inscription is engraved, there are several categories: -

(1.) Inscription, (2.) Pillar inscription (3.) Copper plate inscription
(4.) Cave inscription (5.) Sculpture

1. Inscriptions: - Inscriptions provide important information about the political, social, economic, religious, and cultural conditions of contemporary India. For example, if we find Hathigumpha inscription of Kalinga king Kharavela, Prayag-Prasashti inscription of Samudragupta, Girnar inscription of Rudra Daman etc. then it confirms our information about the above-mentioned persons.

2. Pillar inscription: - Where natural stones were not available, stone pillars were used for inscription. Ashoka's pillar inscriptions are the most important among the pillar inscriptions. Apart from these, the Greek Heliodorus's pillar writing on foreign countries, Brahmagupta's Prayag pillar writing and Skanda Gupta's internal pillar writing are especially important.

3. Copper plate inscription: - In ancient times, when kings or feudal lords donated land or gave rewards to any person, they used to get it engraved on copper plates. Many types of information are available from such copper plates. Such as brief introduction of the scriptures and its lineage, victory, pilgrimage, eclipse, religious activities, description of gotra etc.

4. Cave inscriptions: - The inscriptions engraved in the caves used for the residence of monks and saints are called cave inscriptions. Among these cave writings, Nagarjuniya Guha writings of Dasharatha, Nashik writings of Sarvanana's, Nanaghat and Kaal writings etc. are especially noteworthy.

5. Statue Writings: - Sometimes some writings are found on specific parts or lower parts of Brahmin, Buddhist, and Jain statues, which have proved to be very helpful in making history.

2. Monuments and ruins: - Ancient buildings and ruins have had special importance in the making of ancient Indian history. Although the monuments and ruins do not throw much light on the political situation, they provide adequate information about the religious, social, economic, and cultural situation.

Information about the world's oldest civilization 'Indus Valley Civilization' has probably been obtained from the ruins obtained from the excavations in Harappa and Mohenjo-Daro, in which remains of the then human civilization have been found.

3. Currencies, coins, and seals: - Currencies or coins have also helped a lot in the making of

ancient Indian history. The oldest coins of India are punch-marked coins. However, the names of rulers, their titles, dates, royal insignia, and religious symbols were inscribed on gold, silver, copper, and brass coins. For example, the names of Buddhist, Hindu, Iranian and Greek gods inscribed on the coins of Kanishka are indicative of the religiosity and tolerance of that Buddhist leader.

Similarly, in ancient times, seals were made of both clay and metal. Usually these bear the name or signature of a king, feudal lord, official, corporation, businessman or individual. These seals were used to imprint letters or parcels. The most and impressive is “Pashupati seal.” Which is considered the first evidence of Shiva in Indian tradition.

4. Artefacts: - Many artefacts like murals, pillars, statues, temples, toys, jewellery etc. have been found from the excavations done at various places in India, which provide special information about ancient Indian history, civilization, and culture. Information is available. Toys, statues, and ornaments recovered from the Indus Valley, Ashoka's pillars, various Buddhist statues, copper and bronze statues, wall paintings of Ajanta and Wagh caves are typical examples of this.

5. Earthen pots: - Earthen pots have also been found from various places in India. These utensils also have immense historical importance. These utensils are not only useful from the point of view of art, but by examining the soil and finding out their age, it helps in knowing the chronology of history.

Thus, there is no dearth of sources to know ancient Indian history. Various types of literary and archaeological material are available in abundance for the above information.

- **Conclusion-** Using imagination instead of the size of the actual object, you can make it thick, thin, long, or short. Apart from this, instead of drawing the actual objects as they are, you can use your imagination to draw the shapes at different places in the picture. The picture is two dimensional. The objects and shapes that we see in real form are only a source of inspiration for us to make pictures.While drawing a picture, we should depict only the original shape of the object. In trying to depict the details of an object, the essence of the object or shape is lost. The artist should leave aside the small details and portray the entire effect. Rajasthan has a rich tradition of folk painting. In the last days of the Mughal period, many Rajput states came into existence in different regions of India, the main ones being Mewar, Bundi, Malwa etc. A specific type of painting style developed in these states. Due to the characteristics of these different styles, they were given the name of Rajput style. In fact, Rajasthani painting refers to the painting which is the heritage of this province and was formerly prevalent in Rajputana. Rajasthani painting, nurtured in various styles and sub-styles, holds an important place in Indian painting. Despite being influenced by other styles, Rajasthani painting has its original identity. Expressing the invisible feelings of the mind through pictures and lines is called painting. Cultural development is visible in the art of illustration. The paintings in the Bhimbetka caves of Madhya Pradesh are the most ancient in prehistoric times. Rajasthani painting is known for its antiquity. Many ancient evidences undoubtedlyConfirms glorious existence. When the painting of Rajasthan was going through its initial phaseat that time the Ajanta tradition was infusing a new life into the painting of India. Arab invasionsto avoid the hassles, many artists left the states like Gujarat, Lat etc. and moved to other parts of the country.Started settling down. The painters who came here introduced the style of Ajanta tradition into the local styles. Coordinated with naturalness. Rajasthani painting is so deeply ingrained in its tradition that its symptoms are visible even in modern times. Even today many Rajasthani artists are doing miniature paintings on silk, ivory, cotton cloth and paper. Pahari painting also developed in India in the form

of Basauli and Kangra painting styles. From the coordination of Mughal style and Rajdhani style, the folk-art mural style of Kashmir was born. In Kangra style both love of nature and love of GodCarefully presented through pictures. Thus, the contribution of Rajasthani painting in the development of Indian painting cannot be denied. It is an integral part of the cultural development of India. Rajasthani paintings are an important source for the study of history as cultural evidence.

➢ **References -**

- Singh, Mamta (2015). Basic elements and principles of visual arts and folk arts, Rajasthan Hindi Granth Academy, Jaipur.
- Aggarwal, Giriraj Kishore (2002). Art and Pen, Ashoka Prakashan Mandir, Aligarh
- Shrotriya, Sukhdev (2002). Kala Vichar, Chitrayan Prakashan, Muzaffarnagar
- Shrotriya, Sukhdev (2002). Foundations of Painting, Chitrayan Prakashan, Muzaffarnagar
- Aggarwal, Shyam Bihari (2000). History of Indian Painting, Roop Shilpa, Allahabad
- Verma, Avinash Bahadur (1998). Art and Technology, Bareilly
- Verma, Avinash Bahadur (1998). History of Indian Painting, Bareilly
- https://www.selfstudys.com/sitepdfs/xC9of5HjGsmj7zyaDv2v

Journals and Survey-

- Anveshika, Indian Journal of Teacher Education, NCERT, New Delhi, Volume-7, Number-1 (June 2010)
- Emerging Trends in Education Association for Innovative Education, Varanasi, Volume-1 (No.-2 February 2011)
- Indian Education Abstract NCERT, New Delhi, Volume-5, Number 1 and 2 (January and July 2005)
- Indian Education Abstract NCERT, New Delhi, Volume-5, Number 2 (July 2006)
- Indian Education Abstracts (April 4, 2005), CBSE, New Delhi.
- International Studies Jawahar Lal Nehru University, New Delhi, Volume-48, Number-1 (January 2011)
- Education Herald A Quarterly Journal of Education Research Volume-40, No.-4, Jodhpur (October-December 2011) Page No. 5-13, 41-49, 75-83, 125-129
- Education Technology Research General, (March-April 2013), NCR Volume-53, Number-2
- Karunya, General of Research, Karunya University, Karunya Nagar Coimbatore, Volume-3, Number-2 (April 2012)
- Journal of Education and Psychological Research, Haryana, Volume-2, Number-2 (January 2012)

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों द्वारा कोविड -१६ में शैक्षिक संस्थाओं के समाधान हेतू किये जा रहे शैक्षिक कार्यक्रमों का विवेचन

डॉ० बी० एल० जैन
शिक्षा विभागाध्यक्ष, जैन विश्व भारती, संस्थान, लाडनू (राज०)

अलकेश गुप्ता
पी.एच.डी. शोधार्थी, जैन विश्व भारती संस्थान, लाडनूं (राज०)

सारांश - कोविड-१६ हाल ही में खोजे गये कोरोना वायरस के कारण होने वाला संक्रामक रोग है इस नये वायरस और बीमारी के बारे में दिसम्बर २०१६ में चीन के वुहान में इसके प्रकोप की शुरूआत होने से पहले इसके बारे में कोई नहीं जानता था। परन्तु इस बीमारी का प्रकोप सम्पूर्ण विश्व में इस तरह छा गया कि ना चाहते हुये भी पूरी शिक्षण व्यवस्था अस्त -व्यस्त हो गई। शिक्षा प्रत्येक देश के आर्थिक सामाजिक स्वास्थ्य एवं पर्यावरणीय विषय का महत्वपूर्ण तत्व है। भारत में लगभग ३२ करोड छात्र छात्राओं ने लॉकडाउन के दौरान विद्यालय एवं महाविद्यालय में जाना बन्द कर दिया। राज्य एवं केन्द्र सरकारों ने सभी शैक्षणिक गतिविधियों पर अस्थाई रोक लगा दी एवं एक नई शिक्षा नीति ऑनलाइन शिक्षा पर बल दिया। शिक्षा के क्षेत्र में अचानक से हुये इस परिवर्तन की वजह से छात्र छात्राओं अभिभावकों शिक्षकों के समक्ष एक चुनौती बन कर उभरी है। संयुक्त राष्ट्र के आंकडों के मुताबिक कोविड-१६ के प्रसार से पहले ही ५ में से एक बच्चा स्कूल से बाहर था। कोविड के कारण स्कूलों के बन्द होने से खास तौर पर महामारी के पूर्व शिक्षा में भेदभाव और बहिष्करण का सामना करने वाले समूह के छात्रों को नुकसान पहुँचा है। कोविड -१६ के कारण विद्यालय में विद्यार्थियों के आने तथा कक्षा शिक्षण न होने के कारण घर पर शिक्षण की निरन्तरता बनाये रखने के लिये अप्रैल २०२० में विद्यार्थियों को घर पर ही डिजिटल माध्यम से अध्ययन सामग्री पहुंचायी जा रही है।

शिक्षा एक त्रिमुखी प्रक्रिया है शिक्षक, शिक्षार्थी और पाठ्यक्रम इसके तीन ध्रुव हैं। शिक्षा जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करने का एक सशक्त माध्यम है। यह शिक्षकी की नैसर्गिक प्रवृतियों का शोधन और मार्गान्तीकरण करके उसे समाज का सक्रिय सदस्य बनाती है। जिससे वह अपने उत्तरदायित्वों का निर्वहन कुशलतापूर्वक कर सकता है।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

ज्ञान का प्रत्यक्षीकरण कराने वाला शिक्षक ही है जिसकी शिक्षण कला व व्यक्तित्व विद्यार्थी के व्यवहार में वांछित परिवर्तन ला सकते हैं। परन्तु वर्तमान समय में एक ऐसी ही महामारी का प्रकोप सम्पूर्ण विश्व में इस तरह छा गया है कि ना चाहते हुये भी पूरी शिक्षण व्यवस्था अस्त व्यस्त हो गई है और वह कोई और बीमारी नहीं बल्कि उसका नाम है कोविड-१९

कोविड -१९ हाल ही में खोजे गये कोरोना वायरस के कारण होने वाला संक्रामक रोग है इस नये वायरस और बीमारी के बारे में दिसंबर २०१९ में चीन के वुहान में इसके प्रकोप की शुरूआत होने से पहले इसके बारे में कोई नहीं जानता था।

संयुक्त राष्ट्र के आंकडों के मुताबिक कोविड-१९ के प्रसार से पहले ही ५ में से एक बच्चा स्कूल से बाहर था। कोविड के कारण स्कूलों के बंद होने से खास तौर पर महामारी के पूर्व शिक्षा में भेदभाव और बहिष्करण का सामना करने वाले समूह के छात्रों को नुकसान पहुंचा है।

ह्यूमन राइट्स वॉच ने कहा कि सरकारों को चाहिये कि २०३० तक सभी बच्चों के लिये समावेशी गुणवत्तापूर्ण प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा प्राप्ति की गारंटी करने वाले संयुक्त राष्ट्र सतत विकास लक्ष्यों के तहत २०१५ में की गई अपनी प्रतिबद्धताओं पर तुरन्त अमल करें उन्हें पढाई छूटने के खतरे या बाधाओं का सबसे ज्यादा सामना कर रहे बच्चों की स्कूल वापसी पर पूरा जोर लगाना चाहिये।

सरकारों और स्कूलों को इसका विश्लेषण करना चाहिये कि किसने स्कूल छोडा और कौन वापस आया और सुनिश्चित करना चाहिये कि स्कूल वापसी कार्यक्रम पढाई छोडने वाले सभी बच्चों की खोजबीन करें साथ ही इसके लिये उन्हें वित्तीय और सामाजिक सुविधायें प्रदान करनी चाहिये।

इसी क्रम में राजस्थान सरकार द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में सभी छात्रों तक शैक्षिक सामग्री पहुंचाने हेतु अनेकों कार्यक्रम शुरू किये गये ताकि कोई भी छात्र छात्रा शिक्षा से वंचित न रहे। कोविड -१९ के कारण विद्यालय में विद्यार्थियों के आने तथा कक्षा शिक्षण न होने के कारण घर पर शिक्षण की निरंतरता बनाये रखने के लिये अप्रैल २०२० से विद्यार्थियों के आने तथा कक्षा शिक्षण न होने के कारण घर पर शिक्षण की निरंतरता बनाये रखने के लिये अप्रैल २०२० से विद्यार्थियों को घर पर ही डिजिटल माध्यम से अध्ययन सामग्री पहुंचायी गई।

शैक्षिक समस्याएं -

१. विद्यालयों का पूर्णतः बंद होना।
२. विद्यार्थियों के शिक्षा के अधिकार में असमानता में वृद्धि ।
३. माता -पिता के विस्थापन की समस्या।
४. माता -पिता के सहयोग की कमी।
५. परिवार के आय के कारण ऑनलाइन साधनों की कमी।
६. लर्निंग गेप की समस्या।
७. इन्टरनेट की पहुंच की समस्या।
८. घरेलु जिम्मेदारी का बढना।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

९. दिव्यांग/निःशक्त बच्चों की समस्या।
१०.शिक्षकों के पास भी संसाधनों का अभाव।
११.बढती हुई उम्र के साथ अध्ययन से मोह भंग होना।
१२.बाल अपराधों में वृद्धि।
१३.बालिकाओं का शिक्षा के क्षेत्र में पिछडना।
१४.शिक्षा बजट में कमी।
१५.मध्यान्ह् भोजन योजना के क्रियान्वयन में व्यवधान उत्पन्न होना।

।द्ध स्माइल कार्यक्रम -

छात्रों के अध्ययन की प्रतिपुष्टि निरंतरता एवं व्यापक पहुंच के लिये स्माइल कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया जो कि कक्षा १ से ८ तक के विद्यार्थियों के लिये गृह कार्य पर आधारित है। सप्ताह में कक्षा १ से ५ के लिये एक बार सोमवार तथा कक्षा ६ से ८ के लिये दो बार सोमवार एवं बुधवार को विद्यार्थियों तक पहुंचाया गया है। जिन विद्यार्थियों के पास डिजिटल संसाधन नहीं हैं संस्था प्रधान उन विद्यार्थियों तक गृहकार्य पहुंचाने एवं पुनः संकलित करने की व्यवस्था की इस हेतु विद्यार्थी अपने अभिभावकों के साथ कोविड की गाइडलाइन की पालना करते हुये विद्यालय आकर भी उक्त गृह कार्य सामग्री लेकर गये।

ठद्ध आओ घर से सीखें कार्यक्रम

छात्रों के अध्ययन की निरंतरता बनाये रखने हेतु सरकार द्वारा आकाशवाणी दूरदर्शन एवं इंटरनेट के माध्यम से व्यापक विद्यालय शिक्षा कार्यक्रमों का संचालन किया जा रहा है। राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् उदयपुर के ईटी प्रभाग द्वारा होनहार राजस्थान की परिकल्पना को साकार करने के क्रम में आओ घर से सीखें कार्यक्रम के तहत रेडियो पर शिक्षा वाणी दूरदर्शन पर शिक्षा दर्शन इंटरनेट के माध्यम से स्माइल कार्यक्रम शुरू किया गया है जिसके तहत कक्षावार समय सारणी बनाकर अध्ययन सामग्री छात्र छात्राओं के घरों तक पहुंचायी जा रही है।

ब्द्ध होनहार राजस्थान कार्यक्रम

विद्यार्थियों की शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सतत सुधार लाने के लिये राजस्थान स्कूल शिक्षा परिषद् ने होनहार राजस्थान कार्यक्रम के तहत कार्य पुस्तिकाओं का निर्माण किया है। इन कार्यपुस्तिका से विद्यार्थियों के अभिभावकों के मार्गदर्शन में पढाई के साथ सहयोग मिलेगा। जिसमें सीख साथी समर्थ शीर्षक से तीन कार्य पुस्तिकाओं का निर्माण किया गया है इन कार्य पुस्तिका में विभिन्न गतिविधियों एवं चित्रों का समावेश करते हुये आकर्षक बनाया गया है इनकी मॉनिटरिंग की जिम्मेदारी अभिभावक के साथ साथ अध्यापक की भी होगी।

क्द्ध मिशन समर्थ कार्यक्रम

विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिये शिक्षा विभाग ने मिशन समर्थ के माध्यम से घर से ही पढाई करवाने का उद्देश्य रखा है। इसके तहत सीडब्ल्यूएसएन ;ब्ँछद्ध बच्चों को अलग से व्हाट्सअप ग्रुप

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

बनाये जायेंगे इन ग्रुपों में प्रतिदिन ऑडियो व वीडियो सामग्री पहुंचायी जायेगी। सरकार द्वारा दिव्यांग विद्यार्थियों के लिये बडे स्तर पर ब्रेल लिपि व साइन लैग्वेज की कक्षा १ से १२ तक के लिये ई कटेंट तैयार किये गये हैं।

म्द्ध वीडियो लाइब्रेरी

मूक बधिर सहित अन्य श्रेणी के विकलांग विद्यार्थियों के लिये एक वीडियो लाइब्रेरी भी तैयार करवाई गई है इसमें कक्षा १ से १२ तक के बच्चों को यदि कोई भी शंका हो तो वह एक क्लिक कर पूरी जानकारी हासिल कर सकते हैं।

थ्द्ध स्वयं पोर्टल

मानव संसाधन विकास मंत्रालय ;डभ्त्क्द्ध द्वारा शुरू किया गया यह ऑनलाइन लर्निंग पोर्टल है। स्वयं पोर्टल को शिक्षा की नीति के तीन आधार भूत सिद्धान्तों पहुंच, निष्पक्षता, गुणवत्ता प्राप्त करने के उद्देश्य से बनाया है। इस पर सभी कोर्स निःशुल्क उपलब्ध है।

ळद्धदीक्षा पोर्टल

यह एक ई-लर्निंग पोर्टल है जो मानव संसाधन विकास मंत्रालय ;डभ्त्क्द्ध द्वारा छात्रों और शिक्षकों के बीच सहज और परेशानी मुक्त बातचीत को सक्षमक रने के लिये शुरू किया गया है। इसी पोर्टल पर शिक्षकों के शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम भी तैयार किया है और शिक्षकों द्वारा ऑनलाइन प्रशिक्षण भी लिया गया है।

भ्द्ध ई -पाठशाला

शिक्षा मंत्रालय ने इसके तहत कक्षा १ से १२ तक की छब्म्त्ज् की पुस्तकों को ई.पाठशाला ऐप पर उपलब्ध करवाई गई है।

प्द्ध मध्यान्ह् भोजन योजना

स्कूली शिक्षा के प्रभावी क्रियान्वन की दिशा में डक्ड (मध्यान्ह् भोजन योजना) एक महत्वपूर्ण घटक है। कोरोना काल में भी विद्यार्थी खाद्यान्न से वंचित न रहे इसलिये राज्य सरकार द्वारा बच्चों के अभिभावकों को सूखा राशन (तेल, मसाले) एवं खाद्यान्न (गेहूँ, चावल) वितरित करने के आदेश जारी किये गये हैं।

श्रद्धभारत नेट परियोजना

यह भारत की २.५ लाख ग्राम पंचायतों को ब्रॉडबैंड कनेक्टिविटी में लाने का कार्यक्रम है। इसके तहत ग्रामीण प्रशासन प्राथमिक स्तर पर ही कई सुविधाओं जैसे टेली मेडिसन टैली एजुकेशन ई-हेल्थ आदि का उपयोग कर पायेंगे। टैली एजुकेशन के माध्यम से ग्राम पंचायत स्तर पर प्रत्येक विद्यार्थी तक शिक्षा कार्यक्रमों की पहुंच सुनिश्चित हो सकेगी।

निष्कर्ष :-

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

सार रूप में कहा जा सकता है कि कोविड -१९ से शिक्षा में आने वाली समस्याओं का अध्ययन एवं उसका समाधान किया जा सकता है। ई-शिक्षा, ऑनलाइन शिक्षा, स्माईल कार्यक्रम, आओ घर से सीखें कार्यक्रम आदि कार्यक्रमों से शिक्षण करा कर कोरोना काल की परिस्थितियों में आसान शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन किया जा सकता है। इस अध्ययन में अभिभावकों की लैगिंग भेदभाव व बालिका शिक्षा मे भी परिवर्तन होगा।

राज्य सरकार द्वारा पर्याप्त संसाधन उपलब्ध कराये जाने पर कार्यक्रम के संचालन में कोई कठिनाई नहीं होगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

पुस्तकें:-

१. बेस्ट, जॉन डब्ल्यू (१९९३) : रिसर्च इन एजुकेशन नई दिल्ली प्रिन्टर्स हॉल ऑफ इण्डियन

वेबसाइट्स:-

http://www.erfonline.org/hindi/research/the_need_and_challenges-of-online-education-in-covid-19era

jagran.com/rajasthan-online-education vs offline education-online education is only option in coronavirus infection-era-21625312 html

downtoearth.org.in/hindistory/health/non-communicable-disease how-effective-ore-online-studies-in lockdown- 71066

amarujala.com/columns/blog/online-education-in-india-2020-during-lockdown-covid-19-pandemic-significan-challenges-problems-in-online-examination-system

indiaspendhindi.com/covid-19/children-forget-lessons-of-previous-classes-during-covid-lockdown-741347

dristhiias.com/hindi/daily-updates/dailynews-ediorials/covid-19-and-digital-education

hrw.org/hi/news/2021/05/17/378673

researchgate.net/publication/324702398/SHIKSHAK-SHIKSHA-SODH-PATRIKA_AN_INTERNATIONAL_JOURNAL_OF_TEACHER EDUCATION

dristhiias.com/hindi/printpdf/24million-may-drop-out-of-school-due-to-covid-19-impact-u-n

http://higheredugry.com/indenphp/drishtikon-mgz

drishtiias.com/hindi/printpdf/online-module-for-compling-out-of-school-children-कंजं

पत्र -पत्रिकाएं:-

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

१.दृष्टिकोण, उच्चतर शिक्षा, मई २०२०, सेक्टर-५ पंचकुला हरियाणा ऑनलाइन प्लेटफॉर्म बना शिक्षा सेतु-पेज नं. १७ से लिया गया है।

2. SHIKSHAK SHIKSHA SHODH PATRIKA (AN INTERNATIONAL JOURNAL OF TEACHER EDUCATION) VOL. 10 (03) 2016, ISSN. 0974-0562

३. प्राथमिक शिक्षक, शैक्षिक संवाद की पत्रिका, अंक-४, अक्टूबर-२०१८ पृष्ठ ०९७०.६३१२

४. भारतीय आधुनिक शिक्षा - अक्टूबर २०१८, जुलाई २०१८

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में कोविड - १६ के कारण अलवर जिले के विद्यार्थियों के शैक्षणिक, मानसिक एवं व्यावहारिक स्थिति पर पडने वाले प्रभावों का अध्ययन

डॉ० बी० एल० जैन
शिक्षा विभागाध्यक्ष, जैन विश्व भारती, संस्थान, लाडनू (राज०)

अलकेश गुप्ता
शोधकर्त्री, जैन विश्व भारती, विश्वविद्यालय, लाडनू (नागौर) राज०

सारांश - अलवर जिले की खेरली (शहरी) व कठूमर (ग्रामीण) तहसील में कोविड - १६ के कारण विद्यार्थियों की शैक्षिक मानसिक एवं व्यावहारिक स्थिति पर पडने वाले प्रभावों का अध्ययन का समग्र विश्लेषण करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है कि चयनित विद्यालयों के विद्यार्थियों पर ऑनलाइन व ऑफलाइन शिक्षा का सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही प्रभाव पडे हैं। यद्यपि कक्षा शिक्षण सर्वाधिक उपयुक्त माध्यम हैं तथा ऑनलाइन शिक्षण एक सहायक उपकरण के तौर पर अच्छा है, क्योंकि टैक्नोलॉजी विद हुमैन फेस के सिद्वान्त में अच्छा है, तथा नई तकनीकों और विद्यार्थियों और प्रविधियों से विद्यार्थियों में सीखने के प्रति जिज्ञासा बढी है। लेकिन कोरोना महामारी ने विद्यार्थियों के सम्पूर्ण जीवन को प्रभावित किया है और लोगों में तथा समाज में अनेक बदलाव आये हैं । इससे पूर्व भी महामारियाँ विश्व में आती रहीं हैं। लेकिन कोरोना ने सर्वाधिक असर विद्यार्थी जीवन एवं शिक्षा पर कोरोना ने ही डाला है तथा विद्यार्थियों को भविष्य के बारे में सीखने और चुनौतियों का सामना करने के लिये भी तैयार किया है। बदलाव से विद्यार्थियों ने अपने को तैयार किया है।

मुख्य शब्द - कोविड-१६, शैक्षिक, मानसिक, व्यावहारिक

प्रस्तावना - पूरे विश्व में कोरोना वायरस महामारी कोविड - १६ एक भयावह बीमारी के रूप में फैल चुकी है। यह संक्रमण इतना तेजी से फैला है कि जिसने सम्पूर्ण विश्व को अपने पंजे में जकड़ लिया है।

चीन के बुहान शहर में प्रयोग के बाद यह पूरे विश्व में एक भयावह महामारी के रूप में फैली। अब इसके क्या राजनैतिक कारण अथवा एक देश के दूसरे देश के प्रति साजिश या अनुसंधान रहे हों हम नहीं जान पाये किन्तु इतना जरूर परिलक्षित हुआ है कि अदृश्य मानव रूपी कोविड-१६ महामारी के वायरस से पूरी दुनिया की अर्थव्यवस्था सहित मानव समाज के शैक्षिक सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्र को प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया है।

इस महामारी में सम्पूर्ण मानवजाति, उनकी दिनचर्या, जीवनमूल्य, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक जीवन पर ही प्रभाव पडा अपितु पूरे विश्व में शैक्षिक मूल्यों को भी प्रभावित किया है। साथ ही जीवन मूल्य और व्यक्तिवाद पर भी खतरा उत्पन्न हुआ है।

पूरे विश्व की शैक्षिक व्यवस्था चरमरा गई है।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

इस बीमारी के रहते देश दुनिया में लॉकडाऊन लगा दिया गया जिससे हमारे आर्थिक और सामाजिक जनजीवन पर गहरा प्रभाव पडा। २२ मार्च, २०२० से सम्पूर्ण भारत में अनिश्चित कालीन लॉकडाउन की वजह से स्कूल, कॉलेज बन्द कर दिये गये। सभी प्रकार की शैक्षिक/सहशैक्षिक व्यवस्था ठप्प हो गई। शिक्षण संस्थानों के बन्द होने के कारण दुनिया भर में लगभग ६०० मिलियन शिक्षार्थियों के प्रभावित होने की आशंका है।

देश के अन्य प्रदेशों की तरह राजस्थान के विद्यार्थियों की शैक्षिक, सामाजिक व सामाजिक/आर्थिक स्थितियों का आकलन करने पर हम मजबूर हो जाते हैं। इन सभी क्षेत्रों में हानि होने का अभिभावकों के साथ -साथ बालकों पर भी गहरा प्रभाव पडा है।

<u>समस्या का औचित्य</u> - शोध या अनुसंधान किसी भी क्षेत्र में ज्ञान की खोज करना या विधिवत गवेषणा करना है, शोध उस प्रक्रिया अथवा कार्य का नाम है जिसमें बोधपूर्वक प्रयत्न से तथ्यों का संकलन कर सूक्ष्मग्राही एवं विवेचक बुद्धि से उसका अवलोकन विश्लेषण कर नए तथ्यों या सिद्धान्तों को स्थापित किया जाये।

यह शोध कोविड -१६ के कारण अलवर जिले के विद्यार्थियों की शैक्षणिक, मानसिक एवं व्यावहारिक स्थिति पर पडे प्रभाव को जानने एवं समझने में सहायक होगा। इस शोध से समाज के सम्मुख कोरोना कालीन समस्याओं एवं समाज द्वारा किये गये समाधानों की जानकारी होगी। यह शोध विद्यार्थी, अभिभावक, शिक्षक एवं समस्त समाज को दिशा प्रदान करेगा। यह शोध ज्ञान भण्डार को विकसित व परिमार्जित करता है। यह शोध पूर्वाग्रहों के निदान और निवारण में सहायक होगा। यह शोध अनेक नवीन कार्यविधियों एवं उत्पाद को विकसित करता है।

सम्पूर्ण विश्व कोरोना महामारी से पीडित रहा है, हम सभी साक्षी रहे हैं कि कैसे मानव ने अपने अस्तित्व के लिये संघर्ष किया। साथ ही अनेक दिखावटी एवं गैर -जरूरी तत्व जीवन चर्या से कम होते गये । हम सभी दिन -प्रतिदिन सहज एवं सरल होते गये। इसमें तमाम बदलाव हो रहे हैं जिससे शिक्षा का क्षेत्र भी अछूता नहीं है। पारम्परिक मानदण्डों का स्थान वैकल्पिक मॉडल तथा इन्टरनेट, मोबाइल, लैपटॉप आदि पर आभासी कक्षाओं ने ले लिया।

आज सबसे बडी जरूरत मानसिक कुशलता की गंभीरता को समझने की है। मानसिक स्वास्थ्य प्रणाली परस्पर जुडी हुई शक्ति के रूप में है जो अन्य कार्यों को भी प्रभावित करती है, इसलिये सही समय पर मानसिक स्वास्थ्य पर ध्यान न देने से यह खतरा वयस्कता तक बढ सकता है और इसमें शारीरिक, शैक्षिक, व्यावहारिक एवं मनावैज्ञानिक स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव पडता है। लॉकडाउन के कारण पूर्ण बन्दी लॉकडाउन में कैद रहने के कारण ज्यादातर बच्चों में अवसाद के लक्षण पैदा हो गये।

व्यावहारिक दृष्टि से भी विद्यार्थियों में वैकल्पिक और व्यापक बदलाव दृष्टिगोचर हुये। परिस्थितिजन्य समस्याओं में वह परिवार की रोजी-रोटी जुटाने में स्वयं प्रवृत्त हुआ। विद्यार्थी सामाजिक ताने - बाने को समरसता पूर्वक एवं सकारात्मक दृष्टि से बनाये रखने में कितना अग्रणी रहा या किस मोड पर खडा है।

शैक्षणिक मानसिक एवं व्यावहारिक दृष्टि से कोरोनाकाल के उपरान्त वह अपने आप को किस स्थिति में खडा पाता है। इस शोध के निष्कर्ष के आधार पर स्पष्ट होगा। यह शोध लॉकडाउन जनित समस्याओं एवं उनके उपयुक्त समाधान का मार्ग प्रशस्त करेगा। शोध के माध्यम से विद्यार्थियों पर पडने वाले प्रभावों का आकलन कर सुझावों और अभिमतों के द्वारा सम्बन्धित प्रभावों का अध्ययन किया जा सकेगा।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

समस्या कथन - राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में कोविड -१६ के कारण अलवर जिले के विद्यार्थियों के शैक्षणिक मानसिक एवं व्यावहारिक स्थिति पर पडने वाले प्रभावों का अध्ययन

शोध के उद्देश्य - इस शोध प्रायोजना का मुख्य उद्देश्य अलवर जिले में कोविड -१६ के कारण अलवर जिले के विद्यार्थियों के शैक्षणिक, मानसिक एवं व्यावहारिक स्थिति पर पडने वाले प्रभावों का अध्ययन । करना है।

इस शोध के बिन्दुसार उद्देश्य निम्नानुसार निर्धारित किये गये हैं -

१. कोविड - १६ की परिस्थितियों का अलवर जिले के विद्यार्थियों पर पडने वाले शैक्षणिक प्रभावों को अध्ययन करना।

२. कोविड -१६ की परिस्थितियों का अलवर जिले के विद्यार्थियों पर पडने वाले मानसिक स्थिति के प्रभावों का अध्ययन करना।

३. कोविड -१६ की परिस्थितियों का अलवर जिले के विद्यार्थियों पर पडने वाले व्यावहारिक स्थिति के प्रभावों का अध्ययन करना।

४. कोरोना काल में विधायी शिक्षक एवं अभिभावकों को आने वाली समस्याओं का अध्ययन करना।

५. कोविड -१६ के दौरान आने वाली सभी समस्याओं में समाधान एवं दिये गये सुझावों का अध्ययन करना।

शोध की परिकल्पनायें -

१. कोविड -१६ की परिस्थितियों में अलवर जिले के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की शैक्षणिक स्थिति में सार्थक अन्तर पाया जाता है।

२. कोविड -१६ की परिस्थितियों में अलवर जिले के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की मानसिक स्थिति में सार्थक अन्तर पाया जाता है।

३. कोविड -१६ की परिस्थितियों में अलवर जिले के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की व्यावहारिक स्थिति में सार्थक अन्तर पाया जाता है।

तकनीकी शब्दों का परिभाषीकरण -

१. कोविड -१६ - कोरोना वायरस द्वारा जनित वैश्विक महामारी ।

२. शैक्षणिक स्थिति - शिक्षा का स्तर

३. मानसिक स्थिति - मन की अवस्था/मनः स्थिति

४. व्यावहारिक स्थिति - आदतों में परिवर्तन/वास्तविक स्थिति

५. प्रभाव - पडने वाला असर/गहरा असर

६. अध्ययन - पढकर उसकी समझ बनाना।

शोध का परिसीमन -

१. यह अध्ययन राजस्थान राज्य के अलवर जिले तक सीमित रहेगा।

२. यह अध्ययन अलवर जिले की खेरली (नगरपालिका, शहरी क्षेत्र) के विद्यालयों तक सीमित रहेगा।

३. यह अध्ययन अलवर जिले की कठूमर (ग्रामीण क्षेत्र) के विद्यालयों तक सीमित रहेगा।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

शोध विधि - प्रस्तुत शोध में शोधकर्त्री द्वारा सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया जायेगा।

शोध के चर -

१. आश्रित चर - राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थी

२. स्वतन्त्र चर - मानसिक, शैक्षणिक एवं व्यावहारिक परिस्थितियाँ

जनसंख्या एवं न्यादर्श - प्रस्तुत अध्ययन में जनसंख्या के रूप में अलवर शहर के खेरली व कठूमर तहसील के विद्यार्थियों का चयन किया गया है।

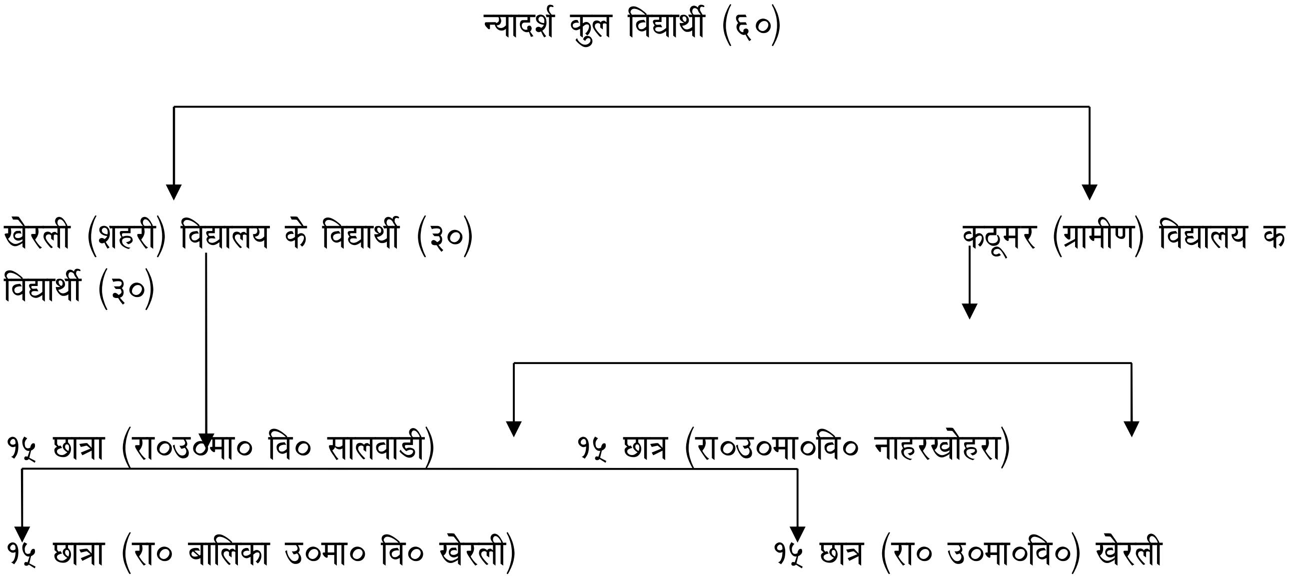

शोध के उपकरण - विद्यार्थियों के लिये - स्वनिर्मित प्रश्नावली

सांख्यिकी - प्रतिशत - प्रति सौ या सैकड़ा ;त्र१६१००द्ध

आंकडों का विश्लेषण एवं व्याख्या -

१. **परिकल्पना** - कोविड - १६ परिस्थितियों में अलवर जिले के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की व्यावहारिक स्थिति में सार्थक अन्तर पाया जाता है।

सारणी -३

	व्यावहारिक स्थिति से संबंधित कथन	ग्रामीण विद्यार्थी				शहरी विद्यार्थी			
		३०				३०			
क्र.सं.			हाँ		नहीं		हाँ		नहीं
१.	उस दौरान आप बाहर घूमने जाते थे ?	17	56.60	13	43.30	10	33.30	20	66.60
२.	कोविड -१६ में घर पर प्रतिदिन व्यायाम करते?	25	83.30	5	16.60	28	93.30	2	66.60

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

३.	कोविड -१९ के दौरान आपने जरूरतमन्दों की मदद की ?	20	66.60	10	33.30	25	83.30	5	16.60
४.	कोविड-१९ में शिक्षकों के फोन आते या घर पर आकर आपसे सम्पर्क करते ?	20	66.60	10	33.30	15	50.00	15	50.00
५.	उस दौरान बुखार, खांसी, व जुकाम होने का भय मन में रहता था ?	16	53.30	4	13.30	28	93.30	2	6.6
	योग		66.95		32.50		79.15		49.80

विश्लेषण - उपर्युक्त तृतीय व्यावहारिक स्थिति से संबंधित कथनों के अध्ययन से विदित होता है कि कोविड -१९ की परिस्थितियों में अलवर जिले के ग्रामीण विद्यार्थियों की व्यावहारिक सकारात्मक स्थिति ६६.९५ प्रतिशत (औसत रूप में) है वहीं शहरी विद्यार्थियों की व्यावहारिक सकारात्मक स्थिति ७९.१५ प्रतिशत (औसत रूप में) है। जबकि कोविड -१९ की परिस्थितियों में अलवर जिले के ग्रामीण विद्यार्थियों की व्यावहारिक नकारात्मक स्थिति ३२.५० प्रतिशत (औसत रूप में) है वहीं शहरी विद्यार्थियों की व्यावहारिक नकारात्मक स्थिति ४९.८० प्रतिशत (औसत रूप में) है।

अतः निष्कर्ष रूप में (परिकल्पना के आधार पर) कहा जा सकता है कि अलवर जिले के ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों की व्यावहारिक स्थिति में सार्थक अन्तर है क्योंकि ग्रामीण विद्यार्थियों के पास इतनी आय के साधन नहीं है कि वो शहरी विद्यार्थियों की अपेक्षा जरूरत मन्दों की सहायता कर सके वहीं शहरी विद्यार्थियों के पास शिक्षकों का घर पर आकर सम्पर्क कम रहा है क्योंकि वहाँ ऑनलाइन सम्पर्क के साधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है अपेक्षाकृत ग्रामीण विद्यार्थियों के ।

२. **परिकल्पना** - कोविड-१९ की परिस्थितियों में अलवर जिले के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की मानसिक स्थिति में सार्थक अन्तर पाया जाता है।

<u>सारणी</u>

	मानसिक स्थिति से संबंधित कथन	ग्रामीण विद्यार्थी				शहरी विद्यार्थी			
		३०				३०			
क्र. सं.			हाँ		नहीं		हाँ		नहीं
१.	आपने उस दौरान अकेलेपन के कारण मानसिक तनाव को महसूस किया ?	15	50	15	50	18	60.00	12	40
२.	कोविड-१९ के दौरान आप पर घरवालों के द्वारा ज्यादा पाबन्दियाँ रखीं गईं ?	18	60	12	40	15	50	15	50

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

३.	आपने सोशल डिस्टैन्सिंग का पालन किया ?	22	76.60	8	26.60	28	93.30	2	6.6
४.	आप उस दौरान हाथ धोकर ही खाना खाते ?	25	83.30	5	16.60	28	93.30	2	6.6
५.	कोविड-१६ के दौरान मास्क, सेनेटाइज का उपयोग किया ?	29	96.60	1	3.3	29	96.60	1	3.3
६.	कोविड-१६ में इन्टरनेट रूक-रूक कर चलता तो आप असहज महसूस करते ?	20	66.60	10	33.3	10	33.30	20	66.60
	योग		75-47		36-51		79-60		20-40

विश्लेषण - उपर्युक्त द्वितीय मानसिक स्थिति से संबंधित कथनों के अध्ययन से विदित होता है कि कोविड - १६ की परिस्थितियों में अलवर जिले के ग्रामीण विद्यार्थियों की मानसिक सकारात्मक स्थिति ७५.४७ प्रतिशत (औसत रूप में) है वही शहरी विद्यार्थियों की मानसिक स्थिति सकारात्मक स्थिति ७६.६० प्रतिशत (औसत रूप में) है। जबकि कोविड -१६ की परिस्थितियों में अलवर जिले के ग्रामीण विद्यार्थियों की मानसिक नकारात्मक स्थिति ३६.५१ प्रतिशत (औसत रूप में) है वहीं शहरी विद्यार्थियों की मानसिक नकारात्मक स्थिति २०.४० प्रतिशत (औसत रूप में) है।

अतः निष्कर्ष रूप में (परिकल्पना के आधार पर) कहा जा सकता है कि अलवर जिले के ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों की मानसिक स्थिति में सार्थक अन्तर है क्योंकि ग्रामीण विद्यार्थियों में सोशल डिस्टैसिंग मास्क, सेनेटाइज आदि जागरूकता का अभाव था वहीं शहरी विद्यार्थियों में ये सभी जागरूकताऐं विद्यमान थी।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

३. <u>परिकल्पना</u> - कोविड - १६ की परिस्थितियों में अलवर जिले के ग्रामीण व शहरी विद्यार्थियों की शैक्षिणिक स्थिति में सार्थक अन्तर पाया जाता है।

<u>सारणी</u>

	शैक्षणिक स्थिति से संबंधित कथन	**ग्रामीण विद्यार्थी**				**शहरी विद्यार्थी**			
		३०				**३०**			
क्र.सं.			**हाँ**		**नहीं**		**हाँ**		**नहीं**
१.	आपने कोरोनाकाल में पढ़ने का समय निश्चित किया था ?	17	56.60	13	53.10	19	63.30	11	36.30
२.	आपको कोविड-१६ के दौरान नियमित रूप से ऑनलाइन शिक्षण सामग्री भेजी गई ?	15	50.00	15	50.00	25	83.30	15	17.30
३.	आपने उस दौरान शिक्षकों की कमी को महसूस किया ?	22	73.30	8	26.60	26	86.60	4	13.30
४.	आपने स्माईल-१ व स्माइल-२ एप के जरिये अध्ययन किया?	26	86.60	4	13.30	28	93.30	2	66.00
५.	आप ऑनलाइन गृहकार्य को नियमित रूप से करते थे ?	28	93.30	2	6.60	30	100.00	0	-
	योग		75.82		23.41		66.69		33.31

विश्लेषण - उपर्युक्त प्रथम शैक्षिक स्थिति से संबंधित कथनों के अध्ययन से विदित होता है कि कोविड-१६ की परिस्थितियों में अलवर जिले के ग्रामीण विद्यार्थियों की शैक्षिक सकारात्मक स्थिति ७५.८२ प्रतिशत (औसत रूप में) है वहीं शहरी विद्यार्थियों की शैक्षिक सकारात्मक स्थिति ६६.६६ प्रतिशत (औसत रूप में) है जबकि कोविड -१६ की परिस्थितियों में अलवर जिले के ग्रामीण विद्यार्थियों की शैक्षिक नकारात्मक स्थिति २३.४० प्रतिशत (औसत रूप में) है वहीं शहरी विद्यार्थियों की शैक्षिक नकारात्मक स्थिति ३३.३१ प्रतिशत (औसत रूप में) है।

अतः निष्कर्ष रूप में (परिकल्पना के आधार पर) कहा जा सकता है कि अलवर जिले के ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों की शैक्षिक स्थिति में सार्थक अन्तर है क्योंकि ग्रामीण विद्यार्थियों की शिक्षण सामग्री पर्याप्त मात्रा में प्राप्त नहीं थी जबकि शहरी विद्यार्थियों को शिक्षण सामग्री प्राप्त करने का प्रतिशत सर्वाधिक रहा।

<u>शोध से प्राप्त निष्कर्ष</u> - अलवर जिले के खेरली व कठूमर तहसील में कोविड-१६ के कारण विद्यार्थियों की शैक्षिक मानसिक व व्यावहारिक स्थिति पर पडने वाले प्रभावों के अध्ययन का समग्र विश्लेषण और अध्ययन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकला कि चयनित विद्यालय एवं विद्यार्थी अभिभावक और अध्यापकों से प्राप्त आंकडों और

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

सुझावों तथा प्रश्नों के उत्तरों के आधार पर ऑनलाइन और ऑफलाइन शिक्षा के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही प्रभाव पडे हैं। यद्यपि कक्षा शिक्षण सर्वाधिक उपर्युक्त माध्यम हैं तथा ऑनलाइन शिक्षण एक सहायक उपकरण के तौर पर अच्छा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

पुस्तकें -

- डा० आर०ए० शर्मा अनुसंधान के मूल तत्व सूर्या पब्लिकेशन मेरठ (उ०प्र०)
- पाठक वी.डी० - भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ- आगरा (उ०प्र०)
- शर्मा बी०एन० - शिक्षा मनोविज्ञान साहित्य प्रकाशन आगरा (उ०प्र०)

पत्रिकाएँ एवं वेब साईट्स -

- शोध पत्रिका - २०१६-२० जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान (डाइट) अलवर
- RSCERT उदयपुर द्वारा जारी अनुसंधान मोड्यूल
- www.youtube.com
- www.youtube.com

विद्यालयों के लिये प्रश्नावली

नाम - | कक्षा -
लिंग - | आयु -

विद्यालय का नाम -

क्षेत्रः- ग्रामीण /शहरी -

क्र. सं.		हाँ	नहीं	कोई जवाब नहीं
१.	क्या कोरोना काल में अपने पढने का समय निश्चित किया था ?			
२.	आपके पास ऑनलाइन अध्ययन हेतु इन्टरनेट की व्यवस्था कैसी थी ?			
३.	आपने ऑनलाइन शिक्षण में अध्यापकों की कमी को महसूस किया था ?			
४.	क्हीं आपको कोविड - १६/ कोरोना ना हो जाये इस बात की चिन्ता हुई ?			
५.	आपको लगता है कि इस दौरान लोगों को एक दूसरे की मदद की आवश्यकता थी?			

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

६.	इस दौरान अकेलेपन के कारण आपको मानसिक तनाव का सामना करना पडा ?			
७.	क्या आप चाहते हैं कि जल्द ही यह बीमारी समाप्त हो जाये और सब कुछ पहले जैसा हो जाये?			
८.	क्या कोरोनाकाल में आप अपने दादा -दादी या बडों से कहानियां सुनते थे ?			
९.	क्या आपने इस दौरान मास्क का नियमित प्रयोग किया ?			
१०.	क्या आपने योग/व्यायाम आदि में कुछ समय बिताया ?			
११.	क्या आप हाथ धोने की आदत को अपनाये रखना चाहते हैं ?			
१२	क्या आपने इस दौरान कोई नया खेल खेला है ?			
१३.	क्या आप इस बीमारी से लडने के लिये मानसिक रूप से तैयार थे ?			
१४.	क्या आपने इस दौरान घर के कार्यों में कोई सहयोग किया ?			
१५.	इस महामारी से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त करने की आपकी रूचि थी ?			

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

भूमंडलीय तापन का विश्व पर प्रभाव

अनूप कुमार
सहायक आचार्य

सारांश

भूमंडलीय तापन

21वीं सदी के सबसे ज्वलंत मुद्दों में से एक है जो हमारे वैश्विक समाज की संरचना को चुनौती देता है। ग्लोबल वार्मिंग जीवाश्म ईधन के जलने और वनों की कटाई के परिणाम स्वरूप वायुमण्डल में कार्बन–डाई–ऑक्साइड जैसी ग्रीन हाउस गैसों की भारी वृद्धि के कारण होती है। अधिकांश लोग अभी भी ग्लोबल वार्मिंग से अनजान है लेकिन भविष्य में यह पारिस्थितिक तंत्र को गंभीर रूप से प्रभावित करेगा तथा पारिस्थितिक संतुलन बिगाड़ देगा।

यह पेपर ग्लोबल वार्मिंग का परिचय देता है। इसके कारणों और खतरों को विस्तार से बताता है और इस ज्वलंत मुद्दे को हल करने के लिये कुछ समाधान प्रस्तुत करता है। सबसे बढ़कर वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रोंतो (सौर, पवन, जल, भूतापीय ऊर्जा) को गंभीरता को अपनाने की जरूरत है। ऊर्जा के नवीकरणीय स्त्रोतों को खोजना और उनका उपयोग करना, लगातार बढ़ती ग्लोबल वार्मिंग से प्रभावी ढंग से निपटने का एक तरीका है।

मुख्य शब्द–वैश्विक तापन, ग्रीन हाउस गैसे, औद्योगीकरण, नगरीयकरण, जीवाश्म ईधन, वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रोत, निर्वनीकरण।

प्रस्तावना :

पृथ्वी पर जीव की उत्पत्ति से लेकर वर्तमान समय तक उसका प्रकृति से गहरा सम्बन्ध रहा है लेकिन समय के साथ विकास के लिये मानव द्वारा की गई प्रकृति से छेड़छाड़, अत्यधिक औद्योगीकरण एवं प्रत्येक क्षेत्र में बढ़ रहे प्रदूषण के कारण पृथ्वी के तापमान में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। विश्व का औसत तापमान पिछले कई वर्षों से तेजी से बढ़ा है।

अतः भूमंडलीय तापन को रोकने और पृथ्वी को फिर से बेहतर बनाने के लिए तुरंत कदम उठाये जाने चाहिए। चितंनशील मानव होने के नाते हमें पृथ्वी के प्राकृतिक परिवेश को सुरक्षित रखना हमारा नैतिक कर्तव्य है जिससे हम भविष्य में आने वाली पीढ़ीयों को संतुलित पर्यावरण उपलब्ध करवा सके।

अध्ययन के उद्देश्य :

- भूमंडलीय तापन के कारणों की जानकारी प्राप्त करना।
- भूमंडलीय तापन के वैश्विक स्तर पर प्रभावों की जानकारी पता लगाना।
- भूमंडलीय तापन को कम करने के उपायों का पता करना।

भूमंडलीय तापन का अर्थ :

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

पृथ्वी पर जनसंख्या की वृद्धि एवं औद्योगीकरण की दर में तीव्र गति को वृद्धि होने के कारण वायुमण्डल में मुख्यतः कार्बन–डाइ–ऑक्साइड की मात्रा में तीव्र वृद्धि हुई है। अतः पृथ्वी पर उपस्थित कार्बन–डाइ–ऑक्साइड धरातल को परिवर्तित किरणों द्वारा उत्सर्जित होने वाली तापीय ऊर्जा को वायुमण्डल से बाहर जाने से रोकती है अर्थात् ये गैस पृथ्वी पर हरित ग्रह की अवस्था का निर्माण करती है। इस कारण परिवर्तित पार्थिव विकिरण के द्वारा प्राकृतिक वातावरण में सामान्य तापमान को ज्यादा की वृद्धि हो जाती है जिसे वैश्विक तापमान वृद्धि कहते हैं।

सामान्यतः मानव क्रियाओं द्वारा उत्सर्जित हरित गृह गैसों (CO_2, CH_4, CFC, NO) में वृद्धि के परिणामतः उत्पन्न ताप वृद्धि को वैश्विक तापन या भूमंडलीयतापन कहते हैं।

भूमंडली तापन के कारण :

भूमंडली तापन की वृद्धि के लिये प्राकृतिक एवं मानवीय दोनों ही कारक जिम्मेदार है लेकिन पिछली कुछ शताब्दियों से मानव के औद्योगीकरण, नगरीयकरण एवं जनसंख्या वृद्धि जैसे क्रियाकलापों की वजह से पृथ्वी के तापमान में निरन्तर वृद्धि हुई है, जिसका प्रमुख कारण यहां बढ़ती हुई हरित गृह गैसें है जो वैश्विक तापन में 24 प्रतिशत उत्तरदायी है।

पृथ्वी पर भूमंडलीय तापन के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं–

1. पृथ्वी का वायुमण्डल सूर्याताप से ऊर्जा 184×10^4 जूल प्रति वर्ग मीटर प्रति मिनट ग्रहण करता है। परन्तु यह पूर्णतः पृथ्वी तक नहीं पहुंचता है क्योंकि वायुमण्डल में उपस्थित कार्बन–डाइ–ऑक्साइड और जलवाष्प द्वारा ताप का अवशोषण कर लिया जाता है और पुनः पृथ्वी पर परावर्तित कर देते हैं। अवशोषित होने के पश्चात् पुनः परावर्तित ताप का औसत पृथ्वी पर 15^0c रहता है लेकिन इस सामान्य संतुलन स्थिति के विपरीत जब वायुमण्डल में हरित ग्रह गैसों का सान्द्रण बढ़ता है तो औसत तापक्रम में वृद्धि हो जाती है जिससे सार्वभौम उष्णता बढ़ती है यही तापमान में वृद्धि होना ही वैश्विक तापमान वृद्धि है।
2. जीवाश्म ईधन (कोयला और पेट्रोलियम) जलाये जाने के कारण कार्बन–डाइ–ऑक्साइड उत्पन्न होती है।
3. विश्व के सभी देश विकास की तीव्र गति के लिए औद्योगीकरण को बढ़ावा दे रहे हैं जिससे बहुत अधिक प्रदूषण उत्पन्न हो रहा है तथा उनकी अनुचित अपशिष्ट निपटान प्रणाली से वैश्विक तापन जैसी गंभीर समस्याएं उत्पन्न हो रही है।
4. विश्व में बढ़ती ऊर्जा की जरूरतों की पूर्ति हेतु विकासशील और अविकसित देशों द्वारा अब भी ऊर्जा के परम्परागत स्त्रोंतों का ही प्रयोग अधिक हो रहा है। जैसे–विद्युत उत्पादन और उद्योगों के संचालन में कोयले का उपयोग, रेलगाड़ी परिचालन में डीजल तथा घरेलू ईधन के रूप में कोयले एवं लकड़ी द्वारा ही ऊर्जा आवश्यकता पूरी की जा रही है, जिससे न सिर्फ पर्यावरण प्रदूषण बढ़ रहा है अपितु वैश्विक तापमान में भी वृद्धि हो रही है।
5. अनियंत्रित वनों की कटाई से कार्बन–डाई–ऑक्साइड जैसी गैसों की मात्रा में बढ़ोतरी होगी जो वैश्विक तापन के लिये उत्तरदायी गैस है।

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

6. वैज्ञानिक प्रेक्षण (उपग्रह प्रक्षेपण, मिसाइल प्रेक्षण) तथा परिवहन के साधनों (बस, रेल, वायुयान, जलयान) से निकलने वाला धुंआ, जंगलों में लगने वाली आग इत्यादि प्रक्रियायें भूमंडलीय तापमान को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।
7. एयर कण्डीशनर, हीटरों, प्रशीतकों, तथा दैनिक उपभोग की वस्तुओं के निर्माण करने वाली इकाइयों से वैश्विक तापन में वृद्धि होती है।

भूमंडलीयतापन के प्रभाव :

वायुमंडल में कार्बन–डाई–ऑक्साइड में वृद्धि होने से वायुमण्डल की पार्थिव विकिरणों का अवशोषण करने की क्षमता में वृद्धि हो जाती है जिससे वायुमण्डल का तापमान बढ़ता है। सन् 1979 में संयुक्त राज्य अमेरिका की राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी द्वारा नियुक्त वैज्ञानिकों के दल ने यह अनुमान लगाया कि वायुमंडल में कार्बन–डाइ–ऑक्साइड की मात्रा दुगुनी हो जाने से वायुमण्डल का तापमान 3^0 सेल्सियस बढ़ सकता है। आशंका व्यक्त की जाती है कि भविष्य में तापमान में अधिक तेजी से वृद्धि होगी। इसके दूरगामी परिणाम और भी अधिक प्रभावी हो सकते हैं जो निम्नलिखित हैं–

1. समुद्र के जल स्तर में परिवर्तन :

वैज्ञानिक अध्ययन में तो यह बात अब सत्य प्रमाणित हो चुकी है कि बीसवीं शताब्दी में प्रतिवर्ष 2 मिलीमीटर की दर से समुद्र के जलस्तर में वृद्धि हुई और अनुमान है कि 21वीं शताब्दी के अंत तक समुद्र का जलस्तर लगभग 20 सेन्टीमीटर से 88 सेन्टीमीटर तक बढ़ जाएगा।

इसमें वैश्विक तापन का बहुत बड़ा योगदान होगा क्योंकि अंटार्कटिका एवं आर्कटिक के ग्लेशियर और ग्रीनलैण्ड की हिमचादरों के पिघलने के कारण समुद्र का जलस्तर काफी बढ़ जायेगा इससे तटवर्ती भाग एवं सागरीय द्वीप जलमग्न हो जायेंगे।

2. जैव–विविधता पर प्रभाव :

उष्ण कटिबंधीय वर्षा वनों में पृथ्वी की लगभग 50 प्रतिशत प्रजातियां पाई जाती है लेकिन विगत शताब्दी में मानव द्वारा वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास के माध्यम से अपने जीवन स्तर के सुधार के नाम पर भूमंडलीय तापन जैसी आपदाओं को न्योंता दिया है।

जिसके फलस्वरूप पारिस्थितिक तंत्रों में विभिन्न प्रजातियों की प्राकृतिक विलोपन दर एक प्रजाति दशक से बढ़कर 100 प्रजाति प्रति दशक हो गई है। इस प्रकार निकट भविष्य में मूंगा चट्टानों और अल्पाइन घास के मैदानों जैसे आवासों का विघटन कई पौधों और जानवरों की प्रजातियों को विलुप्त होने की ओर ले जा सकता है।

3. कृषि पर प्रभाव :

ग्लोबल वार्मिंग के कारण पौधों में विभिन्न प्रकार की बीमारियों का प्रकोप बढ़ेगा जिसे दूर करने के लिए अत्यधिक मात्रा में कीटनाशकों का प्रयोग होगा इन सभी परिस्थितियों में कुल मिलाकर खाद्यान्न का उत्पादन घटेगा तथा साथ ही भूमि और जल प्रदूषित होंगे। अमेरिकी पर्यावरण सुरक्षा एजेंसी के अनुसार 2060 तक विश्व में चावल, गेहूं तथा अन्य खाद्यान्नों में करीब 1.2 से 7.6 प्रतिशत

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

तक कमी हो जायेगी तथा साथ ही विश्व के प्रमुख चावल उत्पादक क्षेत्रों विशेषकर दक्षिण और दक्षिणी–पूर्वी एशिया में 1^0C तापमान में वृद्धि उत्पादकता में 5 प्रतिशत तक की कमी ला सकती है।

4. मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव :

मानवीय स्वास्थ्य पर प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ेगा। रोगजनकों और मच्छरों के लिए अनुकूल स्थितियों के प्रसार के कारण मलेरिया, डेंगू, येलोफीवर, एलर्जी, अस्थमा और संक्रामक रोग का प्रकोप अधिक आम हो जायेगा। साथ ही तापमान के लगातार अधिक बने रहने से त्वचा कैंसर, रक्तचाप, मानसिक तनाव तथा प्रतिरक्षा प्रणाली पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

5. वनस्पति पर प्रभाव :

भूमण्डलीय तापन की प्रतिक्रिया में वनस्पति कम हो सकती है और तापमान इतना असहज हो सकता है कि कुछ स्थानीय क्षेत्र में उत्पन्न होने वाली दुर्लभ वनस्पतियां इस प्रक्रिया में अपना अस्तित्व ही खो देगी। वन क्षेत्र के नष्ट होने की स्थिति में मरूस्थलीकरण में वृद्धि होगी तथा वैश्विक जल चक्र या वर्षा के वितरण में असमानताएं बढ़ेगी।

6. औसत तापमान में वृद्धि :

पृथ्वी का औसत तापमान 15^0C है लेकिन जलवायु मॉडल भविष्यवाणी करता है कि वैश्विक तापमान सन् 2100 तक लगभग 1^0C से 3.5^0C तक बढ़ जायेगा। जिसके कारण अप्रत्याशित रूप से जलवायु परिवर्तन होगा। इस बढ़ते तापमान का असर विश्वभर के मौसम तंत्र पर पड़ना अश्वयम्भावी है जिससे कई समस्याओं की उत्पत्ति संभव है। विश्व के अनेक क्षेत्रों में जलाधिक्य (अतिवर्षा) होगा तो कही–कही क्षेत्र सूखे (अल्प वर्षा अथवा रेगिस्तानी) हो जायेंगे।

7. गरीबी और विस्थापन की समस्या :

बाढ़ एवं सूखे जैसी आपदाओं के कारण प्रत्येक वर्ष लाखों लोगों का विस्थापन हो रहा है ऐसे शरणार्थी दुनिया में हर जगह देखे जा सकते हैं। यह अनुमान लगाया जाता है कि 2030 तक जलवायु परिवर्तन 120 मिलियन से अधिक लोगों को गरीबी में धकेल सकता है।

ग्लोबल वार्मिंग से निम्न और उच्च आय वाले देशों के बीच असमानता भी बढ़ेगी क्योंकि विकसित देशों के पास बदलती जलवायु के अनुकूल संसाधन और नेटवर्क होते हैं और अनियमित मौसम की घटनाओं और आपदाओं से निपटने के लिये अधिक लचीला बुनियादी ढांचा होता है। जबकि अल्पविकसित तथा विकासशील देशों के पास लगभग हमेशा कम संसाधन और कमजोर बुनियादी ढांचा होता है जो उन्हें जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति अधिक संवेदनशील बनाता है।

विश्व तापमान वृद्धि को रोकने के उपाय :

1. स्वीडन के वैज्ञानिक स्वान्ते अहरेनिस ने सन् 1898 में चेतावनी दी थी कि कार्बन–डाइ–ऑक्साइड उत्सर्जन वैश्विक तापमान को बढ़ा सकता है। इसके पश्चात् जलवायु परिवर्तन पर केन्द्रीय अन्तर्राज्यीय सम्मेलन सन् 1980 के अन्त में और सन् 1990 के प्रारम्भ में आयोजित किये गये सन्

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

1990 में द्वितीय विश्व जलवायु सम्मेलन में जलवायु परिवर्तन पर संरचना संधि का आह्वान किया गया।

ब्राजील में 1992 में हुए रियो पृथ्वी सम्मेलन में पर्यावरण की रक्षा के लिए एक संधि पर सहमति बनी जिसे यूनाइटेड नेशन्स फ्रेमवर्क कन्वेशन ऑन क्लाइमेट चेंज (UNFCCC) कहते हैं। इसके बाद 1997 में जापान के क्योटो, 2007 में इंडोनेशिया के बाली और 2009 में डेनमार्क के कोपेनहेगन में जलवायु सम्मेलन हुए। इन सम्मेलनों का उद्देश्य पृथ्वी के वातावरण को सुरक्षित रखना था। रियो सम्मलेन में सहमती बनी की ग्लोबल वार्मिंग के लिये जिम्मेवार गैंसों की मात्रा को इस हद तक सीमित किया जाये कि जलवायु परिवर्तन मानव नियंत्रण से पूरी तरह बाहर नहीं हो जाये।

2. कार्बन–डाइ–ऑक्साइड, मीथेन, क्लोरोफ्लोरो कार्बन, नाइट्रस ऑक्साइड जैसी गैसों की उत्पत्ति एवं प्रयोग की मात्रा कम की जाये।
3. मोटर वाहन उद्योग में पट्रोल एवं डीजल के स्थान पर वैकल्पिक ईधन का प्रयोग करना जैसे बायोडीजल, सी.एन.जी. विद्युत, सौर ऊर्जा एवं बैटरी चालित वाहनों का विकास करना।
4. वन विनाश पर रोक लगाये, वृक्षारोपण अधिक से अधिक मात्रा में करे क्योंकि पेड़ बड़ी मात्रा में कार्बन–डाइ–ऑक्साइड अवशोषित करते हैं।
5. लोगों को ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन करने वाले बिजली के उपकरणों का उपयोग कम करना चाहिए।
6. जनसंख्या वृद्धि की दर कम होनी चाहिए।
7. औद्योगिक क्षेत्रों में ऐसे संयत्र लगाये जाने जिससे हानिकारक उत्पादों की मात्रा विघटित हो सके या उपयोगी पदार्थों में परिवर्तित हो जाये।
8. ऊर्जा के पारम्परिक स्त्रोतों (जीवाश्म ईधन कोयला, पट्रोलियम पदार्थ) में कमी करके गैर पारम्परिक स्त्रोतों (सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा) को प्रयोग में लाना चाहिए।
9. हम कम ऊर्जा का प्रयोग करके कार्बन–डाई–ऑक्साइड का उत्पादन कम कर सकते हैं। भविष्य में ऊर्जा दक्षता में औसतन 50 प्रतिशत सुधार करना संभव है। हालांकि इसके लिये उच्च ऊर्जा या कार्बन टैक्स की शुरूआत जैसे कठोर नीतिगत उपायों की आवश्यकता होगी।

निष्कर्ष :

भूमंडलीय तापन एक बढ़ती हुई पर्यावरणीय समस्या है। यह समस्या सिर्फ इंसानों को नहीं बल्कि जीव–जंतुओं और पौधों को भी परेशान कर रही है। ध्रुवीय बर्फ के पिघलने से बाढ़ आएगी जिससे हर जगह भंयकर तबाही होगी। समुद्र के स्तर में वृद्धि से मत्स्यन की गति विधियां नष्ट हो जायेगी।

भूमंडलीय तापन के सभी ज्ञात प्रभावों पर सार्वजनिक जागरूकता बढ़ाना, अधिक शोधकर्ताओं की वितपोषित करना और अनुसंधान के अनछुए क्षेत्रों की खोज करना। प्रभावों की खोज करना और

ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

शमन करना। आज के वैज्ञानिकों और नीति निर्माताओं द्वारा मूल्यांकन के तहत् अधिक महत्वपूर्ण है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. Enviormental Problem and Challenges by Dr. Somnath Hazara, Regal Publication, Kerala, 2013.
2. Global Warming by Dr.P.G. Hegde, K.K. Publication, Jaipur, 2020.
3. Global Warming by Mark Maslin, Oxford niversity Press. 2008.
4. पर्यावरणनामा : डॉ. आशीष वशिष्ठ, कल्पना प्रकाशन, जयपुर, 2018.
5. पर्यावरण अध्ययन : प्रदीप्त कुमार उपाध्याय, के.के. पब्लिकेशन, जयपुर, 2023.
6. पर्यावरण अध्ययन : डॉ. रामकुमार शर्मा डां. बी.सी. जाट, पंचशील प्रकाशन, 2014.

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८६/२

9 772395 711007

Impact Factor
7.523

ISSN : 2395-7115
मार्च 2024
Vol.-19, Issue-3(1)

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

सम्पादक : डॉ. नरेश सिहाग, एडवोकेट

Publisher :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

14.	आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन पर प्राचीन भारतीय एवं पाश्चात्य चिंतन के प्रभावों का मूल्यांकन	म्होर सिंह मीणा, पूरण मल मीणा	83-87
15.	फणीश्वरनाथ 'रेणु' जी के साहित्य मे आंचलिकता	रमन	88-90
16.	राजकमल चौधरी की हिन्दी कहानियों में धर्म भावनाः प्रसंग	शिव कुमार	91-96
17.	विकलांग विमर्श : निशक्त का जीवन से मृत्यु तक संघर्ष (उसका आकाश के संदर्भ में)	वनीता रानी	97-101
18	छायावादयुगीन हिन्दी ग़ज़लें	आनन्द वर्धन, डॉ० इन्द्रनारायण सिंह	102-107
19.	हिन्दी नाटकों में दलित विमर्श	राजेश कुमार	108-113
20.	हिन्दी साहित्य में झारखण्ड : सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टिकोण	तरूण कांति खलखो	114-119
21.	آزادی کے بعد اردو افسانہ	ڈاکٹر میمونہ بیگم سروگی	120-124
22.	वेद और भौतिक विज्ञान का संबंध	डॉ. मीनू तलवाड़	125-129
23.	दलित साहित्य : एक प्रश्न	योगेंद्र सिंह, प्रो. सर्वेश पाण्डेय	130-134
24.	किशोर बालक : किसकी जिम्मेदारी	डॉ. जयप्रकाश सिंह	135-140
25.	वेदांत एवं बौद्ध दर्शन में मोक्ष की अवधारणा	Dr. Sita Kumari	141-143
26.	स्वाधीनता आन्दोलन में हो जनजातीय की भूमिका झारखण्ड के संदर्भ में	विजया बिरूवा	144-147
27.	Role of interventions programme in sensitizing students towards disability: An Analytical Study	Dr. Renu Kansal, Dr. Shashi Bala, Sonia Mahi	148-153
28.	Social Conformity A Review Study	Dr. Aruna Anchal, Dr. ManMohan Gupta, Kapil Dev	154-159
29.	कबीर के अनुसार माया का स्वरूप	डॉ० सुनीता	160-165

1/6

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 7.523

Bohal Shodh Manjusha
March 2024

ISSN : 2395-7
Page No. : 135-1

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

किशोर बालक : किसकी जिम्मेदारी

डॉ. जयप्रकाश सिंह

सहायक आचार्य कम समन्वयक, दूरस्थ एवं ऑनलाईन शिक्षा केन्द्र, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं (राज.)

सारांश :-

किशोरावस्था के दौरान बालकों में शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अति तीव्र परिवर्तन होता है। जब हम किशोर–किशोरियों को समझने का प्रयास करते हैं तो हम पाते हैं कि इस अवस्था की अपनी अलग ही दुनिया है। इस विषय पर कई शोध एवं अनेकों पुस्तकें छपी हैं, साथ–ही–साथ समय–समय पर सेमिनार, कॉन्फ्रेन्स, कार्यशाला आयोजित की जाती रही हैं, फिर भी यह अहसास होता है कि इसकी दुनिया के बारे में हम कम ही समझ सके हैं। वर्तमान समय में टी.वी. से लेकर बॉलीवुड सिनेमा तक या यू–ट्यूब से लेकर अन्य सोशल मीड़िया (फेसबुक, व्हाट्सऐप, ट्वीटर, इन्स्टाग्राम आदि) से किशोर काल्पनिक दुनिया की चकाचौंध से प्रभावित रहते हैं। यदि हम किशोर–किशोरियों की वास्तविक एवं काल्पनिक दुनिया को देखें तो यह किसी बॉलीवुड फिल्म मसाले के रूप से कुछ कम नहीं दिखता, जिसमें दोस्ती, प्रेम, विद्रोह, आदर, निराशा, कुण्ठा, अपराध प्रवृत्ति, घर से भाग जाने का ख्याल, महत्त्वाकांक्षा, एक–तरफा प्रेम, तिरस्कार, निंदा, आलोचना, अकेलापन आदि इनकी जिन्दगी का अनोखा हिस्सा है।

ये बुद्धिजीवी वयस्कों के बनाये हुए नैतिक–सामाजिक रीति–रिवाज, आर्थिक मापदण्ड, धार्मिक – सांस्कृतिक, राजनीतिक मूल्य या भौगोलिक दायरा–ये सब किशोर–किशोरियों की समझ से परे है। उनकी आंखों पर नासमझी का चश्मा चढ़ा होता है। या यों कहें कि वे समझना नहीं चाहते और यदि हम समझाने का प्रयास करते हैं तो तीखे, तार्किक और सीधे छलनी करने वाले प्रश्न खड़े करते हैं। ऐसी ही अनेक प्रश्नों के साथ अनेक अवसरों पर माता–पिता या अध्यापक लाचार होते हैं। ऐसे में प्रश्न उठता है कि जीवन की इस अमूल्य अवस्था (किशोरावस्था) की जिम्मेदारी किसकी है ?– किशोर–किशोरियों के अभिभावकों की या उसके शिक्षक या समाज की ?

की-वर्ड :- किशोरावस्था, किशोरों की समस्याएँ, किशोर बालक : किसकी जिम्मेदारी।

प्रस्तावना :-

विकास एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है, जो प्रत्येक प्राणी में पायी जाती है और जिसका शुभारम्भ जन्म से पूर्व गर्भाधान से ही जारी रहता है। व्यक्ति का सम्पूर्ण विकास कई चरणों में सम्पन्न होता है। विद्वानों में इस विषय पर मतभेद हैं, फिर भी सर्वमान्य वर्गीकरण इस प्रकार है[1] :–

आलोचना

त्रैमासिक

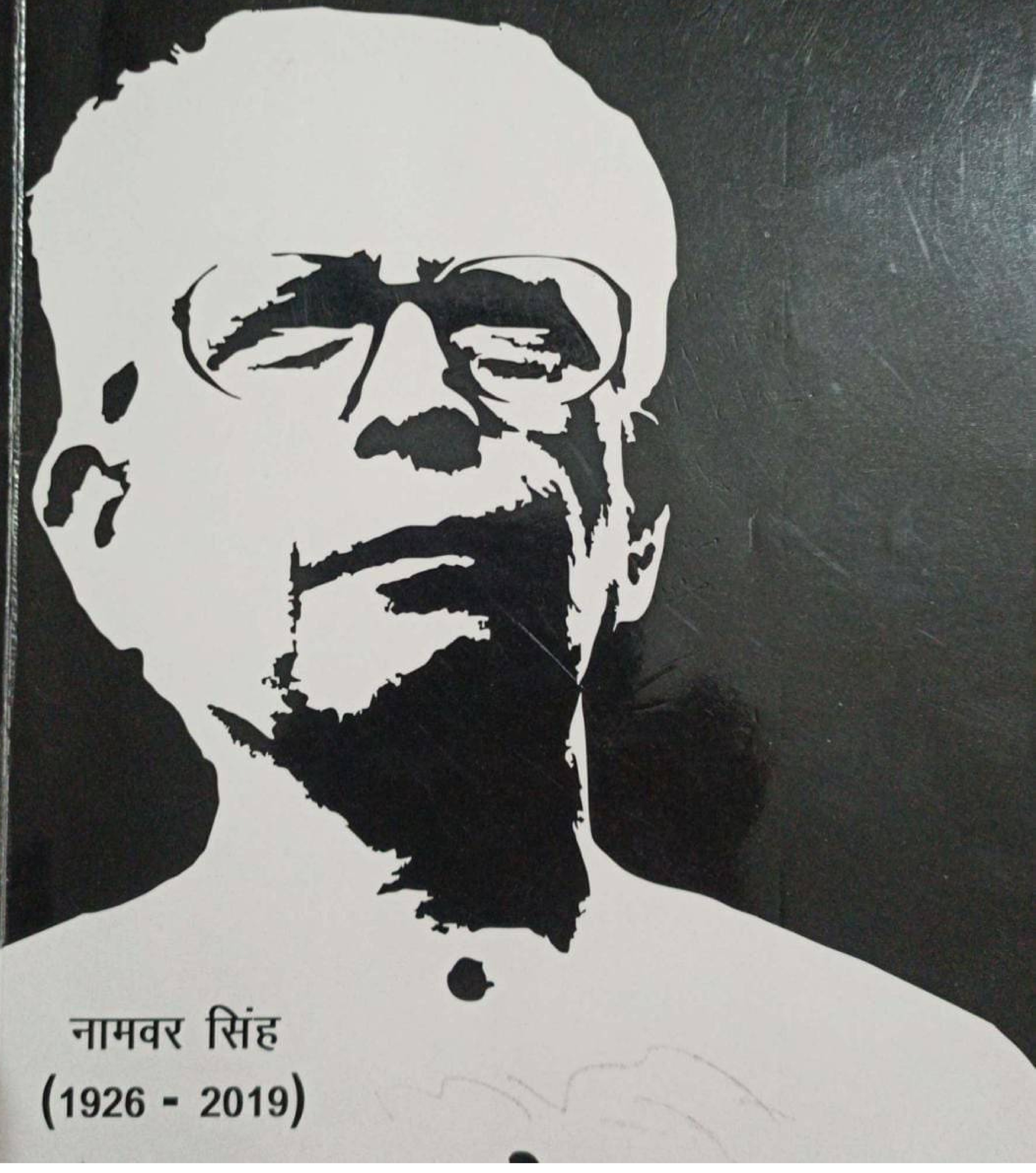

नामवर सिंह

(1926 - 2019)

S. No.	Content	Author's	Page No.
1	शिक्षण में परम्परागत पद्धति एवं शिक्षण अधिगम सामग्री के प्रयोग द्वारा विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के प्रभाव का अध्ययन।	Seema Tripathi Dr. Jay Prakash Singh	1-5
2	SALMAN RUSHDIE'S MIDNIGHT'S CHILDREN: A POSTCOLONIAL EPIC OF IDENTITY AND NATIONHOOD IN INDIA	Dr Subhash Chander Jyotsna Bagerwan	6-11
3	सामाजिक समरसताः गांधी के विचारों का एक अध्ययन	बसन्ती दाधीच	12-19
4	भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था तथा जाति प्रथा	डॉ. बलबीर सिंह	20-24
5	उच्च प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों की अधिगम शैली का विश्लेषणात्मक अध्ययन	रेहाना उस्मानी डॉ. गिरिराज भोजक	25-42
6	''जयपुर जिले के विभिन्न प्रकार, के विद्यालयों में विद्यार्थियो के अनुशासन का तुलनात्मक अध्ययन''	अनुराधा षर्मा डॉ. सरोज राय	43-50
7	दुर्गासप्तषती में वर्णित शक्ति स्वरूपों का आध्यात्मिक महत्व	रेवतीरमण शर्मा प्रो. दामोदर शास्त्री	51-54
8	वॉलीबाल खिलाड़ियों के व्यक्तित्व पर योग का प्रभाव	प्रो. सरोज गर्ग रघुनाथ जाट	55-66
9	शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों के कार्य संतोष, समायोजन, मनोबल एवं व्यक्तित्व का तुलनात्मक अध्ययन	प्रो. सुषमा सिंह सुधीरा	67-89
10	ऑनलाइन शॉपिंग के फायदे एवं नुकसान	प्रिया मिश्रा डॉ. राजेश वर्मा	90-93
11	भारतीय ज्ञान परम्परा में साहित्य की भूमिका	डॉ. भावना शर्मा	94-97
12	भारतीय ज्ञान परम्परा और व्यक्तित्व निर्माण	डॉ. ललिता शर्मा	98-102
13	पंचायतीराज रू महिला सरपंच का आदर्श और व्यवहार	रतिलाल अमीन डॉ. साहिल श्रीवास्तव	103-111

आलोचना
त्रैमासिक
ISSN No. 2231-6329
(UGC-CARE Listed Group-I)

शिक्षण में परम्परागत पद्धति एवं शिक्षण अधिगम सामग्री के प्रयोग द्वारा विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के प्रभाव का अध्ययन।

Seema Tripathi
Research Scholar, Jain Vishva Bharati Institute , Ladnun

Dr. Jay Prakash Singh
Assistant Professor, Jain Vishva Bharati Institute , Ladnun

प्रस्तावना

'शिक्षा', शिक्षक एंव बालक के बीच की अन्तः क्रिया है। प्रारम्भ में शिक्षा शिक्षक केन्द्रित हुआ करती थी। उस समय शिक्षक को ज्यादा महत्त्व दिया जाता था बालक को नहीं, किन्तु वर्तमान समय में शिक्षा तथा शिक्षण पद्धति में बहुत परिवर्तन आए है। शिक्षा अब शिक्षक केन्द्रित नहीं है बल्कि वर्तमान में शिक्षा शिक्षार्थी केन्द्रित हो गई है। बालक की रूचि के अनुसार विभिन्न विषय वस्तुओं को रोचक एवं प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने के लिए शिक्षक शिक्षण अधिगम सामग्री का प्रयोग करते है। शिक्षण में दृश्य सामग्री, श्रव्य सामग्री अथवा दोनो दृश्य–श्रव्य सामग्री द्वारा विद्यार्थी की अभिरूचि व अभिवृत्तियों को विकसित किया जा सकता है। शिक्षण अधिगम सामग्री विषय को स्थाई रूप से सीखने व समझने में सहायक होती है। शिक्षक के अधिगम सामग्री द्वारा किए गए शिक्षण का प्रभाव परम्परागत शिक्षण की तुलना में अधिक पड़ता है। अधिगम सामग्री पाठ को रोचकता प्रदान कर उसे बोधगम्य बनाती है तथा अनुभवों द्वारा ज्ञान प्रदान करती है।

शिक्षण अधिगम सामग्री छात्रों के ध्यान को शिक्षण अधिगम की ओर आकर्षित करती है, तथा शिक्षण में विविधता उत्पन्न करने में सहायक होती है। शिक्षण अधिगम सामग्री छात्रो को मानसिक रूप से तैयार करती है। साथ ही प्रदर्शित सामग्री के कौनसे शिक्षण बिन्दुओं पर ध्यान देना है, यह भी स्पषट करती है। सहायक सामग्री, विषय की निरसता और जटिलता को समाप्त करने में सक्षम है। शिक्षण अधिगम सामग्री छात्रों को पर्यावरण एवं सामाजिक वातावरण के साथ प्रत्यक्ष अन्तः क्रिया का अवसर प्रदान करती है। इनके द्वारा भूतकाल की घटनाओं को स्पष्ट रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। यह व्यवहार परिवर्तन तथा अभिवृत्ति विकास में भी सहायक है। सामाजिक विज्ञान शिक्षण में सहायक सामग्री का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसकी सहायता से शिक्षण में स्थायित्वता तथा सजीवता आती है, एवं विद्यार्थियों की रुचि विषय में उत्पन्न होती है। पृथ्वी के विशाल भाग पर विभिन्न जटिल प्राकृतिक क्रियाएँ होती हैं। पर्याप्त सहायक सामग्री के द्वारा इन जटिल प्राकृतिक क्रियाओं का स्पष्टीकरण एंव प्रत्यक्षीकरण आसानी से कराया जा सकता है। इसके माध्यम से भौगोलिक विषयवस्तु को आकर्षक बनाकर सरलतापूर्वक समझाया जा सकता है जिसके द्वारा सामाजिक विज्ञान शिक्षण को अधिक स्पष्ट व सजीव बनाया जा सकता है। विद्यार्थियों की रुचि बनाए रखने एंव विषय वस्तु को उत्साह पूर्वक पढ़ने में सहायक सामग्री का महत्त्वपूर्ण योगदान होतां है।

अध्यापन के दौरान विषय वस्तु को समझाते समय शिक्षक जिन–जिन संसाधनों या उपकरणों का प्रयोग करता है, वह शिक्षण अधिगम सामग्री कहलाती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 का एक लक्ष्य यह भी रहा है कि पाठ्य विषयों को रोचक, बोध गम्य, सृजनात्मक एवं आकर्षक बनाने के लिए कक्षागत शिक्षण में अधिगम सामग्रियों का अधिकाधिक उपयोग किया जाये। विषय वस्तु में निर्धारित लक्ष्यों तक पहुंचने के लिए उपयोगी शिक्षण अधिगम् सामग्रियों के निर्माण एंव प्रयोग पर विशेष जोर दिए जाने की अनुशंसा की गई है।

International Double Blind Peer Reviewed, Refereed , Indexed , Multilingual-Multidisciplinary-High Impact Factor-Monthly-Research Journal Related to Higher Education For all Subject

ISSN 0974-2832 (Print), E-ISSN- 2320-5474,RNI RAJBIL 2009/29954

SHODH, SAMIKSHA AUR MULYANKAN

January , 2024
Vol-1, ISSUE-I

IMPACT FACTOR- 6.115 (SJIF)

Editor in Chief

Dr. Krishan Bir Singh

www.ugcjournal.com

International Level Double Blind Peer Reviewed,Refereed,Indexed Research Journal,ISSN(Print)-0974-2832,E-ISSN-2320-5474,RNI-RAJBIL-2009/29954,Impact Factor-6.115(SJIF),January-2024,VOL-I,ISSUE-1

Research Paper - Education

पर्यावरण संरक्षण के लिए शाश्वत विकास की संकल्पना आवश्यक

* डॉ. विष्णु कुमार   * * डॉ. जय प्रकाश सिंह

* सहायक प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं
* * सहायक प्रोफेसर, दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केन्द्र, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं

सारांश

प्राचीन काल में अपने महर्षियों ने पर्यावरण की महत्ता को ध्यान में रखकर इसे अपनी सांस्कृतिक मूल्यों के रूप में अपनाकर पल्लवित एवं पोषित किया था परन्तु विकास के अंधाधुंध दौड़ में अपनी ही सांस्कृतिक मूल्यों को हम लोग भूलते जा रहे हैं। मनुष्य के लालच एवं आधुनिकता एवं औद्योगिकीकरण की गलत नीतियों के कारण पर्यावरण में असंतुलन हुआ है। ठीक ही कहा गया है ''अति सर्वत्र वर्जयते।'' मानव अपनी सुख–सुविधा एवं भोग–विलास के साधन जुटाने के लिए पर्यावरणीय संसाधनों का अत्यधिक दोहन करता जा रहा है जिससे प्रदूषण का जन्म हुआ। आधुनिकता एवं विकास के नाम के साथ–साथ प्रदूषित खाद्य, प्रदूषित जल, प्रदूषित हवा सेवन करना पड़ रहा है। वर्तमान में दिल्ली शहर में हवा में प्रदूषण की मात्रा अत्यधिक होने के कारण सास लेने में परेशानी एवं आंखों में जलन की शिकायत आम बात हो गई है। अर्थात् पर्यावरण प्रदूषण दिनों–दिन अत्यधिक खतरनाक होता जा रहा है। इसके संरक्षण के लिए शाश्वत विकास की संकल्पना आवश्यक है ताकि आवश्यकता और विकास के साथ–साथ संतुलन बनाते हुए समुचित उपयोग पर बल देकर संरक्षण किया जा सकता है।

की–वर्ड– पर्यावरण संरक्षण, शाश्वत विकास की संकल्पना, सतत विकास।

प्रस्तावना–

प्रकृति का निर्माण मूलतः पंच तत्वों से मिलकर हुआ है। ये तत्व है जल, वायु, आकाश, अग्नि, एवं प्रकृ ति। यह समस्त तत्व ही हमारे पर्यावरण के प्रमुख घटक और जीवन के आधार भूत स्तम्भ है। पर्यावरण भौतिक तत्वों, शक्तियों और परिस्थितियों का एक ऐसा समुच्चय है जिसका प्रभाव जैव–जगत के विकास चक्र पर पड़ता है। पर्यावरण की प्रमुख विशेषता इसकी साधन सम्पन्नता है और ये प्राकृतिक संसाधन ही मानव के भौतिक विकास के आधार है। प्राथमिक संसाधनों की उपलब्धता एवं जैव विविधता के अनुसार ही प्रगति का मार्ग प्रशस्त होता है। जो सामाजिक कल्याण का आधार है। पर्यावरण प्रकृति की सहज गति है और तकनीकी विकास के इस युग में मनुष्य प्रकृति का विजेता बनकर सभ्यता के शिखर पर खड़ा होने का दावा करता है, परन्तु मानव की उच्च महत्वाकांक्षाओं उसकी निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या पारिवारिक जरूरतों औद्योगीकरण, नगरीकरण एवं प्राकृतिक संसाधनों के अन्धाधुन्ध दोहन ने प्रकृति एवं उसके घटकों के मध्य स्थापित सामंजस्य में हस्तक्षेप किया और प्रदूषण को जन्म दिया है। वर्तमान में मनुष्य की वैभवयुक्त एवं विलासतापूर्ण जीवनशैली ने इन परिस्थितियों को और भी

ISSN (P) : 2321-290X ★ (E) 2349-980X

VOL:-XI,ISSUE:-IX May 2024

RNI No. : UPBIL/2013/55327

Srinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika

Peer Reviewed / Refereed Journal

Publisher : Social Research Foundation, Kanpur
(SRF International)

The Research Series

द्विभाषीय - मासिक

Shrinkhala

श्रृंखला

A Multi-Disciplinary International Journal

Indexed with Google scholar

Impact Factor

SJIF = 6.746 (2020)

GIF = 0.543 (2015)

IIJIF = 6.038 (2018)

Annals of the Bhandarkar Oriental Research Institute
ISSN: 0378-1143

AN IMPACT OF SAMAGRA SHIKSHA ABHIYAN 2.0- A HOLISTIC APPROACH TO EDUCATION

Dr. Abha singh[1], Ms. Monika Sisodiya[2]
[1]Assistant professor , Jain Vishva Bharti Institute, Ladnun, Rajasthan
[2]Research Scholar, Jain Vishva Bharti Institute, Ladnun. Rajasthan

Abstract:
The **SAMAGRA SHIKSHA ABHIYAN 2.0** has been constituted to improve the standard of education in India. It's the biggest plan ever to provide free elementary and secondary schooling for all children. By November 30, 2022, only 51% of the total Rs 37,383 crore allotted to SSA had been disbursed by the union government. The report also noted that by the end of October, governments had spent 22% of the total cash allowed for the scheme. The SSA is co-funded by the federal government and the states at a ratio of 60:40, or 90:10 for states in the mountains and the northeast. Centre for Policy Research's Accountability Initiative found that by December 2022, the union government had only spent half of the money it had set aside for the Samagra Shiksha Abhiyan (SSA). This article's goal is to investigate how SAMAGRA SHIKSHA ABHIYAN has contributed to the growth of pupils in Rajasthan.

realme

Keywords: **SAMAGRA SHIKSHA ABHIYAN 2, School Education, Budget Allocation,**

1. Introduction

According to the Union Budget for 2018–19, all grades, from kindergarten through high school, would be considered together. In light of this, in 2018, the Department of Education introduced the Integrated Scheme for School Education, SamagraShiksha, which merged the previous Centrally Sponsored Schemes of SarvaShikshaAbhiyan (SSA), Rashtriya Madhyamik Shiksha Abhiyan (RMSA), and Teacher Education (TE). The plan is in line with Sustainable Development Goal 4 (Education) since it views schooling as an ongoing process. In addition to aiding in the rollout of the RTE Act, the scheme is also in line with the goals of NEP 2020, which are to provide all children with an opportunity to receive a high-quality education in a setting that respects and accommodates their individuality and diversity in terms of culture, language, intelligence, and other characteristics. The Centrally Sponsored Scheme of SamagraShiksha Scheme, an integrated scheme for the school education sector, will be extended from 1st April 2021 to 31st March, 2026 at a cost of Rs 294283.04 crore, as agreed by the Union Cabinet. To guarantee all students have access to a high-quality, well-rounded education, the Scheme has been updated to reflect the goals of the National Education Policy (NEP) 2020. This is in line with Sustainable Development Goal 4. It seeks to guarantee that all students, regardless of socioeconomic status, language proficiency, or other factors, are provided with a high-quality education in a classroom that respects and accommodates their individual needs and strengths.

Samagra Shiksha Abhiyan-2.0has received official sanction from the central government. On August 4, 2021, we gave the go light for this. This plan encompasses all levels of education, from kindergarten to twelve. This plan follows the guidelines set forth by the New Education Policy. Specifically, the educational targets of the Sustainable Development Goals. Gradually over the next few years, schools participating in the SamagraShiksha Abhiyan-2.0 will be outfitted with children's gardens, smart classrooms, and trained teachers. The infrastructure, vocational training, and innovative methods of instruction will also be set up. The students will be immersed in a community that celebrates and supports their unique cultural identities, linguistic backgrounds, and developmental levels. In addition,